लेखक की अन्य पुस्तकें।

देश-दर्शन—(उर्दू में)
(गुजराती में)

दम्पति मित्र—(हिन्दी में)
„ (गुजराती में)
„ (उर्दू में)

बेरोजगार (हिन्दी में)

शिवाजी (हिन्दी में)

पतिहत्या में पातिव्रत—(हिन्दी में)

नई रोशनी के बाबू—(हिन्दी में)

मिलने के पते—

(१) भारत के सभी प्रसिद्ध पुस्तक-विक्रेता।

(२) शान्तिभवन बेनियाबाग काशी।

विषय-सूची ।

तीसरा खण्ड।

पूर्वाभास ।

—•• ••—

शान्तिका स्वप्न देखते देखते भारतवर्ष अब समुद्रमें गिरा कि गिरा ! बस एक करवट और, और धम अथाह जलमें ! कारण, मैं बिना रोटीके जी सकता हूँ, हवामें पद्मासन जमा सकता हूँ, समुद्रकी लहरों पर चल सकता हूँ, बिना तलवारके संसार पर विजय प्राप्त कर सकता हूँ ।

जिस देशमें पेटके लिए स्त्रियाँ वेश्या बनें, अनाथ मुसलमान और ईसाई हों, जहाँ एक रोटीके चार हिस्सेदार हों, जहाँकी आधी जनसंख्या भूखों मर रही हो, जहाँ दुधमुँहे बच्चोंका विवाह हो, और जहाँका प्रत्येक निवासी मूर्ख और अपाहिजोंकी उत्पत्तिसे जनसंख्या बढावे, वहाँ ऐसी अवस्थामें, देशोद्धार असम्भव और देशपतन निश्चित है ।

यदि अब भी भारतकी आलस्य-निद्रा नहीं टूटती, भारतसन्तान विषय-विकारको त्यागने पर कमर नहीं कसती तो, बेधडक सख फूँक दो ! कूचका बिगुल बजा दो ! कह दो, भारतवासियोंका इस ससार ससारसे कूच हुआ !

पूर्व कालमें हम बुरे नहीं थे । हम अच्छे थे । सारा ससार उन्नति कर गया और हम पीछे पढ गये । किन्तु, अब भी कुछ बिगडा नहीं है । यदि थोडेसे देशभक्त सासारिक सुखोंको ‘ अलविदा ’ कहकर राजनीतिक तथा सामाजिक सुधारके बलिदानके लिए निकल पडे़ तो, कल ही विजयकी पताका मातृभूमि पर फहराने लगे ।

हमारे सुन्दर होनहार बालकों और बालिकाओंमें क्षात्रवीर्य, ब्रह्मतेज, वज्रसी दृढ़ता आदि अनेक अनुपम गुण हैं । ये सब कुछ कर सकते हैं यदि हजारों और लाखोंकी संख्यामें विवाह-वेदी पर इनका प्रतिवर्ष सर्वनाश न किया जाय ।

भूमिका।

किसी समाज या मनुष्यमात्रकी उन्नतिका विचार उपस्थित होने पर ये दो प्रश्न आपसे आप मनमें उठते हैं:—(१) वे कौन कौनसे कारण हैं जो अबतक मनुष्यजातिकी उन्नति और सुखसमृद्धिको रोकते रहे ? और (२) क्या भविष्यमें उन सब कारणों या सब न सही तो उनमेंसे कुछ कारणोंके दूर होनेकी आशा है ?

इन प्रश्नोंको पूरी तरह हल करना और मनुष्यकी उन्नतिके बाधक कारणों पर पूरी तरह विचार करना किसी एक मनुष्यकी शक्तिसे बाहर है। इस लिए भिन्न भिन्न देशों तथा भिन्न भिन्न समयोंके विद्वानों तत्त्ववेत्ताओं और लोकहितैषी मनुष्योंने इन प्रश्नोंको अपने अपने ढंग पर अलग अलग हल करनेका प्रयत्न किया है और उन्नतिके बाधक कारणोंमेंसे किसी एक कारण पर अपने अपने विचार प्रकट किये हैं।

संसारमें जितने शास्त्र हैं उनकी रचना धीरे धीरे हुई है। कोई शास्त्र एकदम ही नहीं बन गया। जगतमें अनेक प्रकारके व्यवहार होते हैं। जिसे जो व्यवहार अच्छा लगता है वह उसे ही करता है। प्रत्येक व्यवहारका जैसा भला या बुरा परिणाम होता है, वैसा ही लोग उसका अनुष्ठान या त्याग करते हैं। लाभदायक व्यवहारोंको लोग स्वीकार कर लेते हैं और हानिकारक व्यवहारोंको छोड़ देते हैं। मनुष्य अपने तथा अपने पूर्वजोंके अनुभवोंसे काम उठाता है। पहले उनके अनुभवके अनुसार साधारण नियम निश्चित होते हैं फिर और कुछ दिनोंके बाद उन्हीं नियमोंके एकीकरणसे शास्त्रकी उत्पत्ति होती है। संसारके सब शास्त्र धीरे धीरे इसी तरह बने हैं।

कोई ढाई सौ वर्ष पहले यूरोपके पण्डितोंने अपने तथा अपने पूर्वजोंके अनुभवों या तजरबों पर एक नये शास्त्रकी नींव डाली। अंगरेजीमें उसे पोलिटिकल इकानमी (Political Economy) कहते हैं। हिन्दीमें इस विषयका नाम संपत्तिशास्त्र या अर्थशास्त्र रक्खा गया है।

यह नवीन शास्त्र मनुष्यके नित्यके जीवन या व्यवहारसे सबध रखनेवाली वातोंकी जाँच करके, निश्चित किये हुए सिद्धान्तोंके आधार पर रचा गया है। इसके व्यापक सिद्धात बतलाते हैं कि किस प्रकारके व्यवहारसे क्या नतीजा होता है। इस शास्त्रमें मनुष्य-समाज या मनुष्य-जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाले व्यापक व्यवहारोंका पूर्ण वर्णन है। पश्चिमीय पण्डितोंने कुछ व्यापक व्यवहारोंको आधार मानकर धन और श्रम आदिका शास्त्रोक्त विचार किया है।

मनुष्य-जातिकी आवश्यकताओंको पूर्ण करनेवाला प्रधान साधन धन है। इस धन-सम्बन्धी सब प्रकारकी घटनाओंके विषयमें अन्वेषण करनेवाली विद्याका नाम 'सम्पत्ति-शास्त्र' है। इस शास्त्रमें नीचे लिखी हुई वातोंका विचार किया गया है·—

(१) किन किन वातोंसे मनुष्य सम्पत्तिकी उन्नति, वृद्धि और रक्षा कर सकता है, (२) किन किन राजकीय, व्यावहारिक और औद्योगिक वातोंका सम्वन्ध सम्पत्तिकी उत्पत्ति, वृद्धि और रक्षासे है और (३) राज्यकी आय और व्यय अथवा राष्ट्रकी शासन-शैलीका प्रभाव सम्पत्तिकी उत्पत्ति, वृद्धि और रक्षा पर क्या पड़ता है।

भारतके जिन प्राचीन ग्रन्थकारोंने गहनसे भी गहन और क्लिष्टसे भी क्लिष्ट विषयोंके विवेचनसे भरे हुए ग्रन्थ लिख डाले, उन्होंने सम्पत्तिसम्बन्धी इस इतने बड़े महत्त्वपूर्ण विषयपर अपने विचार न प्रकट किये हों, यह असम्भव प्रतीत होता है। भारतीय इतिहासके विद्वानोंने भारतमें अर्थ-शास्त्रकी विद्यमानताके कतिपय प्रमाण ढूँढ निकाले हैं *। पर साथ ही मानना पड़ता है कि इस देशके पडितोंने लक्ष्मीको सदा तुच्छ दृष्टिसे देखा। यदि एकने सम्पत्तिकी महिमा पर विचार करके उसे स्पृहणीय बताया, तो दूसरेने त्याज्य। उन्होंने अर्थको अनेक अनर्थोंका मूल समझनेहीमें ससारका कल्याण देखा और सम्पत्तिको तृणवत् समझनेहीमें अपनी प्रतिष्ठा समझी।

देशकी सम्पत्ति कई कारणोंसे घटती है, उनमें ये तीन कारण प्रधान हैं —

---

* १ अतिप्राचीन चार उपवेदोंमें एकका नाम अर्थवेद है। २ विष्णुपुराणके अनुसार भारतकी १८ प्रधान विद्याओंमें एक 'अर्थशास्त्र' है। ३ अमरकोश, शुक्रनीति और चाणक्य नीतिमें अर्थशास्त्रकी वातोंकी व्याख्या मिलती है। ४ कौटिल्यके 'अर्थशास्त्र' नामक सस्कृत ग्रथका भी कुछ समय हुए पता लगा है और वह छपकर प्रकाशित भी हो गया है।

१ प्राकृतिक। जमीनकी उर्वरा-शक्तिके कम हो जानेसे खानोंसे सोना चाँदी कोयला आदि खनिज पदार्थोंका निकलना कम होजानेसे या बिलकुल ही बन्द हो जानेसे देशकी संपत्ति घट जाती है।

२ राजकीय। जीते हुए देशकी सम्पत्ति यदि कोई विजयी राजा धीरे धीरे अपने देशको ले जाय और क्रमक्रमसे विजित देशको निःसार करता रहे तो उस देशकी सम्पत्ति घटती है।

३ व्यापार-विषयक। देशोंकी चढ़ा ऊपरीसे अन्य देशोंके साथ उत्तम और सस्ती चीजोंके न बन सकनेसे विदेशी वस्तुओंके प्रचारसे और कला कौशल तथा औद्योगिक धन्धोंकी कमी अथवा बिलकुल बंद हो जानेसे भी देशकी संपत्ति घटती है।

अँगरेजी राज्यके पहले ऐसे कारणोंकी उत्पत्ति भारतवर्षमें बहुत कम हुई। मुसलमानी राज्यमें यद्यपि बाहरी बादशाहोंने भारतको अनेक बार लूटा और इस देशसे वे असंख्य धन ले गये पर उससे देशकी सम्पत्तिको विशेष धक्का नहीं पहुँचा। क्योंकि सोना चाँदी रत्न आदि जो वे लूट ले गये एक मात्र उन्हींकी गिनती सम्पत्तिमें नहीं है। व्यवहारकी सभी चीजें सम्पत्तिमें शामिल हैं। भारत निवासियोंकी आमदनी पूर्ववत् बनी रही। क्योंकि पेटसे रत्न और अन्न आदिकी प्राप्ति बराबर होती रही और जितने ही मुसलमान बादशाह हो भारत निवासी ही बन गये जो भारतका धन भारतहीमें खर्च करते रहे। मुसलमानी राज्यमें इस देशके व्यापारका उत्कर्ष होता रहा कभी अपकर्ष नहीं हुआ कला कौशल और व्यापार आदिमें यह देश हमेशा ही बढ़ा चढ़ा रहा। देशदेशान्तरोंके बाजारोंमें यहींकी चीजें पटी ही रहीं। जल और स्थलका सारा व्यापार भारत वासियोंके ही हाथ था। बगदाद मिसर रोम और चीन तथा समस्त भूमण्डलमें भारतका माल जाता था। ढाकेका मलमल लकड़ीकी उत्तमोत्तम चीजें और बड़े बड़े जहाज तो अभी अँगरेजोंके आने पर भी यहींसे बिक्रीके लिए यूरोप जाते थे। सम्पत्ति-ह्रासके जितने प्रधान कारण हैं उनमेंसे एकका भी सामना इस देशको पहले नहीं करना पड़ा।

यह तो मुसलमानी राज्यके समयकी बात हुई। उसके पहले हिन्दूसाम्राज्यके समयमें तो चैन ही चैन था। सम्पत्तिनाशकी उपस्थिति तो दरकिनार; उक्त कारणों-मेंसे एक कारण भी नहीं पैदा हुआ। विपरीत इसके जैसा ऊपर कहा जा चुका है विभिन्न शैलियोंके हरणोंमें संपत्तिकी सुव्यवस्थाका भाव जागरूक रहा।

वह इस शास्त्र-रचनाके मार्गका और भी अधिक अवरोधक हुआ। और यह अखण्डनीय सिद्धान्त है कि बिना कारणके कार्य नहीं होता । गरज यह कि भारतमे इन बातोंका प्रेरक कोई कारण ही नहीं उपस्थित हुआ, इसीसे यहाँके विद्वान् सम्पत्तिशास्त्रकी उद्भावना करने, उसके सिद्धांत ढूँढ निकालने, और सपत्तिका प्रवाह रोकने आदिके बखेडेमे नही पडे ।

मै अपनी खेती करता हूँ और प्रात काल उठकर अपने हल और बैलोंको प्रणाम करता हूँ । मेरा जीवन जङ्गलके पेडों और पक्षियोंकी सगतिमे गुजरता है। आकाशके सुन्दर बादलोंको देखते देखते मेरा दिन निकल जाता है। मेरे खेतमें अन्न उग रहा है, बिस्तरके लिए पृथ्वी, वस्त्रके लिए कमली, कमरके लिए लँगोटी और सिरके लिए चोटी काफी है । मेरे हाथ पाँव बलवान् हैं, भूख खूब लगती है, बाजरा और मकई, छाछ और दही, दूध और मक्खन, मुझे और मेरे बच्चोंको मिल जाते हैं—फिर ससारमें क्या हो रहा है इससे मुझे प्रयोजन ? और न जाननेसे मेरी हानि ? मै किसीको धोखा नहीं देता, मेरे इहलोक और परलोक दोनों बन रहे हैं । हाँ, यदि मुझे कोई धोखा दे, तो उसका फल वह ईश्वरसे पावेगा । यह कौन कह सकता है कि इस सादगी और सचाईका जीवन अच्छा नहीं, पर कठिनता यह है कि इस प्रकारका निर्विघ्न जीवन बहुत दिनों तक नहीं व्यतीत हो सकता। धर्महीके सहारे जाति उन्नति कर सकती है, यह ठीक है। परन्तु वह धर्म्मांकुर जो जातिको उन्नत करता है, इस भोले भोले पवित्र बेवकूफीके ढेर पर नहीं उगता ।

वह कठोर जीवन, जिसे देशदेशान्तरोंको ढूँढ निकाले बिना शान्ति नहीं मिलती, जिसकी अन्तर्ज्वाला दूसरी जातियोंको जीतने, लूटने, मारने और उन पर राज करनेके बिना मन्द नहीं पडती—केवल वही विशाल जीवन समुद्रकी छाती पर दाल दलकर, जगलोंको चीरकर, पहाडोंको तोड-फोड या फाँद कर उदय-अस्ततक राज्य जमा सकता है और राज्य कर सकता है ।

शान्तिप्रिय भारतमे साहित्य, सगीत, कला और सम्पत्तिकी अतिसे आलस्य, विषय-विकार, ईर्षा, द्वेष आदि अनेक दोष आगये। जगल और पहाडोंको हिला देनेवाली पवित्र आर्यजाति घोडेसे उतर कर मुलायम तकियोंके सहारे मखमली गद्दों पर ऐसी सोई कि न यह आप जागी और न कोई इसे जगा ही सका ।

पहली झकोरे या ऐयाश मुसलमान राजाओंकी दृष्टिमें ही आने पर यह अभागा देश पश्चिमीय वणिकोंके हाथ पड़ा। इनके पधारते ही—अँगरेजोंकी सत्ताका सूत्रपात होते ही—यहाँकी स्थितिमें भयंकर फेरफार शुरू हो गया। यहाँ सहस्रों वर्षोंका सोया हुआ और तत्त्वज्ञानका स्वप्न देखनेवाला भारत और यहाँ कुटिल नीतिसे रँगे हुए क्लाइव और हेस्टिंग्स। कुत्सित पालिसी और भारतकी अज्ञानतासे इस देशके व्यापारकी जड़में कुठाराघात होने लगा। कला कौशल उद्योग-धन्धे सब खिसक कर इंग्लैंड पहुँचे। साथ ही साथ सम्पत्तिने भी यहाँसे कूच कर दिया। जिन्होंने भारतको कला कौशल और सम्पत्तिहीन तो अवश्य कर दिया पर देशमें शान्ति खूब फैलाई। अमन और अमानके कारण आबादी बढ़ गई और जनसंख्याकी अधिकतासे पहलेसे बहुत अधिक जमीन जोती बोई जाने लगी। जमीनकी पैदावार पर ही कोई ९ फीसदी भारतवासियोंकी जीविका चलने लगी। सारा दारमदार जमीनकी पैदावार पर जमा। उसीको बेच कर राज्य-कर चुकाना उसीसे वस्त्र आदि आवश्यक वस्तुयें खरीदना उसीसे ब्याह शादियोंमें धूम धाम करना और उसी एक आय पर दान पुण्य शिक्षा आदि सब कुछ करना प्रारम्भ हुआ।

जब तक जनसंख्या कम थी तब तक तो राम-राज्यका सा सुख बना हुआ पर जब आबादी बढ़ी—जिस आमदनी पर १८ करोड़ निर्वाह करते थे उसी पर २० फिर २५, फिर २८ फिर २९ और आगे बढ़ कर ३१ करोड़को निर्वाह करनेकी नौबत आई तब मुश्किल पड़ी। ६ वर्षके भीतर आमदनी नहीं बढ़ी; पर खानेवाले और उनकी जरूरतें दूनी हो गईं। फिर क्या पूछना था वही हुआ जो होना चाहिए था। देशकी आधी जनसंख्या भूखी रहने लगी। निरन्तर अकाल पड़ने लगे। लाखों करोड़ों जन भूखसे मरने लगे। एक तो आमद उसी चीजें कम प्रतीत होने लगीं या यों कहिए कि लोगोंको कम मिलने लगीं। इससे बच्चे बेहद मरने लगे। हैजा प्लेग आदि दरिद्रताकी बीमारियाँ आरम्भ हुईं और क्रमशः भारत-सन्तानका हर तरहसे क्षय होने लगा।

जब सम्पत्ति खो गई तब उसे पुनः उपार्जन करनेकी इच्छा हुई। अँगरेजोंमें इस विषय पर हजारों पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। ये पुस्तकें जब भारतवासियोंकी नजरसे गुजरीं तब कुछ शिक्षित और सुयोग्य लोगोंका ध्यान इस शास्त्रके प्रचारकी ओर गया और कहीं कहीं इसके अनुवाद देशी भाषाओंमें भी होने लगे; पर वे इतने कम हैं कि अभी उँगलियों पर गिने जा सकते हैं।

कोई ६० वर्ष पहले देहली कालेजके पडित धर्म्मनारायणजीने इस विषय पर दो कितावें उर्दूमें लिखीं। रावसाहब विश्वनाथ नारायण और पडित कृष्णशास्त्रीने दो एक पुस्तकोंका अनुवाद मराठीमें करके दक्षिणमें इस शास्त्रका प्रचार किया। गुजराती आदि और और भाषाओंमें भी इस विषय पर कई पुस्तकें प्रकाशित हुई। हिन्दीमें सबसे पहले सन् १९०७में पडित गणेशदत्त पाठकने एक छोटीसी पुस्तक निकाली। बादको हिन्दीके सुप्रसिद्ध लेखक पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदीने अपना महत्त्वपूर्ण सम्पत्तिशास्त्र प्रकाशित किया। प्रो० बालकृष्णजीने भी इसी विषय पर एक उत्तम पुस्तक लिखी। कोई दो वर्ष पहले प० गिरिधर शर्माने मिसेस फासेट एलएल डी के अर्थशास्त्रका अनुवाद लिखा। मतलब यह कि क्रमश हिन्दीमें भी इसका प्रचार होने लगा।

सम्पत्तिशास्त्रका विषय बहुत ही गहन और कठोर है। इस शास्त्रका सम्बन्ध व्यापार और राज्य-व्यवस्थासे बहुत अधिक है। सम्पत्तिशास्त्रके विचारमें और शास्त्रोंका भी काम पड़ता है। उनकी मददसे इस शास्त्रके सिद्धात निश्चित किये जाते हैं। नीतिशास्त्र, जीवनशास्त्र, जनसख्याशास्त्र आदिकी मदद लिये विना इस शास्त्रका काम नहीं चल सकता। सम्पत्तिशास्त्रका सम्बन्ध जनसख्यासे है और जनसख्याका विषय बड़े महत्त्वका है। भारतमें इस विषय पर ध्यान आकर्षित करानेकी बहुत बडी आवश्यकता है। जितनी भूख है उससे यदि हम अधिक खायँगे तो हमें बदहजमी हो जायगी और हम बीमार पड़ जायँगे। यदि माली पेड़-पत्तोंकी काट-छाँट न करे तो बहुत जल्द ही खूबसूरत बाग जङ्गलकी शकलमें बदल जाय और वहाँ शोभा और शांतिके स्थान पर कुरूपता और अशातिका दौरदौरा हो जाय। इसी तरह यदि किसी जातिकी जनसख्या एक नियत सीमाका उल्लघन कर जाती है, तो उस जातिमें अनेक बुराइयोंकी वृद्धि होने लगती है और उस जातिका अध पतन होना प्रारभ हो जाता है। प्रकृतिने हर बातके लिए एक नियम, एक सीमा बना रक्खी है। उस नियमको न जानकर उसकी नियमित सीमाका उल्लघन करना ही प्रकृतिका नियम तोड़ना है। और यह बतानेकी आवश्यकता नहीं है कि हर अवस्थामे प्रकृति-नियमके प्रतिकूल काम करनेसे अनेक बाधायें और उपद्रव आ खडे होते हैं।

प्रसिद्ध अँगरेज लेखक और तत्त्ववेत्ता माल्थस साहबने जनसख्या-विषय पर खूब विचार करके सन् १७९८ ई० में जनसख्याके नियम पर एक निबधावली (Essay on the principle of population) लिखी। उसमें उन्होंने

अपना मत प्रकाशित किया कि संसारकी समृद्धिमें सबसे बड़ा बाधक कारण जन संख्याकी निःसीम वृद्धि है। उनका मत है कि " जीवन धारण करनेके लिए प्रकृतिने जितना आहार प्राणियोंके लिए सम्पादित किया है उससे अधिक प्राणी मात्रमें अपनी संख्या बढ़ानेकी चाह है। जन-संख्या उसी संख्या तक परिमित रहेगी जिस संख्या तकके भोजनके लिए अन्न मौजूद है। जनसंख्या अपनी वृद्धिके सामग्री साथ बढ़ सकेगी। जनसंख्याकी निःसीम वृद्धिको रोकने और उसे एक नियम सीमाके भीतर रखनेवाले कारण दो हैं—एक तो दुर्भिक्ष महामारी प्लेग युद्ध आदि दैवी और मानुषी विपत्तियाँ और दूसरा इन्द्रिय-दमन।

माल्थसके इस सिद्धान्तको संसारमात्रके विद्वान् मानते हैं। सम्पत्तिशास्त्रके धुरन्धर पंडित जान स्टुअर्ट मिल मारशल डॉक्टर, फासेट और गारनो आदिने इसकी पुष्टि की है।

१८३२ ई० में अमेरिकाके डाक्टर चार्ल्स नोल्टनने एक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें उन्होंने यह सिद्ध किया कि जनसंख्याका एक मात्र इन्द्रिय-दमनके आधार पर कम किया जाना अत्यन्त कठिन है। यदि स्त्री-पुरुष बहुत आयु बीतने पर विवाह करना उचित समझते हैं या जीवन भर अविवाहित रहना चाहते हैं तो इसका निश्चित परिणाम दुराचार या व्यभिचार होता है। और यदि वह शीघ्र विवाह कर लेते हैं तो किसी तरह भी बच्चोंकी भरमार हुए बिना नहीं रहती। विवाहित युवा पुरुष और युवती स्त्रियाँ कितना ही संयमी क्यों न रहें, आवश्यकतासे ज्यादा संतान पैदा हो ही जाती है। विवाहित दम्पति इन्द्रिय-दमन द्वारा सन्तानोत्पत्तिको कम नहीं कर सकते और अधिक बच्चोंकी उत्पत्तिसे न तो उनकी ठीक शिक्षा ही हो सकती है और न उनके खाने-पहननेका प्रबन्ध। इस तरह बढ़ने पर ये बच्चे आगे अपने जीवननिर्वाहके लिए कोई उत्तम काम नहीं कर सकते हैं। इन सब बातोंसे राष्ट्र क्षीण होता है। अतएव डाक्टर नोल्टनने कुछ ऐसे उपाय बताये जिनसे विवाहित पुरुष एक उचित और नियमित सीमातक विषय वासना शान्त करके भी उतनी ही सन्तानोत्पत्ति कर सकें जितनेका भार वे उठा सकते हैं। ४२ वर्ष तक यह पुस्तक अमेरिका और इंग्लैंडमें निर्विघ्न बिकती रही। सन् १८ ७ में ब्रिस्टल शहरके एक नीच विचार रखनेवालेने इस पुस्तकमें कुछ अश्लील तसवीरें लगा दीं जिससे उसको सजा हुई साथ ही इस पुस्तककी बिक्री भी बन्द कर दी गयी। पर इसी १८७७ में मिसेस एनी बीसेण्ट और चार्ल्स ब्रैडलाने डाक्टरकी कलमकी इस तत्वज्ञानके फल (Fruits of Philosophy)

नामकी पुस्तकको विना अश्लील तसवीरोंके छपवाया, एक छोटीसी दुकान खोली और पुलिसको नोटिस दिया कि वे खुद इस पुस्तकको वेचते हैं। भूमिकामें लिखा था कि "जिस वात पर मनुष्यका सुख और दुःख निर्भर है, उस पर खुले आम विचार करनेका मनुष्यको अधिकार है। यदि सरकार ऐसी वातोंके विचारमें वाधा डालती है तो वह अन्याय करती है। अतः इस अन्यायपूर्ण कानूनको हम नहीं मान सकते।"

इस समय मिसेस वीसेण्ट अपने पतिसे अलग हो चुकी थीं और उनकी आयु कुल ३१ वर्षकी थी। वे जानती थीं कि इस सिद्धान्तका खुल्लमखुल्ला प्रचार करनेसे पब्लिक उनके पवित्र सतीत्वमें वट्टा लगा सकेगी—उनके शुद्ध आचरण पर सन्देह प्रकट कर सकेगी। मिस्टर ब्रेडलाको भी इन्हीं वातोंका भय था। उन्हें तो विश्वास था कि कदाचित् उनकी ऐसी वदनामी हो कि पार्लियामेण्टसे ही उन्हें अलग हो जाना पड़े। पर उनका उद्देश्य संसारमात्रका कल्याण था, इससे इन सब वातोंकी परवा न कर, वे आगमें कूद ही पड़े।

मेजिस्ट्रेट पुलिस तथा अन्य वड़े अफसरोंमें इन्होने अपने हाथसे कितावें वाँटीं। पुलिसवालोंको गिरफ्तार करनेमें सुगमता कर देनेके लिए वेचनेका दिन और समय भी उन्होंने वता रक्खा था। कुछ दिनोंके वाद ये लोग गिरफ्तार किये गये। मुकदमा वड़ी धूमसे लड़ा गया। सारे सभ्य संसारका ध्यान इस मुकदमेकी ओर आकर्षित हुआ। निदान इस मशहूर ट्रायल (परीक्षा) का अन्त यह हुआ कि ये लोग छोड़ दिये गये और उस प्रकारकी अनेक पुस्तकें सारे संसारमें निर्विघ्न विकने लगीं। अनेक पश्चिमीय देशोंमें जनसंख्याविषयक सभायें स्थापित हुईं और वे माल्थस तथा नोलटनके सिद्धान्तोंका प्रचार करने लगीं। माल्थसकी जनसंख्या रोकनेकी विधि (इन्द्रियदमनसम्वन्धी) को माल्थसीज्म (Malthusism) और नोलटनके सिद्धात (यन्त्र या ओषधिद्वारा जनसंख्या रोकनेको न्यू माल्थसीज्म (New-Malthusism) कहते हैं।

किसी जाति अथवा देशकी उन्नति उस जाति अथवा उस देशके लोकसमुदायकी व्यक्तिगत उत्तमता पर अवलम्वित है। यह कोई नवीन विचार नहीं है। २३०० वर्ष पहले रोम-रिपब्लिकमें भी एक ऐसे ही कानून वनानेका प्रस्ताव हुआ था कि अयोग्य स्त्रीपुरुष कानूनसे बलपूर्वक विवाह न करने पावें, जिससे वंशपरंपरागत दुर्गुण भावी सन्तानमें न आने पावें। एकमात्र उत्तम और सुयोग्य

संतानोत्पत्ति की जाय जिससे सारा राष्ट्र पवित्र और शक्तिशाली बन जाय। भारतीय ऋषियोंने भी इस विषय पर बहुत कुछ किया है। विवाहसंबंध तय करनेके पहले कुलकी उत्तमता देखनी चाहिए, वर और कन्याके गुण कर्म और स्वभाव मिलने पर विवाह होना चाहिए, संस्कारहीन या पतित कुलमें तथा कुष्ठवाले कुलमें और सगोत्रियोंमें विवाह न करना चाहिए, कन्याके अनुकूल गुणवान् पति न मिलनेसे उसका आजन्म अविवाहित रहना उत्तम है। ऐसी शास्त्रकी आज्ञायें हैं। इन आज्ञाओंसे हमारे ऋषिमुनियोंका एक मात्र यही अभिप्राय था और है कि भावी सन्तान सुयोग्य हो वर्णसंकर न हो। क्यों कि वर्णसंकर होनेसे कुल या जातिका नाश हो जाता है। इतिहास इसका साक्षी है।

इटली देशके मेंडेल नामक विद्वानने पूर्वोक्त विषय पर विचार करते हुए एक नये शास्त्रकी नींव डाली। इस शास्त्रका नाम युजेनिक्स (Enginics) रखा है। हिन्दीमें इसका अनुवाद अभिजननशास्त्र सुप्रजाजननशास्त्र सुसंतान-शास्त्र आदि हुआ है। इंग्लैंडके पंडित गाल्टन (Sir Francis Galton) ने इस विषयमें बहुत कुछ कर दिखाया। उन्होंने लन्दन विश्वविद्यालयको १ ७५, रुपया इस शर्त पर दान दिया कि एक स्थायी प्रोफेसर नियुक्त किया जाय जो इस शास्त्रकी ही खोज (Research) करे। इस शास्त्रकी उत्पत्ति अभी २५ वर्षोंसे ही हुई है तथापि इसके तत्त्व अमेरिका और यूरोपमें बड़ी तेजीके साथ फैल रहे हैं।

जनसंख्या और युजेनिक्ससे सम्बन्ध इस तरह है कि यदि देशमें काफी अन्न नहीं है और देशवासी सुयोग्य हैं तो वे भूखों न मर जायँगे। उस योग्य देशकी जनसंख्या अन्य अयोग्य देशवालोंके मुँहकी रोटी छीन सकेगी — अपनेसे दुर्बल देशवालोंको कुचलकर–निर्मूल करके अपनी रक्षा करेगी। आस्ट्रेलिया अमेरिका न्यूजीलैण्ड आदिके आदिम निवासी लोप होते जा रहे हैं और उनका देश उनसे अधिक योग्य जातियोंसे बस गया है। लण्डनमें भी यह आशा नहीं की जा सकती कि अब पुरानी जातियाँ बहुत काल तक भी रह सकेंगी और किसी अंशमें हिन्दुस्तान भी पूर्वोक्त सिद्धान्तकी पुष्टिका प्रत्यक्ष प्रमाण है। सन् १८७१ और १९११ की मनुष्यगणना या मनुष्य-गणनाके अंकोंकी तुलना करनेसे ज्ञात होता है कि इन ४० वर्षोंमें हिन्दुओंकी संख्या सैकड़ा पीछे १० कम हुई है। यद्यपि ह्रासकी मात्रा बहुत थोड़ी है पर यदि यह क्रम रोका न जाय और कायम रहे

तीसरे खण्डमें इन आपत्तियोंसे वचनेके उपाय वताये गये है। क्योंकि ऐसी सन्तानका उत्पन्न करना जिसके पालन-पोषणका प्रवन्ध न हो अत्यन्त हानिकारक है। ऐसी सन्तानोत्पत्तिका स्पष्ट अर्थ यह है कि हम अपनी शक्ति और सम्पत्ति मुर्दों पर लगाते हैं। यह वतानेकी आवश्यकता नहीं है कि एक वच्चेके गर्भस्थितिकालसे लेकर उसके जन्म और जीवन काल तक कितना धन और श्रम लगता है। यदि वह वच्चा जीवित न रहे, तो जो कुछ द्रव्य और श्रम उस पर खर्च हुआ वृथा गया। शोक, सन्ताप और कुटुम्वभरको मानसिक क्लेश मिला ऊपरसे। ऐसी न जीनेवाली सन्तानोत्पत्तिसे माता-पिता तथा देशका शक्तिक्षय होता है और जनसख्या भी नहीं वढ सकती। वच्चे पैदा हुए और मर गये, इससे भला क्या लाभ हो सकता है? अतएव प्रकृतिके नियमोंको समझकर देश और काल तथा अपनी स्थिति पर विचार करके उतनी ही सतानोत्पत्ति करना जिनको हम सर्वथा योग्य वना सकें—वताया गया है। इसका उपाय ब्रह्मचर्य और इन्द्रिय-दमन है। न्यू-माल्थसीज्म (New malthusism) के अनुसार ओषधि या यन्त्रद्वारा गर्भ-स्थिति रोकना, इस पुस्तकमें नहीं वताया गया।

ससारमें सव देशोंकी स्थिति एकसी नहीं है। प्रत्येक देशके व्यवहारों, राज्य-प्रवन्धों, और सामाजिक व्यवस्थाओंमें भिन्नता होनेसे जनसंख्याके सिद्धांतोंको भी प्रत्येक देशकी स्थित्यनुसार कुछ न कुछ भिन्न रूप धारण करना पड़ता है। परंतु इससे उसके प्राथमिक सिद्धातको धक्का नहीं लगता। जव जर्मनी, फ्रांस, इँग्लैंड और अमेरिकाकी राज्यव्यवस्थाओं या व्यवहारोंमें तुलना करनेसे भारी अतर दीखता है, तव हर वातमें भारतकी तुलना भी उन देशोंसे नहीं की जा सकती। यह हमें दिखाना नहीं है कि जर्मनी या अमेरिकाके अमुक विद्वानने माल्थसके सिद्धात काट कर यह सिद्ध कर दिखाया है कि विजलीके यन्त्रोंकी सहायतासे और वैज्ञानिक रीतिसे खाद आदि डालनेसे खेतीकी पैदावार वहुत कुछ वढाई जा सकती है। विचार इस वात पर करना है कि क्या भारतके कृषक भी उस ढगसे खेती कर सकते है और सचमुच पृथ्वीकी उपज वढ सकती है? भारत तो अभी सैंकडों वर्ष पीछे है। अभी तो शायद यहाँ सर्व साधारणको उस तरह खेती करना सीखनेमें सदियाँ लग जायँ।

इस विषय पर पूर्ण ध्यान न देकर लोग कह वैठते है कि भारतका सुधार जनसख्याके कम या अधिक करनेसे न होगा। वह एक मात्र शिक्षासे होगा।

इसलिए ध्यान जनसंख्याकी ओर फेरें। हाँ पुरानी लकीरका फकीर बनना और नये आविष्कारोंको तुच्छ समझकर लात मारना मुझे पसन्द नहीं है। साथ ही नई रोशनीका सुधारक बनकर बिल्कुल पश्चिमीय बन जाना भी मुझे नापसन्द है। नव सुधारक (Reformer) और पुरानी लकीरके फकीर (Regeneration) इन दोनों प्रकारकी अति (Extreme) को हम हानिकारक समझते हैं। इसीसे दोनों दलोंके बीचके रास्ते पर चलना हमने उचित समझा है। देश काल और अपनी स्थितिके अनुसार प्राचीन आचारपद्धति पर चलना साथ ही स्वदेश या अन्य देशोंके अर्वाचीन आविष्कारोंसे उचित लाभ उठाना हमारा मन्तव्य है। जिस तरह सम्भव हो अपनी दशा सुधारना और संसारके साथ साथ अपनी उन्नति करके चलना प्रत्येक भारतवासीका महान् कर्तव्य और परम धर्म है।

भारतवर्षमें कई कारणोंसे अनेक कुरीतियाँ चल पड़ी हैं जिनसे समाज दूषित हो गया है। जातिहित तथा देशोद्धारके लिए इनका पृथक् किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। इन अवगुण भूलोंका समूल नष्ट करनेके लिए हमें बड़ी समालोचना करनी पड़ेगी और बलवान् उपायोंसे काम लेना पड़ेगा। इन बातोंको ध्यानमें रखकर और पक्षपातरहित होकर सम्यक्तया इस पुस्तक पर विचार करनेकी कृपा करें।

इस पुस्तकके चार खण्ड हैं। प्रथम खण्डमें जनसंख्यासम्बन्धी प्राकृतिक नियमोंका वर्णन है कि किस तरह समाजकी जनसंख्या सन्तानोत्पत्ति द्वारा बढ़ जाती है। प्रकृतिका यह एक निश्चित नियम है कि खानेवाले अधिक और कमाने वाले कम पैदा होते हैं। द्वितीय खण्डमें यह सिद्ध किया गया है कि जनसंख्याकी [illegible] बढ़ती है उसके भारतका उचित प्रबन्ध नहीं हो सका। अतएव आज भारतवासी पेट भर अन्न नहीं पाते। इसी भारत-सन्तान [illegible] दिन रात भीख माँगती जा रही है। दरिद्रताकी मात्रा बढ़ रही है। दुर्भिक्ष [illegible] भी दरिद्रताके निमित्त बढ़ती जाती है देश नष्ट हो रहा है। [illegible] तृतीय खण्डमें बालविवाह और अनमेल विवाहोंका [illegible] है [illegible] आयु कम हो गई है। यहाँ [illegible] अधिक [illegible] है [illegible] भी पैदा होते हैं [illegible] ही [illegible] है।

अपने कुटुम्बका जातिका और राष्ट्रका गौरव बढाते हैं, पर मूर्खोंकी अधिक सन्तान अल्पायु हुआ करती है, बच्चे अधिक तो अवश्य होते हैं पर उनमेंसे बहुतेरे नष्ट हो जाते हैं और उनकी संख्या अधिक नहीं हो सकती ।

दूसरे प्रश्नका भय भी निर्मूल है । जनसंख्या घटानेका यह आशय नहीं है कि देशमें कोई रही न जाय । नहीं, कमी तो एक मात्र निःसीम वृद्धिमें करनी है । इससे जीवन-संघर्ष वैसा ही बल्कि और अधिक रहेगा । फल यह होगा कि दुर्भिक्ष, हैजा, प्लेग, बच्चोंकी मृत्यु आदि बन्द होगी। रहा विवर्त्तन (Evolution) सो प्राकृतिक विचयसे तो पशु भी विवर्तित होते हैं । यदि मानवजातिका विवर्त्तन प्राकृतिक विचयसे हुआ, तो मनुष्य और पशुमें भेद ही क्या रहा ? मानवजाति अपना उत्थान या विवर्तन विवेकी विचयके द्वारा प्राकृतिक विचयसे कहीं शीघ्र कर सकती है । अस्तु । जड प्रकृति पर अपना विवर्तन छोड़ना लाभदायक नहीं है—' Progress is made more rapidly and more economically by rational than by natural selection and that the time has arrived for man to control his own evolution instead of leaving it to the blind forces of nature

अर्थात् संसारमें प्रकृतिके नियमोंकी अपेक्षा, विवेकसे काम लेनेसे शीघ्र और सरलतासे उन्नति हो सकती है। मनुष्यके लिए अब ऐसा समय उपस्थित हुआ है कि वह 'दैवेच्छा बलीयसी' के भरोसे न रहे, वरन् अपने विवेकसे प्राकृतिक नियमोंको ढूँढ निकाले ।

अन्तमें यह भी प्रकट कर देना उचित है कि जनसंख्या आदि विषयोंपर मैं अपना स्वाधीन विचार नहीं प्रकट कर रहा हूं, और न यह पुस्तक किसी अन्य भाषाकी किसी पुस्तकका अनुवाद है। लगभग ५० या इससे भी अधिक पुस्तकोंके अध्ययनसे और अनेक समाचारपत्रों और मासिकपत्रोंके अवलोकनसे इस पुस्तककी सामग्री एकत्रित की गई है । मैं इन पुस्तकोंके लेखकोंका तथा उन महाशयोंका जिनकी कृपासे ये पुस्तकें मुझे प्राप्त हुईं, बहुत ऋणी हूँ—खासकर मित्रवर बाबू केदारनाथ खण्डेलवाल बी० ए०, एलएल० बी० का, जिन्होंने सन् १९०९ ई० में मेरा ध्यान इस विषयकी ओर आकर्षित किया, और सुप्रसिद्ध बाबू शिवप्रसाद गुप्तका कि जिनकी असीम कृपासे मैं बहुतसी पुस्तकोंका अध्ययन कर सका ।

यही तो कठिनता है । जनसंख्याकी निःसीम वृद्धिसे उचित शिक्षाका प्रबंध नहीं हो सकता । सरकारके कोषमें इतना द्रव्य नहीं कि वह प्रारंभिक शिक्षा तक दे सके । सर्वसाधारण मामूली टैक्सोंके भारसे कुचले जा रहे हैं । वे अधिक टैक्स देकर इस न्यूनताको दूर करनेमें असमर्थ हैं । जब भारतनिवासी अपने बलसे इतने विद्यालय नहीं खोल सकते हैं कि सर्वसाधारणको मामूली शिक्षा भी मिल सके तब क्या और अधिक जन-संख्या बढ़नेसे कभी आसमानसे धन टपक पड़ेगा कि सबको उच्च शिक्षा मिल जायगी ?

भारतवासियोंके लिए उपनिवेश (Emigration)—या दूसरे देशोंके वासी होना असम्भव है, वे कहीं जाने ही नहीं पाते । मजदूरीकी दर बढ़ नहीं सकती । जितनी ही जनसंख्या बढ़ेगी उतने ही मजदूर सस्ते मिलेंगे । यही कारण है जिससे भारत और चीनके मजदूर सारे संसारके मजदूरोंसे कम दर पर काम करते हैं और हर जगह इन दोनों देशोंके मजदूर जाकर काम करते हैं । इसी तरह अनाज भाव भी नहीं घट सकता । जनसंख्याके साथ साथ अन्न आदि जितनी व्यवहारकी चीजें हैं सब महँगी होंगी । अतएव समष्टिवादियों (Socialists) को भी मानना पड़ता है कि जनसंख्याकी निःसीम वृद्धिसे समानताका प्रचार असम्भव हो जाता है । इसलिए निःसीम वृद्धिको रोकना ही होगा । इस तरहके अनेक प्रश्न तो सीधे प्रश्न ही हैं । हाँ जनसंख्या विषयकी दो सवाल गंभीर हैं:—

(१) जनसंख्याकी कमी पर केवल विचारशील सज्जन ही ध्यान देंगे जिसका परिणाम यह होगा कि विचारशील ही पुरुषोंकी सन्तति घटेगी और मूर्खोंकी वैसी ही रहेगी । अर्थात् भले आदमियोंके बच्चोंकी संख्यासे मामूली आदमियोंके बच्चोंकी संख्या अत्यन्त अधिक हो जायगी । और तब देशके अनेक कामोंके लिए अच्छे आदमियोंके बदले मामूली आदमियोंमेंसे चुनाव करना होगा ।

(२) जनसंख्याकी कमीसे जीवन-संघर्ष (Struggle for existence) कम हो जायगा । इससे प्राकृतिक निर्वाचन (Natural Selection) से जो लाभ होता आता है वह बन्द हो जायगा ।

पहले प्रश्नका उत्तर तो यह है कि बिना इस विषय पर ध्यान दिये ही मूलतः बुद्धिमान विचारशील पुरुषोंको स्वभावतः कम बच्चे हुआ करते हैं । इसका रोकना तो असम्भव है । पर साथ ही यह बात भी है कि अपनी स्थिति विचार कर सन्तानोत्पत्ति करनेसे बच्चे सुयोग्य और दीर्घायु होते हैं । वे

देश-दर्शन ।

पहला परिच्छेद ।

विषय-प्रवेश ।

'The production of wealth is but a means to the sustenance of man, to the satisfaction of his wants, and to the development of his activities, physical, mental and moral. But man himself is the chief means of the production of that wealth of which he is the ultimate aim' *Marshall*

सम्पत्तिकी उत्पत्ति ही मनुष्यका उपजीवन, उसकी आवश्यकताओंकी तृप्ति और उसकी शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक उन्नतिका एक साधन है। परंतु जो सम्पत्ति अतमें मनुष्यके ही काममें आनेवाली है उसके उत्पन्न करनेका मुख्य साधन मनुष्य ही है।

—मार्शल ।

आवश्यकता ही इस ससारका मूल मन्त्र है। कीट, पतग, पशु, पक्षी और मनुष्य सभी अपनी अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिमें लगे रहते हैं। प्रत्येक कार्य और उत्पत्तिका मूल कारण आवश्यकता ही है। हम कार्य-क्षेत्रमें इस लिए पैर रखते हैं कि जिसमें उस समयकी आवश्यकतासे निवृत्ति हो।

पदार्थोंको इस लिए पैदा करते हैं कि हमारी जरूरतें रफा हों। विद्यमान पदार्थोंकी उपयोगिता किसी न किसी प्रकारसे इस लिए बढ़ाते हैं कि उससे आदमियोंकी आवश्यकता अधिक अंशमें पूरी हो। बाल और वृद्ध, ज्ञानी और मूर्ख राजा और रंक—कोई आवश्यकतासे खाली नहीं रहता सभी किसी न किसी आवश्यकता—शारीरिक मानसिक आत्मिक सामाजिक या राजनीतिक—की पूर्तिमें जन्मसे मृत्युकाल तक लगे रहते हैं।

इन आवश्यकताओंकी पूर्तिके अनेक साधन हैं। इनमेंसे सम्पत्ति प्रधान है। बिना सम्पत्तिके संसारमें रहकर कालक्षेप करना असम्भव है। बड़ेसे बड़े महात्मा योगीश्वर विद्वान् और वैज्ञानिकोंको सम्पत्तिमानोंका आश्रय लेना पड़ता है। बिना थोड़ी बहुत सम्पत्तिके किसी तरह काम नहीं चल सकता। सम्पत्ति और मनुष्यमें घनिष्ठ सम्बन्ध है। मनुष्यकी उन्नति—व्यक्तिगत सामाजिक या राष्ट्रीय—सम्पत्तिके उचित प्रयोग पर निर्भरित है; और साथ ही सम्पत्तिकी उत्पत्ति मनुष्यकी उत्तमता—शारीरिक मानसिक और चारित्रिक (moral)— पर निर्भर है। जिसमें जितनी योग्यता है वह उतना ही सम्पत्तिमान् होता है। अयोग्य क्षीण हो सुयोग्योंको अपना स्थान दे देता है। सुयोग्य अयोग्योंसे अधिक सम्पत्ति संचय करके प्रतिदिन उन्नति करता जाता है और अयोग्य सम्पत्तिहीन होकर अवनतिके गहरे गड्ढेमें गिर जाता है। सुयोग्य सम्पत्तिमान् और श्रीमान् बनता है और अयोग्य क्षीण और हीन होकर मर मिटता है। दूसरे शब्दोंमें यही बात यों कही जा सकती है कि अधिक सम्पत्तिमान् अधिक सुयोग्य बन सकता है। सम्पत्तिमान् जीता है और सम्पत्तिहीनकी मृत्यु होती है।

भिन्न भिन्न जाति या देशके मनुष्योंमें बहुत भेद है। उनकी मानसिक और शारीरिक अवस्थामें भिन्नता है। इसी कारण जाति जातिके मनुष्योंमें उत्पादक शक्तिमें भी अन्तर होता है। चीन और भारतकी जनसंख्या भूमण्डलके सभी देशोंसे अधिक है पर इन दो देशोंसे अधिक सम्पत्तिहीन देश अन्य संसारमें नहीं पाया जाता। इससे देखना यह है कि सम्पत्तिकी उत्पत्तिके लिए मनुष्यमें क्या क्या गुण होने चाहिए।

संसारके सभी कामोंमें श्रमकी आवश्यकता होती है। बिना श्रमके छोटा या बड़ा कोई काम पूरा नहीं हो सकता। शारीरिक मानसिक और चारित्रिक बलके अनुसार मनुष्योंमें न्यूनाधिक श्रम या कार्य-शक्ति होती है। जिन व्यक्ति-

योका * शरीर पुष्ट है, नर्वस सिस्टम (nervous system) ठीक हैं, जिनमें बल है, पुरुषार्थ है, साहस और उमंग है, वे इन गुणोंसे रहित अथवा उन श्रमियोंकी अपेक्षा जिनमें इनकी कमी है, अधिक कार्य कर सकते हैं। यही कारण है कि डच अमेरिकनसे, अमेरिकन अँगरेजसे, अँगरेज फ्रांसीसीसे, फ्रांसीसी रूसीसे और रूसी भारतवासी श्रमीसे अधिक काम कर सकता है। बंगालीसे अधिक हिंदुस्तानी, हिंदुस्तानीसे अधिक पंजाबी, पंजाबीसे अधिक जाट, जाटसे अधिक राजपूत और राजपूतसे अधिक पेशावरी श्रमी काम कर सकता है।

माननीय मैकलियाडके कथनानुसार अमेरिकाका एक श्रमी ५ टन, इंग्लैंडका २½ टन और भारतका श्रमी कुल ½ टन कोयला प्रतिदिन खोद सकता है। अर्थात् एक अमेरिकन श्रमी १० भारतीय श्रमियोंके और एक अँगरेज श्रमी ५ भारतीय श्रमियोंके बराबर है। +

एक ३०० रुपयेकी घड़ी ज्यादा टिकाऊ होती है, ठीक समय देती है और २५–३० वर्ष तक घड़ीसाजकी दूकान नहीं देखती, पर, उसी कारखानेकी ३ रुपयेकी घड़ी हर हफ्ते घंटे भर स्लो–फास्ट जाती है और वर्ष दो वर्षके बाद ही निकम्मी हो जाती है। कारण यह कि दामी घड़ीके पुर्जे बहुत अच्छे और मजबूत धातुके बने होते हैं और सस्ती घड़ीके मामूली और कमजोरके। ठीक इसी तरह जिस श्रमीका जन्म सुयोग्य, बलवान्, आरोग्य और उत्तम कुलवाली जाति (influence of race) में होता है और उसके ब्रह्मचर्य्य आदि आश्रमोंकी पूर्णतः रक्षा की जाती है, वह अधिक

---

* श्रमीसे मेरा मतलब कुलीसे नहीं है, हरतरहका छोटा या बड़ा काम करनेवाले नरनारीको श्रमी समझना चाहिए।

+ श्रमके मापके लिए हमें यह देखना है कि किस देशका श्रमी नित्य कितने घंटे, सालमें कितने दिन और जीवनमें कितने वर्ष काम करता और कितना काम खतम करता है। भिन्न भिन्न देशोंके श्रमियोंकी कार्य-शक्तिका अनुमान करनेके लिए एक ही तरहका काम, एक ही तरहके औजारसे होना चाहिए। पत्थरका कोयला खोदनेमें श्रमियोंके श्रमका ठीक अन्दाज हो सकता है। लकड़ी चीरनेमें भी उनके श्रमका मुकाबला हो सकता है। लार्ड मेहनके कथनानुसार एक अँगरेज ३२ भारतीय लकड़हारोंके बराबर लकड़ी चीर सकता है।

कार्यकुशल (efficiency of labour) होता है और उसमें कर्मशक्ति भी अधिक होती है; साथ ही वह बहुत दिनोंतक कार्य करता है। आप जानते हैं कि बड़ी लाइन (ई. आई. आर.) का इंजन छोटी लाइन (बी. एन. डब्ल्यू. आर.) के इंजनसे बहुत तेज चलता है और ज्यादा गाड़ियाँ खींचता है। पर साथ ही बड़े इंजनके लिए कोयला और पानी भी अधिक चाहिए। इसी तरह जिस जातिके श्रमी जितना अधिक और पुष्टिकर पदार्थ खाते हैं उनमें उतनी ही कर्मशक्ति पैदा होती है। किस प्रकारके श्रमीको कौन कौनसे पदार्थ खाने चाहिए, इसके विचारसे भी अधिक कार्यशक्ति उत्पन्न होती है। चतुर और कार्यकुशल स्त्रियाँ विज्ञानकी सहायतासे बहुत कम खर्चमें अपने परिवारके खानपानका उत्तम प्रबन्ध कर लेती हैं। पर दूसरी अधिक व्यय करके पाचनशक्तिसे अधिक पुष्टिकर पदार्थ और हानिकारक चटपटी चीजें बनाती हैं और समय तथा ऋतुपर ध्यान न देकर दुलार और प्यारके वशी भूत हो अपने कुटुम्बकी बीमारीका कारण होती हैं जिससे शारीरिक बल घटता है और श्रमी उचित मात्रामें कार्य नहीं कर सकते। रहे वे अभागे जिन्हें ऋतुके अनुसार वस्त्र और पेटभर भोजनका सौभाग्य प्राप्त ही नहीं होता सो वे कहाँ तक कार्य कर सकते हैं यह बतानेकी जरूरत नहीं।

शारीरिक बलकी रक्षाके लिए जैसे भोजन और वस्त्रकी आवश्यकता है वैसे ही विश्राम भी अत्यावश्यक है। दिनभरके कड़े परिश्रमके पश्चात् यदि श्रमियोंको पूरा आराम न मिले तो दूसरे दिन वे कार्य करनेमें असमर्थ रहेंगे। इसके लिए ऐसे मकानोंका होना परमावश्यक है जिनके प्रत्येक कमरेमें वायु और प्रकाशकी सुगमता हो वर्षा और शीतमें नमीसे बचे हों नालियाँ आदि साफ हों सारा ग्राम शुद्ध और पवित्र दीखता हो। जिन देशोंमें श्रमियोंके आरामका उत्तम प्रबन्ध होता है उनके मन-बहलावके लिए पुस्तकालय नाट्यशालायें सैरगाह आदि होते हैं विश्रामके लिए पक्के मकान होते हैं जिनमें स्वच्छ वायु और निर्मल प्रकाशकी कमी नहीं रहती जहाँ स्थान स्थानपर पार्क और मनोहर बाग-बगीचे बने होते हैं वहाँके श्रमियोंमें कर्मशक्तिकी सीमा नहीं होती। इन श्रमियोंमें और उनमें—जहाँ इन बातोंका अभाव है—पृथ्वी और आकाश का अन्तर होता है। वे भाग्यवान् श्रमी उन अभागे श्रमियोंकी अपेक्षा—जिन्हें इन सुखोंका सौभाग्य प्राप्त नहीं है—१ या २ गुना अधिक काम करते हैं।

इस संसारमें स्वार्थका राज्य है। जिस मात्रामें हमारा हित सधता है उसी मात्रामें हम दूसरोंका काम करना चाहते हैं। जिस काममें निज उन्नति और लाभकी आशा होती है उसे हम मन लगाकर करते हैं—अन्यथा बेगार टालते हैं। मिस्टर आर्थरने सच कहा है कि 'बजर जमीन, यदि किसीको सदाके लिए दे दी जाय, अर्थात् वह उसका मालिक बना दिया जाय तो कुछ ही कालमें वह सुन्दर बाग बन जायगी'—'Magic of property turns sand into gold' जब श्रमीको यह भय होता है कि अधिक कार्य करनेका लाभ उसे न मिलेगा, अधिक उपजमें उसका भाग न लगाया जायगा, वह उपज या आर्थिक लाभसे वंचित रक्खा जायगा, तो ऐसी अवस्थामें तन मन धन अर्पण करके वह अधिक उत्पत्ति काहेको करने लगा। प्रत्येक श्रमीको श्रमसे उत्पन्न किये गये द्रव्यका पूरा फल न मिलनेसे उसका उत्साह भंग होता है, वह आलसी बन जाता है और उत्पादक शक्तिका ह्रास होता है। और जिस कामको श्रमी अपना समझकर करता है, जिसके करनेमें वह अपनी उन्नति देखता है, जिस कामकी अधिक उत्पत्तिमें अधिक फल पानेकी आशा रहती है, उसे वह निराश श्रमियोंकी अपेक्षा कहीं अधिक मात्रामें करता है। अर्थात् उन्नति या लाभकी आशा होनेसे श्रमियोंमें कार्यशक्ति बढ़ती है।

राज्यनियम और जातीय रीति-रिवाज भी उत्पत्ति पर बहुत बड़ा प्रभाव डालते हैं। जिस देशके अभागे निवासी विदेशी राज्यके जूयेंके तले दबे हों, जहाँका राजा प्रजाको परतंत्र रखता हो, जहाँके आय-व्ययमें प्रजाको स्वतन्त्रता न मिली हो, जहाँ जात-पाँत, छूआ-छूत आदि अनेक सामाजिक बन्धन हों, वहाँके श्रमी स्वतंत्र देश और समाजके श्रमियोंका मुकाबला नहीं कर सकते। स्वतन्त्रता और परिवर्तन—ये दो बड़े कारण हैं जिनसे नई बस्ती (colony) वाले, अपने मातृभूमिसे सब बातोंमें बढ़ जाते हैं। अमेरिकाके प्रत्येक बातमें आगे बढ़नेका कारण, वहाँके श्रमियोंकी शारीरिक बल तथा बुद्धिकी विशेषताका प्रधान कारण मानसिक आनंद, उत्साह, परिवर्तन और स्वतन्त्रता है।

जब एक बालक संसारमें उत्पन्न होता है तब सामाजिक और पैतृक संस्कारोंको लेकर आता है। किन्तु वह अयोग्यता और अविद्या आदिका पुञ्ज ही होता है। माता, पिता, गुरु, पुरोहित आदि शिक्षक उसे उक्त दुरवस्थासे निकालनेमें भाग लेते हैं। जिस मनुष्यको अपनी अनेक शक्तियोंके बढ़ानेका जितना

ही सुमनस्मर प्राप्त होता है वह उतना ही कर्मयुक्त होकर अपने कुटुम्ब
और देशकी सेवा करता है। शिक्षासे विद्यमान पदार्थोंकी उपयोगिता ब
द संसारियोंके उपयोगके लिए अधिक कामकारी वस्तुएं बनती हैं अ
शिक्षासे सम्पत्तिकी उत्पत्तिमें वृद्धि होती है।

रेल तार जहाज छापेखाने आदि अनेक आविष्कार केवल पदार्थोंके
तर हैं। इस संसारमें कोई ऐसी वस्तु उत्पन्न नहीं हो सकती जो पह
विद्यमान न हो। अभावसे भाव अथवा भावसे अभाव नहीं हो सकता
न किसी पदार्थकी उत्पत्ति होती है और न नाश। दोनों अवस्थाओंमें
मात्र रूपका परिवर्तन होता है। मनुष्य अपनी बुद्धिके अनुसार विद्यमान
र्थोंमें परिवर्तन करके उनकी उपयोगिता बढ़ा लेता है।

जो वस्त्र आप धारण किये हैं या जो पदार्थ आप पास किये हैं वे वि
ही मनुष्योंके यत्नसे उत्पन्न हुए हैं। पृथ्वी प्रकृति ऐसी श्रम व्यवसाय क
अनेक साधनोंसे उनकी उत्पत्ति हुई है। प्रत्येक पुरुषकी बुद्धि तथा शारी
बल आदि शक्तियोंके लगानेसे ही आपको वस्त्र और भोजन प्राप्त होता
किसी भी वस्तुकी उत्पत्तिमें वृद्धि करनेके लिए नाना प्रकारकी शिक्षा अ
श्यक हैं। इधर, शिल्पकार व्यवसायी राजनीतिज्ञ पण्डित या वैज्ञानि
सबका लगाव एक दूसरेसे है और सब सम्पत्तिकी उत्पत्ति वृद्धि और र
साधन हैं। अस्तु। जिस देशमें जितना ही शिक्षाका प्रचार है वहां जि
व्यापारिक व्यावसायिक रासायनिक भौगोलिक सामरिक कृषि आदि अ
शिक्षाएं पढ़ाई जाती हैं उस देशके वासी उतने ही कर्मयुक्त होते हैं
नये नये आविष्कारोंसे अपने देशकी उन्नति करते हैं। जिन जातियों देशों
शिक्षाका अभाव होता है वहांके अधिवासियोंमें कार्यशक्ति भी स्वभावतः कम हो
है। विद्याविहीन पशुः—जिनमें विद्याका अभाव है वे इस संसारमें भूमि
भार होकर मनुष्यके रूपमें पशुओंका काम करते हैं। सुशिक्षित देशका जो
भी अशिक्षित देशके पशु-धर्मीको कुचलकर निर्जीव किया करता है। शि
भी सम्पत्तिमान होकर उन्नति करता और जीवित रहता है और मूर्ख
दरिद्र होकर मर मिटता है।

सारांश यह कि अन्य जातियोंके सम्मुख जीवित रहनेके लिए संसार
अपना अस्तित्व स्थिर रखनेके लिए मनुष्यमें मनुष्यका गुण होना चाहिए
मूर्ख और अन्धहीन मनुष्य देशको लाभ पहुंचानेके बदले हानि पहुंचाते हैं अ

सुयोग्य बननेके लिए पैतृक और सामाजिक संस्कारकी शुद्धता, आचरण या चरित्रकी पवित्रता, निर्मल जल, शुद्ध वायु, पुष्टिदायक भोजन, स्वच्छ हवादार मकान, इन्द्रियनिग्रह, स्वास्थ्यरक्षा और उत्तम चिकित्साशास्त्रका ज्ञान, सर्व प्रकारकी विद्या, और सर्वोपरि स्वतन्त्रताकी परम आवश्यकता है।

सभ्य जगतका इतिहास बतलाता है कि मनुष्यको समय समय पर आवश्यकतानुसार सन्तानोत्पत्तिमें न्यूनता या अधिकता करनी पड़ती है। ['The growth of numbers among animals is governed by present conditions, among men it is affected by the traditions of the past and forecast of the future'—*Marshall*] भारतवर्ष सैकड़ों वर्षसे विद्याहीन है। वह प्राचीन सभ्यता, शास्त्राज्ञा आदि भूलकर अनेक दोषों और कुरीतियोंके दलदलमें बेतरह फँस गया है। समयको पहचान कर सभ्य समारके साथ साथ चलना भारतके लिए असम्भव हो गया है। इस दलदलसे निकलनेकी कोई सूरत भी नहीं देख पड़ती।

भारतमें दरिद्रताकी सीमा नहीं, अकाल या कहत निरन्तर पड़ा करते हैं, विद्यामें उन्नति नहीं हो सकती, सार्वजनिक प्रारम्भिक शिक्षा तकके लिए द्रव्य नही है, मद्यपान और व्यभिचार बढता जाता है—तिसपर भी यहाँके निवासी बिना समझे बूझे, आँख बन्द करके सन्तानोत्पत्ति किये जाते है जिसका निश्चित परिणाम मृत्युकी अधिकता, और क्रमश इस जातिका पृथ्वीसे निर्मूल हो जाना है। इस भारी विपत्तिसे कैसे छुटकारा हो सकता है, इस विषयपर विद्वानोंकी क्या सम्मति है, प्रकृतिका क्या नियम है, आदि बातोंपर आगे विचार किया गया है और सप्रमाण सिद्ध किया गया है कि भारतवर्षमें विवाहित स्त्रीपुरुषोंकी ऐसी अधोगति है, भावी सन्तान तथा भारतके भविष्यका दृश्य ऐसा हृदयविदारक है कि एकबार उसको देखकर कोई यह विश्वास नहीं कर सकता कि ऐसे भारतनिवासी किसी तरह देशोद्धार कर सकेंगे। ये उलटे देशपर भारस्वरूप होंगे।

भारतवर्षमें मनुष्योंकी सख्या बढानेकी इस समय इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी पुरुषार्थी, शारीरिक और मानसिक बलसे सम्पन्न, देशके प्रेममें रत, देशसेवक वीर उत्पन्न करनेकी है। अत हम भारतवासियोंका प्रथम और महान् कर्तव्य है कि हम उतने ही बच्चे पैदा करें जितनोंको हम अपने शारीरिक, मानसिक और आर्थिक बलके अनुसार अपनी जाति और देशके लिए

ही सुअवसर प्राप्त होता है वह उतना ही कार्यकुशल होकर अपने कुटुम्ब जाति और देशकी सेवा करता है। शिक्षासे विद्यमान पदार्थकी उपयोगिता बढ़ती है नरनारियोंके उपभोगके लिए अधिक कामकी वस्तुयें बनती हैं अर्थात् शिक्षासे सम्पत्तिकी उत्पत्तिमें वृद्धि होती है।

रेल तार जहाज छापेखाने आदि अनेक आविष्कार केवल पदार्थोंके रूपान्तर हैं। इस संसारमें कोई ऐसी वस्तु उत्पन्न नहीं हो सकती जो पहलेसे विद्यमान न हो। अभावसे भाव अथवा भावसे अभाव नहीं हो सकता अर्थात् न किसी पदार्थकी उत्पत्ति होती है और न नाश। दोनों अवस्थाओंमें एकमात्र रूपका परिवर्तन होता है। मनुष्य अपनी बुद्धिके अनुसार विद्यमान पदार्थोंमें परिवर्तन करके उनकी उपयोगिता बढ़ा लेता है।

जो वस्त्र आप धारण किये हैं या जो पदार्थ आप पास किये हैं वे कितने ही मनुष्योंके यत्नसे उत्पन्न हुए हैं। पृथ्वी प्रकृति पूँजी श्रम व्यवसाय आदि अनेक साधनोंसे उनकी उत्पत्ति हुई है। प्रत्येक पुरुषकी बुद्धि तथा शारीरिक बल आदि शक्तियोंके व्ययसे ही आपको वस्त्र और भोजन प्राप्त होता है। किसी भी वस्तुकी उत्पत्तिमें वृद्धि करनेके लिए नाना प्रकारकी शिक्षा आवश्यक है। कृषक शिल्पकार व्यवसायी राजनीतिज्ञ पण्डित या वैज्ञानिक सबका प्रभाव एक दूसरेसे है और सब सम्पत्तिकी उत्पत्ति वृद्धि और रक्षाके साधन हैं। अस्तु। जिस देशमें जितना ही शिक्षाका प्रचार है वहाँ जितनी व्यापारिक व्यावसायिक रासायनिक ज्योतिष गणित कृषि आदि अनेक विद्यायें पढ़ाई जाती हैं उस देशके भी उतने ही कार्यकुशल होते हैं और नये नये आविष्कारोंसे अपने देशकी उन्नति करते हैं। जिन अभागे देशोंमें विद्याका अभाव होता है वहाँके व्यक्तियोंमें कार्यशक्ति भी स्वभावतः कम होती है। "विद्याविहीनः पशुः"—जिनमें विद्याका अभाव है वे इस संसारमें भारस्वरूप होकर मनुष्यके रूपमें पशुओंका काम करते हैं। सुशिक्षित देशका धान्य भी अशिक्षित देशके पशु-कर्मोंसे कुचलकर मिट्टीमें मिला रहता है। विद्वान् भी सम्पत्तिमान होकर उन्नति करता और जीवित रहता है और मूर्ख धनी हीन होकर मर मिटता है।

सारांश यह कि अन्य जातियोंके सम्मुख जीवित रहनेके लिए, संसारमें अपना अस्तित्व स्थिर रखनेके लिए मनुष्यमें मनुष्यका गुण होना चाहिए। मूर्ख और बलहीन मनुष्य देशको लाभ पहुँचानेके बदले हानि पहुँचाते हैं और

सुयोग्य बननेके लिए पैतृक और सामाजिक संस्कारकी शुद्धता, आचरण या चरित्रकी पवित्रता, निर्मल जल, शुद्ध वायु, पुष्टिदायक भोजन, स्वच्छ हवादार मकान, इन्द्रियनिग्रह, स्वास्थ्यरक्षा और उत्तम चिकित्साशास्त्रका ज्ञान, सर्व प्रकारकी विद्या, और सर्वोपरि स्वतन्त्रताकी परम आवश्यकता है ।

सभ्य जगतका इतिहास बतलाता है कि मनुष्यको समय समय पर आवश्यकतानुसार सन्तानोत्पत्तिमें न्यूनता या अधिकता करनी पडती है । ['The growth of numbers among animals is governed by present conditions, among men it is affected by the traditions of the past and forecast of the future'—*Marshall*] भारतवर्ष सैकड़ों वर्षसे विद्याहीन है । वह प्राचीन सभ्यता, शास्त्राज्ञा आदि भूलकर अनेक दोषों और कुरीतियोंके दलदलमे बेतरह फँस गया है । समयको पहचान कर सभ्य समारके साथ साथ चलना भारतके लिए असम्भव हो गया है । इस दलदलसे निकलनेकी कोई सूरत भी नहीं देख पडती ।

भारतमें दरिद्रताकी सीमा नहीं, अकाल या कहत निरन्तर पडा करते हैं, विद्यामें उन्नति नहीं हो सकती, सार्वजनिक प्रारम्भिक शिक्षा तकके लिए द्रव्य नहीं है, मद्यपान और व्यभिचार वढता जाता है—तिसपर भी यहाँके निवासी विना समझे बूझे, आँख बन्द करके सन्तानोत्पत्ति किये जाते हैं जिसका निश्चित परिणाम मृत्युकी अधिकता, और क्रमश इस जातिका पृथ्वीसे निर्मूल हो जाना है । इस भारी विपत्तिसे कैसे छुटकारा हो सकता है, इस विषयपर विद्वानोंकी क्या सम्मति है, प्रकृतिका क्या नियम है, आदि बातोंपर आगे विचार किया गया है और सप्रमाण सिद्ध किया गया है कि भारतवर्षमें विवाहित स्त्रीपुरुषोंकी ऐसी अधोगति है, भावी सन्तान तथा भारतके भविष्यका दृश्य ऐसा हृदयविदारक है कि एकबार उसको देखकर कोई यह विश्वास नहीं कर सकता कि ऐसे भारतनिवासी किसी तरह देशोद्धार कर सकेंगे । ये उलटे देशपर भारस्वरूप होंगे ।

भारतवर्षमें मनुष्योंकी संख्या बढानेकी इस समय इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी पुरुषार्थी, शारीरिक और मानसिक बलसे सम्पन्न, देशके प्रेममें रत, देशसेवक वीर उत्पन्न करनेकी है । अत हम भारतवासियोंका प्रथम और महान् कर्तव्य है कि हम उतने ही बच्चे पैदा करें जितनोंको हम अपने शारीरिक, मानसिक और आर्थिक बलके अनुसार अपनी जाति और देशके लिए

सके सेवक और रक्षक बना सकें। यही देशोद्धारका उचित मार्ग है और यही मार्ग दिखाना इस पुस्तकका मुख्य उद्देश्य है।

इस पुस्तकका यह उद्देश्य नहीं है कि जो विवाह या सन्तानोत्पत्तिके योग्य हैं वे विवाह न करें या सन्तानोत्पत्ति न करें। ऐसे योग्य पुरुषोंहीकी सुयोग्य सन्तानसे देशोद्धार होगा। मेरा आशय केवल यह है कि—

(१) बच्चोंका विवाह न हो। वे पढ़ें लिखें द्रव्य उपार्जन करें। जब उनमें अच्छी समझ आ जाय वे अपना भला बुरा और भविष्य पहचान सकें तब विवाह करें और अपनी तथा देशकी स्थिति समझकर सन्तानोत्पत्ति करें। माता पिता या अन्य सम्बन्धियोंपर भरोसा करके विवाह न करें।

(२) किसी माता या पिताको कोई हक नहीं है कि वे बालकों और बालिकाओंका विवाह करके उनका भविष्य बिगाड़ें और देशको नीचे गिरावें।

(३) किसी रोगी अपाहिज या अपनी रोजी कमानेमें असमर्थ पुरुषको अपनी अयोग्यता देखते हुए किसी अवस्थाका सर्वथा व्याहका कोई हक नहीं है। ऐसे पुरुषोंको क्या हक है कि वे विवाह करके आगे दुर्बल बच्चे पैदा करें और सबोंको बिना सहारेके छोड़कर मर जावें, उनकी स्त्रियाँ पेटके लिए वेश्या बनें और बच्चे मुसलमान और ईसाई बनें।

(४) संसारमें किसी स्त्री या पुरुषको कोई हक नहीं है कि अपने स्वार्थके लिए, अपनी हैवानी ख्वाहिश (*To gratify animal passion*) पूरी करनेके लिए दूसरोंको दुःखका भागी बनावे। अपनी त्रुटि देखते हुए किसीको विवाह करने या औलाद पैदा करनेका कोई हक नहीं है।

(५) ऐसे अयोग्य स्त्री और पुरुषोंको आजन्म पवित्र भावसे अविवाहित रहना चाहिए। विवाहित पुरुषोंको इन्द्रियदमन द्वारा अयोग्य सन्तानोत्पत्ति रोकना चाहिए और यदि यह न हो सके तो किसी न्यू-माल्थूसियन यन्त्र या औषधिका आश्रय लेना चाहिए।

तीसरा परिच्छेद ।

वृक्ष और पशु-जगत् ।
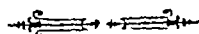
सुप्रसिद्ध फ्रैंकलिन साहबने भलीभाँति विचार कर निश्चय किया है कि "वनस्पति तथा जीवमात्रमें स्वभावहीसे बढनेकी अद्भुत शक्ति है। यदि वे एक दूसरेकी वृद्धिको न रोकें और उनके बढनेके लिए स्थान और आहारका अभाव न होने पावे तो उनके बढ़नेकी कोई सीमा न रहे। यदि इस पृथ्वीपर नाना प्रकारकी वनस्पतियाँ न होतीं, केवल एक ही प्रकारका एक पेड प्रकृतिने लगाया होता, तो यह एक वृक्षही अपनी उत्पादक शक्तिसे इतना बढता कि समस्त पृथ्वी भर जाती।"

माननीय लीनियल साहबने हिसाब लगाया है कि "यदि एक वृक्षमें केवल दो बीज प्रतिवर्ष उत्पन्न हों (संसारके किसी वृक्षमें इससे कम बीज पैदा नहीं होते), तो केवल बीस वर्षमें इस एक वृक्षसे दस लाख वृक्ष हो जायँगे।"

गुलाब फारससे, आलू और सुरती यूरोपसे लाकर भारतमें लगाई गई है। ये तीनों विदेशी पौधे हिमालयसे केपकमोरिन तक खूब पैदा होते हैं। भारतका प्रत्येक निवासी किसी न किसी शकलमें इनको काममें लाता है।

जगत्प्रसिद्ध चार्ल्स डार्विन साहब अपनी ' Origin of Species ' नामक पुस्तकमें लिखते हैं,—" निःसन्देह यदि पशु-पक्षियोंकी वृद्धि रोकी न जाय, तो केवल एक जोडा जानवरके बच्चोंसे सारी पृथ्वी भर जाय।"

पशु-जगतमें हाथी सब पशुओंसे कम बच्चा पैदा करता है। हाथीकी आयु ५०० वर्षके लगभग होती है। इसे ३० सालकी उमरसे ९० सालकी उमर तक

नियमोंको बदलने या उनमें हेरफेर कर अपनी उन्नतिके अनुकूल बनानेका अधिकार प्राप्त है। यह अधिकार हमें प्रकृतिने ही दे रक्खा है अतः इससे काम न उठाना ही प्रकृति-नियमके विरुद्ध चलना है।

मानवीय इतिहास सांसारिक घटनाओंकी ऐसी कड़ी है जो टूटना नहीं जानती। वर्तमान और भूतकालमें कार्य और कारणका सम्बन्ध है और भविष्यकालको इन्हीं दोनोंका परिणाम कहना अनुचित न होगा। ऐसी दशामें भविष्यके सम्बन्धमें भविष्यद्वाणी करनेमें किसी अलौकिक शक्ति अथवा आत्म-शलाघीकी आवश्यकता नहीं। गत घटनाओंकी देखने और उनके प्रभावोंकी भलीभाँति परीक्षा और तुलना करनेसे आनेवाली बातोंकी भी थोड़ी-बहुत खबर मिल सकती है। यह सत्य है कि इन भविष्यद्वाणियोंका ठीक निकलना असम्भव नहीं परंतु साथ ही यह देखते हुए कि ये गत घटनाओंके एक निश्चित परिणाम हैं हम उनको मिथ्या भ्रमात्मक और भ्रष्टोंकी भी नहीं कह सकते।

समय समयपर देशोंद्वारा अथवा देशके कल्याणके लिए अनुभवी भार हुए वहाँ महान् पुरुष ऐसी बातें कह दिखाते हैं जिनके करने या न करनेपर देश जाति या संसार मात्रका भविष्य निर्भर होता है। उन्नतिका कोई एक मार्ग बता देना या यह कह देना कि केवल अमुक कार्य करनेसे ही भविष्य सुधर जायगा असम्भव है। भिन्न भिन्न समयके लोकहितैषी विद्वान् किसी एक विषयको लेकर उसपर अपना विचार प्रकट करते हैं और अपने ढंगपर भविष्य सुधारनेका यत्न बताते हैं। इन्हीं पुरुषरत्नोंकी कोटिमें अंगरेजीके प्रसिद्ध लेखक और तत्ववेत्ता माल्थस साहब भी हैं। आपका मत है कि उन्नतिका सबसे बड़ा बाधक कारण है — th constant tendency in all m ted l f to n reas beyond the nourishment p epa ed f it अर्थात् जीवनधारण करनेके लिए प्रकृतिने जितना आहार प्राणियोंके लिए सम्पादित किया है उससे अधिक प्राणिमात्रमें अपनी संख्या बढ़ानेकी चेष्टा है। खाद्य पदार्थ कितने ही अधिक क्यों न पैदा किये जायँ पर खानेवाले स्वभावतः इतने बढ़ जाते हैं कि वह (जीवन) उनके लिए काफी नहीं होती—प्राणियोंकी वृद्धिमें कम ही रहती है। सारांश यह कि इस संसारमें खानेवाले अधिक और भोजन कम पैदा हुआ करता है।

— देखना यह है कि जीव (organic) सृष्टि पर इस विचित्र प्रकृति-का क्या प्रभाव पड़ता है।

"एक जोड़ा पक्षीसे भी इतने पक्षी बढ़ सकते है कि पृथ्वी भर जाय।"

(देशदर्शन पृष्ठ १२)

" एक जोड़ा पक्षीसे भी इतने पक्षी वढ सकते है कि पृथ्वी भर जाय । '

(देशदर्शन पृष्ठ १२)
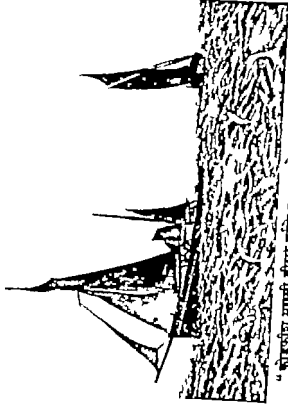
"कोडफीश मछली तीसरे वर्षके बाद ८० से ९० लाख तक अण्डे एक बारमें देती है। ३ वर्षके बाद यदि प्रत्येक उत्पन्न हुई मछली जीती रहे और इसी हिसाबसे बढ़े तो सिर्फ एक मछलीसे ५० ००० ००० ००० ० ● की वृद्धि होकर समुद्र भर जाय।"

(जैनदर्शन पृ. १२)

दे सकते। उनमें एक प्रकारकी स्थूल बुद्धि होती है, उसकी प्रेरणासे वे अपने समूह या दल बढाते चले जाते हैं। वे इस बातसे कभी नहीं हिचकते कि जिनको वे उत्पन्न करते हैं उनके आहारका क्या प्रबन्ध है। जहाँ स्वच्छन्दता होती है वहाँ बढ़नेकी शक्ति अधिक काम करती है। किन्तु, अन्तमें स्थानाभाव तथा आहाराभावके कारण, प्रकृतिके कठोर नियमोंसे वह वृद्धि कुचल भी डाली जाती है।

प्रकृतिका यह एक विलक्षण नियम है कि वह पशु पक्षी और वनस्पतिके बच्चों और बीजोंको स्वच्छन्दतापूर्वक केवल इस लिए बढने देती है कि भूख, प्यास, नमी या स्थानाभावसे उनका सर्वनाश हो। जब उसे (प्रकृतिको) एक बीज या बच्चेकी आवश्यकता होती है तो वह एक करोड पैदा करती है, उस-मेंसे चुनकर एकको ले लेती है और बाकीको तडप-तडप कर मरनेके लिए छोड देती है।

मछली एक ही बार लाखों अण्डे देती है और यदि विघ्न न पडे तो इन सभी अण्डोंसे मछलियाँ पैदा हो सकती हैं। अर्थात् कुछ ही दिनोंमें सिर्फ एक मछलीसे लाखों मछलियाँ हो सकती हैं। पर ये लाखों अण्डे किसी न किसी तरह नष्ट ही हो जाते हैं। कुछ मनुष्यके, और कुछ जन्तुओंके आहार बन जाते हैं। मुश्किलसे इन कई लाख अण्डोंसे दो चार कोडी मछलियाँ बन जाती हैं। फिर भी उनकी जान नहीं बचती—बडी मछलियाँ छोटी मछलि-योंको हडप जाती हैं और कितनी ही मनुष्यके भोजनालयोंमें लाल पीली हुआ करती हैं।

सांपको भी बहुत अण्डे होते हैं, पर बहुधा वे उसी पेटमें चले जाते हैं जिससे निकलते हैं, अर्थात् साँप अपने अण्डे स्वयं ही खा जाता है।

बरगद और पीपल आदि वृक्षोंमें कई करोड बीज हर साल पैदा होते हैं। इनमेंसे प्रत्येक सूईकी नोकके बराबर बीजको यदि काफी नमी, प्रकाश और स्थान मिले तो सबके सब बडे बडे वृक्ष बन जायँ। पर ये सारे बीज नष्ट हो जाते हैं। कुछ पक्षियोंके पेटमें गल पच जाते हैं, कुछ सूख या सड़कर मिट्टीमें मिल जाते हैं, बाकी दस बीस जो उगते हैं उनमेंसे बडे और पुष्ट पौधे छोटोंको दबा डालते हैं, छोटोंकी खोराक—नमी और प्रकाश—बडे पौधे छीनकर खा जाते हैं, अतः वे बहुधा सूख या सड जाते हैं। अर्थात् लाखों करोडों बीजोंकी बरबादीके बाद कहीं एक या दो पौधे बढ़कर दरख्त बनते हैं।

अन्य अनेक पौधोंका भी यही हाल है। हर पौधेको बढ़नेके लिए काफी गर्मी प्रकाश और स्थानका होना आवश्यक है। जब एक ही जगह बहुत पौधे उगकर घने हो जाते हैं तब बढ़ नहीं सकते। मौसिम भी अक्सर पौधोंके विनाशका कारण होता है। पशुके अतिरिक्त कितने ही पौधे मनुष्य और पशुओंके आहारके काम आते हैं कितने ही काटकर जलाये जाते हैं।

मांसाहारी बड़े पशु और पक्षी अपनेसे निर्बल और असहाय छोटोंको खा जाते हैं। मनुष्यके आहारके लिए कई करोड़ पशुओंका नित्य वध होता है।* (मांसाहारी देशोंका क्या पूछना जब फलाहारी पवित्र भारतमें ही १ करोड़ जन मांसाहारी हैं।) करोड़ोंकी संख्या तकलीफ देनेवाले पशु समझकर मारी जाती है। शेर चीते भेड़िये सूअर कुत्ते और चूहे मारनेके लिए इनाम दिया जाता है।

पृथ्वीमें पैदा करनेकी अनन्त शक्ति है। इतने अधिक पशु पक्षी तथा वनस्पति बीजरूपसे पृथ्वीमें छिपे पड़े हैं कि यदि वे स्वतंत्रतापूर्वक अपने आप बढ़ने पावें तो यही दुनिया नहीं ऐसी अनेकों दुनियें कुछ शताब्दियोंमें ही

---

* अमेरिकाके एक मात्र शिकागो नगरके एक ही बूचड़खाने (stock yard) में प्रतिवर्ष सवा करोड़ गायों बकरों और सूअरोंका वध केवल मांसके लिये होता है। इनके अतिरिक्त खाली चमड़ेके लिए भी थोड़े मासि पशु मारे जाते हैं। इनका मूल्य ३३ करोड़ डालर या एक अरब रुपया होता है।

यह बूचड़खाना ५ एकड़ जमीनमें बना है। इसके भीतर नालियोंकी लम्बाई २५ मील और पानी पिलानेके नालोंकी लम्बाई २ मील है। इसमें ७५ गायों ३ सूअरों और ५ बकरोंके रखनेकी जगह बनी है।

इस कारखानेके भीतर कई मीलतक रेलकी सड़क है और आप ट्रेनें खास इस कारखानेके लिए चलती हैं। यहाँ १ हजार मनुष्य नित्य काम करते हैं। इनके लिये कारखानेके भीतर ही एक दैनिक समाचारपत्र निकलने तथा होटल आदिका प्रबन्ध है। ऐसे कितने ही बड़े बड़े बूचड़खाने यूरोपके प्रधान देशोंमें हैं। भारतमें भी मांसके रोजगारियोंने बड़े बड़े बूचड़खाने खोल रक्खे हैं जहाँ मशीन द्वारा लाखों पशुओंका नित्य वध होता है। आगरा और मुज़फ्फरपुर मैंने स्वयं उन्हें देखा है—के।

उनसे भर जायँ । किन्तु प्रकृतिका नियम है कि कोई जीव हदसे ज्यादा न बढने पावे । इसी नियमके अनुसार वह (प्रकृति) खुले हाथों जिन्दगीका बीज बोती है, और हाथ फटकारकर काटती है। वह लाखोंको एक क्षणमें पैदा करती है और तुरन्त ही उन्हें मारकर नष्ट भ्रष्ट कर डालती है। वह करोड़ोंको एक क्षणमें जीवप्रदान करती है और दूसरे ही क्षणोंमें निष्ठुरतासे छीन लिया करती है ।

प्रकृतिके इस भयंकर नियमके अनुसार वनस्पति तथा ज्ञानरहित पशुओंको अपनी निःसीम वृद्धि रोकनी पड़ती है । आगे हम देखेंगे कि हजार प्रयत्न करनेपर भी ज्ञानी और चतुर मनुष्यको इस विलक्षण, पर अटल नियमके आगे सिर झुकाना ही पढता है ।

चौथा परिच्छेद।

मनुष्य-जगत्।

प्रकृतिमें मनुष्यको भी पूर्वोक्त नियमके अधीन रहना है। मानव जाति भी यदि ज्ञानशक्तिसे काम न ले स्वल्प-पशु-बुद्धिके वशीभूत होकर पशुओंके समान स्वच्छन्दतापूर्वक अपना वंश बढ़ाने लगे तो जनसंख्या इतनी बढ़ जायगी कि उसके भरण-पोषणके लिए काफी भोजन न मिल सकेगा। जितनी आबादीके जीवननिर्वाहके लिए खाद्य पदार्थ पृथ्वी पर उत्पन्न होता है उससे उसकी संख्या अत्यन्त अधिक बढ़ जायगी। किन्तु जीवन धारणके लिए भोजन अत्यन्त आवश्यक है। इस कारण आबादी उस संख्यासे अधिक कदापि न बढ़ने पावेगी जिस संख्या तकके भरण-पोषणके लिए खाद्य पदार्थ पृथ्वी पर उत्पन्न किया जाता हो। यदि कभी उस नियमित संख्यासे अधिक आबादी बढ़ेगी तो प्रकृति अपने कठोर नियमोंके अनुसार दुर्भिक्ष आदि अनेक भयंकर रीतियोंसे जनसंख्याको नियमित सीमाबद्ध अवश्य करेगी।

अब यह देखना है कि यदि आबादी स्वच्छन्दतापूर्वक बढ़ने दी जाय तो स्वाभाविक तौर पर वह कितनी बढ़ जायगी। इसी प्रकार भूमिकी उपज भी मनुष्यके अधिकसे अधिक प्रयत्न और परिश्रम करने पर और हरएक बात अनुकूल होने पर किस हिसाबसे बढ़ेगी।

माल्थस साहबने प्रमाण सिद्ध किया है कि यदि खाने पीनेकी सुविधा हो तो हर देशकी जनसंख्या हर पचीसवें साल दूनी होती जाती है। भारतकी जनसंख्या सन् १९११ में ३१ करोड़ थी। यदि यहां खानेपीनेकी सुविधा हो और लोग हर तरह सुखी और संतुष्ट रहें तो २५ वर्षके अंतमें अर्थात् सन् १९३६ में यहांकी जनसंख्या ६२ करोड़ हो जायगी। यदि ये सुविधायें आगे भी कायम रहें तो ५० सालके अंतमें १२४ करोड़, ७५ वर्षके अंतमें २४८ करोड़ और एक शताब्दीके अंतमें यानी २०११ ईस्वीमें भार-

तकी जनसंख्या लगभग ५ अरब, अर्थात् समस्त भूमण्डलकी जनसंख्यासे तीन गुनी हो जायगी।

प्रोफेसर हेनरी फासेटने लिखा है कि "बहुत देशोकी जनसंख्या, जहाँ खाने पीनेकी सुविधा रही है, हर २० वें साल दूनी होती गई है। मनुष्यमें बढ़नेकी ऐसी प्रबल शक्ति है कि यदि यह वृद्धि रोकी न जाय, तो जितने मनुष्य आज इस पृथ्वी पर हैं इससे कहीं अधिक हो जायँ। केवल एक पुरुष और स्त्रीकी सन्तान इतनी अधिक हो सकती है कि उसीसे सारा संसार भर जा सकता है।"

सम्पत्तिशास्त्रवेत्ता जान स्टुअर्ट मिल साहब लिखते हैं कि "३० साल पहले इस न रुकनेवाली वृद्धि पर विश्वास दिलानेके लिए बड़े बड़े प्रभावशाली लेखों और प्रबल दृष्टान्तोंकी आवश्यकता पड़ती थी, पर अब इस समय इतने अधिक और प्रबल दृष्टान्त मौजूद हैं कि यह सिद्धान्त अचल और अखण्डनीय माना जाता है। संसारके बीसों महान् पुरुषोंने इसे इतने उत्तम दृष्टान्तोंसे सत्य सिद्ध किया है कि इसके लिए सुबूतकी जरूरत नहीं। अब यह सिद्धान्त स्वयं सत्य (Axiomatic truth) माना जाने लगा है।"

सम्पत्तिशास्त्रके धुरन्धर पण्डित, वाकर लिखते हैं कि "आस्ट्रेलिया, जहाँ यूरोपवालोंने १७७० ईसवीसे बसना प्रारम्भ किया है, इस बातका प्रत्यक्ष उदाहरण है कि जहाँ खाने पीनेकी सुविधा होगी वहाँकी जनसंख्या हर २५ वें साल या इससे कममें दूनी हो जायगी।"

सुप्रसिद्ध थ्रास्लो साहब लिखते हैं कि "जब जब उद्योगी जन ऐसे नये स्थानोंमें जा बसे हैं—जहाँ कृषिके लिए उत्तम भूमि मिली है और भोजन आदिका सुभीता रहा है—तब तब देखा गया है कि उस बस्तीकी जनसंख्या हर २५ वें या इससे कम वर्षोंमें दूनी होती गई है।"

अमेरिकाकी उत्तरी रियासतोंमें, बस्ती नई होनेके कारण जमीन बहुत उपजाऊ थी। पुरुषोंकी सुयोग्यता और परिश्रमशीलतासे खाद्यपदार्थ अधिकतासे उपजते थे। वहाँके निवासियोंमें दुष्कर्मकी मात्रा भी बहुत कम थी। विवाहका प्रचार यूरोपसे अधिक था। वहाँकी कुछ रियासतोंमें—जो पीछेसे बसी थीं—आबादीके दुगुनी होनेमें सिर्फ १५ ही वर्ष लगे। कुछ प्रांतोंमें १२ वर्षमें, और किसी किसीमें तो १० ही वर्षमें आबादी दूनी होती हुई देखी गई है।

अमेरिकाकी निम्नलिखित सरकारी रिपोर्टसे प्रकट होता है कि वहाँ की जनसंख्या हर २५ वें वर्ष दूनी होती गई है—

संयुक्तराज्य-अमेरिकाकी जनसंख्या *

सन् १७९० ई० में	३९,२९,२१४
सन् १८००	५३,०८,४८३
" १८१०	७२,३९,८८१
" १८२०	९६,३३,८२२
" १८३०	१,२८,६६,०२०
" १८४०	१,७०,६९,४५३
" १८५०	२,३१,९१,८७६
१८६०	३,१४,४३,३२१
सन् १८७० ई० में	३,८५,५८,३७१
१८८० "	५,०१,५५,७८३
१८९० "	६,२९,४७,७१४
१९०० "	७,५९,९४,५७५
१९१० "	९,१९,७२,२६६ †

अतः सिद्ध हुआ कि अधिकसे अधिक २५ वर्षमें यदि कोई रुकावट न हो तो जनसंख्या दूनी हो सकती है।

पृथ्वीकी उपज किस हिसाबसे बढ़ेगी इसका अनुमान करना सहज नहीं है। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उपज उतनी तेजीके साथ न बढ़ेगी जितनी तेजीके साथ आबादीकी वृद्धि होगी। एक लाख या एक करोड़ मनुष्योंकी आबादी एक हजार मनुष्योंकी आबादीकी तरह हर २५ वें वर्ष अवश्य दूनी हो जायगी। किन्तु अधिक संख्याके लिए खाद्य पदार्थ उतनी आसानीसे न बढ़ाया जा सकेगा। यदि यह मान लिया जाय कि संसारमें जितनी उप

---

* Statesman year book for 1911 page 559.

Increase by Emigrants from 1840 to 1900 A. D 4·66, 10·40, 10·88, 7·86, 7·29, 10·46, 5·86 respectively

† और १९११ में अमरीकाकी जनसंख्या ९ २ १७ ६१२ थी।—संशोधक।

जाऊ जमीन है सबमें खाद्य पदार्थ उत्पन्न किया जाय तो भी यह असम्भव है कि आबादीके साथ साथ उपज भी हर २५ वें वर्ष दूनी हो जाया करेगी।

इसमें सन्देह नहीं कि विज्ञानकी सहायतासे नये ढंग पर खेती करनेसे, बिजली, उत्तम खाद और नये नये कल-पुर्जोंके प्रयोगसे वर्तमान उपजसे कहीं अधिक उत्पादिका शक्ति बढ़ाई जा सकती है। परन्तु किसी देशकी उपज, मनुष्य चाहे कितना ही प्रयत्न क्यों न करे, हर २५ वें साल दूनी नहीं हो सकती। यह बात सर्वथा असम्भव है। पहले २५ वर्षमें उपजमें चाहे जो वृद्धि हो जाय, पर दूसरे २५ वर्षोंमें उपज कदापि न बढ़ाई जा सकेगी। क्यों कि पृथ्वीकी उत्पादिका शक्ति निरन्तर बढती नहीं, घटती है।

मनुष्यकी वृद्धि 'Geometrical ratio' से दूनी होती है। अर्थात् वह १ से २, २ से ४, ४ से ८, ८ से १६ और १६ से ३२ हो जाती है। पर अन्न आदि खाद्य पदार्थोंकी वृद्धि 'Arithmetical ratio' से एक एक करके होती है। अर्थात अन्न एक सेरसे दो सेर, २ से ३, ३ से ४, ४ से ५, ५ से ६—७—८—९ फिर दस सेर होता है।

यहाँ कल्पना कीजिए कि भारतकी जितनी उपजाऊ जमीन है सब पर नई वैज्ञानिक रीतिसे खेती होती है। भूमिकी उपज हर साल बजाय घटनेके बढ़ती जाती है और यहाँके निवासियोंके भोजनके लिए काफी है। भारत-वर्षकी वर्तमान जनसंख्या ३१ करोड़ है। यही आबादी पहले २५ वर्षोंमें बढकर दूनी, अर्थात् ६२ करोड हो जायगी, और पृथ्वीकी उपज भी २५ वर्षोंमें दूनी होकर इस बढी हुई जनसंख्याके भरण-पोषणके लिए काफी होगी। दूसरे २५ वर्षोंमें आबादी १२४ करोड़ हो जायगी, और उपज सिर्फ (६२+३१) ९३ करोड मनुष्योंके लिए पर्याप्त होगी। तीसरे २५ वर्षोंमें आबादी २४८ करोड होगी, और खाद्य पदार्थ सिर्फ (९३+३१) १२४ करोड जनोंके लिए काफी होंगे। चौथे २५ वर्षोंमें यानी १०० वर्षके बाद आबादी बढकर ४९६ करोड हो जायगी, और अन्न आदि खाद्य पदार्थ केवल (१२४+३१) १५५ करोड जनोंके पोषणके लिए पर्याप्त होंगे। इस तरह कुल एक शताब्दीके बाद ३४१ करोड भारतवासियोंके जीवन-निर्वाहके लिए कोई सहारा न रहेगा।

भारतके स्थानपर यदि हम समस्त पृथ्वीको रख लें और पृथ्वीकी वर्तमान जनसंख्या १ अरब मान लें तो भूमण्डलकी जनसंख्या १, २, ४, ८, १६,

३२ ६४ १२८ २५६ –इस हिसाबसे बढ़ेगी और भूमिकी उपज केवल १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ के हिसाबसे। दो सौ वर्षमें आबादी २५६ अरब हो जायगी पर उपज केवल ९ अरबके पोषणके लिए बढ़ सकेगी। दो हजार वर्षमें आबादी और उपजमें बेहिसाब अन्तर पड़ जायगा।

ऊपरके उदाहरणसे सुयोग्य पाठकोंको मालूम हो गया होगा कि यदि तमाम उपजाऊ जमीनपर खाद्य पदार्थ उपजाये जायँ जहाँतक सम्भव हो जंगल काटकर खेत बनाये जायँ ऊसर और बंजर स्थान भी मनुष्यके श्रम और उद्योगसे अच्छे उपजाऊ खेत बना लिये जायँ और यथाशक्ति और यथा-सम्भव वैज्ञानिक नवीन उत्तम रीतिसे खेती की जाय तो भी एक समय आवेगा और निश्चय आवेगा कि जब मनुष्यकी संख्या उपजसे कहीं अधिक बढ़ जायगी।

आबादीकी इस बेहिसाब बाढ़को रोकनेके लिए और आबादीको उस संख्या तक बढ़ानेके लिए कि जिस संख्या तकके जीवन निर्वाहके लिए पृथ्वीमें खाद्य पदार्थ उत्पन्न हो रहा है यही बड़ी दैवी और मानुषी शक्तियाँ काम किया करती हैं। प्रकृति किसी तरह भी जनसंख्याको बेहिसाब न बढ़ने देगी। हजार सर मारने और प्रयत्न करने पर भी अभिमानी मनुष्यके प्रकृति-

* अमेरिका या अन्य नई बस्तियोंमें आबादीका बढ़ना बराबर ऐसा ही न रहेगा। कुछ ही कालमें वहाँ भी खाद्य पदार्थोंकी कमी हो जायगी और तब वहाँकी जनसंख्या इस तेजीसे न बढ़ सकेगी।

नई दुनिया या नई बस्तियोंके मुकाबलेमें पुरानी दुनियाकी आबादी बहुत देरमें बढ़ती देखी जाती है। कारण यह कि यूरोप या एशिया आदि देशोंमें अमेरिकाकासा सुख और चैन नहीं मिलता इन देशोंकी जनसंख्या काफी बढ़ गई है। मलथर (?) विस्कन्ने सन् १ ५ में हिसाब लगाया था कि भारतकी आ-बादी ३ वर्षमें प्रशियाकी ४२ वर्षमें नेदरलैंडकी ५२ वर्षमें रूसकी ६६ वर्षमें फ्रान्सकी १६ वर्षमें और आस्ट्रियाकी १४८ वर्षमें दूनी हो जायगी।

१ १ में भारतवर्षकी जनसंख्या लगभग १८ करोड़ थी। १९११ में ३१ करोड़ हुई। अर्थात् १८ १ से यदि देखा जाय तो भारतकी आबादी ४५ वर्षमें दूनी होगी।

के इस अटल नियमके आगे सर झुकाकर अपनी बेहिसाब स्वच्छन्द बाढ़को रोकना पड़ेगा।

जगतकी जगम सृष्टि—वनस्पति, पशु और पक्षी—सबके लिए प्रकृतिका एक नियम है। ससारमात्रके सजीव प्राणियोंको उसने इस नियमके अधीन कर रक्खा है-कोमल कमल और नर्मदा नदीके तटका विशाल वटवृक्ष, सुन्दर लघु वीरबहूटी और मतवाला हाथी, अथवा सबका राजा अभिमानी मनुष्य—सबको प्रकृतिने उसी एक भयंकर, पर अचल नियमके अधीन कर रक्खा है।

प्रथम खण्डका सारांश।

जंगम सृष्टिमें सम्पादित आहारसे अत्यन्त अधिक बढ़ जानेकी स्वाभाविक चेष्टा है।

प्रकृतिमें पैदा करनेकी अनन्त शक्ति है। पृथ्वीमें पशु पक्षी और वनस्पति बीजरूपसे इतने अधिक हैं कि यदि वे स्वच्छन्दतापूर्वक बढ़ने पावें तो कुछ ही कालमें इस भूमण्डलकी तरह कितने ही संसार उनसे भर जायँ। पर प्रकृति उनकी बेहद बाढ़ रोक देती है।

मनुष्यमें भी अपनी खोराकसे अधिक बढ़ जानेकी चेष्टा है।

आबादी हर २५ वें साल दूनी हो जाती है परन्तु अन्न आदि खाद्य पदार्थोंकी उपज इस तेजीसे नहीं बढ़ सकती।

आबादी अवश्यमेव उसी संख्या तक परिमित रहेगी जिस संख्याके पोषणके लिए अन्न मौजूद है।

जनसंख्या अन्नकी वृद्धिके साथ ही साथ बढ़ेगी।

जनसंख्याकी निःसीम वृद्धिको रोकने और उसे एक नियत संख्याके भीतर रखनेवाले अनेक दैवी और मानुषी कारण काम किया करते हैं।

The greatest social evil of the day is to marry and beget children whom one cannot support.

अर्थात् आजकलका सबसे बड़ा सामाजिक दोष विवाह करके ऐसे बच्चे उत्पन्न करना है जिनका भरण-पोषण मनुष्य स्वयं न कर सकता हो। —संशोधक।

दूसरा खण्ड।

"what I must do is all that concerns me, not what people think. It is easy to live in the world after the world's opinion, it is easy in solitude to live after our own; but the great man is he who in the midst of the crowd keeps with perfect sweetness the independence of solitude"

—*Emerson.*

पहला परिच्छेद।
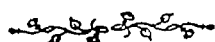
जनसंख्याकी निःसीम वृद्धि कैसे रुकती है ?

प्रकृतिमें पैदा करनेकी अनन्त शक्ति है; किन्तु स्वच्छन्दतापूर्वक वह किसी जीवको हदसे ज्यादा बढने नहीं देती। वनस्पति तथा पशुओंमें ऊपर कहा हुआ नियम बहुत साफ तथा आसानीके साथ देखा जाता है। उनमें मनुष्यकी तरह अच्छे और बुरेका ज्ञान या विवेक नहीं। उनमें एक प्रकारकी स्थूल बुद्धि होती है, उसीकी प्रेरणासे वे अपने समूह या दल बढाते चले जाते हैं। वे इस बातसे कभी नहीं हिचकते कि जिनको वे उत्पन्न करते हैं उनके आहारका क्या प्रबन्ध है।

मनुष्य और पशुओंमें अन्तर यह है कि मनुष्यमें पशुओंके समान स्थूल बुद्धिके अतिरिक्त ज्ञानशक्ति भी है। जब मनुष्य स्थूल पशुबुद्धिके वशीभूत होकर पशुओंके समान अपना वर्ग बढाने लगता है तब ज्ञानशक्ति आकर उससे पूछती है कि जिनको वह उत्पन्न करेगा उनके भरण-पोषणका भी उसने कुछ प्रबन्ध किया है या नहीं। यदि वह ज्ञानशक्तिके इस संकेतकी ओर कुछ ध्यान न देकर ज्ञानरहित पशुओंकी तरह सन्तान उत्पन्न करता चला जाय और इस बातको बिलकुल न सोचे कि उनके भरण-पोषणके लिए काफी भोजन है या नहीं, तो इसका यह फल होगा कि जितनी आबादीके जीवन-निर्वाहके लिए खाद्य पदार्थ पृथ्वीपर उत्पन्न होते हैं उनसे वह अधिक बढ़ जायगी। किन्तु जीवनधारणके लिए भोजन अत्यन्त आवश्यक है। इस कारण आबादी कभी उस संख्यासे अधिक नहीं बढ सकती जिस संख्या तकके भरण-पोषणके लिए काफी खाद्य पदार्थका प्रबन्ध किया जा सकता हो। जब जब उस संख्यासे अधिक आबादी बढ़ेगी, तब तब मनुष्य-समाज अनेक क्लेशोंसे पीड़ित तथा जर्जरित होगा। आबादीकी इस बेहिसाब बाढ़को रोकनेके लिए और आबादीको उस संख्या तक घटानेके लिए कि जिस संख्या तकके जीवन-निर्वाहके लिए पृथ्वीमें खाद्य पदार्थ उत्पन्न होता

हैं बड़ी बड़ी कम्पनियाँ काम किया करती हैं। जनसंख्याकी वृद्धि रोकनेवाले अनेक कारणोंके दो भाग किये गये हैं। उनमें एक दैवी और दूसरा मानवी कारण कहा जाता है। अँगरेजीमें इसे पाजिटिव चेक (Positive check) और रेस्ट्रिक्टिव या प्रुडेन्शल चेक (Restrictive or prudential check) कहते हैं। (१) दैवी कारण यह है कि मनुष्य स्थूल पशुवृत्तिके वशीभूत होकर पशुओंके समान अपना वंश बढ़ावे और जनसंख्याकी वैहिसाब वृद्धि, युद्ध, दरिद्रता दुर्भिक्ष और दुराचार आदि अनेक कारणोंसे रुके, और (२) * मानवी कारण यह है जिससे मनुष्य अपनी स्थिति पर पूर्ण विचार करके एक मात्र योग्य सन्तानोत्पत्ति करे—इन्द्रियदमन या पवित्र ब्रह्मचर्य द्वारा उतनी ही सन्तानोत्पत्ति करे जितनेको वह सर्वथा योग्य बना सके।

हर देश और कालमें ऊपर लिखे हुए अनेक कारणोंमेंसे कोई न कोई कारण सर्वदा विद्यमान रहता है और उस देशकी जनसंख्याकी निःसीम वृद्धि रोका करता है। जैसे माली अपने बागकी काट-छाँट किया करता है वैसे ही ये सब कारण भी आबादीकी काटछाँट कर उसी संख्या तक बाकी रहने देते हैं जिस संख्या उनके भरण-पोषणके लिए अन्न मौजूद हो।

---

* यूरोप और अमेरिकावाले न्यूमाल्थूसियन औषधि या यन्त्रोंद्वारा जनसंख्या रोकते हैं। इन औषधियों या यन्त्रोंके प्रयोगसे गर्भस्थिति नहीं होती। पश्चिमीय शिक्षित जन अयोग्य सन्तानोत्पत्ति करनेकी अपेक्षा इन औषधि या यन्त्रोंसे काम लेना ही अच्छा समझते हैं। सभ्य जगतमें हर जगह इनका प्रचार है। इन यन्त्रोंका प्रयोग गर्भ नष्ट करने ([illegible]) की तरह बुरा नहीं है।

दूसरा परिच्छेद ।

दैवीकारण–युद्ध ।

' Peace is the daughter of war ' —*Voltaire*

' Everlasting peace is a dream war is a factor in God's plan of the world ... without war the world would sink into materialism ' *Schiller*

[युद्धद्वारा मनुष्यका खून ही संहार होता है और इस तरह जनसंख्याकी बेहिसाब बाढ़ रुकती है ।]

भगवन् ! यह युद्ध क्या विपत्ति है और समय समयपर क्यों छिड़ जाता है ? यह १५० लाख (डेढ करोड) सेना यूरोपीय महायुद्धमें क्यों एकत्र हुई है ? इतने दिनोंसे नित्य १८ करोड़ रुपया युद्धकुण्डमें क्यों स्वाहा हो रहा है ? सिकन्दर, चंगेज, तैमूर, जेरक्सीज, हनीबाल, सीजर, सुलादीन और नेपोलियन आदिने मिलकर भी ऐसी खूनकी नदियाँ न बहाई होंगी, जैसी इस बीसवीं शताब्दीमें बह रही हैं ! जिस शताब्दीकी सभ्यता-पर मानव जातिको अभिमान था, उसी शताब्दीमें सभ्यताका मुकुट धारण करनेवाली ही जातियाँ ड्रेड्नाट, सबमेराइन, जेपलिन, और हवाई जहाजोंद्वारा एक दूसरेका सर्वनाश कर रही हैं । संसारमात्रका व्यापार बन्द है । कला, शिल्प, विज्ञान, कृषि आदि सब रुक गया है । केन्टन (अमेरिका) से केन्टन (चीन) तक हाहाकार मचा है । सभ्यताका हृदय तलवार और भालेकी नोक बेधे डालती है । पृथ्वी डावाँडोल है । भूमण्डलका प्रत्येक व्यक्ति थर्रा रहा है । संसारमें प्रलयका कुल सामान एकत्र है—बड़े बड़े योद्धा कट रहे हैं, विद्वान् मर रहे हैं, और तिस पर भी युद्ध बन्द नहीं हो रहा है—यह यूरोपीय युद्ध, मानवजातिके विनाशका कारण हो रहा है ।

पर, तो भी यह कोई नई बात नहीं है । सृष्टिके आरम्भसे ही हमें युद्धका भी आरम्भ जान पड़ता है । हमारे वेदोंतकमें शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर-

देशकी प्रार्थनायें अंकित हैं। भारतमें आर्योंने आकर अनार्य कोल भील आदिसे युद्ध कर उनका देश छीन उन्हें जंगलोंकी राह बताई। क्रोधी परशुरामने अनेकों बार पृथ्वीको क्षत्रियोंसे खाली कर दिया। मर्य्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामको युद्ध रावण आदि अनेक दुःखदायक अत्याचारियोंका दमन करना पड़ा। पुनः पिता और पुत्रों (लव कुश) तकमें युद्ध हुआ। भगवान् श्रीकृष्णको महाभारत सा भीषण युद्ध कराना पड़ा जिसमें भाईका भाईने मित्रको मित्रने भतीजेका चाचाने दादाको नातीने गुरुको शिष्यने मार कर अपने कुटुंब और साथ ही देशका सर्वनाशकारी संहार कर दिया। आज पाँच हजार वर्षोंसे भारतमें निरन्तर खूनकी नदियाँ बह रही हैं भारत विदेशियोंका शिकार बन रहा है। ग्रीक सिथियन हूण गजनी गोर अफगान पठान तुर्क तातार मुगल आदि जिसने चाहा भारतका रक्तपान किया। [illegible] तैमूर कैदियोंको एक ही बार कत्ल करके खूनकी नदियाँ बहाईं। तैमूरलंग औरंगजेब और नादिरशाहने भारतको कैसा गारत किया यह बतानेकी आवश्यकता नहीं। दस सहस्र वीरबालाओंको भस्म करनेवाली चित्तौरकी चिता आज भी भारतवासियोंके सम्मुख धाँय धाँय करके दहक रही है। युद्ध-सम्बन्धी आहुतियाँ पद्मिनी जवाहिर तारा लक्ष्मीबाई और दुर्गावती आदि आज भी भारतमें सती देवियाँ करके पूजी जाती हैं।

भारत ही नहीं युद्धसे तो भूमण्डलका कोई देश जाति या काल खाली नहीं रहा है—यूरोप अमेरिका एशियाके जिस देश या राष्ट्रके इतिहासको उठाइए युद्धसे भरा पड़ा है। प्राचीन कालके लोगोंको असभ्य कह कर उनके युद्धका वृत्तान्त छोड़ आप अर्वाचीन कालकी सभ्य और सुशिक्षित जातियोंको देखें तो ज्ञात होगा कि यह काल भी भयंकर युद्धसे भरा है। अभी थोड़े ही दिनोंके भीतर ट्रांसवाल रूस-जापान टर्की-रूस रूस-बालकन आदि अनेक युद्ध हो चुके हैं। इस समय जो भीषण युद्ध छिड़ा है जिसमें सारे संसारकी महान् जातियाँ एक दूसरेसे भिड़ गई हैं और जिससे यूरोपीय सभ्यताका अन्त हुआ चाहता है उसका तो कुछ पूछना ही नहीं है।

इस सभ्य और सुशिक्षित समयमें संसार भरके राष्ट्रोंके बीच अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि (Internat onal treaty) हुई, प्रत्येक देशमें प्रत्येक राष्ट्रके दूत

रहने लगे कि उनकी सलाहसे अथवा अन्तर्राष्ट्रीय पचायत द्वारा झगडे तै कर दिये जायँ । चुनाव द्वारा बडे बडे धुरंधर दूरदर्शी राजनीतिज्ञ राज-कर्मचारी नियुक्त किये जाने लगे । राजा-प्रजाका द्वेप कम हुआ, मित्रता अधिक हुई । राजाओंने व्यक्तिगत शासनप्रणाली छोड साधारण प्रजाकी अनुमतिसे राज्य-प्रबन्ध करना आरम्भ किया । धर्मसुधारकोंका प्रभाव बढा, पोप, पादरी और पण्डितोंकी दैवी शक्तिका ह्रास हुआ । विद्याकी वृद्धिसे स्वतन्त्र विचारोंकी ओर प्रवृत्ति हुई, लोग परस्पर एक दूसरेका अधिकार और कर्तव्य समझने लगे । स्वार्थसाधनमें कमी और परोपकारमें अधिकता हुई । अमेरिका और यूरोपमें साम्यवादियों (socialists) * का बल बढ़ने लगा—राष्ट्रकी सम्पत्ति पर प्रत्येक व्यक्तिका समान अधिकार माना जाने लगा, प्रत्येक व्यक्तिको अपनी योग्यतानुसार अपना सुधार करनेका पूर्ण अवसर दिये जानेका यत्न होने लगा, सर्वसाधारणमें सर्वाङ्ग शिक्षाका प्रचार हुआ । जिस प्रकार रणमूर्ति भगवती दुर्गाको सब देवताओंके अगप्रत्यगोंकी शक्तियाँ मिलीं, उसी तरह हेगमें शान्तिमन्दिरकी स्थापनामें परस्पर विरोध और मैत्री रखनेवाली अनेक शक्तियोंने मिलकर सहायता की, और वह अनुपम

---

* १८१२ ई० में राबर्ट आवेनने साम्यवाद या समाजस्वत्ववादका प्रचार किया । आजकल अमेरिका, इग्लैण्ड, जर्मनी, फ्रास और रूसमें इसका बडा जोर है । साम्यवादियोंका मत है कि किसी राष्ट्रकी सम्पत्ति पर सब व्यक्तियोंका समान अधिकार है, प्रत्येक व्यक्तिको उन्नति करनेका अवसर मिलना चाहिए । थोडेसे योग्य मनुष्योंका आवश्यकतासे अधिक सम्पत्ति दबा कर कर ऐशो आरामसे जीवन व्यतीत करना और अधिकाश व्यक्तियोंका भूखों मरना, अशिक्षित रहना और नाना प्रकारका दु ख सहना, ठीक नहीं । उनका कहना है कि (१) सर्व साधारणको बलपूर्वक (compulsory) शिक्षा दी जाय, (२) अधिक सम्पत्तिवालों पर अधिक और कम सपत्तिवालों पर कम राजकर लगाया जाय कि जिससे सपत्तिका विभाग प्राय समान हो जाय, (३) जो लोग साहूकारोंसे ऋण लेनेमें असमर्थ हों, उन्हें नाम मात्रके व्याज पर सरकारसे ऋण दिया जाय, (४) सम्पत्ति तथा भूमिके अधिकारके विपयमें धर्मानुकूल बलपूर्वक आचरण किया जाय, और (५) प्रत्येक व्यक्तिका समान धर्म्म है कि जीवनके लिए आवश्यक तथा विशेप सुखकी सामग्रीके उपार्जनमें कठिन परिश्रम करे ।

अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिमन्दिर सर्वाङ्गपूर्ण बन भी गया। +

आजसे लाखों वर्ष पूर्व राम-रावण युद्धसे लेकर आजके युद्ध तक, लोग शान्तिपूर्वक झगड़ा निपटानेका यत्न करते आ रहे हैं—रावणको अंगद आदिने कितना समझाया; महाभारतके भीषण युद्ध छिड़नेके पहले दुर्योधनको उस समयके बड़े बड़े राजनीतिज्ञोंने युद्ध न करनेकी सलाह दी; गुरुजनोंकी भरी सभामें महारानी गान्धारीने युद्ध न करनेका उपदेश दिया; भगवान् श्रीकृष्णने पाण्डवोंकी ओरसे दूत होकर बिना युद्ध किये ही झगड़ा निपटा देनेको बहुत कुछ समझाया—

युध्यतां राजधानीषु सर्वसम्पन्महीक्षिताम्।
पृथ्वी भ्रातृभावेन भुज्यतां विज्वरो भव॥

—महाभारत।

पर तो भी युद्ध न रुक सका। जो लोग कि युद्ध न करनेकी सलाह देते थे उन्हींको युद्ध करनेके लिए उत्तेजित करना पड़ा और १८ अक्षौहिणी सेना (४७ ११ ९२ सैनिक) कुरुक्षेत्रके मैदानमें कट गई। सारांश यह कि अनन्त कालसे लोग चिल्लाते आ रहे हैं कि मा युध्यस्व—युद्ध मत करो तो भी समय समयपर भीषण युद्ध छिड़ ही जाते हैं और लाखों करोड़ों

+ इस शान्तिमन्दिरके निर्म्माणके लिए धनकुबेर मिस्टर एण्ड्रू कारनेगीने पहले पहल १५ लाख मुद्रा दिया। डच पार्लियामेंटने आठ लाख ४ हजार भूमिके लिए दिया। नारवे और स्वीडनने पत्थर दिया। डेन्मार्कने बागका फौवारा बनवाया। हालैण्डने ईंटें दीं। इटलीने संगमर्मर दिया। ब्रिटेनने दरवाजोंके लिए रंगीन काँच दिया। ब्रेजिलने लकड़ी दी और दरवाजे बनवाये। बेल्जियमने लोहेके किवाड़ दिये। जर्मनीने बाहरका फाटक बनवाया। स्विट्ज़रलैण्डने धौरहरेके लिए घड़ी दी। फ्रांसने एक पच्चीकारी और चित्रकारी कराई। रूसने दरी बिछवाई। आस्ट्रेलिया और हंगरीने मेज कुर्सियाँ दीं। टर्कीने एक बहुमूल्य संगमरमरका गुलदान, ईरानने अत्यन्त सुन्दर गालीचा, आस्ट्रियाने उसके रखने योग्य बहुमूल्य रकाबियाँ, अमेरिकाने काँसे और संगमर्मरकी मूर्तियाँ, चीनने उत्तमोत्तम प्याले और जापानने मनोहर रेशमके चित्र दिये। इस तरह संसारकी सभी शक्तियोंकी अनुमति और सहायतासे शान्तिमन्दिर स्थापित हुआ (—भारी भ्रम।)

पुरुषोंका संहार हो ही जाता है। सो क्यों ? आखिर युद्ध क्या है ? और होता क्यों है ?

जैसा कि बाइबलमें लिखा है, सृष्टि, एक साथ ही छ दिनमें नहीं बनी। जिस रूपमें आज हम सृष्टिको देख रहे हैं यह करोड़ों वर्षोंके परिवर्तनका फल है। प्रकृतिमे आकाश, आकाशके पश्चात् वायु, वायुके पश्चात् अग्नि, अग्निके पश्चात् जल, जलके पश्चात् पृथ्वी, पृथ्वीसे ओषधि, ओषधिसे अन्न, अन्नसे वीर्य्य और वीर्य्यसे शरीर अर्थात् पुरुष उत्पन्न हुआ।

पश्चिमीय पण्डितों * ने भी यही सिद्ध किया है कि करोड़ों वर्षोंके परिवर्तनसे सृष्टिका आज यह रूप बना है। लाखो वर्षोंमें धीरे धीरे जड पृथ्वी, पहाडनदी आदि बने। फिर बढते बढते वनस्पतियोंकी उत्पत्ति हुई। वनस्पतियोसे उन्नति करते करते पशु आदि प्राणी उत्पन्न हुए। पशुओंमें वानरोंकी दशासे बढते बढ़ते वन-मनुष्यसे साधारण मानव-जाति उत्पन्न हुई।

प्रत्येक देहधारी अपनी जाति बढानेकी प्रबल चेष्टा करता है। पर प्रकृतिका यह भी एक विलक्षण नियम है कि देहधारी अधिक और उनकी खोराक कम पैदा हो। अस्तु। खनिज, वनस्पति, पशु, और सबका राजा मनुष्य, इस तरह समस्त देहधारियोंमें—परमाणु परमाणुमें कठिन संघर्ष स्वभावत जारी है।

अपनी जाति बढाने और जीवनरक्षाके लिए प्रत्येक देहधारीको आवश्यकतानुसार दूसरोंसे लडना पडता है। सबल, निर्बलको हडप जाता है, उसका आहार स्वय हजम कर जाता है। जो अयोग्य है, मूर्ख है, दुर्बल है वह निर्मूल हो जाता है, और जो योग्य है, बुद्धिमान् है, बलवान् है, वह जीवित रहता है, फूलता, फलता, और अपनी जाति बढाता है। (Survival of the fittest) इस स्वाभाविक सघर्ष या रगडा-रगडीको जीवनप्रयास कहते हैं—दूसरे शब्दोंमें इसी सघर्ष, रगड़ा-रगडी, या जीवनप्रयासको युद्ध कहेंगे।

ससारके अन्य पशुओंके समान मनुष्य भी अपनी जाति बढानेका यत्न करता है। स्त्री और पुरुषके मेलसे सन्तान होती है, जिसे कुटुम्ब कहते हैं। इस कुटुम्बका प्रत्येक व्यक्ति परस्पर एक दूसरेकी सहायता और रक्षा करता है। धीरे धीरे कई कुटुम्ब एक साथ रहना स्वीकार करते हैं। इस परस्परके मेलजोलसे वे भली भांति अपना कार्य कर सकते हैं और दूसरे ऐसे ही मिले-

---

* Vide 'Origin of Species' by Darwin.

दूसरे कुटुम्बोंके आक्रमण और अत्याचारसे अपनेको बचा सकते हैं। इन कई कुटुम्बोंके मेलको जिसे कौम जाति या ट्राइब (Tribe) कहते हैं। जैसे एक कुटुम्बके प्रत्येक व्यक्तिके एक दूसरेके साथ बर्ताव करनेका नियम होता है वैसे ही एक कौमके लोग भी अपने रहने सहनेके अनेक नियम बनाते हैं। एक कौमके लोग उसी कौमके लोगोंको लूट नहीं सकते एक दूसरेको मार नहीं सकते। क्योंकि ऐसा करनेसे फूट पैदा होती है और तब दूसरी कौमोंसे रक्षा भली भाँति नहीं हो सकती। हाँ अपनी कौमके बाहर दूसरी कौमकी सम्पत्ति लूटना उन्हें करना मारना सब रवा है।

समीपवासी छोटी छोटी कौमें देखती हैं कि एक दूसरेको लूटके किसी बड़ी कौमके आक्रमणके समय वे एक दूसरेकी सहायता नहीं कर सकतीं। तब जैसे कुटुम्बोंसे कौम बनती है वैसे ही कौमोंके एकत्र होनेसे राष्ट्र (Nation) बन जाते हैं। इस राष्ट्रके लिए अनेक सामाजिक और धार्मिक नियम बनते हैं। स्वभावतः इनका उल्लंघन उस राष्ट्रके लोग नहीं करते, और नियमविरुद्ध चलनेवालोंको दण्ड मिलता है।

प्रकृतिका यह नियम है कि खानेवाले अधिक और खाद्य पदार्थ कम उत्पन्न होते हैं, और मनुष्यमें स्वभावतः अपनी उन्नति करने अपनी वर्तमान दशाको और अच्छी करने अपने आराममें सदैव कुछ न कुछ अधिकता करते रहनेका गुण है। वह (मनुष्य) स्थिर नहीं रह सकता या तो वह आगे बढ़ेगा या पीछे जायगा—Man cannot remain stationary He must either improve or impair

जनसंख्या बढ़ती जाती है इसके साथ आवश्यकतायें भी बढ़ती हैं। नये देशोंमें उपनिवेश करना नये नये बाजारोंमें अपनी प्रभुता जमाना नये राष्ट्रोंको अपना मातहत्कमी या अधीन बनाना जोरोंसे उनकी बलसे दूसरे राष्ट्रोंकी सम्पत्ति हरना किसी न किसी तरह अन्य जातियोंका अधिकार हड़प जाना ही इस राष्ट्रका मुख्य उद्देश होता है । एक राष्ट्रके व्यक्तियोंके लिए समाज है नियम है धर्म है कर्म है पाप और पुण्य सभी कुछ है पर उस राष्ट्रके बाहर दूसरे राष्ट्रके साथ व्यवहार करनेके लिए केवल स्वार्थ-सिद्धिहीका नियम देखा जाता है। जिससे स्वार्थ सधे वह कार्य करना परम धर्म है और जिस कार्यके करनेसे स्वार्थमें विघ्न बाधा पड़े उसे करना पाप

है, पाप है, अधर्म है। इसी लिए राष्ट्रनीति या पद्धतिका दूसरा नाम स्वार्थ-सिद्धि है।

पर दूसरा राष्ट्र यथाशक्ति इस स्वार्थसिद्धिमें वाधा डालता है। उस समय रगड-झगड आरम्भ होती है और अन्तिम परिणाम भीषण युद्ध होता है।

निज राष्ट्रकी सीमामें लूट न होना चाहिए, ऐसा करनेवालोंको उस राष्ट्रके नेता दण्ड देते हैं, खून न करना चाहिए, नहीं तो खूनीको प्राणदण्ड दिया जायगा, छोटीसे वडी कोई ऐसी वात–जिससे उस राष्ट्रके किसी व्यक्तिको कष्ट पहुँचता हो–न करनी चाहिए, क्योंकि वैसा करनेसे उस राष्ट्रमें कमजोरी आती है, पर राष्ट्रकी सीमाके वाहर दूसरे राष्ट्रोंके साथ व्यवहार करनेमें किसी भी वातका निषेध नहीं रह जाता, दूसरे राष्ट्रोंकी धन–धरणी हरना, उनकी सर्व सम्पत्ति लूटना, लुटेरापन नहीं कहाता। अपने राष्ट्रके एक अदना आदमीके मारनेसे फाँसी मिलती है, पर दूसरे राष्ट्रसे लढाई छिड़ जाने पर खून करनेसे कोई खूनी नहीं कहलाता। लाखों, करोडोको काल करके खूनकी नदियाँ वहानेसे, विधवाओं और अनाथोंको तडपानेसे, उस देशमें आग लगा देनेसे और जो कुछ कि हानि मनुष्य मनुष्यको पहुँचा सकता है पहुँचानेसे लोक और परलोक दोनों वनते है, निज राष्ट्रमे नाम, मान, और मरने पर हरिधाम प्राप्त होता है।

मनुष्य, स्वभावत एक लडाका पशु है। जैसे आदमी आपसमें झगडते हैं और पुलिस और न्यायालयकी सीमाके भीतर ही पूरी लडाई लड़ लेते हैं, इसलिए नहीं कि उस लडाईमे कोई धनलाभ होगा किन्तु इस लिए कि अपने समझे हुए अधिकारकी रक्षा करना है अथवा अपने विचारानुसार वुराई करनेवालेसे वदला लेना है और इस तरह क्रोधाग्नि और उवलते हुए खूनको शान्ति करना है, वैसे ही राष्ट्र भी अवश्य लड़ेंगे, कभी स्वतन्त्रताके लिए, कभी वल और अधिकारके लिए और कभी फैलनेके लिए। जहाँ सीमाके दोनो ओरके राजाओंको अपने सकल्प और अधिकारकी सत्यताका विश्वास हुआ कि युद्ध छिडा, ऐसे समयमें क्षमा और सहनशीलताका लोग निरादर करने लगते हैं।

प्राचीन ओर अर्वाचीन इतिहाससे ज्ञान होता है कि जो लोग या राष्ट्र लडनेको उद्यत रहते है और लडनेमें सबसे अधिक कौशल दिखाते हैं वे शान्त प्रकृतिवालोंको निकाल वाहर करते हैं, और इस तरह युयुत्सु जाति

ही स्थायी रूपसे बच रहती है। अर्थात् लड़ाकी जातियाँ पृथ्वीकी उत्तराधिकारिणी होती हैं।

कुछ हवामें महल बनानेवाले लोग यह स्वप्न देख रहे हैं कि—" सभ्यताके बढ़ते बढ़ते अन्ततः युद्ध और उसकी आवश्यकता मिट जायगी।" पर सभ्यता मनुष्यके युद्धप्रिय स्वभावको नहीं बदल सकती। जबतक मनुष्यका स्वभाव नहीं बदलेगा तब तक संसारसे युद्धका लोप न होगा। और फिर यदि राष्ट्रोंकी दुर्बुद्धि असावधानी आलस्य और अदूरदर्शितासे परस्पर संघर्ष न हो जाया करता तो मनुष्य जातिकी अवनति हो जाती। युद्ध उन्नतिका एक आवश्यक कारण है। युद्ध वह डंका है जो देशोंको आलस्य निद्रामें नहीं पड़ने देता और सम्पूर्ण मध्यश्रेणीके लोगोंको उदासीनतासे जाग्रत रखता है। व्यवसाय और रगड़-झगड़से ही मनुष्यकी स्थिति है। जिस समय रोम सरीखा शान्ति-सम्पन्न साम्राज्य मनुष्यको मिल जायगा और उसके कोई बाहरी वैरी न रह जायँगे उस घड़ी मनुष्यके चारों ओर रहनेवाली 'सदा व्यवसायात्मिका बुद्धि' बड़ी जोखिममें पड़ जायगी।

देशाभिमान उच्चाभिलाषा निःस्वार्थता जीवनदायक सम्पत्ति स्वार्थत्याग मेल जोल विद्या और वीरता आदि अनेक सद्गुण पहले युद्धसे ही प्राप्त हुए और अब भी एकमात्र युद्धसे ही इनकी स्थिति है। युद्धसे ही वीरताके वे गुण आते हैं जो वास्तविक जीवनके कठिन झगड़ोंमें विजय पानेके लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।

जिस प्रकार चाकू देखनेमें कुरूप दिखाई देता है किन्तु बड़ा उपयोगी होता है वैसे ही युद्ध भयंकर तो अवश्य दीखता है पर मनोवैज्ञानिक रोचक है। आँधीसे हवा शुद्ध हो जाती है सत्त्वहीन निकम्मे पेड़ गिर जाते हैं और दृढ़ मूलवाले बलवान् उपयोगी पेड़ बच जाते हैं। युद्धसे राष्ट्रकी राजनैतिक शारीरिक योग्यताकी परीक्षा हो जाती है। जिस राज्यमें सत्ता और लोकमतपर जमाया है उसका कुछ दिनों तक शान्तिपूर्वक बैठना सम्भव है किन्तु युद्धमें उसका दौर्बल्य खुल जाता है।

उन्नतिको रोकनेके बदले युद्धने बहुधा उसके मार्गोंको प्रशस्त कर दिया है। इसने अनेक युद्धोंके होते हुए नहीं किन्तु उनके होनेसे ही एथेंस और रोमने अपनेको सभ्यताके शिखर पर पहुँचाया था। इंग्लैण्ड जर्मन जापान

और इटली आदि अपने अपने लोहेसे अपना रुधिर बहाकर ही राष्ट्रसूत्रमें बँधे हैं। वाशिंगटनने जिस समय ये शब्द लिखे थे, तब जैसे सत्य थे, वैसे ही अब भी सत्य हैं और बने रहेंगे कि "स्वार्थके सिवाय और किसी उद्देश्य पर राष्ट्रोंके निरन्तर दृढतापूर्वक आचरण करनेकी आशा व्यर्थ है। अन्तर्राष्ट्रीय स्वार्थका अनुशीलन ही राजपुरुषोंकी गभीर और दूरदर्शी नीतिका एक मात्र आधार है।" हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि राजनीतिमें मित्रता नहीं, सम्बन्ध नहीं, शांति नहीं, विश्वास नहीं, सहनशीलता आदि कोई सद्गुण नहीं है। यदि एक राष्ट्र किसी दूसरे राष्ट्रके साथ सद्व्यवहार करता दीखता हो तो समझो कि उसके सद्व्यवहारकी ओटमें स्वार्थ अवश्य छिपा है। भारत और ब्रिटेनमें घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक दूसरेके परम शुभचिंतक हैं। भारतवासी अपने ही सम्राटके राज्योंमें अपमानित किये जाते हैं, आस्ट्रेलियामें घुसने नहीं पाते, कैनेडाकी बात ताजी है, नैटालसे भारतवासियोंके कारुणिक-रुदनकी हृदयवेधक आवाज अब भी हृदयको कँपाती है, पर ब्रिटिश-साम्राज्य यह सब देखता है, रुदन भी सुनता है किन्तु सहसा इसे मेटनेमें वह असमर्थ है। उधर वेल्जियमका जर्मनीसे पददलित होना ब्रिटेन नहीं देख सकता। वेल्जियमसे किसी तरहका सम्बन्ध न होते हुए भी ब्रिटेन अपने खास नातेदार * जर्मनीके विरुद्ध लडने और वेल्जियमकी सहायता करनेके लिए एक मात्र परोपकारसे प्रेरित हो भयकर युद्धमें आपसे आप कूद पडता है।

जिस तरह हम, अपमान सहजानेवाले पुरुषसे घृणा करते हैं उसी तरह हम अपमान सहनेवाले राष्ट्रसे भी घृणा करते हैं। संसार, कातर और शान्तिके चाहनेवाले मनुष्यको, या राष्ट्रको, आदरकी दृष्टिसे नहीं देखता।

अन्य राष्ट्रोंके स्वार्थ, अत्याचार या अपमानसे बचनेका उपाय एक मात्र युद्ध है। शान्ति-व्यवस्थासे मनुष्यका काम चल नहीं सकता।

इस ससारमें जिस जातिको सबसे अलग, झगड़ोंसे रहित, आरामसे रहनेका स्वभाव पड जाता है, अन्तमें उसे उन जातियोंमे जिनकी वीरता, साहस और पौरुपका नाश नहीं हुआ है, नीचा देखना पडता है—"It is a law of nature common to all mankind which no time shall ever destroy, that those who have more strength and excellence shall bear rule over those who have less."

* जर्मनीके बादशाह कैसर सम्राट् पजमजार्जकी फूफीके लड़के हैं।

जर्मनीके प्रसिद्ध जनरल बर्नहार्डीका कथन है कि 'शान्तिका आंदोलन निष्फल होता है। यदि स्वार्थवश दूसरोंका अधिकार छीननेके लिए नहीं तो अपने देश और राष्ट्रका अधिकार बचा रखनेके लिए ही प्रत्येक राष्ट्रको युद्धके लिए तैयार रहना परम आवश्यक है।

प्रसिद्ध मैगमने कहा है— "दयाशील और हितैषी राष्ट्रोंका क्रमशः निर्मूलन हो जाता है और मनुष्यकी जातिकी रक्षा होती है।" यदि दूसरे राष्ट्रोंके साथ मैत्री विश्वास और सद्भावसे आत्मरक्षाके उपायोंमें हम ढीले हो जायँ तो इस ढिलाईमें युद्धप्रिय जातियोंको हमपर चढ़ाई करनेका अवसर मिलेगा और सभ्यताके शिखरपर चढ़ी हुई जातियोंको रणमें हरा कर असभ्य जातियाँ धूलमें मिला देंगी। रोमकी सभ्यता मिश्रका महान् पुस्तकालय और भारतके अनुपम साहित्यका सर्वनाश न होता यदि ये राष्ट्र वहशियोंके आक्रमणको रोकनेके लिए तैयार रहते।

अनेक भारतवासियोंका अटल विश्वास है कि महाभारतका युद्ध होनेहीसे भारत गारत हुआ; पर नहीं भारत गारत हो चुका था इस लिए महाभारत हुआ और फिर महाभारतके हजारों वर्ष पश्चात् विदेशियोंके आक्रमण हुए। क्या तब तक इन छोटे मोटे हमलोंका मुकाबला करनेके लिए भारतमें नई शक्ति नहीं पैदा हो सकती थी? क्या महाभारतके बादका भारत जेनाके बादके जर्मनीसे भी गिरा-गुजरा था कि जर्मनी कुल १० वर्षकी ही तैयारीसे सारे संसारकी सम्मिलित शक्तियोंसे अकेला ही भिड़ सकता है और लाखों दम कर सकता है पर भारतको अकेले सिकन्दरके सामने सर झुकाना पड़ता है। जापान कुछ २ वर्षोंमें इतना शक्तिशाली हो सकता है कि रूस जैसे विशाल देशको परास्त कर सकता है परंतु भारत ५ वर्ष बीत जाने पर भी विदेशियोंका शिकार बना रहता है!

A peac that has the prospect of being disturbed every day and week has not th value of peace. A war is often less harmful to th publi welfare than such peace.

---

* अर्थात् जो शान्ति जब चाहे तब भंग हो सकती हो उसका कोई मूल्य नहीं है। सर्वसाधारणके कल्याणके लिए ऐसी शान्तिकी अपेक्षा प्रायः युद्ध ही कम हानिकारक हुआ करता है।

जिन कारणोंसे महाभारत सा भीषण आन्तरिक युद्ध हुआ, जिस अविद्या, मूर्खता और खुदगर्जीके कारण सिकन्दरने पोरस पर फतह पाया, जिस ईर्षा, द्वेष और फूटसे शहाबुद्दीनने पृथ्वीराजको हराया, या जिस कारण यह अभागा देश आखिरको पश्चिमीय वणिकोंके हाथ आया, वही कारण भारतमें अबतक विराजमान है। भारतका इतिहास बताता है कि भारत जब कभी परास्त हुआ है तो स्वयं भारतवासियोंसे। प्राचीन या अर्वाचीन चाहे जिस कालके भारतीय युद्धका सच्चा इतिहास उठाइए, साफ साफ मालूम होता है कि भारतके हारनेका मुख्य कारण भारत ही है। अँगरेजोंने पहले तो भारतको तलवारके बलसे विजय ही नहीं किया और यदि कहीं इससे काम भी लिया गया तो भारत-सन्तानकी ही तलवारसे। आज भी भारत परदेशियोंके लोहेसे नहीं बल्कि अपनी ही सन्तानकी तलवारके बलसे परतन्त्र है। *

भारतकी पराधीनताका जो कुछ भी कारण हो, उस कारणको सुधारने-हीसे स्वाधीनता प्राप्त होगी। इस संसारमें कोई ऐसी हार ही नहीं जिसका कारण कोई अवगुण, कोई पाप या मनोदौर्बल्य न हो। इस पापको समूल नष्ट करनेके सीधे रास्तेका नाम है 'योग्यता'। हमारा—प्रत्येक भारतवासीका—महान् कर्तव्य है कि हम स्वयं योग्य बनें और स्वार्थत्याग कर अपने देशभाइयोंको योग्य बनानेमें तनसे, मनसे, और धनसे हर तरहसे योग दें।

हम अपने कर्तव्यपर ध्यान नहीं देते, अपने अधिकारोंको प्राप्त करनेके लिए शोर मचाते हैं और कुल दोष राजाके ही सिर मैंढ देना जानते हैं। अब 'यथा राजा तथा प्रजा' का समय नहीं है, आज कल तो 'यथा प्रजा तथा राजा' की चाल है। सबसे पहले स्वतन्त्रता देवीने अमेरिका पर कृपा-दृष्टि फेरी, राजा और प्रजाके बीच भयंकर युद्ध छिड़ा, पर विजय प्रजाकी रही। राजाको अमेरिकामें सदैवके लिए विदा माँगनी पड़ी। इसके बाद,

* अरकाटके घेरेमें राजभक्त हिन्दुस्तानी माँड पीकर रहते थे और भात अगरेजोंको दे देते थे। झांसी, मैसूर, मराठा, सिक्ख या अफगान-युद्धमें हिन्दुस्तानी सिपाही ही काम आये थे। इसके पूर्व मुसलमानी राज्यमें भी पृथ्वीराज, राणा प्रतापसिंह, या शिवाजीको दबानेवाले हिन्दुस्तानी ही थे। आज भी भारतकी कुल पुलिस प्रायः हिन्दुस्तानी ही है। १,६०,००० वीर सिपाही भारतकी रक्षा करते हैं।

फ्रांसकी प्रजाने सिर उठाया। यहाँ भी राजाकी हार और प्रजाकी जीत रही। दक्षिण आफ्रिका कैनेडा आस्ट्रेलिया आयर्लैण्ड चीन फारस तुर्किस्तान—हर जगह जीत प्रजाकी रही। लार्ड मार्लेके रिफार्म बङ्गभङ्गका पुनः संयोग दक्षिण भारतमें गांधीका निष्क्रिय प्रतिरोध (Passive resistance) आदि स्वयं भारतकी घटनायें हैं जो सिद्ध करती हैं कि योग्य होनेपर हमें अधिकार मिलेंगे और अवश्य मिलेंगे। योग्य राष्ट्रको संसारकी कोई शक्ति परतन्त्र नहीं रख सकती और

Freedom s battle once begun
Though baffled oft, is ever won

की बात सदैवसे सत्य होती आई है। संसार भरका इतिहास इसका साक्षी है। ब्रिटिश राज्यको कोटिशः धन्यवाद है जिसके साम्राज्यमें भारतका अभ्युदय प्रारम्भ हुआ है। हजारों वर्षोंकी पुरानी सुषुप्तिका पैर उखड़ रहा है। हिमालयसे केप कमोरिन तकके लोग अपनेको एक राष्ट्र मानना सीख रहे हैं। ऐसे शुभ अवसरको यदि हम आलस्य-निद्रामें खो दें तो भारतके पुनरुत्थानकी आशा सर्वथा निष्फल है।

भारतके उद्धारके लिए मनुष्योंकी संख्या बढ़ानेकी आवश्यकता नहीं है। यहाँके वीर निवासियोंको तन मन धनसे देशके प्रेममें रत कर देनेकी परम आवश्यकता है। यदि ये ३१ करोड़ शारीरिक और मानसिक बलसे परिपूर्ण पुरुषार्थी देशभक्त वीर बन जायें तो इनसे जर्मनी सरीखे पांच राज्य बन सकें। योग्यतामात्र जर्मनीसे पँचगुनी शक्तिवाले नवीन भारत' के सम्मुख कौन शक्ति ठहर सकेगी?

सुयोग्य प्रजा राजाको भी प्रिय होती है। हमारे शक्तिशाली बननेसे हमारी देशभक्ति तथा भारतकी इतिहासप्रसिद्ध सदैवकी राजभक्तिसे हमारी सरकारको भी हमसे सब तरहकी सहायता मिल सकेगी।

पर यह सब कुछ कर्मवीरतासे होगा। केवल सुधारके स्वप्न देखनेसे तो आकाश कुसुम ही हाथ लगेगा। जापानने जो कुछ ४ वर्षोंमें किया है या जर्मनीने जो १ वर्षोंमें कर दिखाया है वह हम भी कर सकते हैं। ठीक पर यहाँ तो ७ करोड़ भारतवासियोंके तनसे 'भय' की बू आती है। लगभग इतने ही भारतनिवासियोंके भूखे मरनेसे हमें पाप ग्रस लेता है। ढाई करोड़ विध

वायें कूडाकरकटकी तरह मारी मारी फिरती है। चलिए, आधी जनसख्या तो यों गई। रही आधी, उसका भी कैसा बुरा हाल है यह बतानेकी आवश्यकता नहीं–पेटके लिए अन्न नहीं, तनके लिए वस्त्र नहीं, शिक्षाके लिए द्रव्य नहीं। बालविवाह और सन्तानोत्पत्तिके रोगोंसे भारतमें २५ वर्षकी स्त्रियाँ बूढ़ी समझी जाती हैं और इससे कुछ ही अधिक आयुवाले पुरुष ससारसे यात्रा करनेकी तैयारी करना आरम्भ कर देते हैं। ससारमें जीवन-प्रयास या सघर्षकी मात्रा दिनोंदिन अधिक हो रही है। अपने राष्ट्रके भीतर तो 'Right is might' का सिद्धान्त सत्य है पर जब दूसरे राष्ट्रोंसे काम पडता है, तब Might is right—'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाला सिद्धान्त ठीक होता है।

ससारके किसी देशमें सहयोग, आत्मसमर्पण और स्वार्थत्यागकी इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी कि भारतमें है। इस समय अयोग्य सन्तानोत्पत्तिका प्रश्न तो पूछना ही नहीं है, आवश्यकता इस बातकी है कि यदि हममें अपने दस बच्चोंको सर्वथा योग्य बनानेका सामर्थ्य है, तो हम केवल दो ही सन्तान (अपने स्थानके लिए एक पुत्र, और अपनी स्त्रीके लिए पुत्री) उत्पन्न करें और बाकी शक्ति देशके उत्थानमें लगावें, अन्य सुयोग्य बच्चोंको चुनकर अपनी ही सन्तान मानकर उनकी शारीरिक और मानसिक दशाको ऊँचा करें जिससे वे सत्यवादी, बलवान्, दृढ, पुरुषार्थी, सच्चे देशभक्त और राजभक्त बनकर देशोद्धार कर सकें। भारतका भविष्य भारतकी भावी सन्तानकी योग्यता पर निर्भर है। यदि अन्य जातियोंके सम्मुख हमें जीवित रहना है, यदि हमें अपने राष्ट्रका नाम बचाना है, यदि ससारकी जीवित जातियोंमें सबसे पुरानी हिन्दू जातिका अस्तित्व स्थिर रखना है तो हम प्रत्येक भारतवासीको अन्य जातियोंके साथ जीवन-सघर्ष-प्रयास, रगडा-रगडी या दूसरे शब्दोंमें युद्धके लिए तैयारी करनी चाहिए। दूसरोंका अधिकार छीननेके लिए नहीं केवल अपना अधिकार पानेके लिए, अपने अधिकारोंकी रक्षाके लिए, हमें भारतके भावी युद्धकी तैयारी कर रखना परम आवश्यक है। जनसंख्याकी बाढ तो रुकेगी और अवश्य रुकेगी। रुकनेका जरिया युद्ध हो चाहे दरिद्रता, दुर्भिक्ष या दुराचार।

राखै सोई जेहितें बनै,
जेहि बल होई सो लेइ।

Never despair or despond ! go on, thoroughly united-come weal, come woe—never to rest but to persevere with every sacrifice till the victory of Selfgovernment is won.

—*Dadabhai Naoroji*

Be God-loving and Man-serving; be Pure, be Brave, be *Strong*

—*Mrs. Besant.*

Befit yourself to fight your cause out. The tide is with us. All Asia is waking. The Isles of the East have made the start   I hope you will carry the legal fight to the end.

—*Dadabhai Naoroji.*

तीसरा परिच्छेद ।
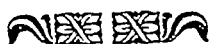
दैवी कारण—दरिद्रता ।

[दरिद्रतासे लज्जा उत्पन्न होती है । लज्जायुक्त अपने अधिकारसे गिर जाता है । अधिकारसे गिरे हुएका अपमान होता है । अपमान और तिरस्कारसे दु ख और दु खसे शोक उत्पन्न होता है । शोकसे बुद्धि हीन होती है और निर्बुद्धि नाशको प्राप्त होता है । इस प्रकार देखा जाता है कि दरिद्रता ही सारी आपत्तियोंकी मूल है और इससे जनसख्याका नाश होता है ।]

भारतमें वेदान्तका बडा प्रचार है । वेदान्त ससारको असार, मिथ्या, मायायुक्त, इन्द्रजाल या बाजीगरका खेल बतलाता है । ऐसे विचार होनेसे भारतवासी धन तथा धनसे उत्पन्न होनेवाली वस्तुको घृणित समझते हैं । परन्तु, धन पर ही सभ्यताका आश्रय है । ससारका इतिहास बताता है कि शिकार करनेवाली, पशुओंको चरानेवाली, कृषि करनेवाली जातियोंने क्रमश सम्पत्ति द्वारा ही अपनी उन्नति की है । नर नारी अपनी प्राकृतिक अवस्थासे असन्तुष्ट होकर उच्च होनेका यत्न करते हैं और इस तरह अपनी सभ्यता बढाते हैं ।

धनिकोंकी आवश्यकतायें कम नहीं होतीं, वे प्राय बढती ही जाती है । उनकी पूर्तिके लिए नित्य नये आविष्कार, कला, कौशल और शिल्पादिकी वृद्धि करनी पडती है । क्रमश एक समय ऐसा उपस्थित होता है कि लोगोंको पौद्गलिक या जड (Material) चीजोंसे असन्तुष्टता हो जाती है । वे इन प्राकृतिक पदार्थों (Materialism) से ऊपर उठना चाहते हैं । पर ऐसा विचार उसी समय उत्पन्न होता है जब शिक्षा, विज्ञान, कला, शिल्प और सम्पत्तिमें पूर्ण उन्नति हो जाती है । जिस समय भारतमें उपनिषद्, न्याय और दर्शनशास्त्र लिखे जा रहे थे, जब धर्म्म-शास्त्र और वैदिक मन्त्रोंकी रचना हो रही थी, या जब भारतकी आत्मविद्या पूर्णताके सबसे ऊँचे शिखर पर

पहुँच गई थी उस महान् वैदिक कालमें धर्मपूर्वक धन कमानेकी चाह थी। देश धन विद्या और कलासे परिपूर्ण था। उस समय लोगोंको पेटपूजाकी चिन्ता नहीं थी।

अति सब वस्तुओंकी हानिप्रद होती है। धन तथा वैभवकी अतिसे भारत आत्मरक्षामें ढीला पड़ गया जंगल और पहाड़ोंको ढिग देनेवाली समुद्रको पार करके देश-देशान्तरोंमें व्यापार करनेवाली आर्य जाति थोड़ेसे उदरभर आत्मविद्याके सहारे आलस्यके समुद्रमें गोते पर ऐसी सोई कि न आप जागी और न कोई इसे जगा ही सका।

जब भारतवर्षमें ऐश्वर्यकी पूर्ण वृद्धि हो गई व यहीं राज्यका सुख मिलने लगा सब प्रकारके भोगोंकी प्राप्ति होने लगी तब वही संघशक्ति—वही कर्त्तव्य शिक्षा और सम्पत्ति-जिसके आधार पर सब सामाजिक उन्नति तथा समृद्धि हुई थी स्वप्नके समान लोप होने लगी। मनुष्यमें पशुपन अधिक है। वह खुला घूमना चाहता है। आत्मज्ञोंके सिखानेवाले उपनिषत्कारोंने आत्मसम्बन्धी विचार प्रकट कर ही दिये थे, यह सामग्री इन स्वच्छन्द और पृथग्भाव (Isolation) वालोंके लिए जरूरतसे ज्यादा काफी हुई।

आध्यात्मिक शिक्षाके सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त—संसारमें शान्ति फैलानेवाले शान्ति स्वरूप—अनधिकारियोंके लिए नहीं हैं। सर्व साधारण और व्यावहारिक समाजमें जीवन निर्वाहके भयंकर युद्धके लिए शान्तिके अतिरिक्त तलवारकी भी निरन्तर आवश्यकता रहती है। पूज्य ग्रन्थोंसे भारतीय जनताने यथोचित काम नहीं उठाया। बल्कि अनधिकारियोंने उनका वास्तविक अभिप्राय न समझा और धीरे धीरे शारीरिक सामाजिक और राजनैतिक जिम्मेदारियोंकी कन्धोंपर दुलत्ती चलाकर बिलकुल ब्रह्म ही ब्रह्म जगन्मिथ्या उपदेश दिया। जब सब ही ब्रह्म हो गये तब किसीका दूसरा भावना किसीके हित वा अहित का ख्याल रखना कैसा ? बस छुट्टी पूरी हो गई संघशक्तिका बीज नष्ट हो गया।

किसी राज्यको अथवा उसकी सम्पत्तिको सुरक्षित रखनेके लिए यहाँकी प्रजाको खूब सावधान रहना आवश्यक है। यदि वह अपना अस्तित्व मान और प्रतिष्ठाके साथ कायम रखना चाहती है तो उसे अपने पड़ोसियोंकी उन्नति अवनतिका ध्यान रखना चाहिए। भारतमें यूनानी आये उन्होंने हमें ठोकरें लगाईं, वे हमारे ग्रन्थ हमारी सभ्यता चुरा ले गये—पर हम भंगड़-

इयाँ लेते रहे। अरबके रेगिस्तानमें, एक जबर्दस्त शिक्षकका प्रादुर्भाव हुआ। उसकी शिक्षासे मानो ज्वालामुखी फट पडा। एक बड़ा जबर्दस्त भूचाल आया। महम्मदी तूफानी धावोने भारतको नष्ट भ्रष्ट कर दिया। वे हमारे ग्रन्थ, हमारे रत्न, हमारा धन क्या, सर्वस्व लूटा किये। महमूद, तैमूर और नादिरकी भाँति सैकडों विपत्तियाँ भारत पर आईं, परन्तु सारे भारतीय सकटके इतिहासमे महाराणा प्रताप, गुरुगोविंदसिंह और वीरकेसरी शिवाजी, वस इन्हीं तीन रणपुगवोंका नाम सामने आता है। एक लीडर मर गया बस किस्सा खतम! दूसरा उसकी पूर्ति करनेवाला खडा नहीं होता। क्यो? क्या उस समय भी आर्म्सएक्टने (हथियार-सम्बन्धी कानूनने) लोगोंको नामर्द बना रक्खा था?

नहीं, उस समय लोगोंकी बुद्धि बिगड गई थी। यहाँके विद्वानोके दिमागमें 'गुरुडम'का भूत घुस गया था। ये समझते थे कि हमने जीवनका सबसे उच्च रहस्य जान लिया है, अब किसीसे कुछ सीखनेकी आवश्यकता नहीं। ये सार्वलौकिक स्वार्थ (Common interest) को अलग फेंककर 'पृथग्भाव' (Isolation) के सिद्धान्तके सहारे अपनेको समाजसे अलग कर सारी उन्नतियोका केन्द्र अपने आपको मान, केवल अपने ही कल्याणकी चेष्टामें रत रहना अपना धर्म समझने लगे। इनके स्कूलोंमें 'ससार असार' की शिक्षा दी जाने लगी। कवियोंने उसी पर कविता की, साधुओने घूम घूम कर इसी विषय पर उपदेश दिया, सारे मतावलम्बियों और आचार्योंने अपने शिष्योको यही सिखाया, लेखकोंने इसी विषय पर बडे बडे पोथे लिख मारे, जिस पुस्तकको उठाइए उसमे यही राग अलापा गया है—सब एक स्वरसे कह रहे है कि 'ससार मिथ्या है, गृहस्थी सब जजाल है'। जातिकी जाति इसी रगमें रग गई। यहाँके बच्चे व्यक्तिवादके सूत्र पढकर सब प्रकारके 'बन्धनों' से मुक्त होनेकी चेष्टामें निमग्न रहने लगे। 'ससार' और 'समाज' के प्रति जो भारतजनताके कर्तव्य थे, वे 'बन्धन' समझे जाने लगे। मनुष्यत्व लाभ करनेके उच्च साधनरूप गृहस्थसम्बन्धी सग्रामको 'जजाल' की उपाधि दी गई। सपत्तिका उपार्जन, राजकार्य्य, सेना-साज, किलेबन्दी, युद्धविद्या आदि देशहितकर कार्य जगलीपनकी गणनामें कर दिये गये। भारतजनताका सबसे बडा उद्देश्य 'सब नियमोसे रहित' (No Law) अर्थात् जीवन्मुक्त हो गया।

चरम सीमा पर पहुँचे हुए इस व्यक्तिवादकी दूषित शिक्षाने भारतकी नस नसें ढीली कर दीं। त्याग और जीवन्मुक्तिके झूठे गपोड़ोंने भारतको नष्ट भ्रष्ट कर दिया। अप्रतिरोध (Non resistance) के सिद्धान्तोंने सैकड़ों रूप धारण किये और भारतवासी उनके सहारे मस्त सोया किये।

जिस देशमें सैकड़ों वर्षोंतक कायरता अकर्मण्यता व्यभिचार आदिको वैराग्य त्याग और जीवन्मुक्तकी उपाधियोंसे विभूषित कर आदर्शरूप बना दिया गया हो उस देशके बच्चे यदि शूलोंसे पिटने पर भी उसको माया या दुर्भाग्य कहें तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? आज भी इन्हीं गन्दे प्रचार कायरतापूर्ण सिद्धान्तोंपर पले हुए लाखों करोड़ों भारतीय विद्यमान हैं जो स्वयं अपने अपनी समाज और अपने देशके ऊपर होते हुए नाना अन्यायोंके विरुद्ध एक अंगुली भी नहीं उठावेंगे। अपनी दरिद्रताको अपनी अशिक्षितताको काल कवलित मरी हैजा प्लेग आदि सबको अपनी जिम्मेदारीसे हटा खोटे भाग्य ईश्वरेच्छा और राजाके मत्थे मँढ़ आप अलग हो जावेंगे।

इससे मेरा अभिप्राय अपने पूज्य ग्रन्थों या पवित्र आदर्शोंके प्रति अनादर प्रकट करना नहीं है। हमारा आदर्श जीवन्मुक्ति रहे। हम जो कुछ करें वह मुक्तिके लिए करें। भोजन पेट भरनेके लिए या सुस्वादके लिए न करें बल्कि इस लिए कि शरीर पुष्ट करके निर्मल बुद्धिद्वारा समाज जाति राष्ट्र और संसारकी सेवाद्वारा मुक्तिलाभ करें। हम भोग करें, विषयवासनाके लिए नहीं बल्कि उत्तम प्रजा उत्पन्न करनेके लिए, जो संसारकी सेवा करके जीवन्मुक्तिके पथको सुगम बनावे। हम तलवार उठावें युद्ध करें खूनकी नदियाँ तक बहा डालें पर उद्देश साधु हो। जो कर्म स्वार्थसिद्धिके लिए किया जावेगा वह मोक्षके पथसे उलटा बन्धनका कारण होगा। पर जो कार्य मोक्षको लक्ष्य मानकर स्वार्थत्याग करके किया जावेगा वह स्वतन्त्रता और मोक्षका देनेवाला होगा। समाज और संसारसे पृथक् होनेका नाम त्याग नहीं है। सच्चा त्यागी वही है जो अपने आपको अपने स्वार्थको त्याग कर समाज और संसारके कल्याणके लिए तप जप योग और तपस्या करे। ऐसे ही लोकसेवी महान् पुरुषोंने आर्य जातिकी नींव डाली थी। ऐसे ही महापुरुषोंने ऋषि मुनि त्यागी और वैरागीकी प्रतिष्ठित उपाधि पाई है जिन्होंने भारतीय साम्राज्यको ऐसे उत्तम रीतिसे स्थापित किया कि सहस्रों वर्षोंके अनेक दोषोंके आजाने पर भी उस महान् साम्राज्यका अस्तित्व स्थिर रहा।

✓ साराश यह कि सम्पत्तिको घृणित दृष्टिसे देखना, धन पैदा करनेका पूर्ण यत्न न करना ही अधर्म है। प्राचीन आर्य्य, अपने आरम्भिक निवासस्थानको छोडकर भारतमें आ बसे केवल धनके लिए, दारा, सिकन्दर, महमूद, तैमूर आदिने भारतपर जो आक्रमण किये सो धनके लिए, ससार मात्रमें जो खूनकी नदियाँ वही है वे सब धनके लिए। शरीररक्षाके लिए धनकी जरूरत है। विद्या और सदाचारके लिए धनकी जरूरत है। सभ्यताकी उन्नतिके लिए धन आवश्यक है। धर्मकी रक्षाके लिए धनकी जरूरत है। सच तो यह है कि नाना प्रकारके उत्तम गुणोंकी रक्षा और वृद्धि एकमात्र धनसे ही होती है। लक्ष्मी देवीकी भक्ति और श्रद्धासे ही सुखोंकी वर्षा, धर्मकी वृद्धि और सरस्वतीके दर्शन होते है।

दरिद्रता, भिक्षा और दासत्व (गुलामी) पापोंके फल हैं। निर्धन दुर्बल होते हैं और इन अभागोंकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है जिससे प्राय बहुतसे काम निष्फल जाते है। दरिद्र आत्मघात करते है, जगलोंमें भाग जाते हैं, शत्रुओंके वशमें पड़ जाते है और क्रमश नाश हो जाते है। जिस प्रकार मरते हुए पुरुषके मुखपर पसीना, पीलापन तथा कम्पन होता है, उसी प्रकार धनहीन दरिद्रमें भी ये सब लक्षण होते हैं। दरिद्री पुरुष, पक्षरहित पक्षी, सूखे वृक्ष तथा जलरहित सरोवरके तुल्य लोकमें रहता है। दरिद्रताके साथ यदि मूर्खता भी है तो दु खकी सीमा नहीं है। ऐसे धनहीन मनुष्योंसे बनी हुई जाति मरी हुई है। निर्धन और मुर्देमें कोई भेद नहीं होता।

भारतमें दरिद्रताकी काली राक्षसीका राज्य है। यह अभागा देश दरिद्रता और मूर्खतासे नष्ट भ्रष्ट हो रहा है, पर तो भी भारतवासी हाथपर हाथ रक्खे अपनेको और अपने देशको धनका केन्द्र माने हुए सन्तुष्ट बैठे है।

इलाहाबादकी १९१०-११ की प्रसिद्ध प्रदर्शनीमें, बाबू महेशचरणसिंह बी० ए०, एम एस० सी० (प्रो० गुरुकुल) मुझसे कहने लगे कि "हिन्दुस्तानकी दशा लोग नाहक बिगडी हुई बताते हैं। देखिए प्राय॰ सभी लोग साफ, सुथरे, सुन्दर कीमती कपडे पहने हैं। खेल तमाशे खूब देखते हैं। आजकाल प्रदर्शिनीके तमाशेवालोंकी प्रतिदिनकी आमदनी लगभग एक लाख रुपये है। यदि भारतवासी सत्य ही गरीब होते तो इस टाटबाटसे न रहते और न थियेटर और गौहर जानके गानेमें इतना रुपया फेंकते।"

मैंने उत्तर दिया कि यह बड़े दिनोंकी छुट्टियोंका समय है। यहाँ भारतके बड़े बड़े लोग—राजे महाराजे तअल्लुकेदार जमींदार सरकारी कर्मचारी वकील मुख्तार आदि धनी और फैशनेबुल जेंटलमैन—आये हैं। एकमात्र इन बड़े आदमियोंसे भारतका अनुमान नहीं हो सकता। आपने बलिया, बस्ती, एवं इटावा आदिके देहाती रईसोंको जो थर्डक्लास स्पेशल ट्रेनमें भरकर भेजे गये हैं नहीं देखा नहीं तो आप ऐसी बात न कहते।

साहब कहने लगे कि नहीं जी देहाती भी बहुत अच्छी हालतमें हैं। गँवार होनेसे कपड़ोंका कुछ खियाल नहीं रखते; पर रुपया गाड़कर रखते हैं या जेवर बनवाते हैं।'

यही ख्याल हमारे बहुतसे अनुभवियोंका है। उनकी आँखोंकी रोशनी खराब हो गई है। लॉरेंस एण्ड मेयो कम्पनीके चश्मोंसे वे चीज़ोंको असलसे ज्यादा चमकीली देखते हैं। आँखोंके चारों तरफ नकली सुनहरा फ्रेम है, इससे उन्हें देशमें सोना ही सोना दिखाई देता है। 'आप भला तो जग भला' का मामला है।

हमें दिखाना यह है कि हमारी सच्ची दशा क्या है। संसारके अन्य सभ्य देशोंकी तरह भारत भी खूब सम्पत्तिसे परिपूर्ण है या दरिद्रता इस देशका सर्वनाश कर रही है।

धन शब्दसे केवल रुपये पैसेका बोध होता है पर सम्पत्तिका अर्थ मानवीय आवश्यकताओंको पूरा करनेका साध्य और साधन है। † इसमें पूँजी श्रम शिक्षा विज्ञान पशु और प्राकृतिक कारण आदि सभी बातें आ जाती हैं। प्रत्येकका वर्णन करना इस छोटी सी पुस्तकमें असम्भव है। अतः मामूली और मोटी मोटी बातों पर विचार किया जाता है।

हमारा पशु-धन।

प्रत्येक देशमें पालतू पशु देशीय सम्पत्तिका बड़ा भारी अंश है। भारत अन्य देशोंके सम्मुख पशु-धनमें भी दरिद्र है। हम नाम मात्रको गौको माता मानते हैं पर वस्तुतः उसे गन्दी जगहमें रखते हैं गन्दा पानी पिलाते

---

† Wealth consists of all potentially exchangeable means of satisfying human needs—*Keynes.*

अर्थात् मनुष्यकी आवश्यकताओंको पूर्ण करनेवाले जितने ऐसे साधन हैं जिनका विनिमय हो सकता हो वे सब धन-सम्पत्तिके अंतर्गत हैं।

हैं और आहारका प्रबन्ध नहीं कर सकते । यहां अकाल पडने अथवा पशुरोग फैलने पर तो ७५ फी सदी तक पशु मरते पाये गये है ।

सन् १९०० ई० में बगाल प्रांतका हिसाब तैयार नहीं था । बगालको छोडकर सारे भारतके पालतू पशुओकी कुल सख्या ९०७ लाख थी । आस्ट्रेलियाकी जनसंख्या कुछ ४० लाख है, पर वहाँ उसी सन्में १,१३५ लाख पशु थे ।

भारत और आस्ट्रेलियाकी आबादीके हिसाबसे भारतमें २६,२८० लाख पशु होने चाहिए थे, किन्तु थे केवल ९०७ लाख । अर्थात् यहाँ पर २५,३७३ लाख या ढाई अरबसे भी अधिक पशुओंकी कमी है । *

भारतमें उपयोगी पशुओंकी संख्या दिनों दिन कम होती जा रही है और उनके दूधकी मात्रा, बल और कद सब घटता जा रहा है और अन्य देशोंमे ×

---

* विलियम डिग्बी सी आई ई ।

और इसमें भी विलक्षणता यह है कि यहाँ दिन पर दिन पशु बराबर घटते ही जाते हैं । सन् १८९३–९४ में भारतमें जितने पशु थे उनके हिसाबसे सन् १९०८—०९ में बुंदेलखण्डमें प्रति सैकड़ा ४, युक्तप्रांतमें ३, गुजरातमें १८, दक्षिणमें २०, बरारमें ४, और मदरासमें ४की कमी हो गई, अर्थात् १५ वर्षोंमें सारे भारतमें औसत ७¼ पशु प्रति सैकड़ा घट गये ।

× भिन्न भिन्न देशोंमे पशुओंकी सख्याका ब्योरा —

सन् १९१७

देश	घोड़े	गाय बैल	मेढ़	बकरी	सुअर	प्रतिमनुष्य पशु
	लाख	लाख	लाख	लाख	लाख	
इग्लैंड	१८ ३/४	१२३	२७७		३०	१०
आस्ट्रेलिया	२४ १/२	९९–	७२८ १/३		८ ३/४	१७०
कनाडा	३४	८०	२३ १/२		३६ १/४	२३
फ्रांस	२४	१२४–	१०६		४२	१३
जर्मनी	३३ १/३	२१४–	६१ १/२	४३ १/२	१७२	९
जापान	१५ १/४	१४		१	३–	२४
अमेरिका	२१२	६४५–	४७६		६७५	२·४
भारत सन् १९१२	१७	१५००	२३०	३३६		७

बढ़ता दीखता है। डेन्मार्कमें १८८१ में क़रीब ९ लाख गायें थीं १९०८ में इनकी संख्या ११ लाख हो गई। १९१८ में प्रत्येक गाय प्रति वर्ष ३५ गैलन दूध देती थी पर १९०८ में बढ़ कर ५८५ गैलन प्रतिवर्ष प्रति गाय हो गया।

अन्य देशोंमें जहाँ फसलोंकी पैदावार भारतसे कहीं अधिक है वहाँके लोग पशु और मनुष्योंके वैज्ञानिक रीतिसे पलकर मालामाल हो जाते हैं और भारतनिवासी मूर्खता और दरिद्रतावश पशुओंकी संख्या घटानेके बदले बढ़ाते जा रहे हैं। यहाँ उत्तम वैज्ञानिक पशु-शाला एक भी नहीं है पर ईदके दिन लाखों गायोंकी एक ही दिनमें नाहक कुरबानी कर दी जायगी।

१९११ में यहाँ ७५ ४५८ गोरे फौजी सिपाही और ९ ११४ अफसर थे। ये कुल ७८ ११२ हुए। इनकी खास गिज़ा बीफ अर्थात् गोमांस है। यदि प्रतिजन एक पौंड रत्न लिया जाय तो प्रतिदिन ९७६ मन या प्रति वर्ष ३ ५५ २१ मन हुआ। यह भारतवासियोंकी प्रार्थना और अपील करने पर भी आस्ट्रेलिया—जहाँसे सुविधासे आ सकता है—न मँगाकर भारतवर्षमें ही जबरदस्ती किया जाता है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर ६ करोड़ मुसलमान हैं जो दरिद्रतावश बकरीका मांस न खरीद कर सकें सेरभरका सस्ता गोमांस खाते हैं। मानो गाय मुसलमानोंके बच्चोंको दूध पिला कर पुष्ट नहीं करती और अरबसे बैल आकर इनके खेत जोत जाते हैं।

यहाँ पर ३ ५५ ९११ कसाई हैं। अन्य देशोंमें भी कसाई हैं और मांस खानेवाले हैं पर वे यहाँके मांसाहारियोंकी तरह अपनी दूध देनेवाली गायोंके

पहले संस्करणमें सन् १९१६–७ का हिसाब दिया गया था।—लेखक।

भिन्न भिन्न देशोंके पशुओंकी तुलना करते समय इस बातका भी ध्यान रखना चाहिए कि अन्यान्य देशोंमें कृषि आदिका सारा काम प्रायः मशीनों आदिसे होता है पर भारतमें यह सब काम केवल बैलों आदिसे ही किया जाता है। सन् १९११ में यहाँ पर कुल ४ करोड़ गायें और भैंसें थीं। वे साल भरतक दूध न देकर आधे साल दूध देती हैं। यानी ३१ करोड़ भारतवासी केवल २ करोड़ गाय भैंसोंके दूधपर बसर करते हैं। औसत हिसाबसे १५ जन पीछे एक गाय या भैंस पड़ती है।

गले काटकर देशपर छुरी नहीं फेरते। वहाँ पशु खास इसी गरजसे पाले जाते हैं। उन देशोंके निवासी राष्ट्रकी जडपर कुठाराघात नहीं करते। *

दरिद्रताके कारण गाय बैल रखनेका रिवाज, उन्हें वैज्ञानिक रीतिसे पालनेकी बात तो उठती जाती है, दरिद्र देहाती किसान और ब्राह्मण जान बूझकर कसाई और कमसरियटवालोंके हाथ गाये बेचते हैं। करें क्या? जब भार नहीं उठा सकते तो यही सही। और दूसरी ओर हमारे मनचले हिन्दू बिना कोरमा कबाबके लुकमा नहीं उठाते। इसका परिणाम यह होता है कि दरिद्र मुसलमान बकरीका मांस खरीदनेमें असमर्थ होकर सस्ती गायपर हाथ साफ करते हैं। २० करोड़ मासाहारी पवित्र भारतमें भी हैं।

हा! वे तपोधन ऋषि कहाँ? सन्तान उनकी हम कहाँ?
थी पुण्यभूमि पवित्र जो हा! आज ऐसा अघ वहाँ!
दीपक-शिखाके धूम जैसे पूर्वजोंके हम हुए,
वे लोकमें आलोक थे, हा! हम भयंकर तम हुए!

हमारा पैतृक और संचित धन।

'Half our agricultural population never know from year's beginning to year's end what it is to have their hunger fully satisfied'

C A *Elliot*, *G S I.*

* भारतने १८९९से १९०९ तक दस वर्षोंमें ३२,०८,८०९ जीवित पशु-जिनका मूल्य २,०५,०४,७३० रुपया था—जलकी राह अर्थात् जहाजद्वारा बाहर भेजे और १५,७५,९२७ जीवित पशु—जिनका मूल्य ९४,७५,५६५ रुपया था—स्थलकी राहसे ईरान, तिब्बत आदि भेजे। अमेरिकाके किसानोंने १८९९ में ४१ करोड़ रुपयेके अण्डज जीव बेचे और ४३ करोड़के अण्डे!

जापानमें १९०४ में १,६२,५०,००० मुर्गियाँ और ७५ करोड़ अण्डे हुए। इग्लैण्डने सन् १९१२-१३ मे एक वर्षमें २३ करोड़ रुपया, जर्मनीने ३ करोड़, फ्रान्सने १ करोड़, नार्वेने ७ करोड़ और केनाडाने ११ करोड़ रुपया मछली पकड़कर कमाया।

अर्थात्— हमारे (भारतके) आधे खेतिहर सालके शुरूसे लेकर सालके अन्त तक यह नहीं जानते कि पेटभर खाना किसे कहते हैं।'

—सी. ए. एलियट।

The remaining 40 millions go through life on insufficient food.

Dr W W Hunter C. I E

अर्थात्—'बाकी ४ करोड़ पेटभर अन्न न खाकर किसी तरह जिन्दगीके दिन पूरा करते हैं। —डाक्टर हण्टर।

40 millions of people are in a state of chronic starvation, not knowing from January to December what it is to eat anb be satisfied the ir worm of hunger dieth not !'

—*William Digby*, C. I E.

अर्थात्– ४ मिलियन (४ करोड़) भारतवासियोंको पेटभर अन्न न मिलनेका बहुत पुराना रोग है। वे जनवरीसे दिसम्बर तक नहीं जानते कि पेटभर भोजन किस चिड़ियाका नाम है—उनकी क्षुधाकी दाह नहीं बुझती, उनकी भूखका कीड़ा नहीं मरता! —विलियम डिग्बी।

भारतवासियोंकी पैतृक सम्पत्तिका मूल्य प्रतिजन १७॥) और इंग्लैण्डवालोंका २५० रुपया आँका जाता है। कुछ लोग भारतवासियोंकी पैतृक सम्पत्तिका मूल्य प्रतिजन ७५ रुपया आँकते हैं पर वह अत्यन्त अधिक है। यदि १७॥) की जगह ७५ रु ही मान लिया जाय तो भी कहाँ २५० रु और कहाँ ७५ रु ! कहाँ राजा भोज और कहाँ गाँगू तेली ! *

भारतकी जातीय सम्पत्तिका अनुमान ५१ अरब रुपया किया जाता है। अमेरिकाकी जातीय सम्पत्तिका अनुमान ३३१ अरब रुपया जर्मनीका २१ अरब और ग्रेटब्रिटेन आयर्लैण्डका ३० अरब रुपया अनुमान किया जाता है। +

सन् १८५ में प्रत्येक भारतवासीकी आमदनी प्रति दिन ८ पैसे थी; सन् १८८२ में सरकारी रिपोर्ट द्वारा हमारी आमदनी फी आदमी फी दिन ६ पैसे ठहरी और सन् १९ में डिग्बी साहब० हिसाबसे वह घट कर

---

* The p osperous Brit sh India.

+ Sandhurst Economics.

सुन २ पैसे हो गए। भारतवासियोंकी आमदनी फी दिन फी आदमी तीन पैसे, अमेरिकावालोंकी ३० आने, आस्ट्रेलियाकी ३० आने, इंगलैण्डकी २४ आने और फ्रांसकी २० आने है। +

* १०,०००	राजे महाराजे और तालुकेदार जिनकी आमदनीका औसत प्रतिजन प्रति वर्ष ५००० पौण्ड है	५,००,००,०००० पौ०
७५,०००	महाजन, बैंकर, साहूकार आदि जिनकी आमदनी प्रतिजन प्रतिवर्ष १००० पौ० है ...	पौ० ७,५०,००,००० ,,
७,५०,०००	रोजगारी और दूकानदार जिनकी आमदनी १०० पौ० की है .	७,५०,००,००० ,,
८,३५,०००	जनोंकी वार्षिक आमदनी हुई—	२०,००,००,००० पौ०
	ब्रिटिश भारतकी कुल आमदनीका टोटल . ..	२६,६०,००, ०० पौ०
	देशी राज्योंकी आमदनीका टो० ...	१२,६३,६३,१३८ ,,
	सम्पूर्ण भारतकी कुल आमदनीका टो०	३९,२३,६३,१३८ पौ०

३९,२३,६३,१३८ पौ०—२९,४२,६६,७०२ जन
——————————————————— = – पेन्स
३६५ दिन

अत प्रत्येक भारतवासीकी आमदनी प्रति दिन कुल ३ पैसे होती है।
नोट—राजे महाराजे और अन्य बड़ी आमदनीवालोंके खर्च भी बेहिसाब होते हैं। यदि उनकी आमदनी निकाल दी जाय तो सामान्य जनकी रोजाना आमदनी कुल २ पैसे रोजकी ठहरती है।

+ १८९४ में प्रतिजनकी आमदनीका ब्योरा —

अमेरिका, प्रतिजन प्रतिदिन .. .	३० आने
आस्ट्रेलिया .	३० ,,
इंग्लैण्ड (U K)...	२४ ,,
केनाडा . .	२४ ,,
फ्रांस	२० ,,

नौकरी पेशेवालोंकी आमदनी ।

'We know that the people of India are virtually debarred from the higher posts in India, except a very small percentage and that Fifteen Millions sterling are annually paid to European officials employed in India, sending all their savings to Europe.—D Smeaton Member of Lord Curzon's Council.

अर्थात्—'हम जानते हैं कि सिवाय एक तुच्छ संख्याके भारतमें भारतवासियोंको उच्च पदकी नौकरियाँ नहीं दी जातीं। हमें मालूम है कि १५ मिलियन स्टर्लिंग (२२½ करोड़ रुपया) गोरे सरकारी कर्मचारियोंको भारतमें तनख्वाह दी जाती है जो अपनी सारी बचत विदेश भेजा करते हैं।

—स्मीटन (लार्ड कर्जनकी कौंसिलके मेम्बर।)

As a matter of fact, however the bigger appointments in almost all the branches of the public service are held by Europeans........ —

—Hon Surendra Nath Banerjee.

जर्मनी	१६	„
आस्ट्रिया	११	„
इटली	९	„
भारत	४	„

दूसरे सज्जन भिन्न भिन्न देशोंकी जातीय सम्पत्तिका अनुमान यह बताते हैं—‡

देश	जातीय धनका अनुमान पौण्ड	प्रति-पुरुष पौ	जातीय आय पौ	प्रति पुरुष आय पौ	रिमार्क.
इंग्लैंड U K.	१५८८२	२५१	२ २६	४४	जातीय सम्पत्ति और भारतवासियोंकी आमदनी [illegible] भिन्न भिन्न [illegible]
कैनाडा	२ ७२	२८८	२५६	३६	
आस्ट्रेलिया	१३११	२८०	११४	३६	
जर्मनी	१६	२५	१०५	२०	
अमरिका	१८	२२५	२	२०	
भारत	३६	१	६ ८		

‡ The Britannia Year Book 1913.
Webb's New Dictionary of Statistics.

अर्थात्—' सच तो यह है कि करीब सब ही बडी जगहें, हर महकमेंमें अँगरेजोंको मिलती हैं । '

—मा० सुरेन्द्रनाथ व० ।

' That the costly foreign agency absorbs a large poriton af the revenue . '

—*D E. Wacha*

—' विदेशी राजकर्मचारी देशकी मालगुजारीका बहुत बड़ी हिस्सा हजम कर जाते हैं '

—डी. ई. वाछा ।

सिविलसर्विस-विभाग ।

	यूरोपियन	इण्डियन
इण्डियन सिविल सार्विस	१२३८	५६
अनकावनैण्टेड सिविल सर्वेण्ट्स	११८	४
प्राविन्शियल सिविल सर्वेण्ट्स	७	४०
स्टेचुरी सिविल सार्विस	..	१५

पब्लिकवर्क्स-विभाग ।

	यूरोपियन	इण्डियन
इम्पीरियल एग्जिक्यूटिव और सुपरिण्टेण्डिंग	३०८	४७
इम्पीरियल असिस्टेण्ट इजिनियर्स	२३६	१३
प्राविन्शियल इजिनियर्स	५९	११३

पुलिस-विभाग ।

	यूरोपियन	इण्डियन
इन्सपेक्टर जनरल आफ पुलिस	१०	
डिप्टी और असिस्टेण्ट इन्सेक्टर जनरल	३२	..
सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस	३३०	७
असिस्टेण्ट सुपरिण्टेण्डेण्ट्स	३०८	

शिक्षा-विभाग ।

	यूरोपियन	इण्डियन
इण्डियन एजुकेशनल सर्विस	१८६	४
अनक्लसिफाइड	३८	१७

प्राविन्शियल * ५३ १३१

ऊपरके विवरणसे यूरोपियन और इण्डियन पदाधिकारियोंकी संख्याका पता लग सकता है।

अब तनख्वाहका हिसाब देखिए। पहले हम छोटी तनख्वाहसे शुरू करते हैं।

‡ एक हजार रुपया साल (या ८३$\frac{1}{3}$ रुपया मासिक) से अधिक तनख्वाहके ३९ राजकर्मचारी हैं। इनमेंसे २८ गोरे और ११ हजार हिन्दुस्तानी हैं। २८ गोरे की साल १५ मिलियन स्टर्लिंग पाते हैं जो लगभग १२$\frac{1}{2}$ करोड़ रुपयेके होता है और ११ हिन्दुस्तानी कुल ३ मिलियन पाते हैं जो लगभग ४- करोड़के होता है।"

—सर रमेशचन्द्र दत्त।

(५) रुपये × से अधिक वेतन पानेवाले—

	सन् १८९० ई०	१९ २ ई०	१९१५ ई०
यूरोपियन	२ ७८	३ २५७	४ ३६६
भारतवासी	११४	६ १	९२४

+ १ ५० या इससे अधिक साल का वेतन पानेवाले २ ३८८ राजकर्मचारी हैं उनमेंसे कुल ३ हिन्दुस्तानी और बाकी ३ ३५८ यूरोपियन

इम्पीरियल और प्राविन्शियल सर्विसमें बड़ा भेद है। इम्पीरियल वालोंकी तनख्वाह शुरूसे ज्यादह होती है और उसमें हरसाल आपसे आप तरक्की हो जानेका नियम है और प्राविन्शियल सर्विस हर विभागमें छोटी तनख्वाहसे शुरू होती है और इसमें तरक्की सिफारिश और अच्छा काम करनेपर निर्भर है इससे यह बहुत देरमें होती है और तनख्वाह कम होती है।

‡ Extract from a letter Dt. 21st April 1900 to the Editor Manchester Guardian.

× Figures taken from the reply of the Government of India, to the enquiry of the Honorable Raja of Degpatia 1912.

+ Th Hon. Mr G K. Gokhale C. I E., on the exclu sion of th people of India from h gh appointments in India

और यूरेशियन हैं। हिन्दुस्तानी १०,२०,०० रुपया पाते हैं और गोरे (यूरोपियन २,३१३ यूरेशियन १५) ४,२२,७७,००० रुपया पाते हैं।

इसके अलावा १०५ अफसर रेलवेमें हैं जो १०,००० रु० सालमे अधिक पाते हैं। ये सबके सब यूरोपियन हैं। इनकी तनख्वाहका जोड़ १६ लाख २८ हजार रुपया होता है।

५,००० से १०,००० तक सालाना वेतन पानेवाले ३,६३७ यूरोपियन और यूरेशियन हैं, और कुल ५३५ हिन्दुस्तानी हैं। गोरोंका वेतन २,७७,२०,००० है और हिन्दुस्तानियोंका वेतन कुल ३६,३१,००० रुपया है।

इनके अतिरिक्त पूर्वोक्त वेतनके २५८ अफसर रेलवेमें हैं। उनमेंसे २४८ यूरोपियन, ८ यूरेशियन और कुल २ हिन्दुस्तानी हैं। यूरोपियन १७,१०,०००, यूरेशियन ५०,००० और हिन्दुस्तानी कुल १२,००० रुपया पाते हैं।

गवर्नमेंण्ट आफ इण्डियाको १,२५,३६० पौण्ड या (१८,८०,४०० रुपया) और रेलवे कम्पनीको ५४,५२२ पौण्ड (या ८,१७,८८० रुपया) इंग्लैण्डमें, वहाँके कर्मचारियोंको वेतन देना होता है। और ये सब यूरोपियन हैं।

"इसके अलावा एक भारी रकम पेन्शन और फरलो (छुट्टी) की विलायत जाती है और इसके पानेवाले यूरोपियन हैं। सन् १८९० में ३½ मिलियन स्टरलिंगसे अधिक (सवा पाच करोड़ रुपया) केवल इसी मद्में यूरोपियनोंको इंग्लैंडमें अदा किया गया। इस बड़े खर्चवाली विदेशी एजेन्सीसे केवल आर्थिक हानि ही नहीं है, इससे हममें एक प्रकारकी मानसिक अनुन्नति ऐसी आ रही है कि जिससे सारी नेशन दुर्बलतासे नीचे गिरी जा रही है। हमारे उच्चभाव नष्ट हो रहे हैं। हम हर जगह झुके रहते हैं और अपनेको अयोग्य समझा करते हैं यहाँतक कि हममें, सबसे योग्य, सुशिक्षित, प्रतापशाली नेताओंको भी झुकना पड़ता है कि विदेशी सतुष्ट रहें।"—माननीय गोपाल कृष्ण गोखले सी आई ई।

स्वर्गवासी महारानी विक्टोरियाकी प्रतिज्ञा है कि—"जहाँतक हो सके हमारी प्रजा चाहे वह किसी भी जाति या फिरकेकी क्यों न हो, उसे उसकी शिक्षा, योग्यता, बुद्धिमत्ता तथा ईमानदारीके अनुसार विना तरफदारीके स्वतन्त्रतापूर्वक हमारे तमाम महकमोंमें नौकरी दी जाय।"

"And it is our Further will, that so far as may be, our Subjects, of whatever Race or Creed, be freely and impar-

tially admitted to offices in our service the duties of whic[h]
they may be qualified by their education, ability an[d]
integrity duly to discharge.

स्वर्गवासी महाराज एडवर्डने अपनी पूजनीया माताकी प्रतिज्ञा बराबर पाल[न]
की और उसके बाद हमारे वर्तमान महाराज माननीय पञ्चम जार्ज बर्[ताव]
दिल्लीके घोषणापत्र द्वारा भारतवासियोंको विश्वास दिला गये हैं कि वे अप[ने]
सुयोग्य पूर्वजोंकी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रह कर भलीभाँति उसका पालन क[र]
निर्वाह करेंगे।

What strength, O England, shall be thine
When such prosperity is mine?
Contentment!—What contentment lies
In that poor slavish heart
That dumb despair with sunken eyes.
That bears its ills and rather dies
A thousand deaths than dare to rise
And play a free man's part.

Punch, July. 1907

प्रिय पाठक सब बातोंका भार अब आप ही पर रहा। यदि आप चाहें
तो कमसे कम एक गिरे हुए भाईको एक निर्धन व्यक्तिकी विद्याध्ययनमें
सहायता देकर ब्रह्मचारी या ब्रह्मचारिणी बनाकर देशवासको जरा सा ऊप[र]
उठा दें—जिससे कि आपके बनाये हुए योग्य युवक या युवतियाँ देशकी
सेवा करते हुए, अपना खोया हुआ हक या गौरव पुनः प्राप्त करें। अथवा,
आप चाहें तो आप भी पुराने अमीरोंके कबीर बन बैठें और (Eat, drink
and be merry) खाओ पियो और मजे उड़ाओ के सिद्धान्तको मानें
और मरते वक्त एक या अधिक अयोग्य संतानें छोड़ जायें कि जो मातृभूमिके
भार और देशवासियोंको एक दम नीचे ले जानेवाले हों—आप जीते जी ही नर्क-
का और दुःख सहन करें और अपने साथ देशवासियोंको भी घसीटते जायें।
जो हो दोनों बातें आपहीके हाथोंमें हैं।

सन् १९११ में मिरजापुरकी दीवानी कचहरीमें कुल तनख्वाह १९
रुपया मासिक थी। उसमेंसे पूरे जज मिस्टर भाभा २४ सब जज ६५
मुन्सिफ २ मुन्सरिम १ मुतर्जिम १ ८० आगे हैं और बाकी

५३० रुपयेमें ७२ अन्य अहल्कार अपना निर्वाह करते हैं।× इनमेंसे कुछ प्यादे ५ रु० पाते हैं, कुछ मुशी १०, बाजे १५ या इससे अधिक पाते हैं, पर सबोंकी औसत निकालनेसे ८ रुपया मासिक फी अहल्कार पडती है। जजको छोड़ सभी अमले चपरासी तक बाल-बच्चेवाले हैं। सभीको अपने पेटके अलावा घरके अन्य प्राणियोंकी सहायता करनी पडती है। फिर ये ८ रुपयेकी औसतवाले जीते कैसे हैं? किस तरह अपनी और अपने बालबच्चोंकी उदरपूर्ति कर सकते हैं? इसका जवाब बहुत सहल है, सिर्फ एक शब्दमें काम निकल जायगा, उसे ‘ रिश्वत ’ कहते हैं।

मुहाफिज दफ्तरके बडे लडके (रजिस्ट्रेशन क्लार्क) अभी ३ महीने तक रिश्वतके मुकदमेमें मुअत्तल थे। दूसरे छोटे लडके चुंगीमें मोहर्रिर थे, उनको ६ महीनेकी सजा हो गई। कायममुकाम नाजिरको कुछ ऐसे ही मामलोंके कारण इस्तीफा देना पडा–आदत कब छूटती है, या यों कहिए कि बालबच्चोंकी सख्त जरूरत कब छोड़ती है। आप मिरजापुरसे इस्तीफा देकर बनारस स्टेटमें आये। वहाँ आपने एक बड़ी रकमको गबन किया। गिरफ्तार हुए, माल बरामद हुआ और वे आजकल कारागारका सुख भोग रहे हैं। पुराने नाजिरजीका लडका उसी नाजिरतमें ५ रु० का चपरासी है।

मुन्सरिम साहब रँडुए हैं, रोटी अपने हाथसे बनाते है, और काम, कचहरीके खुशामदी प्यादे कर देते है। बडे लडके पुलिसमें किसी एक पद पर हैं और छोटे चुंगीके मुलाजिम हैं। सबजज साहबके पास गाडी है, घोड़ा नहीं है, कचहरी पैदल जाते हैं। मुन्सिफ साहबके पास दोनों चीजें नहीं है। मेले तमाशोंमें या किसी दावतमें अपने आधे दर्जन लड़कोंके साथ, शहरके महाजनोंकी गाडीपर दिखाई देते हैं। यह दुर्दशा तो उन अमलोंकी है जो अच्छी तनख्वाहवाले कहे जाते हैं। अब छोटोंकी दशा देखिए—

मुशी रामजियावनलाल, मोहरिर सिविल कोर्ट, वेतन १५ रु० मासिक, साकिन अमिलहा, (मिरजापुर) जीवित हैं। नौकरीके सिवा आमदनीका कोई दूसरा जरिया नहीं। आपको २६ लड़के हुए। एक अधमुए सूरजनारा-

× Through Mr K N Khandelwal B A. LL B the then Central Nazir

ईश्वर गिरा देता है-एक संतान हर दूसरे साल पैदा होकर घोर कष्टकी आगमें ईंधनका काम देती है।

ये बेचारे सुबहसे शाम तक किसी दफ्तर या कारखानेमें कसकर काम करते हैं, जहाँ न तो उनकी आमदनी बढनेकी कोई आशा है और न उस काममें उनका कोई खास फायदा या मतलब है, कि जिसकी वजहसे उनका मन लगे या वे प्रसन्न चित्तसे काम करें। भूखे, प्यासे, थकावटसे चूर घर आते हैं, पेट भर रुचिके अनुसार भोजन नहीं पाते। बालबच्चोंका रुदन, घरके झगडे और माता या स्त्रीकी दुःखकी कहानी सुनते सुनते सो जाते हैं। थकावट दूर करनेको काफी आराम नहीं मिलता, सुबह हो जाती है। आँख खुलते ही चिन्ताका पहाड ऊपर गिर पडता है। प्रातःकालकी प्रार्थना, ईश्वरका ध्यान, हरिचरणोंमें प्रेमकी जगह पर पेटपूजा कर्ज और बीमारीका असह्य दुःख वज्र सा गिर पड़ता है और सद्भावोंका नाश कर देता है। ऐसे हृदयवेधक क्लेशोंको वे ही अनुभव कर सकते हैं जिन्हें ऐसे क्लेशोंके सहनेका दुर्भाग्य प्राप्त हुआ हो। ऐसी अवस्थामें ईश्वरकी भक्ति कहाँ तक बाकी रहती है? लोग कहते हैं कि दुःखमें दुखिया ईश्वरको याद करते हैं—नहीं, हमेशाका भारी कष्ट ईश्वरको, कोशियन्स (conscience) को, सत्य और असत्य या भले और बुरेकी पहचानको भुला देता है। सिर्फ एक बात याद रहती है-परिवारकी प्राणरक्षा कैसे हो—बस।

निराश और लाचार, फिर वही नित्यका धन्धा शुरू करते हैं। जब तक बस चलता है, ताकत रहती है, काम किये जाते हैं। आखिर कोई अंग बेकार हो जाता है, आंख, हाथ पेट या दिमाग जवाब दे देता है, धुन्ध, राशा, संग्रहिणी, खप्तान या और कोई राजरोग ग्रस लेता है, और ये दुखिया, स्त्री और आधे दर्जन बच्चोंको सर्वथा अनाथ छोड कर सुरपुर सिधार जाते हैं। हाय हाय! ये शान्तिपूर्वक मर भी नहीं सकते। मुझे वह दृश्य कभी न भूलेगा जब मेरे एक युवा मित्र, ब्रजकिशोर मरते समय चारपाईसे झुकी हुई सुन्दरी (धर्मपत्नी) के गलेमें हाथ डाल कर हिचकियां लेने लगे। धीमी, पर दर्दनाक आवाजसे कहने लगे—"प्रिये, मैं बडा पापी हूं, मैंने बडा अन्याय किया, दरिद्रताके कारण तुम्हें मेरे साथ सदैव दुःख ही भोगते बीता, और अब मैं तुम्हारे तीन बच्चोंको सर्वथा अनाथ छोडे जाता हूं। मैं

अवश्य नरकमें जाऊँगा। देवि मेरे अपराधको क्षमा करो।' यह कहते कह
उन्होंने प्राण त्याग दिया।

३ वर्ष पहले आपके पिता ३ अविवाहित लड़कियाँ और १ छोटे लड़
छोड़कर मरे थे। रिश्तेदारोंकी सहायतासे किसी तरह दिन कटा। एक भा
मर गया। आपने होश सँभालते ही ब्याह कर लिया उसका परिणा
आपने देख लिया। आपकी बूढ़ी माता दुखनी थी, दो बालक और ए
बालिका अब पब्लिक चारिटी (सार्वजनिक दान) पर बसर करती हैं।

ऐसे कई करोड़ ब्रजकिशोर भारतको गारत कर रहे हैं। यदि आप स्वयं ए
ब्रजकिशोर नहीं हैं तो आपका भाई-बन्धु या पड़ोसी अथवा रिश्तेदार-
कर है। केवल आँख खोल कर देखिए तो पता चल जायगा।

कहिए, ऐसोंकी संख्या बढ़ानेकी आप दृढ़ प्रतिज्ञा करते हैं या आप भी
विवाह करके एक नये ब्रजकिशोर बनाना चाहते हैं?

जिन बच्चोंका तोतलापन भी नहीं छूटा है वे टोपी खिलौने और कहानि
बाजारोंमें बेचते हैं किताब दिखाते हैं और नौकरी तक करते हैं। माता पिता
उनका असह्य दुःख देखते हैं पर दरिद्रता उनका हृदय कठोर कर देती और
बेचारे कमानेके लिए मजबूर किये जाते हैं।

१ दिसम्बर १९१० ई० को इलाहाबादके एक प्रेसमें मैं एक कापी प्रू
देख रहा था जो उसी दिन छपाना था। सामने ही एक आठ वर्षका सुन्दर
बालक प्रेससे छपे हुए कागज उठा उठा कर गिन गिन कर रखने, और १
कागज पर एक निशान लगा देनेका काम कर रहा था।

कुमाइसकी वजहसे कापी कामोंकी भरमार है। कल आधी राततक प्रेस
खुला था और आज ९ बजेसे फिर बालक अपनी जगह पर मौजूद है। बा
ऊँघ ऊँघ कर गिर रहा है। स्वामी देवेन्द्रजीने कई बार चपत देकर जगाया
पर उससे काम नहीं चलता और काम करनेवालोंका हरज होता है। लाचार,
मैनेजर साहबसे शिकायत हुई। मैनेजर (Mr Lyne) जपक कर उसके
पास गये उन्होंने बच्चेको झपकता पाया। एक घूँसा मुँह पर इस जोरका दिया
कि वह चीख कर अपनी ऊँची जगहसे पत्थरकी फर्श पर जा गिरा फिर घुम
बरकी एक ठोकर लेकर उसकी पसलीमें इस जोरकी लगी कि वह छटपटा कर
कर बेहोश हो गया। मैंने दौड़कर उसे उठा लिया उसके मुँह और नाकसे खून

बहने लगा । प्रेसवाले एक बार मृतकतुल्य बेहोश बालककी ओर देखकर अपना अपना काम करने लगे और मैनेजर साहब गाली देते हुए अपने कमरेमें चले गये ।

बहुत देरमें होश आनेपर मैंने उसे घर पहुँचानेको कहा । वह मेरे गलेसे लिपट गया और फूट फूट कर खूब रोया । फिर हिचिकियों लेता हुआ डरी जबानसे कहने लगा—“ मुझे घर न ले चलो, बिना प्रेस बन्द हुए घर चलनेसे, बाबूजी मुझे मारेंगे और मेरा खाना बन्द कर देंगे । वे बडे बेदर्द हैं, बहिनको भी बहुत मारते हैं, माको . ” इतना कहकर वह फिर बेहोश हो गया । बहुत कुछ कोशिश की, पर होश न आया । लाचार, प्रेसवालोंसे घरका पता पूछ कर उसे, उसके घर ले गया । उसका किरायेका छोटासा कच्चा मकान मोहतशमगजमें था । देखा तो वहाँ और ही गुल खिल रहा है । वृद्ध पिता, और युवा बड़ा भाई दोनों ही सख्त बीमार हैं । किसीमें यह सामर्थ्य नहीं कि उसकी खबर ले सकें । १५—१६ वर्षकी एक कुमारी बहिन उनकी सेवा करती है । घर और वस्त्रादिसे घोर दरिद्रता प्रकट होती है । मुंशीजी पुराने मुख्तार हैं, पहचानमें गलती होनेसे दो वर्षकी सजा हो गई थी, तबसे बेचारो पर बड़ी मुसीबत है । लड़केकी बहिनसे कुल हाल कहकर, उसे कालविन अस्पताल (Colvin Hospital) ले गया, और मिस्टर सूर्य्यकुमार मुकर्जीके सुपुर्द कर आया ।

एक आर्टिकल पायोनियर, और दूसरा लीडरमें, हर तरफसे अपनी रग बचाता हुआ दे दिया—और बस छुट्टी पाई ।

हमारा व्यापार ।

India, the mine of wealth ! India in poverty ! Midas starving amid heaps of gold does not afford a greater paradox yet here we have India, Midas—like, starving in the midst of untold Wealth ! !'—*Molesworth*

प्रसिद्ध मोलस्वर्थका कथन है “ भारत भूमि धनकी खान है । इसमे नानाप्रकारके खेती, खनिज और उद्योगके लिए प्राकृतिक सामान है—उत्तम कोयला है, उमदा मिट्टीका तेल है, लोहे और लकड़ीकी उत्तमतासे इङ्गलैण्डवालोंके मुँहमें पानी आ जाता है, सोना, चाँदी, ताँया, टीन तथा अन्य अनेक रत्नोंकी भी कमी नहीं—तिस पर भी भारत भूखों मरे ! ”

अवश्य नरकमें जाऊंगा। देवि मेरे अपराधको क्षमा करो। यह कहते कहते उन्होंने प्राण त्याग दिया।

१ वर्ष पहले आपके पिता ४ अविवाहित लड़कियाँ और २ छोटे लड़के छोड़कर मरे थे। रिश्तेदारोंकी सहायतासे किसी तरह दिन कटा। एक भाई मर गया। आपने होश सँभालते ही ब्याह कर लिया उसका परिणाम आपने देख लिया। आपकी बूढ़ी माता युवती स्त्री दो बालक और एक बालिका अब पब्लिक चारिटी (सार्वजनिक दान) पर बसर करती हैं।

ऐसे कई करोड़ ब्रजकिशोर भारतको गारत कर रहे हैं। यदि आप स्वयं एक ब्रजकिशोर नहीं हैं तो आपका भाई-बन्धु पड़ोसी बरादरी रिश्तेदार-नौकर है। केवल बीस कोस तक दौड़िए तो पता चल जायगा।

कहिए ऐसोंकी संख्या घटानेकी आप दृढ़ प्रतिज्ञा करते हैं या आप भी विवाह करके एक नये ब्रजकिशोर बनना चाहते हैं?

जिन बच्चोंका तोतलापन भी नहीं छूटा है वे टोपी खिलौने और अखबारें बाजारोंमें बेचते हैं बिस्कुट बिकाते हैं और नौकरी तक करते हैं। माता पिता उनका बचपन न देखते हैं पर दरिद्रता उनका हृदय कठोर कर देती और वे बेचारे कमानेके लिए मजबूर किये जाते हैं।

९ दिसम्बर १९१० ई० को इलाहाबादके एक प्रेसमें मैं एक जरूरी प्रूफ देख रहा था उसे उसी दिन छपाना था। सामने ही एक आठ वर्षका सुन्दर बालक प्रेससे छपे हुए कागज उठा उठा कर गिन गिन कर रखने और १ कागज पर एक निशान लगा देनेका काम कर रहा था।

नुमाइशकी वजहसे जरूरी कामोंकी भरमार है। कल आधी रात तक प्रेस चला था और आज ६ बजेसे फिर बच्चा अपनी जगह पर मौजूद है। वह ऊँघ ऊँघ कर गिर रहा है। स्याही देनेवालेने कई बार चपत देकर जगाया पर उससे काम नहीं चलता और काम करनेवालोंका हरज होता है। आखिर मैनेजर साहबसे शिकायत हुई। मैनेजर (Mr Lyne) झपट कर उसके पास गये उन्होंने बच्चेके तमाचा मारा। एक चाँटा मुँह पर इस जोरका दिया कि वह चीख कर अपनी ऊँची जगहसे पत्थरकी फर्श पर आ गिरा फिर बूटकी एक भरपूर ठोकर उसकी पसलीमें इस जोरकी लगी कि वह बेचारा बालक बेहोश हो गया। मैंने दौड़कर उसे उठा लिया उसके मुँह और नाकसे खून

लाभ उठाना अंगरेजोंका। आगे छपी हुई सूचीसे व्यवसायोंके मालिकोंका पूरा ज्ञान होगा।

प्रधान प्रधान व्यवसायोंके मालिक। ‡

नाम व्यवसाय।	भारतवासियोंके हाथमें।	अंगरेजों या अन्य विदेशियोंके हाथमें।
बंगाल।		
चायके खेत और कारखाने	२६	२४०
सनके कारखाने	०	५०
सनके दवानेवाले कारखाने	५२	५७
कलाके वर्कशाप	७	३०
कोयलेकी खानें	४९	६०
बिहार और उड़ीसा।		
नीलके खेत या प्लान्टेशन	१४	१०५
कोयलेकी खानें	११०	८६
लाखके कारखाने	४६	२
संयुक्त प्रांत।		
लाखके कारखाने	७५	१३
छापेखाने	८०६	१५०
कालीनके कारखाने	९३	१०
कपासी कारखाने	७२	५
बम्बई।		
रेलवे वर्कशाप	०	१३
कलाके वर्कशाप	२	९
छापेखाने	४४	१७
कपासी कारखाने	३९६	७९
मद्रास।		
कहवेके खेत	१७	८६

‡ Moral and Material Progress Reports

हालेण्डसाहबने सच कहा है कि "भारतवर्ष खनिजके कामोंमें काममें आनेवाली उपयोगका अपरिमित स्थान है। प्रकृतिने इस देशको सब कुछ दिया है। वे पदार्थ केवल इस देशके लिए ही काफी नहीं हैं बल्कि संसारभरके बाजारोंमें सुविधा और लाभके साथ भेजे जा सकते हैं। पर जब तक हम ऐसे उत्तम मालके बहुपुरुषत्व न पैदा करें जो वकालत और नौकरीके पेशेकी तरह इस उद्योगमें भी सम्मत हों तब तक यह भारतका असीम धन गुप्त ही रहेगा*।" डाक्टर साइकस कहते हैं कि "यदि भारतवर्ष संसारके अन्य देशोंसे अलग कर दिया जाय या इसकी उपजकी रक्षा की जाय तो यह निश्चित बात है कि एक सुशिक्षित सभ्य जातिकी सर्व आवश्यकताओंको भारत अपने ही भण्डारकी उपजसे पूर्ण कर सकता है।"

भारतके भी दिन थे जब इसका सिक्का श्याम रोम यूनान मिस्र ईरान, अरब जापान चीन और इंग्लिस्तानमें बराबर जाया करता था। उस समय इस देशमें दुर्भिक्षकी अधिकता नहीं थी। यह देश लक्ष्मीसे परिपूर्ण था। किन्तु भारतने समय पहचान कर काम नहीं किया। आलसरतामें लीन होनेसे मुसलमानी राज्यमें ही इसके व्यापारको धक्का लगा और अंग्रेजोंके पधारते ही इनकी सत्ताका सूत्रपात होते ही भारतके व्यापारमें भयंकर परिवर्तन होना आरम्भ हुआ। विदेशी हुकूमत कूट-नीतिज्ञोंकी पालिसी और अभागे भारतकी अन्धकारमय मूर्खतासे इस देशके व्यापारकी जड़में कुठाराघात होता गया। कलाकौशल और उद्योग-धन्धोंके साथ साथ लक्ष्मी भी खिसक कर इंगलैण्ड पहुँच गई। विदेशने भारतीय व्यापारको हर लिया इस देशको कला-कौशल्य तथा सम्पत्तिहीन कर डाला। होश आने पर भी अभी हम अँगड़ाइयाँ ले रहे हैं।

सच तो यह है कि भारतका कुल व्यापार विदेशियोंके हाथमें है। भारतके व्यापारका लाभ विदेश जाता है। रेल तार, ट्रामवे सोना चाँदी आदिकी खानें मिट्टीके तेलके कारखाने कोयला सन ऊन नील चाय अथवा कागज आदि सभीके कारखानोंके मालिक फिरंगी हैं। भारतवासी या तो एजेण्ट हैं या दलाल। माल पीसना एवं ढोवाना हमारा काम है और उससे

* T H Holland Director—General f th Geological Survey f Indi

भारतवर्षमें १९०५ में १,७२८ कम्पनियाँ थीं, उसी समय इँग्लैंडमें ४०, ९९५ थीं। भारतकी कम्पनियोंका सरमाया (पूँजी) २,८०,००,००० पौण्ड और इंग्लैण्डकी कम्पनियोंका सरमाया २,०००,०००,००० पौण्डका था। अर्थात इँग्लैण्डमें भारतसे १४ गुना अधिक कपनियाँ है और उनका सरमाया भारतसे ७१ गुना अधिक है। (देशोंकी जनसख्या पर भी ध्यान देना आवश्यक है।) इन बडे देशोकी तो बात ही निराली है, छोटे छोटे देश जैसे बेल्जियम, नीदरलैण्डस, स्विटजरलैण्ड, डेन्मार्क और कलके उठे हुए जापानसे भी भारतका व्यापार गया गुजरा है।

आजकल हर बातमें (Survival of the fittest) सुयोग्य और अयोग्यका झगडा चल रहा है। व्यापारी ससारमें भी जीवन-संघर्पका रगडा जारी है। रेल, तार और जहाजके जमानेमें सारे ससारका मुकाबला है। सभ्य देशोंमें प्रत्येक जाति (Nation) में बडी सख्त और बेढब मुकाबलेकी मुठभेड़ है। अयोग्य शीघ्र ही सुयोग्योंको अपना स्थान दे देता है। निर्बल, मूर्ख और अयोग्यकी मौत है।

भारतके अयोग्य व्यवसायपतियोंकी मृत्यु सिर पर नाच रही है। यूरोपके सुयोग्य व्यवसायपति सस्ते माल बनाकर यहाँ धडाधड भेजते हैं और हम अपनेको सारे ससारसे अधिक अनुभवी, साहसी, बुद्धिमान्, शासनमें निपुण, सत्यवादी और सबके उपर धनवान् व्यापारी समझे हुए मस्त सो रहे हैं।

जरा आप विचार तो करें कि जब भारतमें कलाओंसे पदार्थ उत्पन्न करनेकी रीति नहीं, जब भारतके श्रमी, कारीगर, सेठसाहूकार अपठित हैं, तब वे ऐसे देशोंका क्या मुकाबला कर सकते हैं जिनके एक एक कारखानेमें पाँच पाँच लाख श्रमी काम कर रहे हों। जो दो दो लाख घोडोंकी ताकतवाले इंजन चलाते हों। जो ४० हजार टन कैल्सियम कार्बाइड पैदा कर सकते हों। जो एक दिनमें १०००० टन गधक तैयार कर सकते हों। जो १५० रसायनवेत्ता एक कारखानेमें परीक्षाओंके लिए रखते हों। क्या ऐसी जातियोंके जीवन-सघर्पके मुकाबलेके लिए हम तैयार हो रहे हैं और अपने देशके बच्चोंको तैयार कर रहे हैं? खूब याद रहे कि यह मुकाबला जिंदगी और मौतका है। यदि अब भी हम कारणको सुधारकर कार्य सिद्ध करनेमें कमर नहीं कसते तो हमारी मृत्यु निश्चित है।

-ओंके तत्त्वको नहीं समझते और शासन, न्याय, स्वतन्त्रता तथा निज अधिकारकी रक्षाकी गूढ वातोंमें अपना मस्तिष्क नहीं लगाते। प्रत्येक देशमें एक मात्र कृपिमें लगी हुई जातियाँ सदा दासत्वमें रही हैं। स्वेच्छाचारी राजे, सरदार या ब्राह्मण आदि सदा इन्हें पददलित करते रहे हैं। दासत्वका भाव लोगोंके रग व रेशोंमें भर जाता है। निदान वे इसीसे प्रेम करने लगते हैं और इससे उद्धार पानेका यत्न करना भूल सा जाते हैं।

व्यवसायसे आत्मविश्वास वढता है। नित्य नये लोगों, नये व्यापारों, और नये अविष्कारोंका मुकावला करके विजयके यत्नमें तत्पर रहना पड़ता है, किन्तु कृपक ऋतु, वर्षा, ओला, वाढ, और टिड्डी तूफानके अधीन रहते रहते प्रारब्धका अंधविश्वासी वन जाता है। सासारिक उन्नतिमें वाधा डालनेवाले वेदान्तके भक्त तथा दैववादी उजडे हुए भारतको कृपि खूव भली मालूम होती है। छोटे छोटे खेतिहरोंके ईर्षा-द्वेपसे भारत भस्म होता जाता है, तिसपर भी यहाँ कृपकोंकी संख्या वढती ही जा रही है।

अमेरिका और जर्मन भी कृपि प्रधान देश हैं पर वहाँ—वहाँ ही क्यों सारे सभ्य ससारमें—कृपिकी पैदावर वढ रही है और कृपकोंकी सख्या कम होती जा रही है। अमेरिका और जर्मनीने व्यवसायको तिलाजुली देकर एकमात्र कृपिका आश्रय नहीं ले लिया है। वहाँ कृपि तथा व्यापार दोनोंकी उन्नति है। उन देशोंमें व्यवसायी अधिक और कृपक कम हैं। भारतमें कुल कृपक ही होते हैं*। जैसे कालेजसे निकले हुए ग्रेजुएटोंको वकालत छोड दूसरा पेशा नहीं मिलता, वैसे ही दरिद्रताकी डिगरी लिये हुए साधारण भारतवासियोंको खेती छोड़ कोई दूसरा काम ही नहीं मिलता। भारतमे प्रति सैकडा ७१, ईग्लैण्डमें ८, जर्मनीमें २८, और अमेरिकामें ३५ किसान हैं।

---

* देखिए, और और देशोंमें प्रति सैकडा कितने कितने आदमी किन मुख्य मुख्य पेशोंके करनेवाले हैं —

	कृषि	शिल्पव्यवसाय	व्यापार
इग्लैण्ड	१२ ६६	५८	११ ३९
अमेरिका	३५	२४	१६
जर्मनी	३२ ६	३७	११ ५
भारत	७१	१२	७

हमारे कृषक ।

भारतवासी मान बैठे हैं कि—

उत्तम खेती मध्यम बान । निषिद्ध चाकरी भीख निदान ॥

और आलसी लोगोंके लिए है भी यही ठीक, क्यों कि व्यवसाय व्यापार, शिल्पकारीमें कृषिकी अपेक्षा बुद्धि और हुनरकी ज्यादा जरूरत पड़ती है । मन्द-बुद्धि पुरानी रीतियोंके प्रेमी अनुत्साही और भाग्यपर भरोसा देकर मरनेके लिए तैयार रहनेवालोंको कृषिसे उत्तम कोई काम नहीं हो सकता ।

"जो देश केवल साधारण खेतीमें लगे होते हैं उनमें मनकी मन्दता शरीरका भद्दापन पुराने रीति-रिवाजों विचारों और उत्पत्तिकी विधियोंके प्रति प्रेम और सभ्यता वैभव समृद्धि स्वतन्त्रताका अभाव पाया जाता है । दूसरी ओर जो देश व्यापारमें लगे हैं उनमें मानसिक और शारीरिक गुणोंकी उन्नतिके निरन्तर उद्योगी बने रहनेके मुकाबला करनेके और स्वतन्त्रताके भाव पाये जाते हैं * ।

शिल्प-कला-कौशल और व्यापार ही वहाँकी देशोंकी मौलिक नींव हैं । व्यापारिक देशोंकी रक्षार्थ सैनिक बेड़े बनाये जाते हैं । शिल्पीको माल बेचने तथा उसके लिए कच्चा माल प्राप्त करनेके अभिप्रायसे नये देश नई बस्तियाँ, और नये नये बाजारोंपर अधिकार जमानेके लिए युद्धकी तैयारी करनी पड़ती है । अतः व्यवसायप्रधान देश सब प्रकार उन्नति करता रहता है । किन्तु कृषि-प्रधान देश अवनतिके गहरे गढ़ेमें जा गिरता है । इंग्लैण्डने व्यवसायकी वृद्धि करके ही सर्व जातियोंमें उच्च स्थिति प्राप्त की है और भारतने कृषिके साथ व्यापारको भी न करते रहकर एक मात्र कृषक बन जानेके कारण अधोगति देखी है ।

किसानोंको अलग अलग रहना पड़ता है गाँव वन पहाड़ और झाड़ियों में जीवन व्यतीत करना पड़ता है जिससे उचित शिक्षामें बाधा पड़ती है । किसानोंको भ्रमण करनेकी जरूरत कम पड़ती है । वे अपने पैतृक खेतोंके पीछे बने रहनेहीमें मस्त रहते हैं । प्रवास और संसार-भ्रमणसे उत्साह सभ्यता ज्ञान वीरता और स्वाधीनताकी वृद्धि होती है । कृषक राष्ट्रीय संस्था-

---

* National System of Political Economy by F List of Germany

ओके तत्त्वको नहीं समझते और शासन, न्याय, स्वतन्त्रता तथा निज अधिकारकी रक्षाकी गूढ बातोंमें अपना मस्तिष्क नहीं लगाते। प्रत्येक देशमें एक मात्र कृपिमें लगी हुई जातिया सदा दासत्वमें रही हैं। स्वेच्छाचारी राजे, सरदार या ब्राह्मण आदि सदा इन्हें पददलित करते रहे हैं। दासत्वका भाव लोगोंके रग व रेशोंमें भर जाता है। निदान वे इसीसे प्रेम करने लगते हैं और इससे उद्धार पानेका यत्न करना भूल सा जाते हैं।

व्यवसायसे आत्मविश्वास वढता है। नित्य नये लोगों, नये व्यापारों, और नये अविष्कारोंका मुकावला करके विजयके यत्नमें तत्पर रहना पडता है, किन्तु कृपक ऋतु, वर्पा, ओला, वाढ, और टिड्डी तूफानके अधीन रहते रहते प्रारब्धका अधविश्वासी वन जाता है। सासारिक उन्नतिमें वाधा डालनेवाले वेदान्तके भक्त तथा दैववादी उजडे हुए भारतको कृपि खूव भली मालूम होती है। छोटे छोटे खेतिहरोंके इर्पा-द्वेपसे भारत भस्म होता जाता है, तिसपर भी यहाँ कृपकोंकी संख्या वढती ही जा रही है।

अमेरिका और जर्मन भी कृपि-प्रधान देश हैं पर वहाँ—वहाँ ही क्यों सारे सभ्य ससारमें—कृपिकी पैदावर वढ रही है और कृपकोंकी सख्या कम होती जा रही है। अमेरिका और जर्मनीने व्यवसायको तिलाजुली देकर एकमात्र कृपिका आश्रय नहीं ले लिया है। वहाँ कृपि तथा व्यापार दोनोंकी उन्नति है। उन देशोंमें व्यवसायी अधिक और कृपक कम हैं। भारतमे कुल कृपक ही होते हैं*। जैसे कालेजसे निकले हुए ग्रेजुएटोंको वकालत छोड दूसरा पेशा नहीं मिलता, वैसे ही दरिद्रताकी डिगरी लिये हुए साधारण भारतवासियोंको खेती छोड़ कोई दूसरा काम ही नहीं मिलता। भारतमें प्रति सैकडा ७१, ईंग्लैण्डमें ८, जर्मनीमें २८, और अमेरिकामें ३५ किसान हैं।

---

* देखिए, और और देशोंमें प्रति सैकडा कितने कितने आदमी किन मुख्य मुख्य पेशोंके करनेवाले हैं —

	कृषि	शिल्पव्यवसाय	व्यापार
इंग्लैण्ड	१२ ६६	५८	११ ३९
अमेरिका	३५	२४	१६
जर्मनी	३२ ६	३७	११·५
भारत	७१	१२	७

पजाव	५४१	५८५	६०१
युक्तप्रात	६९०	६९१	७३२
बरोदा	६००	५२९	६५४
मध्यभारत	४८१	५२०	६३४
हैदराबाद	४७८	५१६	६१९
काश्मीर	६८१	७६५	७९६
मैसूर	६७३	६९३	७३०
राजपूताना	५४०	६०१	६४७
समस्त भारतवर्ष	६४५	६७५	७१६

Agriculture is increasing The number of both Zamindars and tenants has risen in the last decade— A. I. C. R. 1911

भारतके ताल्लुकेदार या जमींदारोंका नाम तो कृषकोंकी सख्यामें आ नहीं सकता। ये लोग कृषक तो केवल उसी स्थान तक कहे जा सकते हैं जहाँ तक 'सीर' या 'खुदकाश्त' करते हैं, अन्यथा ये तो सरकार और काश्तकारके बीचके जाबिर कमीशन एजेण्ट हैं। इनका काम तो केवल काश्तकारोंको लात जूते लगा कर लगान वसूल करना है–बस! काश्तकारोंको उजाड़ देना ही इनका काम है। बेचारे सच्चे काश्तकारोंके पसीनेकी कमाई पर भारतसरकार और इसके एजेण्ट मजे उडाते हैं और ये अनाथ सब कुछ पैदा करके दूसरोंके हवाले करके आप जिन्दगीके दिन गिनते हैं। इनकी दुर्दशाका सक्षिप्त वृत्तान्त लिखते हुए भी कलेजा फटा जाता है।

×एक कुरमी काश्तकार।

जर्जर कमजोर, चेहरेसे जान पड़ता है कि उसे पेटभर अन्न नहीं मिलता। एक फटे बिछौने (कथरी)के सिवा घरमें कोई गरम कपड़ा नहीं है। लगान दे देनेपर जो कुछ अन्न बच गया है उसका हिसाब लगानेपर सालभरके खर्चके लिए काफी न होगा।

एक अहीर कृषक।

कोई गरम कपडा घरमें नहीं है। उसने दो रुपये सैकड़ा मासिक सूद पर १४ रुपये कर्ज लिये हैं। साल भरमें अदा हो जानेकी आशा है।

× From Prosperous British India page 428

घोसी काश्तकार।

काश्तकारी और चरवाही करता है। उसके खेतमें लगभग १२ रुपये साल बाकीका उपजा और १४ रु० उस खेतका लगान है। यह पूछने पर कि फिर खेत क्यों जोतता है उसने कहा कि मवेशियोंके चारेके लिए।

लोनियाँ।

उमर ३ वर्ष काश्तकारी करता है। लगान हमेशा कर्ज लेकर अदा कर देता है और अफीमकी खानगी बिक्रीपर कर्ज अदा कर देता है। ५ वर्ष पहले एक कुआँ बनवाया था। अच्छा तन्दुरुस्त है और औसत नम्बरका काश्तकार समझा जाता है। पूछा गया कि बैलोंको दाना क्यों नहीं देते? जवाब दिया कि आदमियोंको मिलता नहीं बैल कहाँसे पावें?

कलवार।

कोई गरम कपड़ा नहीं है। कहता है कि दिनको अक्सर भूखा रहता हूँ, रातको पेट भर खाता हूँ।

पासी।

चौकीदार और काश्तकार। कोई गरम कपड़ा नहीं है। कहता है कि १ मन गल्लेका खर्च मेरे घरमें है। अर्थात् उसके यहाँ आमदनीसे ज्यादा खर्च है।

चमार।

चमारी और काश्तकारी। उमर ५ वर्ष। छः पुश्तसे इसी गाँवमें खेती करता है। आज कल पेटभर खाना नहीं मिलता सिर्फ फसल कटनेपर पेट भरता है। फसल कटनेके दो महीना पहलेसे खानेमें कमी पड़ जाती है। दुबला और दरिद्री दिखाई देता है।

इस तरह ३ काश्तकारोंकी जाँच करनेपर २२ काश्तकार ७८० रुपयेके कर्जदार निकले। इस पर सूद १ २ रुपया हुआ (अर्थात् १६ असल और ४ सूद-मसाई हुण्डी)। इनके खान्दानोंकी आमदनी मिलाकर औसत निकालनेसे १ रुपया साल प्रति जन होता है। १ खान्दानोंमें कुछ बचत हो जाती है ११ में खानेकी कमी पड़ जाती है।

इसी तरह मिस्टर कारलाइलने ११ काश्तकारोंकी जाँच करके उनकी आमदनीकी औसत प्रति जन प्रति वर्ष ८ रुपया बताई है। उस समयके अनके

Prosperous British India page 429—430

भावसे एक युवाके खानेका खर्च २३॥) और बच्चेका १४) रु० होता है। इससे साफ जाहिर है कि उनको पेटभर अन्न नहीं मिलता था।

× १८८८ ई० में जब अन्नका भाव रुपयेमें १७ सेर था, मिस्टर क्रुक कलेक्टर बहादुर एटाने लिखा है—"एक काश्तकार—जिसके पास एक जोड़ी बैल है, और एक कूआँ है—५½ एकड़ जमीन जोतता बोता है। उसका हिसाब यह है,—

	रुपया—आना—पाई
कुल अन्न आदिका मूल्य खरीफकी फसलमें	१२९—८—०
,, ,, ,, ,, रबीकी फसलमें	८४—८—०
जोड़	२१४—०—०
खेतका लगान दिया,	७५—०—०
खेत बोनेके लिए बीज खरीदा,	१३—०—०
जोताई, सिंचाई, कटाई आदि,	७९-१०-०
कुल खर्च	१६७—१०—०

आमदनी	२१४—०—०
खर्च	१६७—१०—०
बाकी	४६—६—०

हाथमें रहा ४६—६—०"

एक छोटा खान्दान ५ आदमियोंका अर्थात् स्त्री पुरुष और ३ बच्चोंका मान लिया जाय, तो उनके सालभरके खानेका खर्च पूर्वोक्त अन्नके भावसे ५४ रु० होता है। और हैं सिर्फ ४६ रु० ६ आने। वस्त्र और गृहस्थीका कुल खर्च छोड़ दिया जाय तो भी खानेमें ७ रु० ५ आनेकी कमी होती है। काश्तकारोंपर आक्षेप किया जाता है कि वे नये ढगसे खेती नहीं करते, साइन्सकी रूसे खाद नहीं डालते। उन पर तोहमत लगाई जाती है कि वे खाद (गोबर) से रोटी बनाते हैं, उसे जलाकर आग तापते हैं, बैलोंको पेटभर खिलाते नहीं, उनसे ज्यादा काम लेते हैं, खेत हरसाल बोते हैं, यदि एकआध सालका नागा देकर बोयें तो पैदावार बढ़ जाय। इन्हीं सब कारणोंसे खेतोंकी पैदावार बढ़नेके बदले यहाँ घट रही है।

× Prosperous British India

संयुक्तप्रान्तमें जहाँ गेहूँ अब भी बहुत होता है अकबरके वक्तमें फी एकड़ ११७ पौण्ड पैदा होता था परंतु अब वहीं फी एकड़ कुल ८१ पौण्ड पैदा होता है। इंग्लैंडकी पैदावारका औसत फी एकड़ १० पौ है और भारतवर्षका कुल ७ पौ० ‡।

यह सर्वथा सत्य है पर कुसूर किसका है? क्या आप उन गरीब काश्तकारोंसे यह उम्मीद रखते हैं कि विज्ञान (Science) के मुताबिक खाद डालेंगे जिनके पास इतना पैसा नहीं है कि लकड़ी खरीद कर जलावें और मामूली गोबरकी खाद बचाकर खेतोंमें डालें ? ०६ १ आधेकी कमी कमी जायेदीमें है * १५ फीसदी सूदका कर्ज महाजनका है फिर वे इसी नये औजार और कल पुर्जे कैसे खरीदेंगे ? इन्हींसे क्या आपकी आशा पूर्ण होगी कि अमेरिका और जर्मनीकी तरह बिजलीके पावरसे खेती हो ? आप कह सकते हैं कि बड़े बड़े जमींदार इसे क्यों नहीं करते ? पर उनमें भी तो प्रायः सभी अनपढ़ हैं। फिर उनका काम खेती करना नहीं है, वे तो सरकार और काश्तकारोंके बीचके कमीशन एजेण्ट हैं। काश्तकारोंको सताकर लगान वसूल कर लेना उनका काम है वे चाहे मर जावें या भाग जावें इससे कुछ मतलब नहीं। केवल मद्रास प्रांतसे ९ लाख काश्तकार भाग कर बैंयाक आदि चले गये हैं + । १९ - ९ में भारतसे १ ६६ ११६ कुली विदेश गये ×। काश्तकारोंके सुधारके लिए पचासों बरस चाहिए। उन्हें पढ़ाना है उनका कर्ज अदा करना है उनको वक्तके माफिक नये नये औजार देना है कुसमय पर उन्हें कपड़ा और खाना देना है उन्हें हर तरहपर यह बता देना है कि उनका पूछनेवाला उनकी सहायता करनेवाला कोई मौजूद है। जमींदार और देशके राजा अब

‡ Hon M. M. Malaviy 1

(1) See special legislation in the Punjab to prevent money lender becoming universal land-owner

(2) In 1900 in Surat, 85 per cent of the year's revenue was paid to the Government direct by the money lenders. -Pros. British India.

+(3) Protector of Emigrants.

×(4) S. A. B. I 1899 to 1910 pages 2-7

हर तरह पर उन्हें उठानेका यत्न करेंगे तब सुधार होगा। और नहीं तो जो दशा इस समय कारीगरोंकी है, वही दशा यदि कुछ दिनोंतक और रही तो अवश्य ही इस जातिका सर्वनाश हो जायगा, और यहाँ विदेशी लोग आकर बसेंगे।

मजदूर।

देहातोंमें पैसेके बदले अन्न मजदूरीमें दिया जाता है।

" ताल या बाँधसे दोगला चलाकर खेत सींचनेवालेको १॥—२॥ सेर तक, कुएँपर मोट चलानेवालेको १॥—२, निरानेवालेको १॥—२ सेर और खपड़ा छानेवालेको ५ पैसेसे ८ पैसे तक मिलता है। औरत और लड़कोंको मर्दोंकी आधी मजदूरी मिलती है *।"

दिनभर काम करनेवाले मर्दकी खुराक २४ घण्टेमें १ सेर, स्त्रीकी ३ पाव और लड़केकी २ पाव रक्खी गई है।

दुखिया, देहाती मजदूर है। ३ लड़के और एक स्त्री मिलकर ५ प्राणियोंका उसका परिवार है। वह पुरवट हाँकता है, उसकी स्त्री मोट उलटती है, और बड़ा काम करनेलायक लड़का, खेतोंमें कियारी काटकर पानी पहुँचाता है। सब मिलकर ४ सेर अन्न रोज कमाते हैं। २ सेर खाते हैं, एक सेरसे नमक, तेल, तम्बाकू और गोदके बच्चेके लिए दूध मोल लेते हैं, बाकी एक सेर बचाते हैं।

देहातोंमें हमेशा काम नहीं मिलता, फसल फसल पर मिलता है। वे ८ महीने काम करते हैं, चार महीने बैठे रहते हैं। सालभर खानेके लिए १०८० सेर अन्न चाहिए और ये कमा सकते हैं सिर्फ ९६० सेर, अर्थात् १२० सेरकी कमी पड़ती है। ४० दिनके खानेका सामान घटता है। इसकी पूर्ति यों होती है कि ८० दिन वे आधा पेट खाकर बसर करते हैं।

बोझा ढोनेवाले कुली ३ से ४ आने रोज कमाते हैं। ढेला सींचनेवालोंकी आमदनी भी यही औसत है। लोहार, सोनार, बढ़ई, दर्जी, हजाम किसीकी आमदनीकी औसत ४ आने रोजसे ज्यादा नहीं पड़ती। बाज बड़े शहरोंमें शायद इससे कुछ ही ज्यादा औसत पड़ती हो, पर उसके साथ ही वहाँ रहनेका भी खर्चा ज्यादा है।

---

* Prosperous British India P 424

दो रुपये महीना और खाना पाकर खिदमतगार खुशीसे काम करते हैं। ५ रुपये महीनेमें ५ फीट ६ इंचका लम्बा जवान १२ घण्टे हाजिर रहेगा। देहाती चौकीदारोंकी तनख्वा २॥) रु० है। सिवा हिन्दुस्तानके और किसी भी देशमें बेगारका दस्तूर नहीं है। अर्थात् आप जितने आदमी चाहिए पकड़ लीजिए, उनसे काम कराइए और मजदूरी एक पैसा न दीजिए। पुलिस-वाले तहसीलवाले दौरेपर आनेवाले अमले हमेशा बेगारका काम लेते हैं।

मर्दोंकी तो यह दशा है, अब औरतोंकी तरफ आइए। कहारिन गहरे कुएँसे पानी खींचकर शहर पहुँचानेके लिए (एक दफा रोज) एक आना महीना पाती है। ३ दफा पानीकी मजदूरी एक आना हुई! कोई औरत १० दफे रोजसे ज्यादा नहीं खींच सकती तब एक आना रोज पड़ा। मालिन घर घर फूल पहुँचानेके लिए एक आना महीना पाती है। इसी एक आनेमें ३ पुड़िया फूलोंकी कीमत भी शामिल है। आटा पीसनेवालीको १ पैसेमें २ सेर गेहूँ पीसना होता है। चने और लकड़ी बेचनेवाली ५—६ मीलसे लकड़ियाँ ढोकर लाती हैं, तब ३—५ पैसे बड़ी मुश्किलसे बचते हैं। तरकारी बेचनेवालीको यदि किसी दिन ४ पैसे बच जायँ तो बहुत हैं। भंगिन बेहद्द गन्दा काम करती है और आँधी पानीमें भिड़ जाती है फिर भी इस गन्दी और कड़ी मेहनतके लिए, फी आदमी दो पैसे महीना पाती है।

सरकारी रिपोर्टद्वारा मजदूरीकी शरह।

सन् १९०४ ई०।

खेतका काम करनेवाला मजदूर।	मेमार बढ़ई लोहार।
पटना —५॥) रु० महीना।	११ रु० महीना।
कानपुर —३॥।) से ७) तक।	७॥) से १५ रु० तक।
फैजाबाद —४) रु० महीना।	५॥) से ८) रु० तक।
मेरठ,—७॥) रु० महीना।	१) रुपया महीना।
जबलपुर —३) से ७) रुपया महीना।	१)से १५) रुपया महीना।

आगेके पेजमें छपे हुए नक्शेसे मामूली तौर पर काम करनेवालोंकी संख्या-का पता चलेगा।

“ लोमा आयु १२ वर्ष आमदनी १६ रुपये साल। उसकी लड़की आटा पीसकर ११ रुपये ४ आने साल कमाती है। लड़कीकी शादीमें ६ रुपये खर्च पड़े। गरीबीकी वजहसे उसे लोटा (लड़कीको लड़केके घर ले जाकर वहीं ब्याह देना) देना पड़ा।” —विलियम डिग्बी।

" पॉच रुपये महीनेमें ५ फीट ९ इंच लम्बा
जवान २४ घंटे हाजिर रहेगा। "

(देशदर्शन पृ० ७४)

औरतोंकी दशा कपड़ोंके वास्ते और भी बुरी है। १ मेंसे ९ औरतें बिना कपड़ेके दिखाई देती हैं। वे एक सूती लँगोटा उसपर एक छोटी चोली और एक चादर पहनती हैं और इसीसे जाड़ेकी रातें भी काट देती हैं।

—विलियम डिग्बी।

मिस्टर नायायब कमिश्नर साहब सीतापुरने एक गाँवके २ खान्दानोंकी जाँच करके सिद्ध किया है कि एक युवा पुरुषके खानेका खर्च १० रुपये ८ आने चार लड़केका ० रुपये २ आने है। संयुक्त प्रान्तके सेन्ट्रल जेलमें खिलानेका खर्च १४ रु० १ आना पौने नौ पाई डिस्ट्रिक्ट जेलमें २१–२–1 और डि जेलमें १५–८–११॥ है। इसीसे वे लिखते हैं कि हमारे कैदियोंका स्वास्थ्य किसानोंके छोकड़ोंसे बहुत ज्यादा अच्छा रहता है, बनिस्बत उसके कि जब वे जेलमें दाखिल होते हैं। " और ठीक भी यही है। इसी लिए हिन्दुस्तानी गुण्डे जेलको ससुराल कहा करते हैं। कैसा अन्धेर है। चोर और बदमाश जेलमें पेटभर अन्न पावें और दिनभर मेहनत करनेवाले मजदूर तथा आटा पीसनेवाली औरतें शामको आधा पेट खाकर सो रहें! शोक!

हम पहले दिखला चुके हैं कि भारतवासियोंकी आय प्रतिजन और प्रतिवर्ष १२ शिलिंग है। इसी १२ शि में खाना कपड़ा शादी गमी आदिके कुल खर्च साल भर चलाने पड़ते हैं।

भारतसरकारको कैदखानेके कैदियोंको खिलानेमें २ पौण्ड १२ शि ५ पैन्स प्रतिजन खर्च करना पड़ता है। नौकरखाना (Establishment) छोड़कर कपड़े और खानेका खर्च प्रति कैदी १ पौ १६ शि है। *

अर्थात् कैदी और स्वतंत्र (Free man) हिन्दुस्तानियोंके खर्चमें तीन पौण्ड तीन शिलिंगका फर्क है। तब किसका स्वास्थ्य अच्छा रहेगा—कैदियोंका या स्वतन्त्र भारतवासियोंका? उनका जिनके लिए प्रतिवर्ष प्रतिजन ५० रुपये खर्च होते हैं या उन कंगाल अभागोंका जिन्हें पौने दस रुपयेमें साल बितानी पड़ती है? इसका प्रबल प्रमाण नीचे मौजूद है—

मृत्युसंख्या प्रति १० ० जन ‡।

---

* Statistical Abstract British India 1899—1909 Page 44

‡ S. A. B. I., 1890—90, pa es 42 and 228 to 237

	१९०४,	१९०५,	१९०६,	१९०७ ई०
स्वतन्त्र लोग	३३.०५	३६ १४	३४ ७३	३७ १८
परतन्त्र, जेलके कैदी	१८	१९	१९	१८

पायनीयर (Pioneer) लिखता है-" British people who are living in extreme poverty at one hundred millions " अर्थात् " दस करोड़ भारतवासी निहायत दर्जेके गरीब और कंगाल हैं। "

फिर वही पेपर मि० ग्रीयर्सन (Grierson) के नोटपर रिमार्क लिखता है-" जिला गयामें करीब करीब सब मजदूरोंको और १० फी सदी काश्तकार या कुल ४५ फी सदी मनुष्योंको पेटभर अन्न और ठीक वस्त्र नहीं मिलता। गयाके जिलेमें कोई खास त्रुटि नहीं है। जो हालत गया जिलेके मजदूरोंकी है, वही समस्त भारतकी। इस हिसाबसे भी यह सिद्ध हुआ कि १० करोड़ भारतवासी भूखों मरते हैं *। "

दुनियाँका सबसे प्रसिद्ध मेडिकल जर्नल, लेन्सेट (The Lancet, June 1901) लिखता है-" पिछले दस वर्षोंमें भारतमें एक करोड़ नब्बे लाख आदमी भूखसे और दस लाख आदमी प्लेगसे मरे हैं। "

सारी दुनियाँमें सफर करके नोट लिखनेवाले जगद्विख्यात माननीय मिस्टर कालिन्स (Collins) न्यूजीलैण्डके घोर दरिद्र वहशियोंकी गिरी हुई दशा दिखाते हुए कहते हैं कि-" वे ऊँचेसे ऊँचे दरख्तपर शहदके लिए या छोटी छोटी चिड़ियाँ पकड़नेके लिए चढ़ जाते हैं+। " इसी तरह प्रसिद्ध पर्यटक कैप्टन कुक (Capt Cook) ने लिखा है कि-" वे कोई चीज खराब नहीं गिनते। बाज जहाजपर आकर कूडेखानेसे हड्डी ले जाते हैं कि उसे उबालकर शोरवा बनावें। "

इन वहशियोंको हिन्दुस्तानके कोल भील और मुसहरोंसे मिलाइए और देखिए कि किसकी दशा अधिक शोचनीय है।

शहद निकालना तो यहाँ कोई बात नहीं है, ये ८० फीट ऊँचे ताड़के दरख्तसे नित्य ताड़ी उतार लाते हैं। मैंने इन्हें साँपका सर काटकर बाकी धड़

---

* P B I, page 84

+ Collins' Account of N S W, Page 549

" जिसकी पाठफीस एक झुकता गुरुका पैसा है वह दूसरे लड़कोंको अभिमानसे दिखाकर जाता है।

(देखो पृ० ७८)

" १७३ जनके लिए घरमें सिर्फ १० कम्बल, १६ रजाई और २४ बिछावन, अर्थात् १४७ के लिए ओढनेका कोई उचित वस्त्र नहीं—और जाडा कडा । "

" ७१ जनके लिए ८ कम्बल, २ रजाई और ५ बिछावन ।" मि० गर्टलन ।

" १७७ आदमियोमे ९९ चारपाईयो थी और दूसरी जगह ७१ आदमियोंमें ३२ थीं । "

—मि० गर्टलन ।

काम करनेवालोंकी सख्या ।

नाम पेशा	काम करनेवालोंकी सख्या		काम करनेवालोंके परिवारकी सख्या जिनका निर्वाह उसी पेशेकी आमदनीसे होता है
	स्त्री	पुरुष	
सरकारी दफ्तरोंके वाबू	१४०	१०८५७३	३८२७१९
रेलवे नौकर	३३२५	२०७८१५	५०३९९३
डाक, तार और टेलीफोन	१७२	५८४४६	१५५३७३
शिक्षाविभागमें मास्टर आदि	११९७९	१८०५२३	४९७५०९
कास्टेबल आदि	६९९	३००५०९	७८४७४५
गाँवके सरकारी चौकीदार आ	५३५६	१२४३१३	४१८३०९
जमींदार (Rentreceivers)	६१५१९३३	१४३७७९६५	४५८१६७३
काश्तकार (Rent Payers)	११००८३५८	३४०२६९२८	१०६८७३५७५
काश्तके मजदूर और नौकर	९४५४७३४	१०६७४०८१	३३५२२६८२
हज्जाम	१७३९७४	८४९९५८	२२३१५९८
पानीभरनेवाले कहार	२५५१३९	३८७०२	१०४८५७५
खिदमतगार	५२१६६८	११३३४१२	२९४३८८१
धोवी	४७८९७६	६३०२८८	२०११६२४
भगी	२९९२४८	४८१०८१	१५१८४२२
आटा पीसनेवाले, धान कूटनेवाले	९११९०१९	९१११९१	१५१८९१८
गोवरके कण्डे और जलानेकी लकडी वेचनेवाले	२५७६९१	१८३८१३	७२५०९६
चूडी सिंदूर मिस्सी वेचनेवाले	१००६६१	१७३४२१	५४८८३९
पण्डे और पुरोहित वगैरह	१७८६५६	९७८८६९	२७२८८१२
भीख माँगनेवाले फकीर	८६०६३६	१५७२४७९	४२२२२४१

औरतोंकी दशा कपड़ोंके वास्ते और भी बुरी है। १ मैंने ९ औरतोंको बिना चद्दरके दिखाई देती हैं। वे एक सूती लँहगा उसपर एक छोटी ओढ़नी और एक चोली पहनती हैं और इसीसे जाड़ेकी रातें भी काट देती हैं।"
—विलियम डिग्बी।

मिस्टर सोवायज कमिश्नर साहब सीतापुरने एक गाँवके १ खान्दानोंकी जाँच करके सिद्ध किया है कि एक युवा पुरुषके खानेका खर्च १४ रुपये ८ आने और कपड़ेका ० रुपये २ आने है। संयुक्त प्रान्तके सेन्ट्रल जेलमें किसान कैदीका खर्च १८ रु० १ आना पीछे भी पाई सिविजनल जेलमें १२—६—१ और डि० जेलमें १५—८ ११॥ है। इसीसे वे लिखते हैं कि हमारे कैदी लोगोंका स्वास्थ्य किसानोंको छोड़ करके बहुत ज्यादा अच्छा रहता है बनिस्बत उसके कि जब वे जेलमें दाखिल होते हैं। और ठीक भी यही है। इसी लिए हिन्दुस्तानी गुण्डे जेलको ससुराल कहा करते हैं। कैसा अन्धेर है। चोर और बदमाश जेलमें पेटभर अन्न पावें और दिनभर मेहनत करनेवाले मजदूर तथा आटा पीसनेवाली औरतें सामको आधा पेट खाकर सो रहें! ठीक!

हम पहले लिखचुके हैं कि भारतवासियोंकी आय प्रतिजन और प्रतिवर्ष ११ सिलिंग है। इसी ११ सि० में खाना कपड़ा शादी गमी आदिके कुल खर्च सालभर चलाने पड़ते हैं।

भारतसरकारको कैदखानेके कैदियोंको खिलानेमें २ पौण्ड ११ सि० ५ पैन्स प्रतिजन खर्च करना पड़ता है। नौकराना (Establishment) छोड़कर दवाादि और कपड़ेका खर्च प्रति कैदी १ पौ० ११ सि० है। *

अर्थात् कैदी और स्वतंत्र (Free men) हिन्दुस्तानियोंके खर्चमें तीन पौण्ड तीन शिलिंगका फर्क है। तब किसका स्वास्थ्य अच्छा रहेगा—कैदियोंका या स्वतन्त्र भारतवासियोंका? उनका जिनके लिए प्रतिवर्ष प्रतिजन ५० रुपये खर्च होते हैं या उन कंगाल अभागोंका जिन्हें पैसे दस रुपयेमें साल बिताना पड़ती है? इसका प्रत्यक्ष प्रमाण नीचे मौजूद है:—

मृत्युसंख्या प्रति १०० जन ‡।

---

* Statistical Abstract British India 1899—1909 Page 44.
‡ S. A. B I 1899—90, pages 42 and 228 to 237

	१९०४,	१९०५,	१९०६,	१९०७ ई०
स्वतन्त्र लोग	३३ ०५	३६.१४	३४ ७३	३७ १८
परतन्त्र, जेलके कैदी	१८	१९	१९	१८

पायनीयर (Pioneer) लिखता है-" British people who are living in extreme poverty at one hundred millions " अर्थात् " दस करोड भारतवासी निहायत दर्जेके गरीव और कगाल हैं । "

फिर वही पेपर मि० ग्रीयर्सन (Grierson) के नोटपर रिमार्क लिखता है-" जिला गयामें करीव करीव सव मजदूरोंको और १० फी सदी काश्तकार या कुल ४५ फी सदी मनुष्योंको पेटभर अन्न और ठीक वस्त्र नहीं मिलता । गयाके जिलेमें कोई खास त्रुटि नहीं है । जो हालत गया जिलेके मजदूरोंकी है, वही समस्त भारतकी । इस हिसावसे भी यह सिद्ध हुआ कि १० करोड़ भारतवासी भूखों मरते हैं * । "

दुनियाँका सबसे प्रसिद्ध मेडिकल जर्नल, लेन्सेट (The Lancet, June 1901) लिखता है-" पिछले दस वर्षोंमें भारतमें एक करोड़ नव्वे लाख आदमी भूखसे और दस लाख आदमी प्लेगसे मरे हैं । "

सारी दुनियाँमें सफर करके नोट लिखनेवाले जगद्विख्यात माननीय मिस्टर कालिन्स (Collins) न्यूजीलैण्डके घोर दरिद्र वहशियोंकी गिरी हुई दशा दिखाते हुए कहते हैं कि-" वे ऊँचेसे ऊँचे दरख्तपर शहदके लिए या छोटी छोटी चिडियाँ पकडनेके लिए चढ जाते हैं+ । " इसी तरह प्रसिद्ध पर्यटक कैप्टन कुक (Capt Cook) ने लिखा है कि-" वे कोई चीज खराव नहीं गिनते। वाज जहाजपर आकर कूडेखानेसे हड्डी ले जाते हैं कि उसे उवालकर शोरवा वनावें । "

इन वहशियोंको हिन्दुस्तानके कोल भील और मुसहरोंसे मिलाइए और देखिए कि किसकी दशा अधिक शोचनीय है ।

शहद निकालना तो यहाँ कोई वात नहीं है, ये ८० फीट ऊँचे ताडके दरख्तसे नित्य ताडी उतार लाते है । मैंने इन्हें साँपका सर काटकर वाकी धड़

---

* P B L, page 84

+ Collins' Account of N S W, Page 549

"खाली पत्तलें सड़क पर फेंकते ही कुत्ते और भुखमरे दोनों एक साथ टूटते हैं और भुखमरे कुत्तोंके मुँहसे टुकड़े छीन लेते हैं।"

(देशदर्शन पृ० ७८)

भून कर खा जाते देखा है । एक बार एक कोढ़ियाको एक छोटी सी लकड़ीसे उसके पीछे निकाल कर और उन्हें भून कर बच्चेको खिलाते हुए देखा है । पूछनेसे मालूम हुआ कि बच्चा १४ दिनोंसे भूखा है और उस अभागिन कोढ़िनको तीन दिनसे किसी तरहका आहार नहीं मिला है—उसे कीड़े मकोड़े भी न मिले कि भूखकी दाह बुझावे । याद रखिए कि यह कहलका या अकस्मात्‌का काम नहीं था ।

एक ब्रिटिश कर्नलने टाइम्स आफ इण्डियामें लिखा था कि—" हिन्दुस्तानमें अकालके जमानेमें मैंने अपनी आँखों एक तरहका पत्थर पीसकर भारतवासी-योंको खाते देखा है । इससे वे बीमार हो जाते थे और मर भी जाते थे पर किया क्या जाय वहाँ खानेकी वस्तुका अभाव था * ।

माननीय केसर हार्डी बनारसके देहाती मदरसोंमें मोटर द्वारा एका-एक पहुँच कर देखते हैं कि एक मदरसेमें प्रधान मास्टर एक अत्यंत मैली धोती आधी पहने और आधी ओढ़े हैं जो कई जगहसे फटी है । आप भोजन करने जा रहे हैं । सामने खाना निकाला गया । पूछनेसे मालूम हुआ कि बाज-रेका भात नमककी डली और चौलाईका थोड़ा बथुआ है । दिनरातमें एक बार खाते हैं सुबह और रातको कुछ दाना आदि खा लेते हैं । दूसरे स्कूलमें पानी पीनेकी छुट्टी हुई है । लड़के मैली पोटलीमेंसे कुछ निकाल कर खा रहे हैं । यह सब वह अन्न है जो पक्षी या पशु खाते हैं । जिसकी पोटलीमें एक टुकड़ा गुड़का बँधा है वह दूसरे लड़कोंको अभिमानसे दिखा कर खाता है !

स्टेशनोंमें पत्तलों पर जो कुछ जूठी चीजें बच जाती हैं उन्हें बारी या हज्जाम ले लेते हैं । गाड़ीकी पत्तलें सड़कपर फेंकते ही कुत्ते और भुक्खड़ दोनों एक साथ टूटते हैं और भुक्खड़ कुत्तोंके मुँहसे रोटीके टुकड़े छीन लेते हैं ! रेलके प्लेटफार्मोंमें गाड़ी रुकने पर भी यही दृश्य देखनेमें आता है । कुत्ते तेजीसे दौड़कर रबड़ी या दही लगे हुए दोने चाटने लगते हैं तबतक भिख-मंगे पहुँच कर उनसे झपटकर उसे अपने बड़ी चाहसे चाटते हैं ! क्या दशा है ? कुत्ते और दरिद्र हिन्दुस्तानी बराबर हैं ! जो ब्राह्मण एक वे जिनके चर-णोंकी रज लोग माथे पर लगाते थे वे ही अब भोजके दिन बिना बुलाये एक-

"खाली पत्तलें सड़क पर फेंकते ही कुत्ते और भुखमरे दोनों एक साथ टूटते हैं और भुखमरे कुत्तोंके मुँहसे टुकड़े छीन लेते हैं।"

(देशदर्शन पृ० ७८)

‘हर नाहरम मिनाम मनाथालय है हजारों पथ पारियोंका सुफ्त सौंप जाते हैं।”
ईसाई होनेके लिए पकड़ा हुआ दरिद्र गुजरातियोंका एक मूक।

(पेजमीज पृ ७१)

चाजेपर आकर खानेके लिए धन्ना देते हैं। कोई कोई तो सिर पटक कर और रुधिर बहाकर खाना लेते हैं।

हर शहरमें मिशन-अनाथालय है। हजारों बच्चे हर साल पादरियोंको मुफ्त सौंपे जाते हैं। हजारों बच्चे बिक जाते हैं। किस लिए? माता पिता सिर्फ पेटके दु खसे, अपने हृदयखण्डोको अपने जीते जी अलग कर देते हैं।

पूर्वोक्त बहुतसी बातें आगे अकालके साथ दोहरा कर दिखाई गई है, पर इसके लिए मैं पाठकगणसे क्षमा न माँगूगा,—

> Once printing may not suffice,
> Though printing be not in vain,
> And the memory failing once or twice,
> May learn, if we print again

अभिप्राय यह कि यदि किसी विषयका दोबारा लिखना व्यर्थ न हो तो उसका एक बारका लिखना ही काफी नहीं है। यदि हम उसे दोबारा लिख दें तो एक दो बार पढकर भूल जानेवाली स्मरणशक्ति उससे लाभ उठा सकती है।

आप कह सकते है कि हिन्दुस्तानी आलसी होते हैं। वे यदि मेहनत करके काम करें तो अवश्य सुखी रहें। बात ठीक है, लेकिन अधिक हिन्दुस्तानी मेहनतसे भी कभी नहीं डरते। मजदूर सुबहसे शामतक कसकर मेहनत करते हैं, सारा दिन खेतकी मिट्टी खोदा करते हैं, तिस पर भी उन्हें शामको रूखी रोटी और शोरबेके बदले माढ यानी वह पानी जिसमें चावल उबाला जाता है मयस्सर नहीं होता। यहाँ काम करनेवालोंकी या मेहनतकी कमी नहीं है, कमी कामकी और पूँजीकी है।

विलायतमें मजदूर और छोटे दर्जेके लोग काम करके इतना पैदा कर लेते हैं कि खर्चके अलावा अच्छी रकम बचा लेते हैं, किन्तु हिन्दुस्तानी लोग कड़ी मेहनत करके भी पेटभर खा तक नहीं सकते।

एक अच्छे सालमें जब पानी समय समय पर अच्छी तरह बरसा है और टिड्डियाँ पत्थर आदि किसी चीजसे खेतीमें विघ्न नहीं पडा है, उस सालमें—हिन्दुस्तानकी कुल कटी हुई फसलका मूल्य २७८ करोड रुपया अर्थात् १७२,०००,००० पौण्ड हुआ है। इंग्लैडके कुली, मजदूर और औसत दर्जेके क्लार्क

आदिकी बचत जो उन्होंने बाहरसे लगाया बैंकमें जमा की १२ २१ ११ १११ पौंड है। बाकी इंग्लैण्डवालोंकी बचत हमारे कुछ कास्तकारोंकी सम्पत्तिसे भी अधिक है। *

विलायतमें मजदूर १　 रु० से अधिक और अमेरीकामें २　 रुपये तक कमा लेते हैं। प्रोफेसर महेशचरणसिंहजी जब अमरीकामें पढ़ते थे तब दिनमें कुछ घण्टे काम करके इतना कमा लेते थे कि वहींकी कमाई हुई रकमसे पढ़ते थे और अपना सारा खर्च चलाकर माताके पास घर भी कुछ भेज देते थे।

विलायतमें काम करनेवाले आदमी नहीं मिलते। बड़े बड़े लोगोंको अपना कुछ काम खुद करना पड़ता है ठीक इसीलिए उतना नहीं है कि दो रुपये महीने पर आपका बहुतसी काम हो जाय चाहिए तो मुफ्तमें भी काम करा लीजिए। इससे ज्यादा और क्या चाहिए?

इससे क्या सिद्ध हुआ? यह कि यहाँपर काम करनेवाले ज्यादा और काम कम है। काम करने और करानेवाले दोनों महादरिद्र हैं। काम करानेवाला ज्यादा दे नहीं सकता और काम करनेवाला जितना पाता है उसीको गनीमत जानकर दूर पड़ता है।

यहाँपर] ५　 लाख भिखमंगे हैं जो काम कुछ नहीं करते सिर्फ भीख माँगकर खाते हैं। विलायतमें यदि कोई इस तरह पर भीख माँगे तो उसको सजा हो जाय। अमरीकामें कोई बिना १　 रुपया दिखाये जहाजसे उतर नहीं सकता इस लिए कि ऐसा न हो कि वह भीख माँगना शुरू कर दे।

हिन्दुस्तानकी ऐसी तो दुर्दशा है कि यहाँपर मजदूर बेगार यानी मुफ्तमें काम कर सकते हैं दो रुपये महीनेपर काम करनेवाले नौकर मिल सकते हैं यहाँकी आमदनी फी आदमी दो पैसे रोजकी है ५　 लाख आदमी भीख माँगते हैं १　 करोड़ आधपेट खाना खाते हैं और ४ करोड़ भूखों मरते हैं तिसपर भी यदि लड़का पैदा होनेपर बधाई न बजे तो लाखों रुपै आप वहीं हलक हो जाय। जब हम हिन्दुस्तानकी आबादी ३ करोड़ बढ़ी देखते हैं तो समझ जाते हैं फूले नहीं समाते; मानो यह बढ़ाव हमारे

P. R. I. foot note Page 65

अभ्युदयका मुख्य चिह्न है।—कुल तकलीफ मिट जायगी, दु ख-दारिद्य सब दूर हो जायगा।

पर विचारपूर्वक देखा जाय तो उल्टा ही ज्ञात होता है। ये नये दो करोड़ हवा खाकर तो जीवेंगे नहीं। दूध, अन्न, वस्त्र आदि सभी चीजें इनके लिए भी अवश्य चाहिए। तब आबादी बढ़नेके मुताबिक, उसी हिसाबसे, खाने-पीनेकी चीजें भी जरूर महँगी होंगी। काम नहीं बढ़ा, काम करनेवाले बढ़े, इससे जहाँ बीस रुपयेकी एक जगह खाली होनेपर ५० अर्जियाँ पड़ती थी, वहाँ अब ७० पड़ेंगी। ५० लाख भीख माँगकर खाते थे, तो अब एक करोड़ भीख माँगेंगे। जहाँ १० करोड़ पेटभर अन्न नहीं पाते थे, वहा अब १२ करोड़ हो जायँगे। यदि पहले ४ करोड़ भारतवासी भूखों मरते थे तो अब ६ करोड़ मरेंगे।

जब इस देशकी ऐसी भयानक दशा है, ऐसी शोचनीय अवस्था है, तब यदि पवित्र भारतमें व्यभिचार, जुर्म और नशेबाजी बढ़ती जाती है तो इसमें आश्चर्यकी बात क्या है? जब अन्न महँगा है और मजदूरीकी दर इतनी नीची है कि दिनभर काम करनेपर भी पेटभर अन्न नहीं मिलता, बीमार होनेपर कोई पूछनेवाला नहीं मिलता, दवा देनेवाला नहीं रहता, तो उसका फल और क्या होगा? जुर्म बढ़ेंगे। जैसे खाली बोरा सीधा नहीं खड़ा रह सकता, वैसे ही खाली पेटवाला सदाचारी नहीं रह सकता। मनुष्यसे नित्यकी भूखका क्लेश नहीं सहा जा सकता, मौका पानेपर भूख उससे सौ तरहकी बुराइयाँ करा लेती है।

जब बच्चे ऐसी गन्दी जगहमें पैदा हो रहे हैं, जहाँकी वायु बिगड़ी हुई है, जहाँके लोग दरिद्रताके कारण नाना प्रकारके पाप और रोगोंसे जकड़े हुए हैं, जहाँ शारीरिक और मानसिक कष्ट बढ़े हुए है, जहाँ बच्चे शुरूसे कुसंगमें पलते हैं, बुरी और कम गिजा खाते हैं जिससे उनका दिलो-दिमाग कमजोर और अगोपांग ढीले पड़ जाते हैं वे तुच्छ स्वभाव, और नीच प्रकृतिके हो जाते हैं, तब ऐसी अवस्थामें, ऐसी दुर्दशामें आश्चर्य तो यह है कि हिन्दुस्तानी और क्यों न गिर गये! हमारी खराब हालत और अवतर और निकम्मी क्यों न हो गई! गरीबोंकी मुसीबतका साया समस्त भारतवासियोंके हृदयपर पड़ रहा है। प्रेतकी तरह ये सब अमीरोंकी खुशियोंमें आ मिलते हैं और उनके राग-रगमें भग डाल देते हैं। इनका असह्य क्लेश सारे भारतका ध्यान आक-

र्पित कर रहा है। इन्हीं गरीबोंकी आह और अभावोंके रोदनने भारतवर्षको जगा दिया है चारों ओर अकाल फैला दिया है।

दरिद्रता और कंगालीने हमें पुश्तैनी गुलाम बना रक्खा है। हम गुलामीकी जंजीरोंसे ऐसे मजबूत बन्धे हुए हैं कि हिल तक नहीं सकते। हम स्वार्थवश अयोग्य संतानोत्पत्ति करके उनको भी जन्मकी गुलाम बनाते जाते हैं। हम या हमारी संतान उस स्वतंत्रताका सुख स्वप्नमें भी नहीं जानती जिसकी प्रशंसा जगत्के विद्वान् कवियोंने की है।

भिक्षावृत्तिमें बूढ़े, बेकार या रोगी गरीबोंके लिए अनाथालय बने हैं। वहाँ आरामकी सभी चीजें मौजूद रहती हैं पर वे इन चीजोंको लात मारते हैं लाख बुलाने और समझाने पर भी नहीं जाते। कहते हैं कि वहाँ मैनेजरके अधीन रहना होगा। बस इसी लिए नहीं जाते। रास्तेमें किसी वृक्षके नीचे पड़े रहते हैं और मर जाते हैं पर जीते जी अपनी स्वाधीनताको कभी नहीं खोते।

यह दरिद्रता हमें जानवरोंसे भी बदतर बनाये डालती है और हमारे ऊँचे ख्यालों *पवित्र भावों और सद्गुणोंको मिट्टीमें मिला रही है।* यह बेकारी, लाचारी और आत्मग्लानिकी जननी है जो मनुष्यको मनुष्यत्वसे खाली किये देती है स्त्रीजातिका सतीत्व नष्ट किये डालती है बच्चोंतककी बाल्यावस्थाका पवित्र सुख और आनन्द छीने लिये जा रही है।

यह भयंकर दरिद्रता मौत या कीमा बनानेकी बेरहम मशीनकी तरह सारे हिन्दुस्तानको पीसे डालती है।

यह पुरानी दरिद्रता है जो दुर्भिक्ष, हैजा और प्लेगका भयंकर रूप धारण करके भारतको गारत किये डालती है। दरिद्रता जनसंख्याको भारी धक्का देती है और उसके बढ़ावको रोकती है।

हमारा जल और स्थलका वाणिज्य और व्यवसाय कुछ विदेशियोंके हाथ जा चुका और चला जा रहा है *। लोग दरिद्रताके कारण बिना पूँजीके खेतिहर या काश्तकार बने जा रहे हैं। जमींदार और काश्तकार दोनों घट गये हैं और उनकी संख्या अधिक होती जाती है। +

Vide, History of Indian Shipping and Maritime Activity by Professor Radha Kumud Mukhopadhyaya, M. A.

+ All India Census Report for U P 1911, page 394.

हमारी शिल्प-कला और लगभग सारे उद्योग-धन्धे विदेशी वस्तुओंका उपयोग होने लगनेसे लोप हो गये और होते जाते हैं †। सन् १७८७ ई० में खाली इँग्लैंडको ३० लाखका ढाकेका मलमल गया था। भारतके बने जहाज सन् १८०० के बाद तक विलायत जाते थे ×। पर अब सारे जहाज विदेशी-योंके हैं और मालिक भी विदेशी हैं। इस व्यापारका कुल नफा विदेशियोंकी जेबमें जाता है।

चाय, कहवे और नीलकी खेती विदेशियोंके रुपयोंसे होती है और इसका नफा हिन्दुस्तानके बाहर जाता है। इन चीजोंके लहराते हुए बगीचोंके मैने-जर तक विदेशी हैं।

कुल उद्योग, कुल व्यापार, प्राय विदेशियोंके रुपयोंसे होता है और इस लिए नफेका बहुत बडा हिस्सा विदेश चला जाता है। राज्यके कुल बड़े बड़े पदोंपर विदेशी कर्मचारी नियुक्त हैं, उनके वेतनका बहुत बडा हिस्सा, और बचतका कुल रुपया विदेश जाता है।

और काश्तकारोंका पेट नहीं भरता, वे भूखे ही सो रहते हैं–गाँवके गाँव खाली-पेट सो रहते हैं, जब गाँव अन्नसे खाली है तो पेट क्यों न खाली रहे? सोने और चाँदीके जेवर गायब हो गये, अब उनके एक मात्र धन, पीतल आदिके बर्तन भी गिरवी रक्खे जा रहे हैं। शोक!

आस्ट्रेलिया और भारतकी आमदनी और खर्चका मिलान करनेसे भार-तकी दरिद्रता और भी साफ दिखलाई देने लगती है।*

आस्ट्रेलियाके प्रत्येक मनुष्यकी वार्षिक आमदनी ६०० रुपये है और बचत (खर्च जाकर) ३१३॥ रु०। अर्थात् वहाँके लोग खूब मजेसे खा पीकर तीन सौ रुपयेसे ऊपर प्रति वर्ष बचा लेते हैं, परन्तु भारतवासियोंके भाग्यमें बचाना तो कहाँ, भर पेट खाना भी नहीं लिखा है। यहाँके प्रत्येक मनुष्यकी वार्षिक

---

† James Cotton's Treatise on 'India'

× 1 Lieutenant Colonel A. Walker's "Considerations on the Affairs of India"—1811

2 1800 Governor-General's Report

3 East India Co's fourth report, pages 23—24

* भारत तथा अन्य देशोंके प्रत्येक मनुष्यकी वार्षिक आमदनी सन् १९०९ ई० के अनुसार इस प्रकार है.—

भारतके और दूसरे दूसरे देशोंके प्रत्येक मनुष्यकी वार्षिक आमदनी ।

[सन् १९०९]
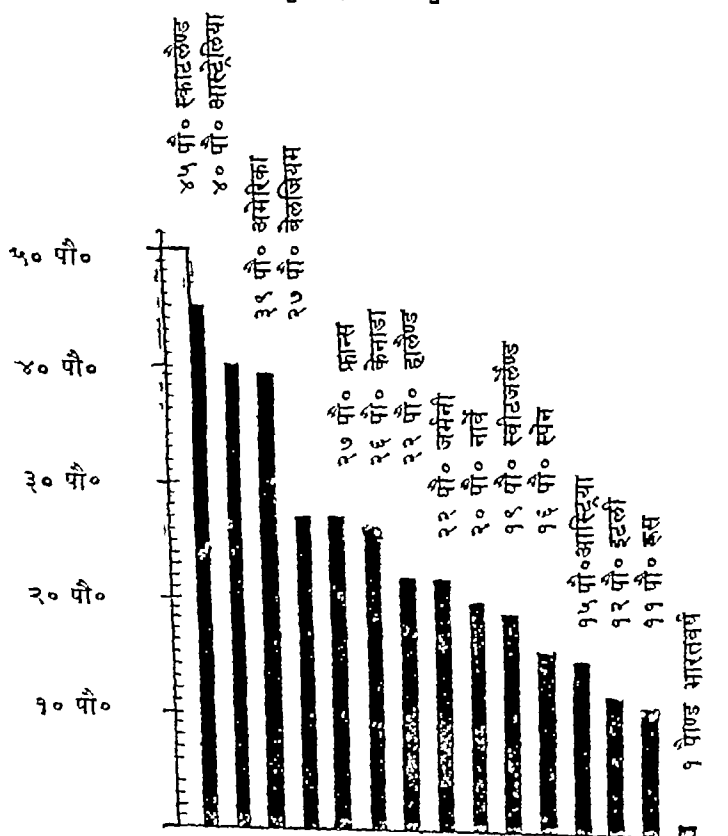
उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी ।
दैवेन देयमिति कापुरुषा वदन्ति ॥

आस्ट्रेलिया और भारतवर्षके आयव्ययका मुकाबला।

आस्ट्रेलियाके प्रत्येक मनुष्यकी वार्षिक आमदनी ७ पौण्ड और बचत २ पौण्ड १८ शिलिङ्ग है। अर्थात् यहाँ पर खर्चसे आमदनी अधिक है। नीचे दिये हुए चित्रसे यह बात अच्छी तरह समझमें आ जायगी। इसका प्रत्येक काला कोठा बचतके पौण्डोंको बतलाता है और धारीवाला कोठा आमदनीके पौण्डोंको।

आस्ट्रेलिया।

भारतवर्ष।

भारतके प्रत्येक मनुष्यका बहुत मामूली खाने कपड़े आदिका वार्षिक खर्च २ पौण्ड—अर्थात् ३० रुपया—या ढाई रुपया महीना है परन्तु आमदनी है केवल १ पौ २ सि ८ पैन्स—अर्थात् १७ सत्रह रुपया। इस हिसाबसे यहाँके प्रत्येक मनुष्यको निर्वाहके लिए १३ रुपयेकी कमी पड़ती है।

आगे नकशा न० १ में जिन देशोंके नाम दिये हैं, वे दश अपने खर्चके लिए काफी गेहू रखकर दूसरे देशोंको भी भेज सकते है। नकशा न० २ वाले देशोको दूसरे देशोंसे गेहूँ खरीदना पडता है। इन नकशोमें दिये हुए देशोंके अलावा कुछ देश ऐसे भी हैं, जो न तो बाहरसे गेहूँ मोल लेते हैं, न अपना गेहूँ दूसरे देशोंको बेचते है, अतएव उन देशोंका नामोल्लेख करनेका प्रयोजन नहीं। अमुक देशसे गेहू बाहर जायगा अथवा नहीं, यह बात उस देशकी गेहूँकी पैदावार और जनसख्या पर अवलम्बित है। इसमें भी एक बात और देखनी पडती है, वह यह कि अमुक देशमें प्रत्येक मनुष्य पीछे साधारणत कितने गेहूँकी आवश्यकता रहती है। उदाहरणार्थ, इँग्लैड, कैनाडा, आस्ट्रेलिया इत्यादि देशोंमें फी आदमी तीन हंड्रेडवेट अर्थात ११८ सेर गेहूँकी आवश्यकता होती है। यदि भारतवर्षकी ३१॥ करोड़ प्रजा इसी प्रमाणसे गेहू खर्च करे, तो हमारे देशमे गेहूँका एक दाना भी बाहर नहीं जा सकता। इतना ही नहीं वरन् दुनियाकी सारी गेहूँकी पैदावार अकेला भारतवर्ष खा जायगा। यहाँ साधारणत फी आदमी ४० सेर गेहूं पैदा होता है, इसमें भी करीब $\frac{1}{9}$ हिस्सा दूसरे देशोंको रवाना हो जाता है।*

---

* Maryada, October 1915

Enquiry into the Rise of Prices in India, Vol. I. Page 115, by K L Dutta, M. A., F R. A. S

गेहूंकी पैदावारका नकशा नं १ *।

देशका नाम ।	जनसंख्या ।	गेहूंकी पैदावार ।	प्रति मनुष्य पीछे मनका।
अमेरिकन संयुक्त			हन्ड्रेडवेट
रियासतें	१ २	१७ ८९	१७
रूस	१८ ३२,	२६	१७५
भारत	३१५	९ ३१६	५४
फ्रान्स	४	७ ८४ ६	१२
अर्जेण्टाइन	८५,७४	४ २१ १	४२
इटली	३ ६५,	७ ६५,	२१
कनाडा	८३ ६१	१	१५२
हंगरी	२, ८ ८६	८ ११ १	३२
रूमानिया	७५,	३६	४८
आस्ट्रेलिया	४२	७ ६७	१५३
मिश्र	२५,	१ २८ ८	१३
स्पेन		७ ७६ ६	३८
बल्गेरिया	४४ ३२	२, ८	४२
चिली	३८ ७	६६ ६६	२८
युराग्वे	११ ७८	२९ ३३	३३

The Statesman Year Book 1918.

गेहूँकी पैदावारका नकशा न० २।

देशका नाम।	जनसख्या।	गेहूँकी पैदावार।	प्रति मनुष्य पीछे पड़ता।
ग्रेट ब्रिटेन	४,५२,५०,०००	३,९०,००,०००	८६
जर्मनी	६,५०,००,०००	९,५०,००,०००	१४६
आस्ट्रेलिया	३,०४,००,०००	३,६५,००,०००	१२
जापान	५,००,००,०००	१,५०,००,०००	३
हालैण्ड	६०,००,०००	३३,५०,०००	५५
नार्वे	२४,००,०००	१,७०,०००	०७
स्वीडन	५५,००,०००	६५,००,०००	११८
डेन्मार्क	२८,००,०००	२५,००,०००	९
पोर्तुगाल	५५,००,०००	६५,००,०००	११८
ग्रीस	२७,००,०००	३५,००,०००	१६
स्विट्जरलैंड	३८,००,०००	३०,००,०००	५

[ऊपर दिये हुए आँकडे सन् १९१४ के हैं और हण्ड्रेटवेटमें हैं।]

चौथा परिच्छेद।

— —

दैवी कारण—दुर्भिक्ष या अकाल।

स्वर्गीय सर रमेशचन्द्र दत्तने कहा है कि—

The immediate cause of famines in almost every instance is the failure of rains but, if we honestly seek for the true causes, without prejudice of bias, we shall not seek in vain. The intensity and the frequency of recent famines are greatly due to the resourceless condition and the chronic poverty of the cultivators...... the poorest and most miserable peasantry on earth.

अर्थात्— जब कभी दुर्भिक्ष पड़ता है तब प्रायः सदा ही उसका कारण पानीका न बरसना होता है। पर यदि हम सत्य भावसे इसका खास कारण ढूंढें तो हम निराश न होंगे। इस तरह जो इतने बड़े और इतने अधिक अकाल पड़े हैं उनका कारण किसानोंका सम्पूर्ण निर्धन होना और बहुत पुरानी दरिद्रता है। ये किसान दुनियाभरमें सबसे अधिक निर्धन और निर विपन्न हैं।

The real cause of Indian Famines is, the extreme the Abject the Awful, Poverty of the Indian People."— *the New England Magazine September 1900.*

अर्थात्— हिन्दुस्तानमें दुर्भिक्षका मुख्य कारण भारतवासियोंकी अत्यन्त नीचे दर्जेकी भयंकर दरिद्रता है। —

"They can save nothing in years of good harvest, and consequently every year of drought is year of famine."— *Open letter to Lord Curzon by*

अर्थात्—" वे अच्छी फसलमेंसे कुछ बचाकर नहीं रख सकते, और इसका फल यह होता है कि जिस साल पानी ठीक तरह पर न बरसा, बस अकाल पड़ा । "

" That he finds starvation invariably staring him in the face, if any disorder overtakes that little crop which is the only thing which stands between him and death "—*Prosperous British India, page 166*

अर्थात्—" किसान कराल कालको हर वक्त अपनी ओर घूरता देखते हैं । जब कभी कुछ गड़बड़ी उनकी छोटीसी खेतीमें पड़ जाती है, जो कि उनके, और मौतके बीचमें खड़ी रहती है, तो भयकर काल उनके गले पर सवार हो जाता है । "

सर विलियम हण्टर, मिस्टर ए ओ हिड्डम, सर आक्लैण्ड काल्विन, सर चार्ल्स एलिएट, लार्ड क्रोमर, सर हेनरी काटन, मिस्टर केयर हार्डी, मिस्टर मण्डरलेण्ड और सर जेम्स कार्ड आदि सभी सज्जन एक स्वरसे कहते हैं कि भारतमें दुर्भिक्षका प्रधान कारण भारतवर्षकी घोर दरिद्रता है ।

अँगरेजीके दो इतिहासज्ञों और दो भारतवासियोंने—जिनमेंसे एक स्वाधीन राज्यके दीवान थे—मिलकर और भलीभाँति जाँच करके एक सूची तैयार की है जिससे मालूम होता है कि ग्यारहवीं शताब्दिमें २, तेरहवींमें १, चौदहवीमें ३, पन्द्रहवीमें २, सोलहवींमे ३, सत्रहवीमें ३ और अट्ठारहवीं शताब्दिमें सन् १७४५ तक ४, इस तरह लगभग साढे सात सौ वर्षोंमें यहाँ सब मिलाकर अठारह अकाल पड़े थे । और वे सब प्राय लोकल या स्थानीय थे । उनका प्रभाव बहुत विस्तृत क्षेत्र पर न था । *

अठारहवीं शताब्दिमे सन् १७६९ से लेकर १८०० तक तीन अकाल पड़े—एक बगालमें सन् १७६९–७० में, दूसरा बम्बई और मद्रासमें सन् १७८३ में और तीसरा उत्तर हिंदुस्तानमें सन् १७८४ में ।

इसके बाद १९ वीं शताब्दिमें अकालोंका जोर बढ़ने लगा । १८०० से १८२५ तक ५ अकाल पड़े जिनमे लगभग १० लाख आदमी मरे, १८२६ से

---

* देखो प्रास्परस ब्रिटिश इंडिया, पृष्ठ १२३ ।

१८५० तक दो अकाल पडे ५ लाख मरे, १८५१ से १८७५ तक ६ पड़े १५० लाख मरे, और १७६ से १९०० तक १८ पडे जिनमें अनुमानत २ करोड ६० लाख आदमी कालके गालमें चले गये।

मि डब्ल्यू एल हरेने १८ वीं और १९ वीं शताब्दिके अकालोका एक मातवार नकशा वनाया है जो पिछले पृष्टमें दिया गया है।

अकालोंसे कितनी हानि होती है इसका अनुमान करनेके लिए सन् १८७७-७८ के एक अकालकी हानिका हिसाब नीचे दिया जाता है —

१ सरकारी खर्चमें हानि	८०,००,०००	पौंड
२ मालगुजारीसें घटी	७५,२०,०००	,,
३ खेतीकी हानि	३,७८,००,०००	,,
४ मादक वस्तुओंके टैक्समें हानि	२,८५,०००	,,
५ चुगीकी आमदनीमें घाटा	४,७९,०००	,,
६ नमकके टैक्समें हानि	२,७३,०००	,,
७ जेवरोंकी हानि	९८,८०,०००	,,
८ खानेकी चीजोंकी गिरानीसे	१,३०,००,०००	,,
९ पशुओंकी हानि	४७,४९,५००	,,
१० मजदूरीकी हानि	२७,५०,०००	,,
११ कर्ज देनेवालोंकी हानि	२०,००,०००	,,
१२ व्यापारियोंकी हानि	१०,००,०००	,,
जोड	८,२७,३६,५००	पौण्ड

इस तरह एक सालके अकालसे ८,२७,३६,५०० पौण्डकी हानि हुई, उसके साथ ही ५०,००,००० आदमी भी मरे। इन ५० लाख आदमियोंकी हानिके लिए कितना रक्खा जाय, इसका उत्तर पाठक खुद सोचें। दुनियाके किसी भी सभ्य देशमें न इतने लोग भूखे रहते हैं और न कहीं इतने अकाल पडते हैं। जर्मन, फ्रास, अमेरिका आदि देशोंमें तो लोग अकालका नाम ही भूल गये हैं। पर दरिद्रभारत-जिसे कि अब तक लोग 'सुखी भारत' कहते हैं-अकालोंके मारे मरा मिटता है।

* सन् १८८ और १८९८ के फेमीन कमीशनकी रिपोर्टोंसे प्रकट होता है कि छोटे अकालोंको छोड़कर सन् १७० ई० से १८०८ तक १८ बड़े अकाल पड़े। इनमें यदि १८६९, १८९२ १८९७ और १९ के अकाल जोड़ दिये जायँ तो कुल २२ घोर अकाल होते हैं जिनका पूर्ण वृत्तान्त सुनकर विदेशियोंके रोंगटे खड़े हो जाते हैं और कलेजा काँप उठता है।

१ बंगालका अकाल सन् १७७१—बंगाल प्रान्तको सरकारी नौकरोंने तबाह कर दिया था। लोग अत्यन्त दरिद्र और दुखी हो गये थे। कोर्ट आफ डायरेक्टर्सने अपने १० मई सन् १७६६ के पत्रमें अपने नौकरोंके अत्याचार पर शोक प्रकट किया था— The corruption and rapacity of our servants." सरकारी कर्मचारियोंमें घूम घूम कर जाँचा तो मालूम हुआ कि बंगाल प्रान्तके एक तिहाई लोग उस अकालमें मर गये। मृत्युसंख्या १ करोड़।

२ मद्रासका अकाल सन् १७९२—मृत्युका ठीक अन्दाजा नहीं किया जा सका।

३ उत्तरी हिन्दुस्तानका अकाल सन् १७८३—बहुत बड़ा अकाल पड़ा गाँवके गाँव उजड़ गये। बनारस राज्यमें इतने लोग मरे कि वहाँकी एक तिहाई जाती नष्ट हो गई। मृत्युका ठीक अन्दाजा नहीं किया जा सका।

४ बम्बई और मद्रासका अकाल सन् १७९२—मृत्युका अन्दाजा ठीक नहीं किया जा सका पर अकाल बहुत बड़ा था।

५ बम्बईका अकाल सन् १८०३—बम्बई सरकारने दूसरे जगह मँगाकर एक खास तरफ सर्वसाधारणको हाथ बेचा और बहुत लोगोंकी रिलीफ वर्कद्वारा सहायता की। मृत्युकी संख्या ठीक मालूम नहीं हुई।

६ उत्तरी हिन्दुस्तानका अकाल सन् १८०४ ई०—सरकारने बड़ी सहायता की बहुतसी मालगुजारी माफ कर दी काश्तकारोंको कर्ज दिया और बनारस इलाहाबाद और कानपुरमें जो अन्न गया उस पर कुछ नाजरी (Bounty) या एक प्रकारकी सहायता दी।

७ मद्रासका अकाल सन् १८०७—अकाल बहुत बड़ा था। सरकारने अन्न खरीद कर उसे सस्ते भाव पर बेचा और लोगोंके प्राण बचानेमें सहायता दी।

R. C. Dutt.

* Famines in India.

८ बम्बईका अकाल सन् १८२२—सरकारने अन्न पर कुछ बाउण्टी या एक प्रकारकी सहायता दी।

९ मद्रासका अकाल सन् १८२३—सरकारने कुछ सहायता दी।

१० मद्रासका अकाल १८३३—गंटूर जिलेके ५ लाख आदमियोंमेंसे २ लाख मर गये। मदरासकी गलियोंमें और निलोरकी सडकों पर आदमियोंकी लाशें छितरी रहती थीं।

११ उत्तरी हिन्दुस्तानका अकाल सन् १८३७—कानपुर, फतहपुर और आगराके शहरोंमें लाश फेंकनेवालोंका खास इन्तजाम करना पडा कि जो लाशें सडकों पर पडी हों वे फेंक दी जावें। कभी कभी लाशें सड़कों पर ही पडी रह जाती थीं और जंगली जानवर आकर उन्हें खा जाते थे। ८ लाख मौतें हुई।

१२ मद्रासका अकाल सन् १८५४—९ महीने तक रिलीफ वर्क जारी रहा।

१३ उत्तरी हिन्दुस्तानका अकाल सन् १८६०—२५,००० आदमियोंको रिलीफ वर्क और ८०,००० को खैराती मदद ९ महीने तक मिली, तिसपर भी २ लाख आदमियोंकी मृत्यु हुई।

१४ उड़ीसाका अकाल सन् १८६६—४२,००० आदमियोंकी मदद १६ महीने तक की गई, तिस पर भी ४॥ लाख आदमी मरे। सरकारने दो लाख ८० हजार मन गल्ला पहुँचाया, तो भी उडीसामें १० लाख आदमी मरे।

१५ उत्तरी हिन्दुस्तानका अकाल १८६९—६५,००० आदमी रिलीफ वर्क पर काम करते रहे और १८,००० को खैराती मदद सिर्फ उत्तर पश्चिम प्रान्तमें दी गई। तो भी १२ लाख आदमी मरे।

१६ बंगालका अकाल सन् १८७४—७,३५,००० आदमी रिलीफ वर्कसे और ४½ लाख आदमी खैराती सहायतासे ९ महीने तक पले। इस अकालमें ऐसा अच्छा सरकारी प्रबन्ध था कि अकालके कारण एक भी आदमी न मरा।

१७ मद्रासका अकाल सन् १८७७,—यहाँ पर बंगाल प्रान्तसे उलटा प्रबन्ध हुआ। सर रिचर्ड टेम्पुलने यह कहकर मजदूरी घटा दी कि सरकारका फर्ज पेट भर अन्न देना नहीं है। वह उतना ही अन्न देगी जिससे लोगोंका पेट न भरे, पर प्राण बच जायँ। आखिर २,२१,८०० आदमियोंको अधपेटी सहायता दी गई और ५० लाख आदमी मरे।

१८ उत्तरी हिन्दुस्तानका अकाल सन् १८७८—१२ ७५ आदमियोंकी अनाथालयोंसे और ५० की रिलीफ वर्कसे सहायता की गई। प्रबन्ध ठीक न होनेके कारण १२॥ लाख आदमी मरे।

१९ मद्रासका अकाल सन् १८८९,—सहायता दी गई पर लोग बहुत मरे।

२ मद्रास बंगाल बर्मा और अजमेरका अकाल सन्, १८९०—यह अकाल बहुत बड़ा था सहायता दी गई बंगालमें मृत्यु नहीं हुई पर मद्रासमें बहुत लोग मरे।

२१ उत्तरपश्चिम प्रान्त बंगाल बर्मा मद्रास और बम्बईका अकाल सन् १८९७—जितने अकाल हिन्दुस्तानमें पड़े थे यह उन सबसे भयंकर और कठोर था और सारे हिन्दुस्तानमें इसका असर था। ३ लाख आदमियोंको सहायता दी गई। मध्यप्रदेशके सिवा सब जगह प्रबंध अच्छा था। इससे अकालके बड़े होनेके मुकाबले मृत्यु अधिक नहीं हुई।

२२ पंजाब राजपूताना मध्यप्रदेश और बम्बईका अकाल सन् १९ ९ ई०—यह भी हिन्दुस्तानके अकालोंमें बहुत बड़ा अकाल था। १ लाख आदमी रिलीफ वर्क पर थे तो भी मृत्यु बहुत हुई।

स्वर्गीय बाबू रमेशचन्द्रदत्तने लिखा है कि— "जब किसी देशमें राज्यपरिवर्तन होता है मुल्क जीत कर कोई दूसरा राजा आता है तो लड़ाई और बदइन्तजामीके कारण अकाल पड़ना ठीक है। पर हिन्दुस्तानमें इस कुप्रथा बन्दे बीते बहुत दिन होगये। सन् १८५८ में राज्यकी बागडोर मातश्रीमा महारानी विक्टोरियाको सौंपी गई। तबसे आजतक हिन्दुस्तानके भीतरी भागोंमें कभी लड़ाई नहीं छिड़ी। यहाँकी प्रजा शान्तचित्त और राजभक्त है मेहनती और किफायतसारीसे रहनेवाली है; अँगरेज अफसरोंकी कई पीढ़ियाँ, यहाँका काम करते और अनुभव प्राप्त करते बीत गईं; फिर भी अकाल पड़ना बन्द नहीं हुआ। ४ वर्षके हिन्दुस्तानमें १० अकाल पड़ चुके और उनमें एक करोड़ ५ लाख आदमी मर चुके। पृथ्वी पर किसी सभ्य देशकी जहाँके राजा सभ्य हैं ऐसी भयंकर और शोकपूर्ण दशा नहीं है।"

It is a melancholy phenomenon, which is not represented in the present day by another country on earth enjoying a civil and administration."—R. C. D.

पिछली सदीके आखिरी २५ वर्षोंमें अकालजन्य मृत्युकी औसत निकालनेसे प्रतिवर्ष १०लाखसे अधिक हिन्दुस्तानी कालके ग्रास बने हैं! अर्थात् प्रति महीना ८६ हजार, प्रति दिन २,८८०, प्रति घण्टा १२०, प्रति मिनिट २ हिन्दुस्तानी बराबर २५ वर्ष तक मरते गये हैं! और कैसे मरे? पहले, यदि घरमें गाय है तो बेच डाली, फिर हलके बैल बेचकर बच्चोंका प्राण बचाया, उसके बाद गृहस्थीकी छोटी छोटी चीजें—जो एक गरीब किसानके घरमें होती हैं वर्तन, कपडे या और कोई चीज—जिसका ग्राहक मिला, और जिस वे एक आने तकमें भी बेच सकते हैं या जिसके बदले एक मुट्ठी मटर पा सकते है छोड़ नहीं रखते। आखिर, हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाते हैं। बच्चोंकी आँखें भूखसे बैठती जाती हैं। अब यह साहस भी बाकी न रहा कि पानी लाकर, साँय साँय करते हुए अपने हृदयके टुकडे प्यारे पुत्र या प्यारी पत्नीके मुँहमें—जिसका दम टूट रहा है,—जल डालें।

माताने प्राण त्याग दिया, बच्चा भूख और प्याससे तड़प तड़प कर अचेत या मृतक माताके स्तनोंको चूसता है और निदान निराश तथा हताश होकर उसी सीनेपर पड़ा पडा मर जाता है। यही हृदयवेधक दृश्य देखते हुए, या यदि न देखा गया तो पीछेके खेतमें जाकर, लोग प्राण त्याग कर देते हैं और इनकी लाशोंका संस्कार गाँवके श्रृगाल या कुत्ते करते हैं।

पाँचवाँ परिच्छेद ।

दैवी कारण—रोग और मृत्यु ।

पुष्प-जगत् ।

सेठ अमीरचन्द और मालरेवके बाबू मोतीचन्दके पास पास मुकाबलेके मनोहर बाग हैं । सुन्दर वनस्पतियाँ नाना प्रकारके पौधोंके फूल पत्तियाँ और कोमल लताएँ लाखों रुपयोंके खर्चसे दोनों ही बागोंमें लगाई गई हैं । एक बागकी पत्तियाँ मुर्झा रही हैं उनमें कुम्हलाई जाती हैं और दूसरेमें ठीक वही वनस्पतियाँ हरी भरी लहरा रही हैं और उनमें [illegible] हुआ चाहती हैं । क्यों ? इसलिए कि एक बागमें उनकी रक्षा ठीक तरह पर नहीं की जाती समय पर जल और खाद आदि नहीं दिया जाता और दूसरी जगह इन सब बातोंका अच्छा प्रबन्ध है ।

पुष्प-प्रदर्शिनी और पुष्प-पारितोषिक (Flower show and flower prizes) इस बातको सिद्ध करते हैं कि जितनी अधिक देख भाल वनस्पति पौधोंकी होगी वे उतनी ही पुष्ट होंगी और वैसे ही बड़े फूल या फल देंगी ।

यह ठीक है कि अबतक कोई फूल बढ़ानेवाला खाद कोशिशोंके बाद भी बड़ी गोभीके फूलके बराबर गुलाबका फूल न दिखा सका पर साथ ही यह भी मानना पड़ता है कि कोई यह नहीं कह सकता कि यह फूल दुनियामें सब फूलोंसे बड़ा है और इस फूलसे बड़ा कोई फूल न हो सकेगा । मतलब यह कि आज जो सबसे बड़ा गुलाबका फूल है कल उसीसे उसी पेड़से उससे भी बड़ा फूल निकल सकता है । अतएव न यही कहा जा सकता है कि गुलाबका फूल बड़ी गोभीका फूल हो जा सकता है और न यही कहा जा सकता है कि अमुक गुलाबके फूलसे बड़ा फूल नहीं हो सकता ।

पशु-जगत्।

विलायतके विद्वान् ग्वाले कहते हैं कि-" आप जितना अच्छा पशु चाहें हम धीरे धीरे तैयार कर दे सकते हैं। "

लेसिस्टर शायरके मशहूर ग्वालोंके एक दलने यह यत्न करना प्रारम्भ किया कि एक भेड़को घोड़ेके बराबर किया जाय और दूसरे दलने यह किया कि एक भेडको चूहेके बराबर छोटा कर दिया जाय। पर दोनों दलोंका यत्न निरर्थक गया। भेड न तो घोडेहीके बराबर बढ़ सकी और न चूहेके बराबर छोटी ही हो सकी। पर साथ ही यह भी कहा जाना चाहिए कि उनका यत्न किसी दरजे तक सफल भी हुआ, अर्थात् एक दलकी भेड, यत्नद्वारा साधारण ऊँचाईकी भेडोंसे बहुत बढ़ गई और दूसरे दलकी बहुत छोटी हो गई।

इस तरह प्राय सभी पशु उत्तम जोडेसे पैदा किये जाने, भली भाँति खिलाये जाने और ठीक तरह पर काममें लिये जाने पर बडे कद्वाले, अधिक काम करनेवाले और ज्यादा दिन जीनेवाले बनाये जा सकते हैं।

In short, careful distinction should be made between reasonable and unlimited progress अर्थात् उचित और अनुचित उन्नतिकी सीमाका अन्तर बहुत चतुराईसे देखना चाहिए।

मनुष्य-जगत्।

प्रकृतिने मनुष्यमात्रकी उन्नति भी पूर्वोक्त नियमके अधीन रक्खी है। मनुष्यका दीर्घायु या अल्पायु होना, आरोग्य या रोगी होना, बलवान् या निर्बल होना, भिन्न भिन्न देशोंकी अच्छी या बुरी आबोहवा पर, अच्छे या या बुरे आहार पर और पुण्य या पापमय जीवन व्यतीत करने पर निर्भर है। जिस देशमें इन वस्तुओंका जैसा सुभीता होता है, वहाँके निवासी वैसे ही आरोग्य, बलवान् और दीर्घायु होते हैं, और जहाँ जितना अभाव होता है, वहाँके लोग उसी हिसाबसे रोगी, निर्बल और अल्पायु हुआ करते हैं।

मनुष्यकी आयुका निश्चय करना और उसके लिए एक सीमा बाँध देना असम्भव जान पडता है। पीटर मॅकसने भारतके इतिहासमें लिखा है कि नुमीस डे सन् १७६६ ई० में मरा, उस समय उसकी आयु १७१ वर्षकी थी। टामस डारकी आयु १५७ वर्षकी थी। इफिन्चम १४४ वर्षकी उमरमें मरा। गोसाईं लक्ष्मण पुरी, इमलहा (मिर्जापुर) ११९ वर्षके होकर मरे।

आप बालब्रह्मचारी थे और आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत पालन करते रहे। मोहनपुर गौरेरिया (बलिया बनारस स्टेशनके समीप) आयु ११६ वर्ष अभी जीवित हैं सब अंग ठीक हैं अभी कोसों चल सकता है। कहता है कि मैं बहुत दिनोंसे केवल दूध और जंगली फल आदि खाकर रहता हूं। तलाश करनेसे हर शहरमें हर गांवमें अभी सौ वर्ष या इससे अधिक आयुवाले मिलेंगे। कठिन स्वदेशव्रतधारी नित्य-सुख-सम्पत्तिकी आकृति देनेवाले माननीय दादाभाई नौरोजी मनुष्यके दीर्घायु होनेके प्रत्यक्ष प्रमाण थे। माननीय सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी कहते हैं कि गत १६ वर्षोंसे मैंने प्रत्येक दिनके कामके लिए एक समय निश्चित कर लिया है उसी समय पर खाता हूं, और व्यायाम करता हूं। इस समयमें एक दिन भी गड़बड़ी नहीं पड़ने पाई। फल यह हुआ कि मैं पचास वर्षोंमें एक दिनके लिए भी बीमार नहीं हुआ।

अनुकूल शुद्ध सात्विक भोजनसे निर्मल जल और पवित्र वायु-सेवनसे स्वच्छ हवादार कमरोंमें रहनेसे बल और पौरुषको हानि न पहुंचानेवाली दिनचर्यासे शारीरिक बल और पराक्रम बढ़ानेवाले व्यायाम (कसरत) से, देशका या राष्ट्रीयताका क्षय करनेवाले दो प्रधान कारण—घोर दरिद्रता और अत्यन्त अधिक अज्ञानता—का सम्पूर्ण विनाश कर देनेसे, ब्रह्मचर्यके पश्चात् योग्य और आरोग्य सन्तानोत्पत्तिसे स्वास्थ्यरक्षा और उत्तम चिकित्साशास्त्रके ज्ञानसे स्त्री और पुरुषकी सामाजिक और मानसिक दशा बराबर ऊंची करनेसे देशके सुखी होनेसे और शान्तिमय पवित्र जीवन व्यतीत करते रहनेसे मनुष्य चाहे अजर और अमर न हो जाय पर उसके जन्म और स्वाभाविक मरणके बीचका समय अर्थात् आयु बहुत बढ़ जायगी और बराबर बढ़ती ही रहेगी। इस बढ़ावकी सीमा न होगी।

Man m y not becom quite immortal, yet the duration of l f betwee b th and natural death will increase with ut cea ng, w ll h ve o assignable term, and may prope ly be p essed by the word indefinite a constant pproa h to an nlim ted extent without ever reaching it or c ease in the immensity of ages to an extent g eater th y assignable quantity "

अर्थात् मनुष्य अमर तो नहीं हो सकता परंतु उसके जीवनके दिन स्वाभाविक मृत्युके दिनोंसे बढ़ सकते हैं और फिर वह कोई नहीं बता सकता

कि अमुक पुरुषकी अवस्था इतने ही दिनोंकी होगी। धीरे धीरे अवस्थामें वृद्धि होते होते सैकडों वर्षोंमें मनुष्य ऐसा दीर्घजीवी बन सकता है कि उसकी उमरका कोई अंदाज नहीं कर सकता *।"

"मनुष्यके मस्तकमें ग्रे सब्स्टन्स (grey substance) नामकी एक वस्तु होती है, उसीसे विचारशक्ति पैदा होती है। बच्चोंके दिमागमें ग्रे मैटर (grey matter or substance) बहुत कम होता है, इससे उनकी विचारशक्ति भी कमजोर होती है। ज्यों ज्यों बच्चा बढता है ग्रे मैटर भी बढता है और उसी हिसाबसे लडकेकी बुद्धि भी बढती और पुष्ट होती है। युवावस्थामें इस वस्तुकी अधिकता और वृद्धावस्थामें कमी रहती है। उसीके अनुसार बुद्धिमें भी विशेषता और कमी हो जाती है। चोट लगनेसे, क्लोरोफार्म सुँघानेसे अथवा शराब पिलानेसे ग्रे मैटर पर असर पडता है, अतएव बुद्धि भी खराब हो जाती है। जहाँ ग्रे मैटर है वहीं बुद्धि है। यह वस्तु दिमागमें जितनी अधिक और जितनी स्वच्छ हो उतनी ही तीव्र और पवित्र बुद्धि भी होती है। जहाँ ग्रे मैटरका अभाव है वहाँ बुद्धिका भी अभाव है, अर्थात ग्रे मैटर ही बुद्धि है +।"

ठीक इसी तरह जीवनका दूसरा नाम रक्त (Blood) है और रक्तका दूसरा नाम आक्सिजन और आहार है। रक्त एक घण्टेके अन्दर बारह बार सारे शरीरमें घूमकर हृदयमें आता है, और फिर तुरत शरीरके अन्य भागोंमें घूमनेको निकल जाता है।

इसी तरह दिन, रात, सोते, जागते, हर वक्त रक्त चक्कर मारा करता है और जिस मिनटमें इसकी चाल बन्द हो जाती है उसी मिनटमें शरीरसे प्राण निकल जाता है। जब तक रक्त ठीक है आदमी आरोग्य है, जहाँ इसमें गडबडी पडी कि बस आदमीका स्वास्थ्य बिगड़ा। साँपके काटनेसे मृत्यु क्यों हो जाती है? इस लिए कि रक्त बिगड जाता है। किसी तरह पर रक्त निकल जानेसे, या रक्त कम हो जानेसे, आदमी कमजोर हो जाता है या मर जाता है। अनुकूल आहार और शुद्ध वायुसे नया रक्त बनता है और मनुष्य आरोग्य रहता है। विरुद्ध आहारसे रोग उत्पन्न होते हैं।

---

* M Condorcet s 'Problem of life'

+ 'Proofs of the existence of the soul', by Mrs Besant

चरक सुश्रुत हारीत वाग्भट आदि आयुर्वेदके ग्रन्थोंकी सम्मति है कि विरुद्ध आहार और विहारसे ही रोग उत्पन्न होते हैं।

× जगत्प्रसिद्ध डाक्टर लुई कूने दुनियाके सब रोगोंकी उत्पत्तिका एक कारण बताते हैं और उसी एक कारणको दूर करके उन्होंने सब प्रकारके रोगियोंको आराम और आरोग्य कर दिखाया है। उनकी भी यही सम्मति है कि विरुद्ध आहार और विहारसे मलाशयमें कुछ मल एकत्रित हो जाता है और फिर वही मल शरीरके अनेक मार्गोंमें जाकर नानाप्रकारकी व्याधियाँ खड़ी कर देता है और उन व्याधियोंको लोग भिन्न भिन्न नामोंसे परिचय देते हैं। ज्वर क्या है? पहले मल पेड़ूके चारों तरफ जमा होता है और किसी समय अधिक सर्दी या गरमी अथवा और किसी विरुद्ध आहार-विहारसे उफान पड़ता है। शरीरके प्रत्येक भागमें पहुँचकर मलके छोटे छोटे टुकड़े आपसमें टकराकर गरमी पैदा करते हैं और सारे शरीरको गरम कर देते हैं।—यही ज्वर है। अथवा वे मलके परमाणु रक्तके मार्ग पर पहुँचकर आवश्यकताके अनुसार रक्त नहीं जाने देते कुछ देरके लिए रक्तकी चाल धीमी कर देते हैं। बस सारा शरीर या वह भाग—जहाँका रस्ता रुका है—अवश्य ठंडा हो जाता है।—यही सर्दीका ज्वर है।

डाक्टर गोल्सलिच (Golschlich) गवर्नमेंटकी ओरसे हैजेके रोगकी जाँच करके लिखते हैं कि— "People carry the germs of cholera in their intestines for months." अर्थात् हैजेके कीड़े मनुष्यके मलाशयमें महीनों पड़े रहते हैं।"

It was discovered long ago in England that the main sources of fever, cholera, and other diseases are:—

1 Want of ventilation,
2 Over-crowded house,
3 Bad and defective drain, and
4 The drinking water containing impurities."

In London, 200 years ago, the average annual mortality per thousand was 70, by 18[illegible]5 it had lessened to 30 and

× The New science of Healing by Louis Kuhne.

Government Report on Sanitary Measures in India 1904-5 page 65.

now with greatly increased population it has diminished to 15 per thousand *

अर्थात् कुछ दिन पहले लन्दनमें प्रति सहस्र सत्तर जन मरते थे । सन् १८३५ में मृत्यु-सख्या ३० हो गई और अब पहलेसे आबादी बहुत बढ जाने पर भी मृत्युका हिसाब प्रति सहस्र कुल १५ जन हो गया है। इस घटनेका कारण यह हुआ कि वहाँके लोगोको मालूम हो गया कि ज्वर हैजा आदि अनेक रोगोंकी उत्पत्तिके ४ प्रधान कारण हैं.—१ मकानोंमें साफ हवाका अभाव, २ बहुतसे लोगोका एक साथ एक ही मकानमें रहना, ३ बुरी और गन्दी नालियाँ और ४ ऐसा खराब पानी पीना जिसमें बुरे परमाणु मिले हों।

इन चार बातोंका सुधार करनेसे वहाँ रोग कम ही नहीं हुए बल्कि उस देशसे निकल भागे। केवल इग्लैण्डमे ही नहीं बल्कि दुनियाके किसी भी सभ्य देशमें अब उन बीमारियोका जोर नहीं है।

अब देखना चाहिए कि अभागे भारतकी क्या दशा है—यह सभ्य देशोंके मुकाबले दीर्घायु है या अल्पायु।

क्या भारतकी आबादी घनी है ?

इस देशमें लोगोका यह ख्याल है कि भारतवर्ष इतना बडा और विस्तृत देश है कि यहाँ पर न स्थानका अभाव है और न कभी होगा। भारतकी जनसख्या और क्षेत्रफलके हिसाबसे यहाँकी आबादी पाश्चिमीय सभ्य देशोंके मुकाबले घनी नहीं है। जबानी जमा खर्च कर देना आसान है, पर इस बातको सप्रमाण साबित करना कठिन काम है। देखिए —

आबादीके लिहाजसे भारतवर्ष सारी दुनियामें दूसरे नम्बरका देश है। अर्थात् चीनको छोडकर भूमण्डलके सभी देशोंसे यहाँकी जनसख्या अधिक है। क्षेत्रफल भी यहाँका बहुत बडा है। भारतका ब्रिटेनसे अथवा फ्रास या जर्मनीसे मुकाबला करना—जहांकी न तो जनसख्या बराबर है न क्षेत्रफल—भूल है। समस्त भारतकी जनसख्याकी सघनताको आबादीके मुकाबले कम देखना केवल भ्रम है। हाँ, भारतके प्रत्येक प्रान्तकी जनसख्या और क्षेत्रफल यूरोपके अनेक देशोंकी बराबरी करते हैं। अतएव, यदि सयुक्त प्रान्तका मुकाबला ब्रिटेनसे, बगालका जर्मनीसे और मद्रासका फ्रांससे किया जाय तो ठीक पता चल सकता है।

* Sanitary Commission Report for 1865, Page 82.

नीचे टिप्पणीमें दी हुई संख्याओंसे मालूम होता है कि संयुक्त प्रान्तकी आबादी विलायतसे, बंगालकी बेलजियमसे और मद्रासकी फ्रांससे अधिक घनी है ×। भारतके किसी किसी प्रांतमें तो इससे भी अधिक सघन बस्ती है। ट्रावनकोर राज्यमें प्रति वर्गमील ६१६ और कोचीनमें ५९६ मनुष्य बसते हैं।

साफ और हवादार मकानोंका अभाव।

* भारतमें रहनेके मकानोंकी संख्या ५,५८ ९१ ३१५ है। इनमेंसे ४ ३१ ७४ ७३८ ब्रिटिश भारतमें हैं और बाकी १ २३ १६ ५६० देशी राज्यों में। ब्रिटिश भारतके मकानोंमें २३ २ ७२ ८३९ जन रहते हैं जिनमें ११ ७८ ९७ ४३० पुरुष और ११ ४१ ७५,३९५ स्त्रियाँ हैं। राजधानियोंके मकानोंमें कुल ६ २२ ८८ २२२ मनुष्य निवास करते हैं उनमेंसे ३ २ ५४ ३८० पुरुष और ३, २ ३३ ८३७ स्त्रियाँ हैं।

अब देखना है कि वे मकान कैसे हैं। साफ सुथरे हवादार हैं या गन्दे और रोगोंके उत्पादक।

× यूरोपके देशोंसे भारतके प्रान्तोंका मुकाबला।

देश और प्रांत	क्षेत्रफल वर्गमील	जनसंख्या लक्ष	प्रतिवर्गमील जनसंख्या
संयुक्त प्रांत	१ ७ २६७	४७१	४४
ग्रेटब्रिटेन	१ २१ ६३३	४५५	३७८
बंगाल	७ ६९९	४५४	५७८
जर्मनी	२ ८ ७	६४१	३१ ४
मद्रास	१ ४ ३३	४१४	२९१
फ्रांस	२, ७ ५४	३९६	१८९५
बिहार और उड़ीसा	८३ १८१	३४५	४१५
इटली	१ १ ६३२	३६१	३२६५

Th Statesman Year Book 1918

पहले संस्करणके पुराने आँकड़े बदल कर इस संस्करणमें नये आँकड़े दे दिये गये हैं।

* "The mud huts of the people favour the spread of plague, but they are built of mud because that is generally the only material, the builder can obtain"

अर्थात्—"मिट्टीके कच्चे मकानोसे प्लेग फैलनेमें सहायता मिलती है, लेकिन किया क्या जाय, बेचारोको सिवाय मिट्टीके दूसरी कोई वस्तु, मकान बनानेको, प्राप्य ही नहीं होती।"

‡ "He inhabits a mud hovel in the middle of a crowded village, surrounded by dunghills and stagnant pools, the water of which latter is not seldom his only drink"

अर्थात्—"भारतवासी, घनी वस्तीवाले गाँवके बीचमें, एक एक मिट्टीकी झोपडीमें रहते है, जिसके चारो तरफ गोबर आदि खादका पहाड़ लगा रहता है, और पास ही गन्दे पानीकी गढी या तलैया भी होती है। अकसर इसी तलैयाका पानी पीनेके काममें भी लाया जाता है।"

+ "The populous houses lie close together and breed disease"

अर्थात्—"मकानात एक दूसरेसे सटाकर बनाये जाते हैं और उनमे ज्यादा आदमी रहते हैं। इससे बीमारियाँ होती है।"

× "The ordinary house contains a small court-yard, with a sitting room opening off it which is used by males only, while further back, worse ventilated and darker is the inner room in which females sleep Deep pit-sunk privy which is never cleared, the nightsoil being consumed by the pit, occupies the other corner of the unpaved wet court-yard Stagnant drain with all its usual filth rots away into the court-yard or at best, ends into a small pit dug at the foot of the female compartment"

---

* Government Report on Sanitary Measurers in India 1904-5, page 96

‡ Prosperous British India

+ Sanitary Measures in India 1908, pages 99 and 96

× Sanitary Measures in India

अर्थात्— मामूली मकानोंमें एक छोटासा आँगन होता है और बाहरकी कोठरी होती है जो मर्दोंके बैठनेके काम आती है। अन्दर जाकर बाहरकी कोठरीसे अधिक खराब जिसमें न तो हवा जाती है न रोशनी दूसरी कोठरियाँ होती हैं जिनमें औरतें सोती हैं। इसी कमरे सीढ़ीसे भरे आँगनके एक कोनेमें संडाससी पैखाना होता है। यह कभी साफ नहीं किया जाता। मैला उसी कोठरीके गहरे गढ़ेमें दब जाता है। बरसाततक सब मल इसी आँगनमें सड़ा करता है या जनाना कोठरीके बगलके एक छोटेसे गढ़ेमें जमा होकर सड़ा करता है।"

आइए, अब आपको भारतके उस शहरकी सैर करायें जो ब्रिटेनके झण्डेके नीचे दूसरे नम्बरका और सारी दुनियाके शहरोंमें बारहवें नम्बरका शहर है जो महलोंके शहर (city of palaces) के नामसे मशहूर है जो धनी व्यापारियोंका केन्द्र है और जहाँ अभी कुछ ही समय पहले भारतकी राजधानी थी।

पाठकगण इस समय मैं आपको हवड़ा स्टेशनसे पञ्जाबमेलके फर्स्टक्लास रिजर्व कम्पार्टमेण्टसे उतार कर मोटरमें बैठा कर सेठ दुलीचन्दकी कोठीमें न ठहराऊँगा; एडेन, जुआलोजिकल या बुटानिकल गार्डेनकी हवा न खिलाऊँगा; आनरेबुल मिस्टर मुकर्जीके बंगलेकी सजावट, राजेन्द्र मल्लिकके कमरोंकी एक एक लाखकी तसवीरें कीमती शीशे और प्रतिमूर्तियाँ (Statue) न दिख लाऊँगा जड़ाऊ मन्दिर व्यापारियोंकी जगमगाती दूकानें पारसीके आलीशान सौदागरोंका मनोहर सामान आस्लर (Osler) की काँचकी चीज़ें बिज लीके पंखे झाड़ फानूस और बत्तियाँ इण्डिया कम्पनीकी बेलबूटेदार छतें या वर्ड कम्पनीके यहाँका सुन्दर चीनीका सामान न दिखाकर आपको एक दूसरी ही ओर ले जाऊँगा। आपको कलकत्तेकी सच्ची भीतरी दशा मध्यम स्थिति वालोंके मकान और ऐसे स्थान जिनमें कलकत्तेके अधिकांश लोग वास करते हैं दिखाऊँगा।

मछुआ बाजार।

हरिसन रोडकी चौड़ी सड़क पर एक तिमंज़िला खूबसूरत छोटा पर शानदार मकान है। ३ फीट लम्बा और २ फीट चौड़ा है। इसमें ११ कमरे हैं और १८ भिन्न भिन्न परिवारोंके ११३ जन रहते हैं। कुल किराया १५०) रु० मासिक अदा होता है।

नीचेके खण्डमें दो पैखाने, एक नहानेका कमरा और तीन पानीके नल हैं। नीचे, सुवह शाम भीड लग जाती है। निपटनेवालोंमें हर वक्त 'कहा-सुनी' हुआ करती है। मकानमें सीढ बहुत है और बदबू सीडसे भी अधिक है।

सडक पर तीन दूकानें हैं। एक दूकानमें दो मारवाडी किरायेदार रहते हैं और दोनों साझेमें दही वडे वेचते हैं। उनके दोनों कुटुम्बोंमे दस प्राणी हैं। मचान पर स्टोर है। उसके नीचेकी जगह दिनको रसोईघरका और रातको सोनेके घरका काम देती है। दूसरे किनारे, एकके नीचे एक, इस तरह दो खटोले लटकते हैं, उनपर तीन बच्चे झूला करते हैं। सेठ सेठानी और दोनोंके मयाने लडके और लडकियाँ एक ही फर्श पर रातको सोती हैं। चोरीके भयसे दरवाजा वन्द रहता है। ऊपरके झरोखोंसे सिर्फ प्राण वचाने योग्य हवा आया करती है।

दूसरी दूकानमें एक खोमचेवाला हलवाई रहता है। अँगरेजीमें एफ ए फेल है। वोर्डिङ्ग हाउसोंमें मिठाई वेचता है। इसका एक भाई आढतमें अनाज तौलता है और दूसरा भाई कालेजमें पढता ह। तीनों व्याहे हैं। सब मिलाकर ९ प्राणी हैं जो इसी कोठरीमें रहते हैं। भट्टी, पानी, मिठाई वनानेका सामान, सब इसी कोठरीमें है और सब लोग इसी एक कोठरीमें सोते भी हैं।

तीसरी कोठरी सबसे छोटी है। अन्दर जानेकी राह और सीढी इसीमें पडती है। एक कलवार, अपनी प्रेमिका एक चमारिन और उसके ४ बच्चोंके सहित इसमें रहता है। मिरजापुरमें लाखका काम फेल हो जानेपर, उसने यहा आकर इसी कोठरीमे मास, मछली, कटलेट, चाय आदिकी दूकान कर ली है। चमारिन, सुवह शाम तो पराठे वनाकर दूकानमे रख देती है, और दूसरे समयमें सामने ही पान लगाकर वेचती है। कुल ६ प्राणी इसमें रहते हैं। दूकान भी इसीमें होती है।

सबसे ऊपरके खण्डमें केवल एक वडा कमरा, एक वाजूका कमरा, एक छोटीसी दालान और उसके आगे जरासी खुली छत है। एक प्रसिद्ध वैंकिङ्ग कम्पनी (Agrawala Insurance & Banking Co) के खजांची, दलाल और हेडक्लार्क उसमें मिल जुल कर रहते हैं। खजाची महाशयके साथ उनकी धर्मपत्नी और दो वालक, एक युवती विधवा भाभी, एक चच्ची और उसकी एक युवती कन्या, कुल सात प्राणी रहते हैं।

अर्थात्— मामूली मकानोंमें एक छोटासा आँगन होता है और चार छः कोठरी होती हैं जो मनुष्योंके बैठनेके काम आती हैं। अन्दर जाकर चार छः कोठरीसे अधिक खराब जिनमें न तो हवा आती है न रोशनी दूसरी कोठरियाँ होती हैं जिनमें औरतें सोती हैं। इसी कच्चे सीढ़ीसे भरे आँगनके एक कोनेपर छोटासी पखाना होता है। यह कभी साफ नहीं किया जाता। मैला कभी छोटीसी गहरे गढ़ेमें जमा जाता है। नाबदानका सब मैला इसी आँगनमें सड़ा करता है या अगला कोठरीके बगलके एक छोटेसे गढ़ेमें जमा होकर सड़ा करता है।

आइए, अब आपको भारतके उस शहरकी सैर करावें जो ब्रिटेनके लन्दनके नीचे दूसरे नम्बरका और सारी दुनियाके शहरोंमें बारहवें नम्बरका शहर है जो महलोंके शहर (city of palaces) के नामसे मशहूर है जो धनी व्यापारियोंका केन्द्र है और जहाँ अभी कुछ ही समय पहले भारतकी राजधानी थी।

पाठकगण इस समय मैं आपको हवड़ा स्टेशनसे पञ्जाबमेलके फर्स्टक्लास रिजर्व कम्पार्टमेण्टसे उतार कर मोटरमें बैठा कर सेठ सुखीचन्दकी कोठीमें न ठहराऊँगा; एडेन मुखालिफ या मुवाफिक गार्डेनकी हवा न खिलाऊँगा; आनरेबुल मिस्टर मुकर्जीके बंगलेकी सजावट राजेन्द्र मल्लिकके कमरेकी एक एक लाखकी तसवीरें कीमती शीशे और मणिमूर्तियाँ (Statue) न दिखलाऊँगा अथवा मन्दिर जौहरियोंकी आलीशान दूकानें चौरंगीके आलीशान सौदागरोंका मनोहर सामान आसलर (Osler) की काँचकी बढ़ियाँ चिम-नीके पंखे साफ कागज और चमकते इण्डिया कम्पनीकी बेलबूटेदार कपड़े या बड़ी कम्पनीके पर्दाकम सुन्दर फर्नीचर सामान न दिखाकर आपको एक दूसरी ही ओर ले जाऊँगा। आपको कलकत्तेकी सच्ची भीतरी दशा मध्यम स्थिति वालोंके मकान और ऐसे स्थान जिनमें कलकत्तेके अधिकांश लोग वास करते हैं दिखाऊँगा।

पट्टा बाजार।

हरिसन रोडकी चौड़ी सड़क पर एक तिमंजला खूबसूरत छोटा पर साफ-सुथरा मकान है। ३ फीट लम्बा और २ फीट चौड़ा है। इसमें ११ कमरे हैं और १८ भिन्न भिन्न परिवारोंके ११३ जन रहते हैं। कुल किराया १५०) रु मासिक जमा होता है।

नीचेके खण्डमें दो पैखाने, एक नहानेका कमरा और तीन पानीके नल हैं। नीचे, सुबह शाम भीड लग जाती है। निपटनेवालोंमें हर वक्त 'कहा-सुनी' हुआ करती है। मकानमें सीढ़ बहुत है और बदबू सीडसे भी अधिक है।

सडक पर तीन दूकानें हैं। एक दूकानमें दो मारवाडी किरायेदार रहते हैं और दोनो साझेमें दही वडे वेचते हैं। उनके दोनों कुटुम्बोमे दस प्राणी हैं। मचान पर स्टोर है। इसके नीचेकी जगह दिनको रसोईघरका और रातको सोनेके घरका काम देती है। दूसरे किनारे, एकके नीचे एक, इस तरह दो खटोले लटकते हैं, उनपर तीन बच्चे झूला करते हैं। सेठ सेठानी और दोनोके मयाने लडके और लड़कियाँ एक ही फर्श पर रातको सोती हैं। चोरीके भयसे दरवाजा वन्द रहता है। ऊपरके झरोखोंसे सिर्फ प्राण बचाने योग्य हवा आया करती है।

दूसरी दूकानमें एक खोमचेवाला हलवाई रहता है। अँगरेजीमें एफ ए. फेल है। वोर्डिङ्ग हाउसोंमें मिठाई वेचता है। इसका एक भाई आढ़तमें अनाज तोलता है और दूसरा भाई कालेजमें पढता ह। तीनों व्याहे हैं। सब मिलाकर ९ प्राणी हैं जो इसी कोठरीमें रहते हैं। भट्टी, पानी, मिठाई वनानेका सामान, सव इसी कोठरीमें है और सब लोग इसी एक कोठरीमें सोते भी हैं।

तीसरी कोठरी सबसे छोटी है। अन्दर जानेकी राह और सीढी इसीमें पढती है। एक कलवार, अपनी प्रेमिका एक चमारिन और उसके ४ बच्चोंके सहित इसमें रहता है। मिरजापुरमें लाखका काम फेल हो जानेपर, उसने यहाँ आकर इसी कोठरीमें मास, मछली, कटलेट, चाय आदिकी दूकान कर ली है। चमारिन, सुबह शाम तो पराठे बनाकर दूकानमें रख देती है, और दूसरे समयमें सामने ही पान लगाकर बेचती है। कुल ६ प्राणी इसमें रहते हैं। दूकान भी इसीमें होती है।

सबसे ऊपरके खण्डमें केवल एक बडा कमरा, एक बाजूका कमरा, एक छोटीसी दालान और उसके आगे जरासी खुली छत है। एक प्रसिद्ध बैंकिङ्ग कम्पनी (Agrawala Insurance & Banking Co)के खजाची, दलाल और हेडक्लार्क उसमें मिल जुल कर रहते हैं। खजाची महाशयके साथ उनकी धर्मपत्नी और दो बालक, एक युवती विधवा भाभी, एक मन्त्री और उसकी एक युवती कन्या, कुल सात प्राणी रहते हैं।

चीना बाजार।

चितपुररोडपर एक कमरेमें दिनको मोची जूता बनाते हैं, और रातको उसीमें चारपाइयाँ डाल दी जाती हैं। एक पर बाप, माँ, और एक लडका, साथ सोते हैं, दूसरी पर ६ बडे बढे बच्चे सोते हैं, तीसरी चारपाई पर तीन स्त्रियाँ और चौथी पर तीन लड़के सोते हैं। बगलका दूसरा कमरा बहुत छोटा है, उसमें एकसे अधिक तखता नहीं पड़ सकता, अतएव चतुर चीनी कारीगरने एक टेबुल ऐसा बनाया है कि दिनको उसीसे मेजका काम निकल जाता है, और रातको कुछ लकड़ियोंको उधर उधर कर देनेसे उसमें तीन दर हो जाते हैं। पहले दरमें, स्त्री पुरुष और एक छोटा बच्चा, दूसरेमें बालक और बालिकायें पाँच अदद, और तीसरेमें चार अदद भाई बहिन कसे रहते हैं। सब १२ से १८ वर्ष तकके हैं। मेजर मेटकाफ लिखते हैं.—"एक छोटेसे कमरेमें एक बेवा बगालिन, अपने ६ बच्चोंके साथ एक ही तख्ते पर सोती थी। एक रातको दो बच्चोंका अन्त हो गया। उनकी मृत्युका कारण, बुरी हवा और बिछौनेकी गन्दगी थी।" कलकत्तेके एक सफाईके दारोगा लिखते हैं—' एक छोटीसी कोठरीके आधे हिस्सेमें पत्थरका कोयला रक्खा है। उसी कोठरीके आधे हिस्सेमें एक बगाली बाबू, उनकी स्त्री और दो लडके सोते हैं।" "एक सीढीके नीचे एक औरत अपने चार बच्चोंके साथ जमीन पर सोती है।"

बस, इस शहरका अन्दाज करने भरको यह वृत्तान्त काफी है। यहाँकी अधिकाश आबादी किस तरह पर रहती है, सो मालूम हो गया। अब चलिए, हम लोग काशीकी यात्रा करें। इस शहरकी लोग बडी तारीफ करते हैं और इसे 'छोटा कलकत्ता' कहा करते हैं। बस, इसे भी देखना आवश्यक है। पाठक महाशयोंसे प्रार्थना है कि यहाँ भी आप राजा मुशी माधोलालकी मूलनपुरवाली कोठीमें या अजमतगढ पैलेसमें न ठहर कर, नन्दनसाहु स्ट्रीटमें किसी रईसके मेहमान बनिए, जहाँसे आप अपना कार्य अच्छी तरह कर सकें।

बनारस-म्यूनीसिपैलिटीमें कुल मकानोंकी सख्या ७०,११३ है। उनमें १,९९,९६८ जन बास करते हैं—१,०३,१२६ पुरुष और ९६,७४२ स्त्रियाँ। चौक और दशाश्वमेधके वार्ड (ward) में अधिक घनी बस्ती है। दोनों

जैसे एक बड़ा वृक्ष अपनी ही जातिके, पास उगे हुए कमजोर पौधोंका आहार स्वभावसे ही खुद छीन लेता है और वे बेचारे कमजोर पौधे अपने हिस्सेकी नमी, गरमी और वायु न पाकर पूर्णरूपसे बढने नहीं पाते—समयके पहले ही नष्ट हो जाते हैं, ठीक इसी तरह अधिक धनाढ्य, अपने पड़ोसियोंको आराम देनेकी चेष्टा रखते हुए भी, उनके हिस्सेकी आक्सिजन और सूर्यकी गरमी जिसपर शरीरकी आरोग्यता निर्भर है, खुद हजम कर जाते हैं। (Survival of the fittest) जीवन सग्रामकी बात है। आप जिस कोठीमें ठहरे हैं, देखिएगा, उसमें शुद्ध वायुका अभाव है। नीचेके दो खण्डोंमें धूप ही नहीं पहुँच सकती। चारों ओर दूरतक लगातार ऊँचे मकानोंकी कतार है। मकानोंके छज्जे और सायवान आमने सामने एक दूसरेको छूआ करते हैं, अतएव गलियोंमें प्रकाश और शुद्ध वायुके झोंके आने ही नहीं पाते जो अन्य कमरोंकी वायुको शुद्ध रखनेमें सहायता दे सकें। गलियाँ ऐसी तग हैं कि तीन आदमी कन्धेसे कन्धे मिला कर नहीं चल सकते। मामूली लोगोंके मकानोंकी कौन कहे, करोडों रुपयोंके धनिकोंकी कोठियोंके सामने या बगलमें भी जरासी जगह नहीं देखिएगा। और यदि कहीं किसी कारणविशेषसे, वहाँ, किसी कविराज या कविरत्न महाशयकी पालकी लाकर रख दी जाय, तो बेचारी चार फीटकी चौडी गली, घण्टोंके लिए रास्ता रोके रहे। ऐसी तग गलियोंके रहनेवाले रईसोंके यहाँ कविराज और डाक्टरोंका आगमन प्राय: ही देखा जाता है। इससे यह साफ मालूम होता है कि सम्पत्तिवान् होते हुए भी शुद्ध वायु और प्रकाशके अभावसे ये लोग आरोग्य नहीं रहते।

यहीं एक तहसीलदार महाशयका एक सगीन मकान है। तीन तरफ तङ्ग गलियाँ हैं। दरवाजेके सामनेवाली गली ऐसी तग और अँधेरी है कि दिनको भी टटोल कर चलना पडता है। दरवाजेके भीतर घुसते ही बदबूसे दिमाग परेशान हो जाता है। अधेरा इतना रहता है कि अनजान आदमीको रास्ता ही न मिलेगा और रोजके आने जानेवालोंको भी दरवाजा टटोलना होगा। इसकी बनावट ऐसी है—चौकके तीन तरफ दालान और उनके पीछे अँधेरी कोठरियाँ, दूसरे और तीसरे खण्डमें इसी तरह तीन ओर दालान और कोठरियाँ और एक तरफ सीढी और पैखाना। खुली छत किसी खण्डमें नहीं है कि उसका सुख उस खण्डके रहनेवाले भोग सकें। सबके ऊपर कुछ खुली छत है। नीचेका आँगन और ऊपरकी छत पब्लिक प्रापर्टी है, अर्थात् सब लोग इसे

वार्डोंमें सब मिलाकर १७७७ मकान हैं और उनमें ११६०१ जन बसते हैं*।

इस हिसाबसे फी मकान ६.७ यानी ७ जनसे भी कमकी औसत पड़ती है। ये चार आदमी तो चौमंजिले मकानोंके लिए बहुत कम हैं। भला यहाँ मकानोंकी तकलीफ क्या हो सकती है? यहाँ तो रहनेवाले कम और मकान ज्यादा हैं। मकानदार चाहते होंगे कि कोई मुफ्तमें आकर उनके साथ रहे—घरकी सफाई हुआ करेगी, घरमें चिराग जला करेगा। और शायद पहिले महालके कुंजगली अथवा बंगाली टोलेमें मकानोंका किराया बिलकुल न लिया जाता होगा, यदि लिया भी जाता होगा तो नाममात्रका। चीजोंकी जरूरतके मुताबिक उनकी कदर होती है, दाम चढ़ता है, अतएव मकान और जमीनकी चाह कम होगी। पर जाँच करनेसे दूसरी ही बात मालूम होती है। यहाँ एक एक फुट जमीनके लिए लोग दाम देनेको तैयार हो जाते हैं। जिसका चबूतरा एक फुटसे अधिक चौड़ा न होगा, पर उसके लिए एक लाख रुपया खर्च हुआ। जिस मुआमलतीने यहाँ मकानकी बड़ी तकलीफ बतलाता है। मकानका किराया और जमीनका दाम मामूली लोगोंके आराममें फर्क डाल रहा है। जिस मकानको देखिए, आदमियोंसे खचाखच भरा है। नीचेकी कोठरियाँ जहाँ न रोशनी है और न हवा बल्कि बदबूसे नाक फटी जाती है, भरी पड़ी हैं। लखपती महाजनोंकी गद्दियें ऐसे ही अँधेरे कमरोंमें हैं। उनके लड़के उन्हींमें पढ़ते हैं। यही बड़ी दूकानें हैं। मुनीम गुमाश्ते और दूकान मालिक ऐसे ही कमरोंमें बरसातकी सड़ी गरमी पड़ने पर भी बारह बजे राततक बहीखाते लिखा करते हैं—क्यों? यदि फी घर चार ही आदमी रहते होते तो वे इतना कष्ट क्यों सहते? इसका कारण यही कोठी बता देगी जिसमें आप खड़े हुए हैं। देखिएगा, महल्लेकी खाली जमीन और मकान उस कोठीमें शामिल है। जिसमें सिर्फ एक कुटुम्ब और बाकी भाड़ेमें सारा महल्ला गुजर करता है। गोपालमन्दिरके मकानोंमें ५ जन और इसी तरह अनेक धनी महाजनोंके घरोंमें किसीमें २ या किसीमें ३ जन भलीभाँति रह सकते हैं पर ऐसा न होकर उनमें एक ही एक कुटुम्ब वास करता है और उनके पड़ोसके दूसरे घरोंमें लोग नीचेसे ऊपर तक भरे रहते हैं।

* Census Statistics of Benares 1911.

बिगडी हुई रहेगी, केवल चेहरे पर झोंकेसे लगेगी। बहुतसे कोठीवालोंके कम-रोंमें गैसका पखा दिनरात खुला रहता है। उससे कुछ शान्ति तो जरूर मिलती है पर सचमुच गैससे कमरेकी वायु अधिक खराब होती है, और अन्तमें उससे हानि ही होती है।

यह दशा भारतके उस शहरकी है जो पापनाशी, पवित्र काशीके नामसे भारतवर्षमें विख्यात है, जहाँके लोग सचमुच भारतके अन्य शहरवालोंसे अधिक सफाईसे रहते हैं, जहाँ फर्स्टक्लास म्यूनीसिपैलिटी है, जहाँ विद्याका अधिक प्रचार है और जहाँके अधिकाश जन धनी हैं।

बस, अब कानपुरकी अत्यन्त गन्दी गलियोंमें और दिल्ली या लाहौरके (काशीके मुकाबले) गन्दे लोगोंके मकानोंमें लेजाकर आपका समय लेना व्यर्थ है। केवल कलकत्ते और काशीसे सारे भारतका अन्दाजा हो सकता है।

देहाती मकान जहाँ न म्यूनीसिपैलिटी है, न नालियाँ, न धन, और न विद्या, मकानके नामको बदनाम करते हैं। दरिद्र देहातियोंके कच्चे झोपडोंसे घोडोंके तबेले अच्छे होते हैं। इन मकानोंमें अँगरेज अपने घोडे भी न रहने देंगे, और यदि रक्खें तो शायद उनका अन्त भी जल्द ही हो जाय।—घोडोंकी कौन कहे, उनमें वे अपने सूअर तक न बन्द करेंगे!

पर, ऐसे ही मकानोंमें, २६,५१,१६,८३५ मनुष्य वास करते हैं और इन्हीं झोपडियोंमें १४,४४,०९,२३२ अभागी भारतीय स्त्रियाँ कैद रहती हैं *।

गोहुआँ, जिला आरा।

बाबू गुलाबसिंह १८ गाँवके जमींदार हैं। आपके गाँवमें परदेका बडा कडा रिवाज है। जो बहू या बेटी जितने ही कठिन परदेमें रहे, उसका उतना ही नाम है, उसकी उतनी ही इज्जत है। यहाँ तक कि इस गाँवका बड़प्पन और ठकुराई, उसके घरके परदेके मुताबिक आँकी जाती है न कि धन या विद्यासे। ईश्वरकी दयासे बाबू गुलाबसिंहकी इज्जत गाँवमें सबसे अधिक है। आपके घर यह रिवाज है कि बहुओंको न कोई फरागत जाते देखे, न खाते और न नहाते, और कब तक? जब तक कि वे स्वय घरकी मालकिन न हो जायँ—उनकी सासका परलोकवास न हो जाय!

बूढी सास आदिको आँगनमें धूप लेने आनेके पहले ही बहुओंको नित्यके शौचादि कर्म्मसे निपट कर, अपनी अपनी कोठरियोंमें बन्द हो जाना चाहिए।

* Statistical Abstract, British India, 1899—1909

"Fever as a whole is more fatal to females than males"

"The causes of the loss of females are plague and malaria"

"It appears that mortality is always highest among females"*

अर्थात्—" ज्वर स्त्रियोंके लिए ज्यादा प्राणघातक होता है।"

" स्त्रियोंकी मृत्युका कारण ज्वर और प्लेग है।"

" देखा जाता है कि (भारतमें) स्त्रियाँ सबसे अधिक मरती हैं।"

मृत्युसख्या आदि दिखानेके पहले हम आपको एकबार फिर याद दिलाते हैं कि विरुद्ध आहार-विहारसे रोग उत्पन्न होते हैं और रोगसे मृत्यु हो जाती है। वायुके बिगडनेसे या काफी शुद्ध वायु न मिलनेसे भी रोग उत्पन्न होते हैं और मृत्यु हो जाती है।

हम भलीभाँति दिखा आये हैं कि भारतवर्षमें आहारका और रहनेके स्थानका कैसा बुरा हाल है। विलियम डिग्वी साहब कहते हैं कि "He is born in sickness and dies almost like a beast of the field, with only such rude care as his neighbour's rude ignorance can afford." अर्थात्—" भारतवासी रोगी ही पैदा होते हैं और रोगसे ही जानवरोंकी तरह मर जाते हैं। उनकी चिकित्सा उतनी ही होती है जितनी कि उनके अज्ञानी पडोसी कर सकते हैं।"

अब इस तरह पर जीवन व्यतीत करनेका परिणाम सुनिए। आप कह सकते हैं कि मरना भी क्या कोई आश्चर्यकी बात है? यदि मरे तो क्या हुआ? क्या अन्य देशोंमें लोग नहीं मरते? पर देखना यह है कि भारतवासियोंकी औसत उम्र क्या है, भारतमें क्या अकालमृत्यु अधिक होती है, और क्या यहाँ पर और देशोंके मुकाबले मृत्युकी सख्या अधिक है। +

भारतवासियों और अँगरेजोंकी आयुका मुकाबला करनेसे मालूम होता है कि अँगरेज हमसे १७ वर्ष अधिक जीते हैं। अर्थात् उनकी औसत आयु ४० वर्षकी और हमारी कुल २३ वर्षकी है।

---

* All India Census Report 1911 for U P.

+ देखिए, मृत्युसख्याका विवरण पृष्ठ ११७।

मृत्युसंख्या ।

मृत्यु	पुरुष मरे	स्त्रियाँ मरीं	कुल मृत्यु	फी हजार मृत्यु	ज्वरसे	हैजेसे	प्लेगसे	Remarks
१८९९	३३९४२३६	३०४२१५०	६४३६४१३	३० ०१	४०८५४५५	१६९२३७	१०२३६९	सरकारी रिपोर्टसे ज्ञात होता है कि भारतमें रोग बढ़ते ही जाते हैं। हैजा, प्लेग आदिसे मृत्युसंख्या प्रतिवर्ष बढ़ रही है।
१९००	४४१०७७५	३९२३३८०	८४३४१५५	३८ ९१	४८९१४७७	८०९१७९	७३५६७	
१९०१	३४४२७१२	३१५३९६५	२५९६३७७	२९ ४५	४१८५४५६	२७१२०९	२३४५७२	
१९०२	३६६४०८८	३३९८३२९	७०६२४१७	३१ ६७	४२७३५५९	२२४०७८	४४५२९३	
१९०३	४०२३५८५	३७९५५०८	७८१८१८३	३४ ९१	४४३७२०७	३०९९६७	७०१८९३	
१९०४	३७५७९०५	३६२२८९५	७३८०८०१	३३ ०५	४०७२९७४	१९२३२७	९३८०१८	
१९०५	४११८२४२	३९३३९८८	८०५२२३०	३५.१४	४३९७९२७	४३९९५०	९४०१७४	
१९०६	४०५२५८४	३७९९७४६	७८५२२३०	३४ ७३	४४५२८४२	६९०५२१	३००३५५	
१९०७	४३१४०४९	४४८६५७४	८३९९६२२	३७ १८	४४६४८८१	४०८१०२	११६३७७३	
१९०८	४४६२४५१	४१९०५५६	८६५३००९	३८ २१	५४२४३७२	५९१७२५	११३८८८	

भारतवर्ष और सारी दुनियाकी मृत्युसंख्याका मुकाबला।

सन् १९११ *

नाम देश	मृत्युसंख्या प्रतिहज़ार	नाम देश	मृत्युसंख्या प्रतिहज़ार
बंगाल	३०·३०	न्यू जीलैण्ड	९ ·५
संयुक्त प्रान्त	२९·५	आस्ट्रेलिया	११·२
पंजाब	३ ·७	स्वीडन	१४·१
मध्यप्रदेश	३९·९५	इंग्लैण्ड	१४·६
बम्बई	३३·३२	अमेरिका	१३·५
मद्रास	२१ ९	स्वीट्सलैण्ड	८ १५
बिहार और उड़ीसा	३१ ८	तसमानिया	१ ·७२
आसाम	२८ ६९	विक्टोरिया	१२·६
कुल भारत	२९ १	डेन्मार्क	१३·५
		नार्वे	१४ ८

इससे साफ मालूम होता है कि भारतवर्षमें सारी दुनियासे अधिक मृत्यु होती है।

† सबसे अधिक मृत्युसंख्या प्रति हजार जो निम्नलिखित प्रान्तोंमें हुई—

	१९ ०	१९ ८	पंजाब	११४·३१	१२१·३३
मद्रास	९५·९५	९२·२५	बम्बई	८१·३६	५१·३९
संयुक्त	१३९ ८०	११०·५३	मद्रास	६६ २	० ८

---

* Statesman Year Book, 1918.

† Sanitary Measures in India, 1908-09, page 169

छठा परिच्छेद ।
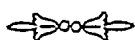
विवाह ।

(क)–विवाह-संस्कार ।

'Nowhere in the whole world, nowhere in any religion, a nobler, beautiful, a more perfect ideal of marriage than you can find in the early writings of the Hindus.'

—Annie Besant

अर्थात् भूमण्डलके किसी देशमें, ससारकी किसी जातिमें, किसी धर्ममें, विवाहसंस्कारका महत्त्व ऐसा गम्भीर, ऐसा पवित्र नहीं है जैसा कि प्राचीन आर्य्यग्रथोंमें पाया जाता है ।

विवाहपद्धातिके सक्रमणका इतिहास * वडा मनोरजक और शिक्षादायक है । उसके देखनेसे यही बात सिद्ध होती है कि मानव जातिकी वाल्यावस्थामें न किसी प्रकारकी राज्यव्यवस्था थी और न समाज या कुटुम्बव्यवस्था । स्त्रीपुरुषोंका सम्बन्ध और माता, पिता, पुत्र आदि नाते, मूलस्थितिमें रहनेवाले मनुष्योंमें उसी तरह अनियमित होते थे जिस तरह कि पशुओंमें पाये जाते हैं । स्त्रीपुरुषोंका नियमित सम्बन्ध राज्यव्यवस्था और सभ्यताके साथ साथ स्थिर होता आया है । †

---

* भिन्न भिन्न देशोंके पुराणग्रन्थोंमें कुछ ऐसी कथायें पाई जाती हैं जिनसे उक्त सिद्धातोंका वहुत मेल मिलता है । श्वेतकेतु और दीर्घतमा ऋषियोंकी कथासे यही वोध होता है कि अति प्राचीन कालमें स्त्रीपुरुषोंका सम्बन्ध अनियमित था ।—

अनावृता किल पुरा स्त्रिय आसन् वरानने ।
कामचारविहारिण्य स्वतन्त्राश्चारुहासिन ॥—महाभारत ।

† Spencer

अनेक देशोंके इतिहाससे पता चलता है कि समाजकी प्रथम अवस्थामें लोगोंकी प्रवृत्ति युद्धकी ओर अधिक थी। विजयी जातिके लोग पराजित जातिवालोंकी स्त्रियोंको पकड़ लाते थे और उन्हें निजकी संपत्ति समझते थे। उनके साथ विवाह करते उन्हें दासी बनाते बेच डालते या दान कर देते थे। स्त्रियोंको कुटुम्बके प्रधान पुरुषोंकी अधीनतामें रहना पड़ता था। समाज और राजव्यवस्थामें ज्यों ज्यों सुधार होता गया त्यों त्यों स्त्रियाँ भी दासत्वसे मुक्त होती गई।

स्वाधीनताके साथ साथ स्त्रियोंकी योग्यता बढ़ने लगी। उनके विषयमें प्रेम आदर और सहानुभूतिके उच्च भाव प्रकट होने लगे। स्वयम्वरकी प्रथा निकली धीरे धीरे विवाहको धार्मिक विधिका स्वरूप प्राप्त हुआ और विवाह एक परम आवश्यक संस्कार माना जाने लगा।

समाजशास्त्रवेत्ता स्पेन्सरका कथन है कि विवाहका मुख्य उद्देश यही है कि इससे समाज और राष्ट्रकी उत्कर्षावस्था चिरकाल तक बनी रहे जिससे दम्पतिका भावी संततिका और देशका कल्याण हो। जिस विवाहसे इन बातोंकी सिद्धि न हो वह समाजके लिए हितदायक नहीं हो सकता। सुप्रसिद्ध विद्वान् अरस्तू (Aristotle) ने कहा है कि 'स्त्रियोंकी उन्नति या अवनतिपर राष्ट्रकी उन्नति या अवनति निर्भर है। यूनानी (Greeks) अपनी स्त्रियोंको दासीके समान नहीं रखते थे किन्तु उन्हें राष्ट्रोन्नतिका सहायक समझते थे—उनकी शारीरिक मानसिक और आत्मिक उन्नतिमें दत्तचित्त रहा करते थे। यही कारण था कि यूनानी बारबेरियन जातिको अपने अधीन कर सके।

इतिहासकार गिबन लिखता है कि 'रोमन राष्ट्र अपनी स्त्रियोंके साथ ग्रीक जातिकी अपेक्षा अधिक उत्तम बर्ताव करता था। इसी कारण रोमन राष्ट्र ग्रीससे अधिक बलवान् हो गया और ग्रीकको रोमके सम्मुख सिर झुकाना पड़ा।"

यह एक प्रसिद्ध बात है कि रोमने एक छोटेसे शहरसे बढ़ते बढ़ते सारी दुनिया पर अपना प्रभुत्व फैला लिया। जिस तरह रोमराष्ट्रकी उन्नति विस्मयजनक है उसी तरह उसकी अवनति भी अत्यन्त हृदयद्रावक है। सुयोग्य टैसिटस इतिहासकार बतलाता है कि 'रोमन जातिके उत्कर्षके समय रोमन स्त्रियोंमें पातिव्रत्य स्वावलम्बन स्वार्थत्याग धैर्य आदि जो अनेक सद्गुण देख पड़ते थे वे सब उसकी अवनतिके समय नष्ट हो गये थे। इन सबके गुणोंके

स्थानपर दुराचार, अज्ञान, कलह आदि दुर्गुणोंका साम्राज्य स्थापित हो गया था *। इसी कारण जर्मन जातिने रोमन लोगोको दवा डाला। वनोंमें रहनेके समय भी जर्मनोंकी कुटुम्बसंस्था वहुत अच्छी थी।"

भारतका इतिहास उठाकर देखनेसे शरीर कॉप उठता है और ऑखें वन्द हो जाती हैं। इस अभागे देशकी सुदशा तथा उन्नतिके दिन, अति प्राचीन भूतकालकी अँधेरी छायामें ढँक से गये हैं। वालविवाह और स्त्रियोंकी पराधीनताकी ऐसी गिरी हुई दशा सभ्य ससारमें किसी भी देशकी नहीं है। स्वभावत भारत ही एक ऐसा गया गुजरा देश पृथ्वीपर नजर आता है जो निरन्तर इतने दिनोसे विदेशियोंका शिकार वनकर पददलित किया जा रहा है। महाभारत होनेसे ही भारत गारत नहीं हुआ वल्कि भारत गारत हो चुका था इस लिए महाभारत हुआ।

विवाह-सशोधन तथा अन्य सामाजिक सुधारोंका प्रस्ताव करनेके लिए हमें इस वात पर विचार करना होगा कि वर्तमान समयमें स्त्रियोकी क्या दशा है, यह दशा कवसे चली आ रही है, प्राचीन और अर्वाचीन विवाहपद्धतिमें क्या दोष या गुण उपस्थित हो गये हैं, आदि।

---

* महाभारत होनेके कुछ दिनों पूर्वसे रोमसाम्राज्यके समान भारतमें भी स्त्रियोंकी अवनतिकी झलक दीखती है। (१) कुमारीपनमें गङ्गादेवी (वादको भीष्मकी माता) का पुत्रविसर्जन, (२) अपने सौतेले भाई विचित्रवीर्यके विवाहके लिए काशीनरेशकी पुत्रियोको—अम्वा, अम्विका और अम्वालिकाको—भीष्मका वलपूर्वक हरना और उनका अनादर, (३) धीवरकी कुमारी कन्या सत्यवतीके साथ महर्षि पराशरका सम्भोग, वेदव्यासका जन्म और वादको सत्यवतीका राज-कुलमें व्याह, (४) कुन्तीके कुमारीपनमें कर्णका जन्म और नदीमें वहाया जाना, इस घटनाका छिपाना और फिर राज-कुलमें विवाह, (५) द्रौपदीका पाँच पुरुषोंकी एक साथ ही पत्नी वनना, आदि अनेक घटनायें महान् राजाओं और ऋषियोंके घरोंकी हैं। सामान्य प्रजाकी क्या दशा रही होगी इसका पाठक स्वय अनुमान कर सकते हैं।

(ख)—वैदिक समय ।

देवदत्तां पतिर्भार्यां विन्दते नेच्छयात्मनः ।
तां साध्वीं बिभृयान्नित्यं देवानां प्रियमाचरन् ॥

हिन्दू दम्पतीका सम्बन्ध ईश्वरीय कार्य माना जाता है। पतिका विश्वास है कि सच्चिदानन्दने उसकी पत्नीको उसीके लिए उत्पन्न किया है। हिन्दू पत्नीको पक्का विश्वास रहता है कि पति एक होता है—एक ही बार होता है—पति-पत्नीका साथ जन्म-जन्मान्तरके लिए स्थिर होता है। हिन्दू विवाहसम्बन्ध ईश्वरदत्त है वचन और धर्मकी सुदृढ़ जंजीरोंसे जकड़ा है। यह सम्बन्ध इस लोक तथा परलोक दोनोंहीके लिए होता है।

हिन्दू दम्पतीका सम्बन्ध सांसारिक नहीं बल्कि धार्मिक है। हिन्दू विवाह करता है पितृऋणसे मुक्त होनेके लिए। विषयवासनाओंकी तृप्तिके लिए हिंदू विवाह नहीं करता। पशुओंकी तरह हरवक्त मनमाना सम्भोग करना उसका धर्म नहीं है। इसके लिए नियम है जिसके अनुसार जीवनकालमें बहुत थोड़े दिन उसे विषय-भोगके लिए प्राप्त होते हैं। वे भी किसी अन्य प्रयोजनसे नहीं केवल धर्मकी आज्ञा पालन करनेके लिए:—

प्रजनार्थं स्त्रियः सृष्टाः सन्तानार्थं च मानवाः ।
तस्मात्साधारणो धर्मः श्रुतौ पत्न्या सहोदितः ॥

हिन्दू-विवाहसे यह अभिप्राय है कि दो योग्य आत्माओंको एक सम्पूर्ण रूपमें लानेके लिए संयुक्त कर दिया जाय; जिससे व्यक्तियोंका सुख तथा स्वास्थ्य बढ़े और उनके द्वारा मनुष्यमात्रकी सामाजिक उन्नति हो।

हिन्दू विवाह-संस्कार एक गम्भीर प्रतिज्ञा है जिससे स्त्री-पुरुष विद्वानोंके सम्मुख ईश्वरको साक्षी देकर अति पवित्र भावसे जीवनपर्यन्तके लिए एक हो जाते हैं। सामाजिक दृष्टिसे इस एकताका अभिप्राय यह होता है कि जो कुछ पुरुषका है वह स्त्रीका हो जाता है और जो कुछ स्त्रीका है—तन मन धन सब पुरुषका हो जाता है।

वेदोंमें पुरुषको 'भासन्तोऽसवः' अर्थात् परम उत्साहप्रद तथा उज्ज्वल प्रकाश करनेवाली सूर्यकी किरणोंसे उपमा दी गई है और स्त्रीको 'चित्रमघाः' प्रकाश देनेवाली रंगोंके उत्पादन करनेवाली तथा सुन्दर रश्मियोंसे उपमा दी गई है। वेदोंमें स्त्रीको गृही सिनीवाली मही तथा प्रेमका केन्द्र कहा है।

जैसे प्रजापतिने प्राण और रयी द्वारा सृष्टिको रचा, वैसे ही स्त्री और पुरुषकी दो पवित्र आत्माओंके एक होजानेसे मनुष्य-जगतकी स्थिति तथा वृद्धि होती है। बुद्धिपूर्वक तथा सच्चे प्रेमके पवित्र विवाह-संस्कारसे मनुष्यमात्रको लाभ पहुँचता है और समाजका हरतरह कल्याण होता है।

समञ्जन्तु विश्वेदेवाः समापो हृदयानि नौ।
स मातरिश्वा संधाता समुदेष्ट्री दधातु नौ ॥

अर्थात्—हम दोनो, इन विद्वानोंके सामने, जो इस संसारको देखनेके लिए उपस्थित हुए हैं, प्रतिज्ञा करते हैं कि हमारे हृदय, दो प्रकारके जलोंके सदृश मिल जावेंगे। जीवनके लिए जैसे प्राणवायु है, सृष्टिके लिए जैसे सृष्टि-कर्ता हैं, उपदेशके लिए जैसे श्रोतृगण हैं, वैसे ही हम पति-पत्नी, एक दूसरेके लिए प्रिय होंगे।

सिनीवालि पृथुष्टुके या देवानामसि स्वसा।
जुषस्वं हव्यमाहृतं प्रजां देवी दिदिड्ढिनः ॥

यजुर्वेद ३४-१०।

अर्थात् हे कुमारियो! तुम ब्रह्मचर्यव्रतका पूर्णतया पालन करके, सारी उपयोगी विद्याओंको सीखकर अपनी इच्छानुसार और अपनी परीक्षासे उत्तम वरोंको अपना पति चुनो और उनके साथ साथ आनन्दपूर्वक गृहस्थाश्रममें प्रवेश कर उत्तम प्रजाको उत्पन्न करो *।

अन्य वेदोंमें भी विवाह-सम्बन्धी ऐसे ही आदेश मिलते हैं।

ब्रह्मचर्येण कन्या ३ युवान विन्दते पतिम्।
अनड्वान् ब्रह्मचर्येणाश्वो घास जिगीषति ॥

अथर्ववेद का० ११-१८।

जब वह कन्या ब्रह्मचर्य्याश्रमसे पूर्ण विद्या पढ चुके तब अपनी युवावस्थामें पूर्ण युवा पुरुषको अपना पति करे। इसी प्रकार पुरुष भी सुशील धर्मात्मा पत्नीके साथ प्रसन्नतासे विवाह करके दोनों परस्पर सुखदु खमें सहायकारी हों। क्यों कि अनड्वान् अर्थात् पशु भी जो पूरी जवानी पर्यन्त ब्रह्मचर्य अर्थात् सुनियममें रक्खा जाय तो अत्यन्त बलवान् होकर निर्बल जीवोंको जीत लेता है।

* यजुर्वेद-भाष्य—स्वामी दयानन्द सरस्वतीकृत।

उस वैदिक समयमें जब भारतकी विद्या बहुत बढ़ी चढ़ी थी जब उपनिषद्, न्याय और दर्शनशास्त्र लिखे जा रहे थे जब धर्मशास्त्र और वैदिक मन्त्रोंकी रचना हो रही थी, जब भारतकी आत्मविद्या पूर्णताके सबसे ऊँचे शिखरपर पहुँच गई थी, स्त्रियाँ पुरुषोंकी बराबरी करती थीं; उस समय स्त्री-पुरुषमें समानताका सद्व्यवहार था। स्त्री और पुरुषोंके सामाजिक और धार्मिक अधिकार बराबरके थे।"

In that age of splendid achievements and lofty spirituality women were equals of men—trained and cultured and educated to the highest point.

"उस महान् उन्नतिके समय स्त्रियाँ पुरुषोंके बराबर पढ़ी लिखी हुआ करती थीं उनकी योग्यता पुरुषोंके समान हुआ करती थी और उनकी शिक्षा पुरुषोंके समान बड़े ऊँचे दर्जेकी हुआ करती थी।

इतिहाससे पता चलता है कि वैदिक समयमें स्त्रियोंकी ऐसी अधोगति नहीं थी जैसी आजकल है। आज स्त्रियाँ शूद्र कही जाकर मानसिक तथा धार्मिक उन्नतिसे वंचित रहती हैं। वे वेदमन्त्र सुन तक नहीं सकतीं पर वैदिक समयमें बालिकायें वेदमंत्र रचती थीं जिनका आज पुरुष पाठ करते हैं। हाय! हमारी बहनें और कन्यायें उन वेदमंत्रोंका अध्ययन नहीं करने पातीं जिन्हें हमारी माताओंने रचा है।

"अब स्त्रियाँ मानसिक और धार्मिक उन्नतिसे वंचित रक्खी जाती हैं वे सूत्र नहीं धारण कर सकतीं उनके लिए सब धार्मिक संस्कारें बन्द कर दिये गये हैं।"

पर हारीतने अपने धर्मशास्त्रमें लिखा है कि

द्विविधाः स्त्रियः ब्रह्मवादिन्यः सद्योवध्वश्च तत्र ब्रह्मवादिनीना-
मुपनयनमग्नीन्धनं वेदाऽध्ययनं स्वगृहे भिक्षाचर्या।

अर्थात्—दो प्रकारकी स्त्रियाँ होती हैं ब्रह्मवादिनी और सद्योवधू। इनमेंसे ब्रह्मवादिनी स्त्रियोंके लिए, उपनयन अग्नीन्धन वेदाध्ययन और निज घरमें *भिक्षाचर्या विहित है। सद्योवधू स्त्रियोंके लिए ऐसी विधि नहीं है।* इससे साफ जाहिर है कि स्त्रियोंका भी धार्मिक संस्कार पुरुषोंकी तरह होना चाहिए।

" पूर्वकालमें बालिकायें उपनयन-संस्कारकी अधिकारिणी थीं। वे वेद पढ सकती थीं और गायत्री जप सकती थीं। पिता, पिताके भाई या बालिकाके भाईको पढानेकी आज्ञा थी, इनके अतिरिक्त कोई अन्य पुरुष उन्हें नहीं पढा सकता था *। "

कन्याऽप्येवं पालनीया शिक्षणीयाऽतियत्नतः।

अर्थात्—कन्याको भी पुत्रकी तरह यत्नपूर्वक पालना और पढाना लिखाना चाहिए।

पुरा कल्पे तु नारीणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते। †
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा॥

अर्थात्—प्राचीन मर्यादानुसार स्त्रियोंका भी उपनयन होता था, उन्हें गायत्रीका उपदेश दिया जाता था और वे वेदोंको भी पढती थीं।

" वैदिक समयमें स्त्रियाँ विवाह करनेके लिए मजबूर नहीं की जाती थीं। मानसिक और धार्मिक योग्यतानुसार वे बालब्रह्मचारिणी रह सकती थीं और मोक्षकी प्राप्तिके लिए सन्यास लेकर ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर सकती थीं ‡। "

बालब्रह्मचारिणी सुलभा, ब्रह्मविद्या पर सम्वाद करते हुए राजर्षि जनकसे यों कहती है —

साहं तस्मिन्कुले जाता भर्तर्यसति मद्विधे।
विनीता मोक्षधर्मेषु चराम्येका मुनिव्रतम्॥

अर्थात्—" मैं क्षत्रिय वंशमें उत्पन्न हुई हूं। मुझे अपने गुण कर्म और स्वभावके अनुसार योग्य पति नहीं मिला, इसी लिए विनीत भावसे मैंने मोक्षकी प्राप्तिके लिए सन्यास ले लिया है। +"

गार्गी और अन्य अनेक ब्रह्मचारिणीयोंने जीवनभर विवाह नहीं किया। उन्हें वैदिक शिक्षानुसार पितृ-सम्पत्तिका भाग मिला था और धार्मिक शिक्षा मिली थी। पवित्र भावोंका सचार हो जानेसे वे अपने आपको देश और मनुष्यमात्रकी सेवाके लिए समर्पित कर सकती थीं। वैदिक समयमें विवाह-

---

* 'Wake up India,' page 55, by Annie Besant

† सत्यार्थविवेक—दयानद (सनातनधर्म्मी)।

‡ 'Wake up India' by Annie Besant

+ K shastri of Kashi

अध्ययनीय ऐसा सुन्दर आदर्श मिलता है कि जिसे देखकर भारतकी प्राचीन सभ्यताका स्त्रियोंके आदरका और उनके अतुल गौरवका पता चलता है। भारतकी नारियोंके लिए वही समय सर्वोत्तम था। उन्हें सृष्टिके नियमोंके खोजनेका अधिकार था। वे स्वतन्त्रतापूर्वक साहित्य तथा विज्ञानको पढ़ती थीं। वे वेदोंके अध्ययनमें संलग्न रहती थीं। व ब्रह्मविद्यामें निपुण थीं। वे राजनीति जानती थीं और पुरुष उनसे सलाह लेते थे। वे रणक्षेत्रमें जाकर युद्ध तक करती थीं। सारांश यह कि प्राचीन समयमें स्त्रियोंके लिए किसी कार्यके करनेमें कोई रुकावट नहीं थी; जो अधिकार पुरुषोंके थे वे ही स्त्रियोंके भी थे। देखिए:—

१ ब्रह्मचारिणी गार्गीने याज्ञवल्क्य ऋषिसे कैसा अच्छा शास्त्रार्थ किया था। उसने उच्चशिक्षा और गहरी ब्रह्मविद्याके ज्ञानसे तथा अपनी आश्चर्यजनक योग्यतासे ऋषिवर याज्ञवल्क्यकी ज़बान बन्द करके उन्हें परास्त कर दिया था।

२ मैत्रेयीने गृहस्थाश्रम व्यतीत होनेपर मानसिक और धार्मिक योग्यतापर विचार करके अपने पतिदेवतासे ब्रह्मज्ञानके उपदेशके लिये प्रार्थना की और उसे वह ज्ञान दिया गया।

३ महारानी कैकेयी रणक्षेत्रमें जाकर लड़ी थीं।

४ महारानी गान्धारी राजाओं और श्रेष्ठ राजकर्मचारियोंकी भरी सभामें—जहाँ विचार हो रहा था कि सन्धि हो या युद्ध—उस गम्भीर राजनैतिक विषयपर विचार करनेके समय जिसपर समस्त भारतकी जय या क्षय निर्भर थी—इसलिए बुलाई गई थीं कि वे अपने पुत्र दुर्योधनको इस राजनैतिक विषय पर उपदेश देकर उन्हें युद्ध करनेसे रोकें। और सचमुच ही बड़ी योग्यतासे उन्होंने उपदेश दिया था।

क्या आज भी हमारी मातायें गम्भीर राजनैतिक विषयोंपर विचार कर सकती हैं? क्या आज आप किसी लड़केको असावधानीसे राजनैतिक भूल करते देखकर उसकी मातासे सदुपदेश करा कर उसे हानिसे बचा सकते हैं? या आप शर्मसे सिर झुकाकर कहेंगे कि "भला स्त्रियोंको राजनीतिसे क्या मतलब?

Woman howe er lo ng, self-sacrificing & sincere, has but l ttle power in the council of men. You cannot appeal to her beca se you do not care to share her feelings

in Politics or in the affairs of country She is not born ignorant, you have rather bred her ignorant

अर्थात्—स्त्रीजाति कितनी ही पतिव्रता, स्वार्थत्यागिनी तथा सत्यवती क्यों न हो, परन्तु मनुष्यसमाजमें उसका कोई सम्मान नहीं है। आप उससे राजनैतिक तथा देशसम्बन्धी कामोंमें सलाह लेना नहीं चाहते। क्योंकि आपको उससे कुछ हार्दिकता नहीं है। वह जन्मसे अज्ञान नहीं है परन्तु आपने उसे शिक्षण न दे अज्ञान बना रक्खा है।

महाराणी कुन्तीने युद्धके समय कहा था, "क्षत्राणियां समरमें लडनेहीके लिए गर्भ धारण करके पुत्र उत्पन्न करती हैं, इस लिए जाओ और युद्ध करो।" एक कुन्ती ही इस तरहकी वीर क्षत्राणी नहीं थी, अनेक स्त्रियां उस समय इसी रसमें पगी थीं। यह ईस्वी सन्से ३,००० वर्ष पहलेकी या पश्चिमीय विद्वानोंके हिसाबसे १५०० वा १००० वर्ष ईस्वी सन् पूर्वकी बात है।

रूस-जापान-युद्धके समय एक जापानी स्त्रीके कुल पुत्र लडाईमें मारे जानेपर वह रोती हुई पाई गई। लोग उसे दिलासा देन लगे और उसके सब पुत्रोंकी मृत्युपर दु ख प्रकट करने लगे। इसपर उस विदुषीने घूमकर लोगोंसे कहा कि "मैं इसलिए नहीं रो रही हूँ कि मेरे सब पुत्र मारे गये, मुझे रुलाई इस लिए आ रही है कि मेरे और पुत्र नहीं हैं जिन्हें मैं मातृसेवाके निमित्त भेट कर सकू"। *

कुन्ती ऐसी ही माता थी, द्रौपदी ऐसी ही पत्नी थी, उत्तरा ऐसी ही बहिन थी और शिखण्डी ऐसी ही वीर कन्या थी। याद रहे कि शिखण्डीने पुरुष वेष धारण करके महाभारत जैसे भयकर युद्धमें भीष्म, कर्ण और द्रोणाचार्यके सम्मुख घोर सग्राम किया था।

'Two things are closely joined together, the education, the training and development of women, and the greatness of a nation When these women were the Indian Mothers, heroes and rishis were born, and now out of child-mothers cowards and social pigmies come forth—cause and effect. Still in your power to change '

अर्थात्—दो बातोंका एक दूसरेसे घनिष्ठ सम्बध है—(१) स्त्रियोंकी शिक्षा, मानसिक, धार्मिक तथा शारीरिक उन्नति और (२) किसी जातिकी बढ़ाई। जब भारतमें योग्य मातायें थीं तब वे रत्न-गर्भा होकर योद्धा और

अविरल उत्पन्न करती थीं; पर अब मूर्ख बाल-माताओंसे प्रायः कायर और कलंकित कुपुत्र उत्पन्न होते हैं। कारण और कार्य !—कारणको सुधारकर कार्य सिद्ध करना अब भी हमारे हाथ है।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥

जहाँ स्त्रियोंका सत्कार होता है वहाँ ही देवताओंका वास होता है जहाँ इनका मान नहीं वहाँकी सभी क्रियायें निष्फल सिद्ध होती हैं।

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् ।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्धते तद्धि सर्वदा ॥

जिस गृहमें स्त्रियाँ दुःखित हैं वह शीघ्र नष्ट भ्रष्ट हो जाता है और जहाँ वे सुखी हैं वहाँ कल्याण और आनन्द होता है।

संतुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च ।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम् ॥

जहाँ पुरुषसे स्त्री और स्त्रीसे पुरुष संतुष्ट हो उसी घरमें निश्चित ही कल्याणका निवास होता है।

(ग)—विवाह-संस्कारकी अधोगति।

'The positive checks to population are extremely various, and include every cause whether arising from misery evil custom, immorality or vice which in any degree contributes to shorten the natural duration of human life. —M lthus.

जनसंख्याकी विपरीत वृद्धि अनन्त दैवीकारणोंसे रुकती है। जिस किसी भी कारणसे मनुष्यके स्वाभाविक दीर्घायु होनेमें बाधा पड़े—बाधक कारण चाहे दरिद्रता हो चाहे बुरे रीतिरिवाज और चाहे व्यभिचार या व्यसन—उसकी गणना दैवी कारणोंमें की जायगी।—माल्थस।

उस परम पुनीत वैदिक समयसे अत्यन्त पतित कालमें भारत प्रवेश कर रहा है। इस समय घोर अंधकार फैलना आरंभ हुआ अविद्याने भारतको अन्ध किया और भारतके गौरवको धूलमें मिला दिया। नाना प्रकारकी बाधायें और उपद्रव उपस्थित हुए और भारतको गारत करने लगे। स्त्रियोंके आदर

सत्कार और स्वतन्त्रतामें कमी शुरू होने लगी। पुरुषोंने निर्दयता और निष्ठु-रतासे उनका अधिकार छीनना शुरू किया। उन्हें शूद्रकी निन्दनीय पदवी दी गई। मानसिक, धार्मिक या आत्मिक उन्नतिसे वे वञ्चित की गई। पवित्र संस्कार, यज्ञोपवीत, गायत्री, वेद-पाठ आदि सबसे अच्छे मार्ग उनके लिए बन्द कर दिये गये। वेदमन्त्रोंके अर्थ बदल गये दिये, नये नये ग्रन्थ गये रचे, नई नई स्मृतियाँ बनाई गई, अनेक नये नये श्लोक मनुस्मृतिमें जोड़ दिये गये और कलंकित बाल-विवाहकी कुरीति भारतमें फैल गई।

वेदोंमें चुननेका अधिकार स्त्रीजातिको दिया गया है। प्राचीन इतिहास और स्वयम्वरसे भी यही बात पुष्ट होती है। सीता, दमयन्ती, रुक्मिणी, द्रौपदी और अन्य अनेक देवियोंके विवाह स्वयम्वरकी ही मर्यादानुसार हुए थे। हमारी अधोगतिके मन्द दिनोंमें भी संयोगिताका विवाह पृथ्वीराजके साथ स्वयम्वरकी मर्यादानुसार हुआ था। (यह ईस्वी सन् ११८२ अर्थात् अभीसे कुल ६३४ वर्ष पहलेकी बात है।) स्वयम्वर तब ही रचाया जा सकता है, जब कन्याकी मानसिक तथा शारीरिक उन्नति हो, और वह अपने गुण, कर्म, तथा स्वभावानुसार जीवनयात्राके निमित्त अपने साथीको चुनने और वरनेके योग्य बन गई हो।

त्रिंशद्वर्षोद्वहेत्कन्यां हृद्यां द्वादशवार्षिकीम्।
त्र्यष्टवर्षोऽष्टवर्षां वा धर्म्मे सीदति सत्वरः॥

मनुके उक्त श्लोकके अनुसार ३० वर्षका पुरुष बारह वर्षकी कन्याको और २४ का ८ वर्षकी कन्याको व्याहे। परन्तु-" एक झरनेसे एक ही समय मीठा और खारा पानी एक साथ नहीं निकल सकता। अतएव मनुष्योंमें सबसे ज्ञानी स्मृतिकार भगवान् मनु यह नहीं लिख सकते कि ब्रह्मचर्यव्रत पूर्ण करके २४ वर्षका पुरुष ८ वर्षकी कन्यासे और ३० वर्षका पुरुष १० वर्षकी कन्यासे विवाह करे। मुझे विश्वास है कि यह मनुजीकी आज्ञा नहीं है। धूर्त लोग अपना काम साधनेको श्लोक घटा बढा देते हैं। अतएव, किसी औरने यह श्लोक मनुस्मृतिमें लिख दिया होगा *।"

बौधायनने सबसे पहले विवाहकाल-मर्यादाको शिथिल किया। उन्होंने श्लोकका अर्थ किया कि—

* Mrs Besant

त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत कुमार्यृतुमती सती ।
ऊर्ध्वं तु कालादेतस्माद्विन्देत सदृशं पतिम् ॥—मनु ९-९ ।

अर्थात्— कन्या रजस्वला होनेके अनन्तर तीन वर्ष तक प्रतीक्षा करे। यदि उसके माता पिता उस समय तक उसका विवाह न करें, तो वह स्वयं अपना विवाह करनेमें स्वतन्त्र है।" पर इतनी दया की कि यह भी लिख दिया कि कन्या ब्रह्मचारिणी तथा 'नग्निका' हो। बौधायनके मतसे जब कन्या ११ वर्ष या इससे अधिक आयुकी हो और पुरुषसे लज्जा कर सके उस समय उसे नग्निका कहेंगे। सत्यव्रत और दीक्षितने भी यही अर्थ किया है।

सातवीं शताब्दीके लगभग बने हुए अमरकोषमें नग्निकाका अर्थ अनागतार्तवा अर्थात् जिस कन्याका अभी तक रजोदर्शन नहीं हुआ हो किया है। इसके अनुसार लगभग १२ वर्षकी कन्या नग्निका हुई।

प्राप्ते तु द्वादशे वर्षे यः कन्यां न प्रयच्छति ।
मासि मासि रजस्तस्याः पिता पिबति शोणितम् ॥ २२ ॥

—यमस्मृति ।

अर्थात्—यदि १२ वर्षकी कुमारी कन्या घरमें बैठी रहे तो उसका पिता उस कन्याका रज पीता है।

माता चैव पिता चैव ज्येष्ठो भ्राता तथैव च ।
त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम् ॥ १७ ॥

—संवर्तस्मृति ।

अर्थात्—पिता माता और ज्येष्ठ भ्राता ये तीनों नरकमें जाते हैं यदि वे कन्याको रजस्वला होता हुआ देख लें।

अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी ।
दशवर्षा भवेत्कन्या अत ऊर्ध्वं रजस्वला ॥ ११ ॥

—संवर्तसंहिता ।

अर्थात्—आठ वर्षकी कन्या गौरी और नौ वर्षकी कन्या रोहिणी कहलाती है। दस वर्षमें उसे कन्या कहते हैं और दस वर्षके अनन्तर उसका नाम रजस्वला हो जाता है।

उद्वहेदष्टवर्षामेव धर्मो न हीयते ॥ ८७ ॥ म० ९ ।

—यमस्मृति ([illegible]) ।

अर्थात्—आठ वर्षकी कन्याका विवाह कर दे, इसमें धर्मकी कुछ भी क्षति नहीं होती।

" विवाहप्रशस्तकालमाह, सप्तेति . । "

—निर्णयसिंधु परिच्छेद ३ ।

अर्थात्—विवाहका उत्तम समय सात वर्ष है। यह समय गर्भकी तिथिसे गिनना चाहिए। इस प्रकार जन्मकी तिथिसे ६ वर्ष और ३ मासकी आयु ही विवाहका ठीक समय है।

स्मृतियोंकी संख्या १८ बताई जाती है, किन्तु प्रचलित स्मृतियोंकी संख्या कहीं अधिक है। इनमेंसे बहुतोंमें उस समयकी आवश्यकतानुसार पुत्रियोंके विवाह-कालको घटानेहीकी चेष्टा की गई है। दुर्भाग्यवश इन स्मृतियोंकी रचना उस समय हुई जब हिन्दू धर्म्म बहुत गिरी दशाको पहुँच चुका था और देशमें अविद्या और अराजकताका घोर अंधकार छा गया था।

अब हमें देखना चाहिए कि इस बालविवाहका बुरा रिवाज देशमें क्यों फैलाया गया, इस कुरीतिकी ओर स्मृतिकार क्यों झुके, आखिर इसकी जरूरत ही क्या थी? बिना जरूरतके कोई चीज पैदा नहीं की जाती। रीतिसे ग्रन्थरचयिता पैदा होते हैं न कि ग्रन्थरचयितासे रीति।

* इस विनाशकारी और अधम रीतिके तीन प्रधान कारण हुए—

१ महाभारतका युद्ध और देशमें हर तरफ लड़ाई झगड़ोंका होना।

२ विदेशियोंका लगातार आक्रमण करना और प्राय विजयी होना।

३ स्त्रियोंका आदर्श गिरना—उनके मानसिक और आत्मिक अधिकारोंका छिन जाना।

जब देशमें घोर अंधकार फैलने लगा, खुदगर्जी और अविद्याने जब जड़ पकड़ ली, छोटे छोटे जमींदार राजा बन बैठे और आपसहीमें एक दूसरे पर हाथ साफ करने लगे, जब किसीकी जान और मालके बचनेका कोई ठीक प्रबंध न रह सका तब, भारतमें यह जरूरत जान पड़ी कि बालिकाओंको ब्याह देकर पिताके अतिरिक्त उनके लिए नया संरक्षक विवाह द्वारा बना दिया जाय। यदि बालिकाओंके पिता रणभूमिमें प्राणत्याग करें तो वे अनाथ न हो जायँ, अपने नये घर (सुसराल) की शरण ले सकें।

* 'Wake up India' by Annie Besant.

दुर्भिक्षपीड़ित भारतवासी।

दुर्भिक्षपीड़ित भारतवासी।
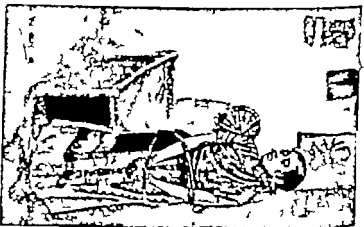
(देशदर्शन पृ० ९१)

आठ वर्षकी बाल वधू।

आठ वर्षकी ब्याही हुई माता।
आज इस अभागे देशमें बालपत्नियोंकी संख्या
एक करोड़से अधिक है। (देखिए पृ० १११)

इस निन्दनीय दूपित विवाहप्रणालीका निश्चित परिणाम भारतमें विधवाओंकी अधिकता है । इंग्लैण्ड और जर्मनी दोनों देशोंकी विवाहित स्त्रियोंकी जो सख्या है, उससे अधिक भारतमें विधवाओंकी सख्या है । +

स्त्रियोंके विवाहकी अवस्था घटनेके साथ पुरुषोंके भी विवाहका समय दिन दिन कम होने लगा और लोग मनमाना विवाह करने लगे । जैसा जिसको अच्छा मालूम हुआ वैसा ही विवाह उसने किया । आश्चर्य तो यह है कि इस बीसवीं शताब्दिके पढ़ लिखे लोग भी प्राचीन वैज्ञानिक नियमको छोड कर निन्दनीय प्रकृतिविरुद्ध विवाह किया करते हैं ।

बाबू अमीचन्द और बाबू घनश्यामदास कालेजके सहपाठी मित्र हैं । बाबू अमीचन्दको एक लडका है और घनश्यामदासको एक लडकी । दोनों मित्रों-ने कालेजमें ही तै कर लिया है कि उनके बच्चोंका विवाह एक साथ होगा । बडी धूमधामसे १२ वर्पके केदारनाथ १० वर्पकी चन्द्रमुखीके साथ व्याहे गये । बाबू अमीचन्द इसी साल M A की परीक्षामें उत्तीर्ण होकर डिप्टी कलक्टरीके पद पर नियुक्त हुए हैं । केदारनाथका शुभ विवाह हुए कुल अढ़ाई वर्ष वीते हैं । आज फिर घरमें मङ्गलोत्सव हो रहा है । महफिलमें काशीकी नामी नामी रण्डियाँ आई हैं । सारे शहरमें धूम मच गई है । लोग बाबू अमीचन्दके भाग्यकी सराहना कर रहे है । स्त्रियाँ ईर्पासे गुडियासी अति सुन्दरी चन्द्रमुखीको देखकर कहती हैं—"परमेश्वर तू धन्य है । जिस पर परमेश्वर प्रसन्न होता है, उसे इसी तरह हर तरह सुख सम्पत्ति देता है । देखो न कहाँ चन्द्रमुखी और कहाँ गोद भराई ! अभी तो अमीचन्दकी पतोहू लडकीसी लगती है, पर वाह रे भाग्य ! वाह रे ईश्वरकी देन कि

१–२ वर्ष	१७,७५३	८५६
२–३ ,,	४९,७८७	१,८०७
३–४ ,,	८७,५०८	४,७५३
४–५ ,,	१,३४,१०५	९,२७३
[illegible] ,,	२२,१९,७७८	९४,२७०
१०–१५ ,,	६५,५५,४२८	२२३,०८२

+ भारतमें सब मिलाकर २६४,२१,२६२ विधवायें है । All-India Census Report, 1911

उसकी गुड़ियासी बहूको लड़का होनेवाला है । " बाबू अमीचन्दके माता पिता दोनों जीवित हैं । वे आज फूले नहीं समाते । अभी पद्मोहूकी आयु ११ वर्षसे कम ही है और दिन पूरे हो गये !

आज तो दिनसे घरमें डाक्टरोंकी भरमार है । सारे शहरकी बड़ी बूढ़ी सयानी स्त्रियाँ घरमें खचाखच भरी हैं । सब माथे पर हाथ रखकर उदास होकर बैठी हैं । बाबू अमीचन्द भी तार पाते ही डाकगाड़ीसे रवाना हो गये । डाक्टरोंसे काम न चलनेपर मिसअहमद बुलाई गई और उसके कहनेपर सिविल सर्जन भी उपस्थित हुए । कई और डाक्टर भी बैठे हुए राय मिला रहे हैं पर चन्द्रमुखीकी आह एक मिनटको नहीं रुकती । केदारनाथ बूढ़ी स्त्रियोंसे धक्कमधुक्का खाते जाने पर और बेहया कहे जाने पर भी बहूके पास जानेसे नहीं मानता । वह अपना कमरा और बहूका कमरा एक किये है । लाख कोशिश करने पर भी उसकी आँखोंसे आँसुओंकी बड़ी बड़ी बूंदें टपक पड़ती हैं । वह दूसरे कमरेमें बार बार प्रार्थना करता है— हे ईश्वर ! तू मेरी जान भले ही ले ले पर उसको बचा ! डाक्टरोंने निश्चय कर लिया कि बिना आपरेशनके काम न चलेगा और यदि वह इसी समय क्लोरोफार्मसे बेहोश नहीं कर दी जायगी तो बस अब उसके प्राण न बचेंगे । सिविल सर्जन साहब बहादुर आदि कैसे खोलते गये, चीर आये । बेचारी बालिका बेहोश कर दी गई । बेहोशीके पहले चन्द्रमुखीने गद्गद स्वरसे केदारनाथकी ओर देखकर कहा था —प्यारे ! मैं अब परलोकको जा रही हूँ । बस उस समयसे केदार हदसे ज्यादा परेशान है और कुछ किस न जाने क्या सोचता है ।

बेहोश होनेके आधे घन्टे बाद मरा हुआ लड़का पैदा हुआ और थोड़ी ही देर बाद चन्द्रमुखीके प्राण पखेरू भी उड़ गये !

बाबू अमीचन्द भी आगये पर पद्मोहूको जीवित न देख पाये । उन्होंने यह भी सुना कि केदार बेहद परेशान है । वे दौड़े हुए उसके कमरेमें घुस गये । किन्तु, केदारको मुसकराते हुए सितार बजाते देखकर उनका मन कुछ कम हुआ । वे बोले—"बेटा लोगोंने तुम्हारी सोचनीय अवस्थाके विषयमें जो कहा था उससे तो मैं बहुत ही घबड़ा गया था । उसने उत्तर दिया— जी हाँ पहले मुझे बड़ा दुःख था पर अब कुछ मिनटोंसे मैं बिलकुल अच्छा हूँ । वे बाहर आये और उस समयके जरूरी कार्योंकी चिन्तामें

लगे। सहसा केदारके कमरेसे पिस्तौलकी एक आवाज हुई। लोग दौड़कर दरवाजा तोड़कर भीतर घुसे तो केदारको मरा हुआ पाया। टेबुल पर यह पत्र मिला—"प्यारी चन्द्रमुखीकी मृत्युके हमीं लोग प्रधान कारण हैं, अतएव उसे अकेले ही प्राणदण्ड न मिलना चाहिए। उसमें मेरे पिता, पितामहका भी दोष है। बस मेरी मृत्युसे उनको भी दण्ड मिल जायगा—प्रकृतिका दूषित नियम मैं पूरा किये देता हूँ।"

(घ)—बाल-विवाह।

पशु-जगत्में कोई पशु, विना सर्वाङ्ग पुष्ट हुए बच्चा नहीं देता। मनुष्य-जगत्में अंगोंकी पुष्टिके लिए २५ वर्षसे अधिक समय चाहिए। अतएव इस अवस्थाके पूर्व ही गर्भाधान करना पशुओंसे भी हीन कार्य्य करना है। ऐसा करना न केवल निन्दनीय है बल्कि अति हानिकारक भी है। *

२ तरुणता (जवानी) के प्रथम चिह्नोंसे यह नहीं कहा जा सकता कि अब वे विषय-भोग योग्य हो गये। बच्चेको दूधका दाँत निकल आने पर यह नहीं समझा जाता कि वह ईख चूस सकता है।

३ बुरी तरह पर गुडियाँ खेलनेसे, यानी उनकी शादी करना, गुडियोंको गुड्डियोके साथ सुलाना आर उन्हें बच्चे होना आदि, उनके मुँह पर उनके विवाहकी बातें करनेसे जिससे उनको यह ख्याल पैदा हो जाय कि वे सयाने हो गये, या ऐसी ही और बातोंसे, बचपनमें विवाह कर देनेसे, उनका आपसमे मेल जोल होनेसे, और साथके सोनेसे, बच्चे, समयके पहले ही सयाने हो जाते हैं और उन्हें शारीरिक हानि पहुँचती है।

४ अल्पायुका गर्भ माता पिता और स्वयं उस पेटकी सन्तान तीनोंके लिए अत्यन्त हानिकारक होता है। अक्सर ऐसी अवस्थाका गर्भ नष्ट हो जाता है। बालगर्भधारिणीको बच्चोंके जन्म समय अत्यन्त कष्ट होता है और बहुधा उसकी मृत्यु हो जाती है। यदि इस कठोर कष्टसे प्राण न निकला, तो बच्चा कोमल अंग चूसचूस कर उन्हें इतना निर्बल कर देता है, और दूसरी या तीसरी बार तक उसका शरीर ऐसा निर्बल हो जाता है कि वे जीवनपर्य्यन्त

---

* Indu Madhaw Mallick, M A., B L

आरोग्य नहीं रह पाती; बल्कि प्रसूत ज्वर या और किसी असाध्य रोग द्वारा उनका अन्त अवश्य ही हो जाता है।

+ ५ पचीस बाल-गर्भवती स्त्रियोंकी जाँच की गई जिससे मालूम हुआ कि ५ लड़कियोंका गर्भ गिर गया १ बच्चा जननेके वक्त मर गई, ६ को जननेके समय अत्यन्त कष्ट हुआ और उनके पेटसे बच्चे औजारोंके जरिये निकाले गये ५ को बच्चा जननेके बाद पुराना मूत्ररोग हो गया १ बच्चा पैदा होनेपर प्रसूति-रोगमें पड़कर और अत्यन्त निर्बल होकर मर गई, १ दूसरी बार बच्चा जनने पर मर गई २ तीसरी बार बच्चा जनते समय मर गई और १२ अत्यंत कष्ट उठा कर मरनेसे बच गई पर उनकी तंदुरुस्ती जन्म भरके लिए बिगड़ गई। अर्थात् कुल २५ मेंसे १ तो मर गई और १२ जन्मरोगिणी हो गई, केवल २ लड़कियाँ अच्छी रहीं। ×

६ बालमाताओंको अनेक कष्ट होते हैं। जैसे गर्भ गिर जाता है और उनकी आत्माको दुःख पहुँचता है। मरा हुआ बच्चा पैदा होता है इससे भी उनको कष्ट उठाना पड़ता है। जिन्दा पैदा होकर तुरंत मर जाता है और जनना बिना तकलीफके नहीं होता। बच्चा इतना कमजोर पैदा होता है कि दूध नहीं पी सकता। बच्चा कुछ दिनोंतक जिन्दा रहता है पर उसका शरीर क्षीण होता रहता है और जल्द ही मर जाता है। बच्चा सब आपत्तियोंसे बचकर बड़ा होकर निर्बल स्त्री या पुरुष होता है और जिन्दगी भर कष्ट भोगता रहता है।

गत मनुष्यगणनाकी रिपोर्टसे ज्ञात होता है कि बाल्यावस्थाका गर्भ अक्सर गिर जाता है। पहले दो तीन बच्चे जो बालमाताओंसे उत्पन्न होते हैं अक्सर मर जाते हैं और ऐसे बच्चे कमजोर मारे दुर्बल आयुपर्यन्त रोगी और अल्पायु होते हैं। एक हजार बच्चोंमें २११ बच्चे एक वर्षकी आयुमें मर जाते हैं अर्थात् हर तीन बच्चोंमेंसे एक बच्चा मर जाता है।

भारतके प्रायः सभी नवयुवक पेशाब पेचिश या बुखारके रोगसे दुःखी रहते हैं। यहाँ पेशाबकी बीमारियोंसे सारी दुनियाँसे अधिक लोग मरते हैं। फी सैकड़ा १५ नवयुवक इन रोगोंके ग्रास बनते हैं। *

+ D D C Bhome, Medical Congress Calcutta

× यहाँ का जोड़ न मिलेगा। कारण यदि एक ही लड़कीको २ बार भिन्न भिन्न रोग हुए हैं तो वह तीन बार गिनी गई है। इससे जोड़ बढ़ गया है।

Dr Allbutt System of Medicine.
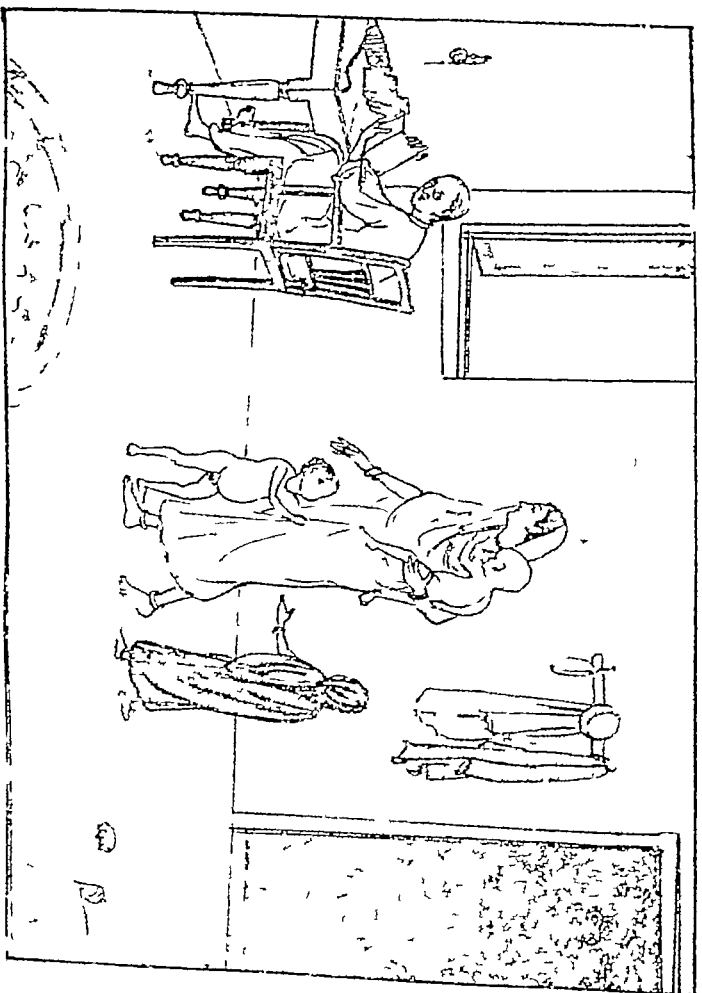
“ जो विद्यार्थी हैं उनको स्कूल या कालेजके भारके ऊपर बच्चोंका कठिन भार भी उठाना पड़ता है ।

विद्यार्थी महाशय पढ़ रहे हैं । उनकी स्त्री अपने एकके बाद एक पैदा हुए तीन बच्चोंको सँभालती हुई उनके चित्तको पुस्तकसे हटा रही है । (देशदर्शन पृ० १३७)

विद्यार्थी महाशय और उनकी पत्नी। पढ़ते समय उनकी स्त्री मकड़ीका लाकर कहती है कि लीजिए यह आपकी प्यारी साथकी है।

भारतके प्रधान प्रधान डाक्टरोंने निश्चय किया है कि भारतवासियोंकी तदुरुस्ती ३०-४० वर्षमें खराब हो जाती है । इसका कारण यह है कि लडकपनकी शादीसे उनका शरीर क्षीण हो जाता है और फिर जल्द ही बालबचोंकी चिन्ताका बोझ उन पर आ पडता है । इससे उनको अत्यंत मानसिक कष्ट उठाना पड़ता है और उसका नतीजा यह होता है कि उनका स्वास्थ्य खराब हो जाता है ।

जो विद्यार्थी हैं उनको स्कूल या कालेजके भारके ऊपर बालबच्चोंका कठिन भार भी उठाना पडता है । इस दोहरे बोझेको सँभालना उनके लिए अत्यन्त कठिन हो जाता है और उनकी तन्दुरुस्ती बिगड जाती है । ×

साराश यह कि बाल-विवाहसे भारत गारत हुआ जाता है । यदि अब भी हम सावधान न हुए तो हमारी सब आशायें धूलमें मिल जायगी और हमारी जातिका सर्वनाश एक निश्चित विषय (Settled fact) हो जायगा । यद्यपि भारत ललनाओंको हमने विद्या और विज्ञानसे वञ्चित रक्खा है तो भी परमात्माकी दयासे, अन्य राष्ट्रोंकी स्त्रियोंके सम्मुख उनका सिर ऊँचा ही है—सुशीलता, सुन्दरता, पवित्रता, नम्रता, पातिव्रत्य और स्वार्थत्यागमें ये अब भी बाजी मारे हैं । शिक्षासे वंचित रक्खे जाने पर भी ऐसे पवित्र विचार ! गुलामीमें जकडी रहने पर भी ऐसा उत्तम—ऐसा उच्च स्वभाव ! बाल-माता बनाई जाने पर भी ऐसा सुन्दर और मनोहर शरीर ! बाल-विवाहकी कुप्रथा नवीन भारतके लिए अत्यन्त लज्जास्पद है, इसको निर्मूल करना भारतसन्तानका सबसे प्रथम और महान् कर्तव्य है । *

× इतिहासकार टाल वाईस व्हीलर लिखते हैं कि "जबतक भारतवासी छोटी छोटी बालिकाओंका विवाह छोटे छोटे बालकोंसे करते रहेंगे, तबतक उनकी सन्तान छोटे बच्चोंसे अधिक अच्छी दशामें कभी न पहुँच सकेगी । स्वाधीनता और स्वराज्यके आन्दोलनमें वे निस्तेज और बलहीन सिद्ध होंगे और राजकीय उन्नतिका उपयोग करनेके लिए वे किसी भी प्रकारकी शिक्षासे समर्थ नहीं हो सकेंगे । इसमें सन्देह नहीं कि शिक्षाके प्रभावसे उनकी बुद्धिमें गम्भीरता आ जायगी और वे किसी गम्भीर तथा प्रौढ मनुष्यके समान बातें करने लगेंगे, परन्तु सब कुछ होते हुए भी उनका आचरण असहाय बालकोंहीके समान बना रहेगा । "

* 'Wake up India,' by Annie Besant

(क)—बालविवाहका कारण भारतकी उष्णता नहीं है।

हमारे नये धर्म शास्त्रोंने भारतवासियोंके हृदय पर ऐसा सिक्का जमा दिया है कि आज बीसवीं शताब्दीके उच्च शिक्षित—अनेक एम. ए. बी. ए.-तक मान बैठे हैं कि भारतकी आबोहवामें यह तासीर है कि यहाँ लड़कियाँ अल्द सयानी हो जाती हैं। भारत ऐसा गरम देश है कि यहाँ कन्यायें बहुत जल्द रजस्वला हो जाती हैं और बंगालकी ११-१२ वर्षकी बाल-मातायें इसके सबूतमें पेश की जाती हैं। लोगोंको दृढ़ विश्वास हो गया है कि यदि सारे भारतमें नहीं तो बंगप्रान्त और उसके बाद संयुक्तप्रान्तमें प्रकृति दस वर्षकी लड़कियोंको विवाहके लिए बालिका माता बननेके लिए योग्य बना देती है। दस वर्षकी लड़कियोंको गर्भ रह गया है उनमेंसे बहुतोंने ठीक समय पर सन्तान प्रसव किया है और दोनों जीते जागते रहे हैं।

डाक्टर चक्रवर्ती लिखते हैं कि 'मैं एक लड़कीको बाल्यावस्थाहीसे भली-भाँति जानता हूँ जिसे दस वर्षकी उमरमें लड़का पैदा हुआ।' डाक्टर हार्वे ईसन कहते हैं कि "एक कारखानेमें काम करनेवाली लड़की ११ वर्षकी आयुमें गर्भवती पाई गई। डाक्टर वेली लिखते हैं कि कलकत्तेके एक रईसकी ११ वर्ष ५ महीनेकी लड़कीको लड़का पैदा हुआ।" कई अन्य सभ्य रईसोंसे डाक्टर साहबने उसकी सच्ची अवस्था दर्याप्त की और सभीने उसकी आयु ११ वर्ष ५ महीने बताई। डाक्टर ग्रीन कहते हैं कि "ढाकेमें मैंने एक लड़कीको १२ वर्षकी आयुमें गर्भवती पाया। लड़का पैदा होते वक्त बेचारी लड़की मर गई।" डाक्टर कन्हैयालाल दे कहते हैं कि "बंगालमें आम तौर पर बारह वर्षकी लड़कियाँ गर्भवती पाई जाती हैं।"

इस प्रकार एक दो नहीं आजकल सैकड़ों हजारों बाल-मातायें भारतमें मौजूद हैं। अब देखना यह है कि भारतके उष्णदेश होनेसे—यहाँकी जलवायुकी विलक्षणतासे—यहाँ कुमारियाँ जल्द ऋतुमती होती हैं या इसके कुछ और कारण हैं और अन्य देशोंमें प्रकृतिका क्या नियम है।

Medical Jurisprudence for India by B. Chevers, Page

जगत्प्रसिद्ध डाक्टर हालिक लिखते हैं—" जाँचे करने पर जहाँतक मालूम हुआ है संसारकी सब जातियोंमें कन्यायें लगभग एक ही उमरमें रजस्वला होती हैं। यदि आफ्रिका जैसे गर्म देशकी हवशी लडकी और यूरोप जैसे ठण्डे देशकी गोरी लड़की एक ही ढँगसे परवरिश पावे तो दोनों एक ही साथ ऋतुमती होगी। "+

यद्यपि इंग्लैण्डके मुकाबले भारतमें लडकियाँ जल्द सयानी हो जाती है, पर यह सन्देहकी बात है कि भिन्न भिन्न देशोंमें भिन्न भिन्न समय पर लड-कियाँ सयानी हों ×।

मिस्टर राबर्ट्सनने खूब जाँचकर निश्चय किया है कि भूमण्डलके सब देशोमे लडकियाँ लगभग एक ही आयुमें रजस्वला होती हैं। वे बतलाते हैं कि भारतमें प्राकृतिक नियमानुसार बालिकायें रजस्वला नहीं होतीं, वे कुरीतियों और बुरे व्यवहारोंसे, जबर्दस्ती सयानी बना दी जाती हैं। वे लिखते हैं कि "भारतकी राजनैतिक तथा सामाजिक दशा ऐसी बिगडी हुई है, यहाँके कानून, यहाँके रीतिरिवाज ऐसी बुरी अवस्थामें हैं, भारतमें स्त्रियाँ ऐसी मूर्खा बना दी गई हैं, वे ऐसी सख्त गुलामीमें जकडी हुई है, यहाँकी विवाह-सम्बन्धवाली धार्मिक पुस्तकें ऐसा बुरा उपदेश देती हैं कि भारतकी कन्यायें प्रकृति-नियमके विरुद्ध जल्द सयानी हो जाती है। यदि अमेरिका या इंग्लैडकी यही दशा रहती तो वहाँकी लडकियाँ भी इतनी ही जल्द सयानी होतीं। अमेरिकामें भी बेचारी असहाया, समाजसे गिरी हुई ११-२२ वर्षकी लडकियाँ (Prostitutes) बाज बातोंमें १७-१८ वर्षकी स्त्रियोकीसी जान पडती हैं। और किसी भी देशकी लडकी हो वह यदि उसी बुरी तरह पर रक्खी जायगी तो उन गिरी हुई बाजारू लडकियोकी ही तरह बहुत जल्द सयानी हो जायगी। देहातोंके मुकाबले शहरोंमें हर देशमें लडकियाँ जल्द सयानी हो जाती हैं, क्योंकि शहरोंमें इन लडकियोंके उभाडनेके सामान ज्यादा पाये जाते है। *

जवानी जल्द बुलानेके लिए कोई और चीज उतना काम नहीं करती जितना कि प्रेमकी बातें करती हैं। बेहूदे किस्से और खेल, या बच्चोको यही

+ 'The Origin of life' page 363

× 'Annuals of Medical Science

* 'The Origin of Life,' by F Hollick, page 378

याद दिलाते रहना कि वे अब जवान हो गये या यह कि उनकी पुत्री अबला अब विकल है ये सभी बनावटी आलस्यके सामान हैं।

भगवान् धन्वन्तरि सुश्रुतमें बताते हैं कि भारतमें कन्या बारह वर्षकी आयुमें रजस्वला होती है और यह रजोधर्म पचास वर्षकी आयुमें अवश्य बन्द हो जाता है।

भूमण्डलके अन्य देशोंमें भी रजस्वला होनेका यही नियम है। अन्यत्र इधर इंग्लैण्डमें भी इसी आयुमें लड़कियाँ रजस्वला हुआ करती हैं। वहाँ पर भी १२ से १७ वर्षमें और कभी कभी तो ९ वर्षकी आयुमें ही लड़कियाँ रजस्वला हो जाती हैं और ४५—५ वर्ष तक हुआ करती हैं।*

इंग्लैण्डके मेंचिस्टर लाइंग इन अस्पतालमें ३४ लड़कियोंकी परीक्षा की गई तो उनमेंसे १ लड़कियाँ ग्यारह वर्षकी आयुमें १९ बारह वर्षकी आयुमें ५३ तेरह वर्षमें ८५ चौदहमें ९७ पन्द्रहमें और ७६ सोलह वर्षकी आयुमें रजस्वला हुईं।

भारतमें २७ गोरी लड़कियोंकी जाँच हुई, उनमेंसे—

४ लड़कियाँ　१२—१३ वर्षके बीचमें
८　　　१३—१४ के बीचमें
९　　　१४—१५ में
५　"　　१५—१६ में और
१　　　१६—१७ में रजस्वला हुईं ×।

डा० टिलिन्स कहते हैं कि "दो गोरी लड़कियाँ इतनी जल्द रजस्वला हुईं कि वे ग्यारह वर्ष सात महीनेकी आयुमें माताएँ बन सकती थीं +। डा० राबर्टसन कहते हैं कि भारत और इंग्लैण्ड दोनों जगह नौ वर्षकी लड़कियाँ रजस्वला हुआ करती हैं या हो सकती हैं †।"

---

* Th origi f Life Page 563

× D F yrer Calcutta European Female Orphan A yl m.

+ Medical Juri prudence by R. Chevers, pages 672-692.

† Medical Jurisprudence by R. Chevers, pages 677—692.

इन महान् पुरुषोंके वाक्योंसे प्रकट होता है कि दुनियामें रजस्वला होनेका समय प्रकृतिने एक सा रक्खा है। अब यह देखना है कि क्या अन्य देशोंमें भी कभी बाल-विवाहकी चाल थी और क्या उन देशोंमें भी बाल-मातायें हुआ करती थीं।

बालविवाहका रिवाज लगभग सब देशोंमें था जबतक कि वे देश असभ्यावस्थामें थे, यहाँ तक कि इंग्लैण्डमें भी अट्ठारहवीं शताब्दीके शुरू तक यह कुरीति जारी थी। फ्रांसके राजा फिलिपने इंग्लैण्डकी राजकुमारीको १२ वर्षकी छोटी आयुमें ब्याहा था। दूसरी राजकुमारीका विवाह नौ वर्षकी आयुमें हुआ। जब इंग्लैण्डके राजा रिचर्डका विवाह फ्रांसकी राजकुमारीसे हुआ उस समय राजकुमारीकी आयु कुल आठ वर्षकी थी। श्रीमती एलिजाबेथ हार्डविकका विवाह १३ वर्षकी आयुमें हुआ। आड्रे (साँथ एम्पटनके अर्लकी लड़की) का विवाह हो चुका था जब १४ वर्षकी अवस्थामें उसकी मृत्यु हुई। इंग्लैण्डके राजा हेनरी सातवेंके अत्यन्त निर्बल होनेका कारण यह था कि उनकी माता लेडी मार्गरेटका विवाह कुल नौ वर्षकी अवस्थामें हुआ था और जब हेनरीका जन्म हुआ तब लेडी मार्गरेटकी आयु कुल दस वर्षकी थी। इंग्लैण्डके उच्च श्रेणीके लोगोंकी प्राय यही हालत थी, वे अत्यन्त छोटी अवस्थामें विवाह करते थे। *

इंग्लैण्डकी रेस्क्यू सुसाइटीने सरकारसे प्रार्थना की थी कि समाजसे गिरी हुई दससे सोलह वर्षकी लडकियोंके लिए घर बनाना चाहिए, क्योंकि ऐसी कम उमरकी लडकियोंकी दर्ख्वास्तें उन लोगोंको हमेशा नामजूर करना पड़ती थीं।

मारिस (Maurice 23, Lord Berkly, Edward I) का विवाह आठ वर्षकी आयुमें हुआ और १४ वर्षके पहले ही उन्हें लड़का हुआ। वरजीनियाँ नगरमें एक १३ वर्षकी लड़कीके विना किसी अधिक कष्टके लड़का पैदा हुआ ×। इंग्लैण्डमें एक युवती स्त्री एक दस वर्षके लड़केके साथ सो रही थी। उसके हृदयमें पाप समाया और उसने यह सोचकर कि उस लड़केके

---

* 'Medical Jurisprudence for India', by R Chevers, page 692

× Philadelphia Medical Examiner, April 1855.

साथ विषय-सेवन करनेसे गर्भका भय नहीं है भोग किया । पर उसे गर्भ रह गया और विकृत और गर्भ उसकी पड़ी † । एक दस वर्ष ११ दिनकी लड़कीके लड़की पैदा हुई । उसका वजन ७ पाउण्ड था ‡ ।

टेलरसाहबका कथन है कि "किसी भी देशमें नौ वर्षकी लड़कियाँ गर्भवती हो सकती हैं । अर्थात् ऐसा हो जाना असम्भव नहीं है। " +

जगत्प्रसिद्ध डाक्टर हाब्किन्स लिखते हैं— ' मैंने एक सात वर्षके लड़कको विषय-संभोग करने योग्य पाया है । प्रकृतिका नियम इस विषयमें बड़ा बेढंगा है । सात वर्षका लड़का संभोग और गर्भस्थिति कर सकता है ÷ ।

उपर्युक्त कुछ बातें उन्हे देशोंकी हैं जहाँ भारतकी तरह गरमी नहीं पड़ती पर रजस्वला होनेका समय अथवा बाल्यावस्थामें गर्भवती हो जाना उन देशोंमें भी वैसा ही है जैसा भारतमें है।

मुसलमानोंमें भी यह कुरीति घोर है। इनके कानूनकी किताबोंसे पता चलता है कि सात वर्षके ऊपरकी आयुवाली लड़कियोंके साथ संभोग करना जायज है ✓ । मुसलमानोंके नबी मुहम्मद साहबने आयेशासे सात वर्षकी आयुमें विवाह किया और जब वह नव वर्षकी हुई तब उसके साथ संभोग किया × । यदि किसी नौ या दस वर्षकी लड़कीमें युवावस्थाके कोई चिह्न प्रकट हों तो वह बालिग समझी जाती है = ।

इन अनेक देशों और जातियोंके उदाहरणोंसे यह सिद्ध हुआ कि यदि भारतमें छोटी अवस्थामें लड़कियाँ रजस्वला होती हैं तो इससे यह नतीजा नहीं निकाला जा सकता कि भारतके जल-वायुमें ऐसी उष्णता है कि लड़कियाँ जल्द सयानी हो जाती हैं । सारांश यह कि भूमण्डलके प्रत्येक देश और प्रत्येक जातिमें इस बातमें प्रकृतिका एक ही नियम है और भारतके जल-वायुमें कोई विशेषता अथवा न्यूनता नहीं है । अब देशकी अवस्था देखिए

† Th Origin of Lif Page 456.
‡ Transylvan a Journal, Vol. VII page 447
+ Med cal Jurisprudence, by R. Chevers, page 679
÷ Th Origin of Lif page 456.
✓ Notes on M h mmedan Law by Khan Bahadur M. T Khan.
× Th Origi f Lif Page 458.
= Macnaghten s Muhammedan Law pages 325 & 266.

होती है और लोग ज्ञानहीन रहते हैं तब वे बालविवाहकी बुरी चालमें फँस जाते हैं।

प्रकृतिका अद्भुत रहस्य।

अभी हम दिखा चुके हैं कि नौ वर्षकी लडकियाँ गर्भवती होकर बच्चा जनती हैं और दस या इससे कमके लड़कोंद्वारा स्त्रियाँ गर्भवती हो गई हैं। अब दूसरी ओर देखिए—

टामस पार १५२ वर्ष तक जीये। उन्होंने १२० वर्षकी आयुमें विवाह किया और १४० वर्षकी आयुमें उन्हें लडका पैदा हुआ ×। फ्रेलिक्स प्लेटर बतलाते हैं कि उनके दादाको १०० वर्षकी आयुतक बराबर लड़के होते रहे *। सीज नगरके बढ़े पादरी लिखते हैं कि "सीजमें एक ९४ वर्षके पुरुषने एक ८३ वर्षकी स्त्रीसे विवाह किया। स्त्री गर्भवती हुई और उसे पुत्र उत्पन्न हुआ। +" मारशल डी एस्ट्रीने अपनी दूसरी शादी ९१ वर्षमें की। मारशल डी रिचलने, मैडम डीराथके साथ ८४ वर्षकी उमरमें शादी की। सर स्टीफेन फ्राक्सकी शादी ७७ वर्षकी आयुमें हुई और उन्हें चार लडके हुए—पहला ७८ वें वर्षमें, दूसरी बार दो एक साथ और चौथा ८१ वें वर्षमें। मिमायर्स डी आर्मोनरर (Memoires be Armonrer) ने ८० वर्षकी आयुमें विवाह किया और उसे तन्दुरुस्त लडके पैदा हुए। वेगन साहब बतलाते हैं कि "मेरे एक मित्र ७५ वर्षकी आयुमें एक स्त्रीकी मुहब्बतमें फँस गये और उन्होंने उसके साथ विवाह किया।"

(च)-विज्ञानद्वारा विवाह-काल-निर्णय।

"God's law in Nature is higher than the written word of man, however it is claimed to be inspired, and that when it comes to a contest between the two then it is

---

× Reference given in three books (1) Philosophical Transaction, (2)The Origin of Life, and (3) The conjugal relationship

* 'The Conjugal Relationship as to health', by K. Gardner, page 159-167.

+ History of the Academy of Science

आ जाता है, शरीरमें बल और पराक्रमकी थाह नहीं रहती। मनमें उमग, फुर्ती और चेहरेमे आनन्दकी झलक दीखती है। अर्थात् पुरुषोके वीर्य और शरीरके पुष्ट होनेके लिए जन्मसे २६ वर्ष और स्त्रियोको २२ वर्ष चाहिए।

इस अवस्थाके जितने ही पहले और जितने ही अधिक कच्चे शरीरसे वीर्य निकलता है, शरीरकी पूर्ण पुष्टि और मानसिक आदि सब शक्तियोके लिए वह उतना ही अधिक हानिकारक होता है।

अतएव विज्ञानद्वारा विचार करनेसे पुरुषोंके लिए २६ से ३२ तककी और स्त्रियोके लिए २२ से २८ तककी आयु, विवाहके लिए सर्वोत्तम जान पडती है।

ससारकी सारी सुशिक्षित और सभ्य जातियोंमें लगभग इसी अवस्थामें विवाह हुआ करते हैं।

डाक्टर एफ हालिक कहते हैं—"यूरोप और अमेरिकामें आम तौर पर विवाह करनेका समय पुरुषके लिए २८ से ३१ वर्ष तक और स्त्रीके लिए २३ से २८ वर्ष तक होता है। पर उन लोगोंकी संख्या, जो और देरमें विवाह करते हैं या वे स्त्रीपुरुष जो जीवनपर्यन्त विवाह करते ही नहीं, बढ़ती जा रही है।"

(छ)—क्या भारतकी प्राचीन विवाहप्रणाली विज्ञानके प्रतिकूल है ?

बाल विवाहके पक्षपाती कहा करते हैं कि ऋतुमती युवतीका विवाह शास्त्रनिषिद्ध है और भारतवर्षमें कभी प्रचलित नहीं था। किन्तु ऐसी गिरी अवस्थामें भी जिन मन्त्रोंसे विवाह-सस्कार कराया जाता है, उनसे साफ साफ मालूम होता है कि प्राचीन समयमें स्त्री और पुरुष विवाहके समय युवती और युवक होते थे, न कि बालक और बालिका। विवाह-सस्कारके आरम्भमें अग्निहोत्र और गायत्रीके पश्चात् कन्याका पिता कहता है —

प्रत्वा मुंचामि वरुणस्य पाशाद्येन त्वावध्नात् सविता सुशेवः,
ऋतस्य योनौ सुकृतस्य लोकेऽरिष्टा त्वां सह पत्या दधामि।

—ऋ० म० १०, अ० ७, सू० ८५, म० २४।

हम साम हैं, हम द्यौ हैं तुम पृथ्वी हो, हम रेत हैं तुम रेत की धारण करनेवाली हो, हम मन हैं तुम वाणी हो। हमारी अनुगामिनी होओ, जिसमे पुत्र और धनकी प्राप्ति हो। मिष्टभाषिणी! आओ।

पाठकवृन्द! आप विचारें तो सही कि क्या ये वचन 'अष्टवर्षा गौरी' द्वारा कहे जानेके योग्य हैं।

तब पत्नी कहती है —

आनः प्रजा जनयतु प्रजापति राजरसाय समनक्त्वार्यमा।

अर्थात्—सृष्टिकर्ता परम पिता प्रजापति हम लोगोंको सुख और संतति प्रदान करें और हम लोग वृद्धावस्था तक एक दूसरेके साथ रहें।

तब कन्याका पिता कहता है —

इह प्रिय प्रजया ते समृध्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि।
एना पत्या तन्व स सृजस्वाधा जिव्री विदथमावदाथ।
सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वा भव
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञीऽअधिदेवृषु।

—ऋ० म० १०, अ० ७, सू० ८५, म० २७-४६।

अर्थात्—तुम्हें सन्तानोत्पत्तिसे सुख हो। तुम अपने घरका कामकाज सावधानीसे करना। तुम अपने शरीरको पतिमें लीन कर देना। वृद्धावस्था तक अपने घरमें प्रभुत्व करना। तुम अपने ससुरकी, सासकी, ननदकी और देवरकी सम्राज्ञी बनो, अर्थात् ये सब लोग तुम्हारे अधीन रहें।

इसके बाद वरका पिता कन्याको सम्बोधन करके कहता है—

इहैव स्त मा वि यौष्ट विश्वमायुर्व्यश्नुतं।
क्रीडतौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे।

—ऋ० म० १०, अ० ७, सू० ८५, म० ४२।

अर्थात्—हे वहू! तुम अपने पतिके साथ सदैव रहो, कभी अलग मत होओ। आजन्मके लिए पतिसे मिल जाओ। अपने घरमें प्रसन्नचित्त रहो और आनन्दके साथ अपने पुत्र और पौत्रोंके साथ खेलो।

इसके पीछे पति और पत्नी दोनों कहते हैं —

समजतु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ॥

—ऋ० म० १०, अ० ७, सू० ८५, म० ४७।

लिए ही यह संस्कार नियत किया गया है न कि बालक और बालिकाओंके खेलके लिए।

इनके अतिरिक्त और भी गृह्यसूत्र और धर्मसूत्रोंमे, तथा कई स्मृतियोंमे युवक और युवतीविवाहके प्रमाण मिलते हैं। पुराणोंमें भी अनेक कथायें मिलती हैं जिनसे विदित होता है कि, प्राचीनकालमें युवतीका विवाह शास्त्र-विहित समझा जाता था। स्वयम्वरकी प्रथा भी यही बात सिद्ध करती है। नासमझ बालिकायें स्वयम्वरमें पति कदापि नहीं चुन सकतीं। लेखविस्तारके भयसे हम यहाँ पर और प्रमाण नहीं दे सकते। इतने ही प्रमाण उन लोगोंको विश्वास दिलानेके लिए काफी हैं जो विवाहसंशोधन तथा अन्य सामाजिक सुधार करनेमें, शास्त्राज्ञा न होनेके भयसे पैर आगे नहीं बढा सकते।

(ज)-विवाहित पुरुषोंकी जाँच।

बिना कारणके कार्य स्वयम् नहीं उपस्थित हो सकता। प्रथम वस्तु कारण है, और कार्य कारणका फल है। —स्वामी विवेकानद।

विवाह सुखकी इच्छासे किया जाता है। इस महान् संस्कारसे आनन्द और प्रसन्नताकी अटूट धारा बहती देख कर सभी लोगोंके हृदयमें इस परम आनन्दके भोगनेकी प्रबल कामना उत्पन्न होती है। अपनी योग्यता और अयोग्यता पर ध्यान न देकर सभी स्त्री-पुरुष इस पुनीत तीर्थमें डुबकी लगाया चाहते हैं। पर फल आशाके विरुद्ध होता है। जैसे मक्खियाँ शहद पीनेके लिए घड़े पर जा बैठती हैं। उनमेंसे कोई कोई पीकर उड़ जाती हैं, पर बहुतोंके पंख और पैर चिपट जाते हैं और वे फँस जाती हैं तथा अनेक दुःख सहन करके मर जाती हैं। ऐसे ही हम, विवाहसे सुखकी इच्छा करके बन्धनमें फँस जाते हैं। कुछ लोगोंकी आशायें तो पूर्ण होती हैं पर बहुतोंको सुखकी अपेक्षा दुःख ही मिलता है और घोर विपत्तिका सामना करना पड़ता है। हम आये तो सुख भोगने, पर पाने लगे कष्ट। शारीरिक सुखके लिए जलमें गोता लगाया, पर लगे डूबने। बैठे तो प्रेमरस पान करने पर हाथ पाँव फँस गये, ऐसे जकड़ गये कि निकलना मुश्किल हो गया—छूटना दुर्लभ हो गया। हम जिन्दगीका मजा लूटने आये, पर लुट गई उलटी हमारी जिन्दगी।

अर्थात्—हे सृष्टिके देवता ! हम दोनों पतिपत्नीके हृदय सदाके लिए एकमें मिला दो—मातरिश्वा धाता देवी हमें मिलाकर एक कर दें ।

इसके बाद कन्याका पिता विवाहसंस्कारमें निमन्त्रित अतिथियोंको संबोधन करके उनसे कहता है—

सुमङ्गलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत
सौभाग्यमस्यै दत्वायास्तं वि परेतन ।

—ऋ मं १ अ ७ सू ८५, मं ३३।

अर्थात्—यह कन्या सौभाग्यवती है । इसको आकर इसे देखिए और आशीष दीजिए कि इसका सुख और सौभाग्य बढ़े । इसे आशीष देकर आप सब अपने अपने घर जायँ ।

तब उपस्थित अतिथि इस तरह पर प्रार्थना करते हैं—

इमां त्वमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रां सुभगां कृणु
दशास्यां पुत्रानाधेहि पतिमेकादशं कृधि ।

—ऋ मं १ अ ७ सू ८५, मं ४५।

अर्थात्—हे इन्द्र भगवन् ! इस पत्नीको सौभाग्यवती बनाओ । यह वीरपुत्रोंकी माता हो । इसे दस पुत्ररत्न उत्पन्न हों । पतिसहित ग्यारह वीर इसे प्राप्त हों ।

इसके बाद कन्याका पिता विश्वावसुसे यह प्रार्थना करता है—

उदीर्ष्वातो विश्वावसो नमसेडामहे त्वा
अन्यामिच्छ प्रफर्व्यं जायां पत्या सृज ।

—ऋ मं १ अ ७ सू ८५, मं २२।

अर्थात्—हे विश्वावसु (विवाहके देवता) इस स्थानसे उठो । हम तुम्हें नमस्कार करके तुम्हारी पूजा करते हैं । अब किसी दूसरी कुमारीके पास जाओ जिसके अंग यौवनको प्राप्त हों । उसे एक पतिसे मिलाकर पत्नी बनाओ ।

पूर्वोक्त वेदमन्त्र जिनसे आज भी विवाहसंस्कार कराया जाता है बड़े महत्त्वके हैं । इन ऋचाओंसे स्पष्टरूपसे प्रकट होता है कि प्राचीन कालमें युवक और युवतियोंका संबंध होता था । पुनीत विवाहसंस्कार बच्चोंके लिए नहीं है । उत्साहके साथ गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेवाले युवक और युवतियोंके

पॉच राजा-महाराजा।

१ खुद मुख्तार महाराज (Ruling chief)। घोर व्यभिचारी, रानीसे अनबन, राजा सुखी, रानी पतिव्रता पर राजाके अन्यायसे सदैव दुःखिनी।

२ राजासाहब नपुसक है, पर उन्होने अपनी दशा छिपानेके लिए पॉच विवाह किये। पाँचों रानियॉ जीवित है और व्यभिचारिणी है। राजा दुखी रानियाँ सुखीं। रानियों द्वारा खर्च अत्यन्त अधिक, स्टेट कर्जदार।

३ राजा महलमें नहीं जाते। दस्तकारीसे विशेष प्रेम रखते है। रानियां दो, एक व्यभिचारिणी दूसरी पतिव्रता। तीनों दु खी। व्यभिचारिणी रानीको खर्च कम मिलता है, बडी वेइज्जतीसे रक्खी जाती है।

४ राजा प्रकृति-विरुद्ध-व्यभिचारी। दशहरेमे रामलीलाकी मडली आने पर उसके सुन्दर लडकोंको माफी जमीन दान दे दी जाती है, और वे वश लिये जाते हैं। रानी पतिव्रता पर अत्यत दु खिनी। राजा रोगग्रसित, दुखी।

५ राजा निर्बल, रानी मोटी ताजी। दोनोंमे अनबन। राजाकी युवावस्थामें एकाएक मृत्यु। रानीका खुल्लमखुल्ला व्यभिचार। राज्यके खजानेकी लूट और रियासतका सत्यानाश। दोनों दुखी।

पॉच धनाढ्य महाजन।

१ पुरुप देवता, स्त्री देवी, दोनोंमें प्रेम और दोनो सुखी।

२ पति निर्बल रोगी, पत्नी बलवती। एक दूसरेको दिखानेके लिए प्यार करते हैं। पतिको पत्नीके छिपे व्यभिचारकी खबर है, पर उससे वे अधिक रुष्ट नहीं होते। पति दुखी, पत्नी सुखी।

३ सेठजी, आयु २६ वर्प, व्यभिचारी। सेठानी व्यभिचारिणी। सेठके अत्याचारसे तग आकर एक प्यादेके साथ एक लाखका जेवर पहिन कर चल दी, गिरफ्तार हुई और फिर घरमें स्वतन्त्रतापूर्वक रहने लगी। दोनों वेहया, पर सुखसे रहते हैं।

४ पति शक्तिहीन, पत्नीके कई गुप्तप्रेमी। दोनो सुखी। न उसे उसकी परवा और न उसे उसकी।

५ पुरुप अर्ध-शक्तिहीन, स्त्री पगली। कभी इनमें निर्बलता और उसका मिजाज ठीक, और कभी इनका स्वास्थ्य ठीक और वह पगली। दोनों दुखी।

"We came to enjoy we are being enjoyed. We came to rule, we are being ruled. We are caught though we came to catch (enjoyment). We want to enjoy the pleasures of life and they eat into our very vitals"

यदि विचार कर देखिए तो समस्त भारतमें गिनतीके ही विवाहित स्त्री-पुरुष एक दूसरेसे सन्तुष्ट पाये जायेंगे। कहीं स्वभाव नहीं मिलता प्रतिदिन अनबन रहती है कहीं दरिद्रताके कारण सुखका लोप ही गया है और दुःख-सागरमें डूब रहे हैं; कहीं पुरुष रोगी और स्त्री आरोग्य और कहीं इसका उलटा एक दूसरेसे असन्तुष्ट। जिस घरमें जाँच करके देखिए वहीं हालत नजर आती है। ऊपरी नजरसे सबके देखनेमें तो यही आता है कि अमुक दम्पती सा सुखी कदाचित् ही अन्य कोई हो पर भीतरी दशा कुछ और ही हुआ करती है। ऐसी छिपी हुई बातें आम तौर पर सब लोगोंको मालूम नहीं हो सकतीं कुछ दिनों तक लगातार जाँच करनेसे और वह भी उस समय जब उस स्थानके लोगोंसे अच्छा परिचय हो पता चल सकता है।

नीचे लिखे १५ विवाहित पुरुषोंसे मैं भलीभाँति परिचित हूं। कई वर्षोंसे मैं इनकी जाँच कर रहा हूं। उस जाँचका परिणाम नीचे दिया जाता है। विदित रहे कि इन पुरुषोंको मैंने चुनकर नहीं रक्खा है जाँच करते समय वे स्वयं मेरे रास्तेमें पड़ गये हैं और दैवसंयोगसे इनका कच्चा चिट्ठा खुलता गया है। इस जाँचके अलावा मैंने सात भिन्न भिन्न स्थानोंमें भी जहाँ मेरे घनिष्ट मित्र रहते हैं—इसी प्रकारकी जाँच कराई है और उसका परिणाम भी इसीसे मिलता-जुलता प्रकट हुआ है। मैंने उन सब मित्रोंसे प्रार्थना की थी कि वे अपनी आस पड़ोसके पचीस पचीस विवाहित पुरुषोंकी भीतरी दशा खोजकर लिखें। उन्हें स्पष्ट रूपसे लिख दिया गया था कि किसी खास स्त्री या पुरुषकी छिपी हुई हालत न लिखकर वे केवल उन लोगोंकी सच्ची दशा लिखें जिन्हें वे जानते हों और जिनकी जाँच वे भलीभाँति कर सकते हों; जैसे पड़ोसी घनिष्ट मित्र या सम्बन्धी। इस तरह २   विवाहित पुरुषोंकी जाँच की गई है पर स्थानके अभावसे और आपका समय बचानेके लिए तथा आप पर व्यर्थ ऐसी जाँचका भार डालनेकी इच्छासे मैं केवल अपनी ही जाँचका फल प्रकाशित करता हूं।—

६० वर्षके बूढे दादा अपनी पोतीकी आयुकी कन्यासे विवाह कर लेते हैं।

(देश दर्शन पृ० १५३)

पाँच वकील।

१ पति पत्नीका स्वभाव परस्परविरुद्ध दोनोंमें अनबन दिनरात लड़ाई झगड़ा दोनों दुखी।

२ पतिने घरकी कहारिनको रख लिया है। वे उसे लाड़ प्यारसे उसी घरमें रखते हैं। पत्नी दिनरात डाहसे भस्म हुआ करती है। पति सुखी पत्नी दुःखिनी।

३ पति शक्तिहीन पत्नी अत्यन्त दुःखिनी। वह अपने मैके नहीं जाने पाती कि कहीं किसीसे कुछ कह न दे। लिखना पढ़ना नहीं जानती कि पत्र-व्यवहार भी कर सके। कई वर्षों तक सतीत्व निबाहा पर आखिर भंग हो गया। [illegible] पर वकील साहबको इसकी परवा नहीं। वे अपनी निर्बलता छिपाना चाहते हैं—बस अब दोनों सुखी हैं।

४ पति घोर व्यभिचारी पत्नी अत्यन्त दुःखिनी।

५ पति पत्नी दोनों स्वच्छन्द एक दूसरेकी स्वतन्त्रता पर ध्यान नहीं देते। दोनों एक दूसरेकी चालचलन पर शक करते हैं पर दोनों ही इसकी परवा नहीं करते और आनन्दपूर्वक सुखमय जीवन व्यतीत करते हैं।

इसी तरह पाँच नौकरी पेशा और पाँच मजदूरी पेशेवालोंकी जाँचसे मालूम हुआ है कि इनमेंसे कुछ एक जोड़ा सुखी है और बाकी की पतिपत्नी दोनों दुखी हैं। अर्थात् राजासे लेकर रंक तक २५ विवाहित स्त्री पुरुषोंमें कुल ३ ऐसे पाये जाते हैं जो सब प्रकार एक दूसरेसे सुखी हों। यदि मेरे मित्रोंकी रिपोर्ट भी इसमें मिला ली जाय तो कुल दो सौकी जाँच हो जाती है। इन २   सुख भोगनेके अभिलाषियोंमें केवल तीस जोड़े तो सुखी पाये गये और बाकी १० दुखी। अधिकांश विवाहित जन नाना प्रकारके शारीरिक मानसिक और सामाजिक कष्ट भोग रहे हैं।

अच्छा विवाहके फलस्वरूप दुःख ही   कार्य है तब देखना यह है कि इस घोर विपत्तिका कारण क्या है। अधिकांश विवाहित जन दुःख क्यों पाते हैं? उनकी सुखकी आशामें भंग क्यों हो जाती है? आनंद और प्रेमकी जगह भयदायक झगड़े क्यों होने लगते हैं? इस शुभ कार्यके अशुभ कार्यमें बदल जानेका कारण क्या है?

इस प्रश्नका उत्तर है— अयोग्यता। शारीरिक मानसिक आर्थिक और सामाजिक अयोग्यता ही अनेक दुःखोंकी प्रधान कारण है। जिसमें किसी प्रका-

६० वर्षके बूढे दादा अपनी पोतीकी आयुकी कन्यासे विवाह कर लेते है।

(देश दर्शन पृ० १५३)

कुमारी रमादमता ।
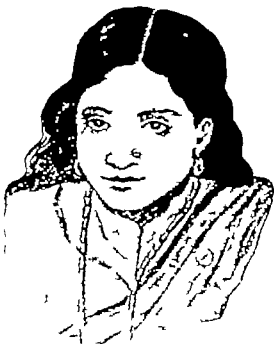
(दृष्टान्त नं० १६)

रकी न्यूनता है, जो विवाहके योग्य नहीं, उसका विवाह हो जानेसे विवाहका पुनीत सुख, दु खमें बदल जाता है, हर्षकी जगह विषाद होने लगता है। लोग आँखोंमें पट्टी बाँध कर वृक्ष तो बबूलका लगाते हैं और आमके मीठे फलकी आशा करते हैं, पर चुभ जाता है काँटा। तब भी आँख नहीं खुलती, वे अपने आपको, अपने कियेका दोष न देकर ईश्वरको, दुर्भाग्यको, और पूर्वजन्मके सस्कारको कोसा करते हैं।

(झ)—विवाहितजनोंके दुःखके प्रधान कारण।

'Man sees with scrupulous care the character and pedigree of his horse, cattle, and dogs, before he matches them, but when he comes to his own marriage, he rarely, or never, takes such care.' Darwin

मनुष्य, अपने गाय, बैलों, घोडों और कुत्तोंका जोडा लगानेके पूर्व, उनके कद, नसल और बल आदि अनेक गुणों पर बडी सावधानीसे विचार करते हैं और जाँच कर जोडा स्थिर करते हैं। किन्तु, जब अपने या अपनी सतानके विवाहका समय उपस्थित होता है, तब वे इन सब उत्तम विचारोंको भूल जाते हैं। —डारविन।

१ अविद्या। सृष्टिनियमोंका न जानना, शारीरिक शक्ति और आर्थिक दशा पर विचार न करके विवाह करना, जो विवाह करने योग्य नहीं हैं मूर्खतावश उनका विवाह करना और उसी अधकारमें बिना सोचे समझे सतानोत्पत्ति करना।

२ बालविवाह। इसका वर्णन पहले हो चुका है।

३ वृद्धविवाह। अन्य देशोंमें यदि कभी ऐसे विवाह होते हैं, तो वृद्ध पति, वृद्ध पत्नी खोज लेते हैं। यह नहीं कि ६० वर्षके बूढे दादा, अपनी पोतीकी आयुकी कन्यासे विवाह कर लें। किन्तु अभागे भारतमें ऐसे हृदयवेधक विवाहोंकी कमी नहीं है। पंडित सीताराम मुनीम मेरे किरायेदार थे। इस समय वे स्वर्गमें हैं या नरकमें, वे ही जानें। यह मकान मेरे रहनेके मकानसे मिला हुआ है, बल्कि एक दरवाजा खोल देने पर दोनों मकान एक हो जाते हैं और लोग आ जा सकते हैं। उन्होंने ५० वर्षकी आयुमें दो सौ रुपये देकर एक कुलीन ब्राह्मणके घरकी युवतीसे विवाह किया। यह अभा-

जिसकी युवती अबतक है और मेरे ही मकानमें है। इस अभागिनी युवतीमें सब गुण रमणियोंके से हैं। वह अत्यन्त सुन्दरी मृदुभाषिणी और कामकी पक्की है। जिस समय मुनीमजी के घरमें उनके सिवा और कोई नहीं रहता था। मुनीमजी बारह बजे राततक बाजारकी दुकानोंमें काम करते रहते थे और वह गरीब युवती मेरे घर स्त्रियोंमें मन मलीन किये बैठी रहती थी। जिन बातों पर साथकी बैठी हुई स्त्रियाँ खिलखिलाकर हँसती थीं उन्हीं बातोंसे इसके नेत्रोंसे टपाटप आँसुओंकी बड़ी बड़ी बूँदें टपक पड़ती थीं। दिनरात अपने भाग्यको धिक्कारा और रोया करती थी। विवाहके चार वर्ष बाद मुनीमजी मर गये। इस समय इस दुखिया विधवाकी आयु १९-२ वर्षके लगभग है। पवित्र भावसे मेहनत मजदूरी करके बेचारी अपना जीवन व्यतीत करती है।

बताइए, इस पापमय कर्मके कारण सीताराम और इस दीन बालिकाके मातापिता हैं या स्वयं वह जन्मदुःखिनी अबला? दोष किसका है?–बीसियों मनुष्योंके इस जन्मके कर्मका या उस अबलाके दुर्भाग्यका और उस जन्मके संस्कारका?

४ धन हीन पुरुषार्थ-हीन पुरुषोंका विवाह। संसारके सभी सभ्य देशोंमें लोगोंके आरामका रहनेके ढंगका एक समय और एक नियम हुआ करता है। जबतक उनकी आमदनी इतनी नहीं हो जाती कि वे एक खास स्टैण्डर्ड पर रह सकें विवाह नहीं करते। पर भारतकी दशा विचित्र है। यहाँ इन सब बातोंसे कुछ मतलब नहीं। आमदनी हो या न हो परिवार भर चाहे भूखों मर रहा हो पर सबसे छोटे लड़केका भी विवाह कर देना बस बापदादाके माथेका कर्तव्य है। कहा जाता है कि जब सभी अपने अपने भाग्यका खाते हैं तब नई बहू भी अपना भाग्य अपने साथ लावेगी। पर होता क्या है? जहाँ घरके सब प्राणी भूखों मरते थे वहाँ ग्यारह मरने लगते हैं। जहाँ थोड़ा कर्ज था वहाँ दो सौका हो जाता है और मजा यह कि अपने आपको दोष न देकर बेचारी नई बहूके भाग्य पर धब्बा लगाया जाता है और व्यंग बर्छियोंसे उसे सताते हैं।

५ शक्ति-हीन पुरुषोंका विवाह। यह भी एक विलक्षण बात है। अन्य देशोंमें जहाँ स्त्रियोंको कुछ अधिकार है जहाँ पत्नी पतिको त्याग कर सकती है तलाक दे सकती है वहाँ पुरुष अपनी तुच्छसे तुच्छ न्यूनता पर विचार

करते हैं। पुरुष डरा करते हैं। क्योंकि स्त्रियां बेधड़क कह बैठती हैं कि " तुमने किस बिरते पर मुझे वरनेका साहस किया था ?—How dare you marry me ? " पर यहां क्या, चाहे जैसीं और चाहे जितनी अपने घरमें डाल लीजिए। कोई कुछ कहनेवाला नहीं और वे बेचारीं कर ही क्या सकती हैं।

एक वकील साहब मेरे मित्र हैं। बॉकीपुर-कांग्रेसके लिए हम दोनों एक ही साथ गये थे। वहां आपकी तबीयत एकाएक खराब हो गई—गश आ गया। पास ही मेरे एक डाक्टर मित्रका खेमा था। वे तुरन्त आये और खूब अच्छी तरह देख भालकर मुझसे बोले कि ये महाशय शक्तिहीन हैं और यह इनका पुराना (chronic) रोग है। मूर्च्छा दूर होने पर मैंने और भी तीन डाक्टरोंको बुलाकर उनकी परीक्षा कराई, पर सबकी एक ही तशखीस हुई। सबोंने बताया कि उनमें पुरुष शक्ति नहीं है।

लौट कर, समय समय पर मैंने, प्राइवेट तौरसे उनकी स्त्रीकी दशाकी जांच कराई। मालूम हुआ कि घरमें उसका अनादर है, न वह किसीसे बोलती है और न उससे कोई बोलता है। अकसर अकेलेमें बैठकर रोती रहती है, सो भी खुल कर नहीं चुपचाप, नहीं तो लोगोंमें चर्चा होने लगेगी। वह पगली बदमिजाज और कुरूपा कह कर बदनाम है। इसीलिए मेरे मित्र वकील साहब उसे नहीं चाहते ! भारत, तू धन्य है !

८ भयंकर-रोग-ग्रस्त पुरुषोंका विवाह। जिन्हें क्षय होगया है, जिन्हें मिरगी आती है और जिन्हें गरमी या सुजाककी बीमारी हो चुकी है, ऐसे लोगोंका असर स्त्री पर तुरन्त पड़ता है, और उसको जीवनपर्यन्त क्लेश भोगना पड़ता है। पर भारतमें ऐसे सभी रोगी, बिना रोक-टोक विवाह किया करते हैं। मुझे अभी तक कोई अविवाहित भारतवासी नहीं मिला, जिसने ऐसे रोगोंके कारण विवाह न किया हो। काशीके एक बी० ए० महाशय मिरगीके कारण कुछ काम धाम नहीं कर सकते, उन्हें हफ्तेमें कई बार बड़े जोरके फिट आ जाते हैं, पर गत आठ वर्षोंके भीतर उनके पांच विवाह हुए और हर शादीमें ऊपरसे दहेज मिला ! मालूम नहीं उनकी स्त्रियां क्यों नहीं जीतीं। इस तरहके और भी अनेक उदाहरण मौजूद हैं।

इन रोगियोंको कौन झीखे, यहाँ तो अपाहिज और कोढियों तकका विवाह हो जाना आवश्यक समझा जाता है। यदि इनका विवाह न हो तो इनकी

खिदमत दूसरा कौन करे? भारतमें १ १८ १३१ अपाहिज और कोढ़ी हैं, जिनमें २ १२ ८५८ स्त्रियाँ हैं और इनके सिवाय लगभग १ १९ १११ अपाहिज लड़के हैं जिनकी आयु १५ वर्षसे कम है। दस वर्षसे १५ वर्षकी आयुके ५१ ५ ९ पाँचसे दस वर्षके २५ १११ और पाँच वर्षसे कम अर्थात् दूध पीनेवाले १९ २९१ हैं।

मुझे याद है कि क्रिश्चियन कालेज इलाहाबादके प्रो० हिगिन बाटम (Higgin Bottom) एक ८ वर्षके सुन्दर बालकको इसलिए रख लाये थे कि यदि वह अपने कोढ़ी मातापिताके साथ रहेगा तो अवश्य उसे भी यही रोग हो जायगा अलग रखनेसे शायद वह बच जाय। पर वह पैतृक रोग है। कुछ ही दिनोंके पश्चात् उसे भी वह रोग हो गया और फिर वह भी उसी गृहमें घुल घुल कर मरनेके लिए भेज दिया गया। पूछनेसे मालूम हुआ कि एक पुरुषको पुरुष-व्यभिचारके कारण गरमीका रोग हुआ और फिर इससे उसका खून खराब हो गया। इसी समय स्त्रीका देहान्त हो जानेके कारण उसने दूसरा विवाह किया और इस दूसरी स्त्रीसे पूर्वोक्त लड़का पैदा हुआ। विवाहके ६ वर्ष बाद दूसरी स्त्रीको भी कोढ़ हो गया और इस लड़केकी बारी आई। हा भगवन्! यह कैसा अन्याय है! ऐसे लोगोंको क्या हक है कि वे किसी अबलाको इस प्रकार नष्ट करें? मिरजापुरके एक प्रसिद्ध साहूको गलित कोढ़ है; पर विवाहित हैं। उनके पुत्रको भी यह पैतृक सम्पत्ति मिली है, पर विवाह करनेसे वह भी बाज न आया। उसके लड़केसे छः महीनेके बच्चेका खून ऐसा खराब हुआ कि बेचारेको उस छोटी अवस्थामें एक ही दिन १९ नश्तर भिन्न भिन्न स्थानोंमें लगवाने पड़े! इसका सारा ही शरीर फोड़ा बन गया था। साहूजीका छोटा लड़का कालेजमें पढ़ता है। ईश्वर न करे कि यह रोग उसे भी हो पर स्वास्थ्य उसका भी अत्यन्त बुरा है। विवाह उसका भी बड़ी धूमधामसे कर दिया गया है। बारातमें मैं भी गया था। नाच रंग सभी चीजें थीं और क्यों न हों! दहेज भी तो अच्छा मिला था।

हाय! हाय! उस अबलाकी दीन दशा पर ध्यान दीजिए, जिसे ऐसे वरोंमें ऐसे रोगियोंके साथ आयु पर्यन्त रहना है। विदेशि असहाय अबलाको

कोढ़ियोंकी सहायता भारतमें क्रिश्चियन मिशनरीज करती हैं।

अब ऐसे लोगोंकी सेवा शुश्रूषा करनी है, जिसे हम आप देख तक नहीं सकते, ऐसे वस्त्र धोने हैं, जिनके छूनेमें घृणा होती है, ऐसी जूठी थालीमें खाना है, जिनके हाथका पान भी हम और आप न खायँगे, और सबके ऊपर भय है कि शायद इस अभागिनीको भी गलगलकर मरना पड़े। आज उंगली कटी, कल अँगूठा गायब, परसों नाक नदारद!—एक एक इञ्च मांस कटकटकर गिरनेके पश्चात कहीं मृत्यु होगी।

(ञ)—दहेजकी कुप्रथा।

अन्य देशोंमें स्त्री-रत्न पानेके लिए युवक क्या क्या नहीं करते! कुमारियाँ किस इज्जतसे रक्खी जाती है! पुरुष उनका कैसा आदर और सत्कार करते हैं। यदि किसी दरिद्र घरकी कुमारी, गुण और सौन्दर्य्यसे पूर्ण हो तो बडेसे बडे लोग उसका पैर चूमनेको तयार रहते हैं। उस कुमारी पर प्रभाव डालनेके लिए अनेक कुमार यत्न करते हैं। खतरनाक खेल तमाशोंमें जान लडाकर विजयी बनना चाहते हैं, भयंकर युद्धमें घोर संग्राम करके मर जाते हैं, या नाम पैदा करते हैं।—क्यों? इसलिए कि वह प्रेमिका एक फूलोंका हार उनके गलेमें डाल दे, इसलिए कि वीरता पर प्रसन्न होकर कदाचित् उनको गले लगाना स्वीकार कर ले—उनसे विवाह कर ले।

पर भारतमें इन बातोंकी जगह लाटरी (Lottery) से काम लिया जाता है। घरके पुरोहित, गुरु घण्टालजी और चालाक हज्जाम मिल कर कन्याओंके जन्मका फैसला करते हैं। ज्योतिषीजी विश्वास दिलाते हैं कि इस कन्याको सुख उसी घर मिलेगा जहाँसे उनको कमीशन (पचातर यानी दहेजका पाँचवाँ भाग) के अलावा कुछ और वसूल हो सके। बस फिर क्या है, कुमारियाँ वहीं झोंक दी जाती हैं। वरकी योग्यतासे कुछ मतलब नहीं, आगेका सुख या दुःख कन्याको उसके भाग्यसे प्राप्त होगा।

यदि कुमारीके पिताके पास धनकी कमी नहीं है और ज्योतिषीजीने कुण्डलियोंकी चिट्ठी डाल कर किसी ऐसे वरसे विधि मिलाई कि जिसे नीलाममें अधिक धन देकर खरीदा जा सके तो खैर, कुमारी कदाचित अच्छे घर जा रहे, नहीं तो जिस घरमें, जिस वरसे कुण्डलीकी विधि मिल जायगी कुमारीको वहीं जाना होगा—वर चाहे लूला हो, लँगडा हो, अन्धा अपाहिज या कोढ़ी हो, कुमारी उससे ब्याह दी जायगी।

लड़कोंके नीलाम (दहेज) करनेकी ऐसी बुरी चाल समाजमें घुस गई है कि जिससे निर्धन अथवा सामान्य आमदनीके पुरुषोंको अत्यन्त क्लेश उठाना पड़ता है।

दुःख अमीर और गरीब दोनोंहीको होता है। क्योंकि जो जिस दर्जेका धनी है वह वैसे ही धनी घरमें बेटी दिया चाहता है और उससे उसी हिसाबसे अधिक दहेज माँगा जाता है। फल यह होता है कि कुमारियाँ सदैव अपने मुकाबले निर्धन घरोंमें ब्याही जाती हैं। इसका दुःख तो यहीं खतम हो जाता है कि अपने रुतबे और बराबरवालोंसे कमवालोंको बेटी देना पड़ा पर मुश्किल उन गरीबोंकी है जिन्हें लड़कियाँ हैं पर धन या जायदाद नहीं है। उनके पास इसका भी ठिकाना नहीं कि किसी दरिद्र लड़केको लड़की देकर गला छुड़ावें। जहाँ जाते हैं वहीं रुपयेकी पुकार सुनते हैं। पहला प्रश्न यही होता है कि कितना दहेज दोगे? एक तो यह चिन्ता कि लड़की दरिद्र घरमें जाती है और दूसरे उस घरमें झोंकनेके लिए भी दहेज चाहिए, कैसे काम चले? यह उन्हें चिताकी अग्निके समान भस्म कर देती है। लड़की पैदा होनेके साथ ही यह चिन्ता भी हृदयमें समा जाती है और उसी समयसे पेट काटकाटकर धन एकत्रित करना शुरू किया जाता है+और इससे परिवार भरके लोगोंको क्षयकी बीमारी होने लगती है। बहुतसे लोग लाचार होकर विषद्वारा अपने कष्ट और सामाजिक अपवादका अंत कर देते हैं। बहुतसी कुमारियाँ छिपा कर मार डाली जाती हैं और उनकी मृत्युका कारण कोई रोग बता दिया जाता है।

ऐसी घटनायें अनेक हो चुकी हैं जिनमें परिवारके परिवारने विष खाकर प्राण दे दिये हैं। बंगालकी साक्षात् देवी स्नेहलताके आत्मघातका वृत्तान्त पढ़कर कलेजा दहल जाता है —

+ एक राजपूत सरदार १६ लाख रुपया दहेज देनेके लिए मजबूर किया गया दूसरा १ लाख और तीसरा इससे भी ज्यादा—। मिस्टर शाइन।

मुन्शी प्यारेलालने दबाव पर इस असहनीय अत्याचारी रीतिका—जबरदस्ती दहेज वसूल करनेके रिवाजका—बड़ा प्रभाव पड़ा और उन्होंने ( ) स्थानों पर समाचारके इस रूपमें उठानेका प्रयत्न किया'—M. T P Page 172.

बाबू हरेन्द्रकुमार मुकर्जी कलकत्तेके एक सामान्य सज्जन हैं । आप वहाँ दलाली करते हैं। आपकी पुत्री स्नेहलता, प्रेमकी मूर्ति और साक्षात् देवी थी। उत्तम शिक्षा और सदुपदेशों द्वारा उसके हृदयमें बडे ऊँचे भाव उत्पन्न हो गये थे। लता १५ वर्षकी हो गई। हरेन्द्र बाबूको उसके विवाहकी बडी चिन्ता थी, विवाहके लिए उनसे २००० रु० दहेज माँगा जाता था। इतना धन देनेकी उनकी शक्ति नहीं थी, पर साथ ही किसी अयोग्य पात्रको वे स्नेहलताको दान नहीं दिया चाहते थे कि कम खर्चसे गला छूट जाय। अत उन्होंने अपने एक मात्र पैतृक धन मकानको बेच कर स्नेहलताका विवाह करना निश्चय किया।

स्नेहलता बुद्धिमती लडकी थी। उसमें विचारशक्ति आगई थी और बडे ऊँचे ख्याल पैदा हो गये थे। स्वभावत अपने सुखके लिए पिता तथा अन्य कुटुम्बियोंको दु.खमें डालना उसे रुचिकर न हुआ। उसने अपने आत्मयज्ञसे भारतके इस कलंकित पापको किसी अशमें भस्म करना ठान लिया। वह घरके काम-काजसे छुट्टी पाकर दोपहरको शृंगार करके घरके कोठे पर चढ गई और उसने धोतीको तेलसे तर करके उसमें आग लगा ली। सामने एक मंदिर था। वहाँके पुजारीने एक बालिकाको प्रसन्नचित्त जलते देख कर शोर मचाया। लोगोंने दौड कर आग बुझाई और वे उसे अस्पताल ले गये। पर उसी दिन सूर्यास्त होते होते उसकी पवित्र आत्मा भी अस्त हो गई।

मृत्युके पहले वह अपने पिताके नाम एक पत्र लिख चुकी थी। उसमें उसके स्नेहमय विचार प्रकाशमान हैं। यह पत्र भारतके १८–१९ फरवरी १९१४ के कुछ समाचारपत्रोंमें छपा है। उसका अनुवाद यह है —

" पूज्य पिताजी,

" मेरे विवाहके लिए आप अपने पूर्वपुरुषोंकी कमाईका घर न बेच दीजिए। इस घरमें बाहरके लोग आकर रहें यह मैं न देख सकूँगी। अब आपको घर रेहन रखनेकी आवश्यकता न पडेगी। कल पौ फटनेके पहले ही आपकी अभागी लडकी परलोक चली जायगी।

" आपने और माँने प्रेमपूर्ण जीवनमें इस स्नेहलताको बढ़ाया, अपने हृदयमें फैलनेका स्थान दिया। राजभवनमें रहनेवाली राजकुमारियोंसे भी बढ़कर मैं यहाँ सुखी थी। क्या मैं इस प्रेमका बदला इसी तरह देती कि आप

और मेरे भाई बहिन घरसे निकाल दिये जायँ ? आप दरिद्रता और दीनतासे जीवन व्यतीत करें ?

" पिताजी सबेरे शहर भर घूमकर जब आज दोपहरको घर आये और निराश होकर बोले कि 'काम बिगड़ गया !' आपका उस समयका चेहरा अब भी मेरी आँखोंके सामने है । आपके ये शब्द अब भी मेरे कानोंमें गूँज रहे हैं । मेरा विवाह कैसे हो इस चिन्तासे आपकी छाती जल रही है । १५ वें वर्ष तक मेरा विवाह नहीं हुआ । लोग आपकी निन्दा करते हैं । इस विषयमें आपने सिर ऊँचा करनेका बहुत प्रयत्न किया है ।

सचमुच मुझे विवाहका हौसला क्या हो सकता है ? आपकी चिन्ता दूर हो इस लिए मैं विवाह करना चाहती थी, परन्तु नहीं मेरा विवाह होना असम्भव है ।

उस दिन वर्षावाली बाढ़में बहुतसे उदार और लिखे पढ़े लोगोंने अनाथोंकी सहायता की कई लोगोंने विदेशी वस्तुओंका त्याग किया; कितने ही युवकोंने दक्षिण आफ्रिकावासियोंके लिए घर घर भीख माँगकर रुपया इकट्ठा किया । ईश्वर इन दयालु और उदार पुरुषोंकी सदा रक्षा करे । परन्तु इन युवकोंका ध्यान अपने देशकी दुर्दशा पर क्यों नहीं जाता ?

रातको जगन्माताने दर्शन देकर मुझे अपनी ओर बुलाया है । आप लोगोंको मेरे विवाहके कारण दुःख न भोगना पड़े इसलिए मैंने माँ भवानीके पास जानेका निश्चय किया है ।

" संसारयात्रा समाप्त करनेके लिए अग्नि जल अथवा विष इनमेंसे किस वस्तुकी शरण लेनी चाहिए, इसपर मैंने कुछ देर तक विचार किया; अन्तमें अग्निदेवकी शरण लेना निश्चय किया । अब मैं अपने शरीरमें आग लगा दूँगी; जिससे देशके सब लोगोंके अन्तःकरण पिघल जायँ और उससे दहेजका लोभ नष्ट हो, यही ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है ।

मेरे जाने पर आप लोग अश्रुपात करेंगे परन्तु वह न टिकेगा । उसमें आप और मेरे भाई शान्ति रख सकेंगे । पिताजी अब अधिक लिख नहीं सकती । आत्मयज्ञका समय निकट आ रहा है । अब मैं उस महान् चितामें निमग्न हूँगी जिससे फिर आगमन न होगा । माँ दुर्गाके पास अब मैं आपकी और माँकी हाथ जोड़ती हुई जा रही हूँ । —आपकी अभागिनी कन्या

स्नेहलता ।"

——

(ट)—हम अपने भाग्यके आप मालिक हैं।

'Nature's laws are not commands, they are statements of inviolable sequences We are not helpless in the hands of Nature We are helpless so long as we are ignorant, and when we understand them, they become our slaves ! By knowledge we can master them, change or turn them to our own purpose'

Annie Besant

'प्रकृतिके नियम कोई आज्ञायें नहीं है वरन् अनुल्लघनीय परिणाम दिखानेवाली बाते है। हम असहाय होकर सृष्टिनियमोंके अधीन नहीं है। केवल जबतक हमे उन नियमोंका भलीभाँति ज्ञान नहीं होता, तभीतक हम असहाय स्थितिमे रहते हैं। एक बार उनको अच्छी तरह समझ लेने पर वे हमारे दास वन जाते हैं। पूर्ण जानकारी होने पर हम उनपर अपना अधिकार जमा लेते है। इतना ही नहीं हम उनको वदल सकते हैं, उन्हें उलट-पलट कर अपना हित साधनेमे उपयोगी वना सकते है।'

—एनी बीसेण्ट।

भारतमें तीन अन्य आश्रमोंसे गृहस्थाश्रम अधिक उपयोगी है। इस आश्रमसे अन्य तीन आश्रमोंकी सहायता हुआ करती है। और सच भी यही है कि गृहस्थ ही अन्य तीन आश्रमवालोंका जीवनाधार है। वही इन तीनोंको पालन करता है। अत गृहस्थाश्रममें प्रवेश करना कोई हँसी खेल नहीं है। लोग वहुत सोच विचार कर इसमें प्रवेश करते थे। * किन्तु आजकल तो इस आश्रममें लोग आँख मूँदकर प्रवेश करते हैं। भारतमें विवाहकी ऐसी दुर्गति, ऐसी भरमार, और ऐसी वुरी चाल हो गई है कि 'कसे बाशद'—चाहे जो हो, विवाह अवश्य होना चाहिए—लूला हो, लँगड़ा हो, अपाहिज हो, वृद्ध हो, दरिद्र हो, कोढी या कलकी हो, विवाह अवश्य करे। और किससे? जिससे कृत्रिम कुण्डलीकी विधि मिल जाय, जिससे पुरोहितजीकी कमीशनकी लालच कुछ अधिक द्रव्य कमा सकती हो, जिस अभागिनीके पिता अधिक धन दहेजमें देनेमें असमर्थ हों। चाहे वह राजकुमारी हो, चाहे परम सुन्दरी हो, चाहे साक्षात् देवी ही हो, चाहे उसके गुण, कर्म और स्वभाव गृहलक्ष्मी

---

* स सन्धार्य्य प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।
सुखञ्चेहेच्छता नित्य योऽधार्य्यो दुर्वलेन्द्रियै ।

बनने या बनाये जानेके हों, पर इससे क्या मतलब ? गुरुमंत्रजीने तो ज्योतिष द्वारा विचार करके निश्चय कर दिया है कि विधाताने उस बालाका भाग्यमें अवश्यमेव अमुक क्षयरोगग्रसित अमुक पुरुषकी पत्नी होना लिख रक्खा है। उसी पतिके साथ पत्नीको सुख और आनन्द प्राप्त होगा!

आज विवाह हुआ कल पुत्री विधवा होकर घर बैठी। बस उसके लिए संसारके सारे सुख लोप हो गये। जिस प्रिय पुत्रीको अभी कल तक लोग सौभाग्यवती कहते थे आज वह भाग्यहीनी डायन कही जाने लगी। लोग उसका उसीको कुभाग्य और कटु वचनोंसे सताते हैं। लड़केकी नानी चिल्ला-रही है कि इस बहूने ही मेरे नातीको खा डाला। जिस दिनसे घरमें आई उसी दिनसे बेटाकी बीमारी बढ़ गई, यद्यपि वह बड़ी कुपथ्यसे और विवाहके दिनोंमें ठीक आराम न मिलनेसे। पुरोहितजी भी जो वैद्य भी भलीभाँति जानते हैं और जिन्हें विवाहके पहले ही लड़केके भयंकर असाध्य रोगका हाल मालूम था और जो यह जानते थे कि उसका बचना कठिन है उसी अभागाके भाग्यपर दोष लगाते हैं। कहते हैं कि— यदि इसके कर्म अच्छे होते—विधाताने इसको सिन्दूर लगाना लिखा होता तो यह यदि किसी मुर्देको भी पति करती तो वह जी जाता। अगर इसके भाग्यमें आराम बदा होता तो बाबाजीकी भभूत और महात्माजीका चरणामृत ही उसके लिए अमृत हो जाता। ऐसी उत्तमोत्तम रसादि मात्रायें अमूल्य दवाइयाँ इस तरह कभी निष्फल न जातीं। अभागीके घरमें यह पुत्री नहीं राक्षसी पैदा हुई है।"

धिक्कार है ऐसे विचारों पर! खैर तो पैशाचिक कार्य आप और दोष लगायें दूसरों पर। क्या डाक्टर या किसी अच्छे वैद्य द्वारा लड़केकी परीक्षा करा कर उसकी शारीरिक अवस्थाका या उसकी आयुका निर्णय करा लेना असम्भव था? यदि भाग्य ही पर मरना जीना निर्भर होता तो आज जिन्दगीका बीमा करनेवाली सारी ही कम्पनियोंका दिवाला निकल जाता और इसका हम डाक्टरी जाँचमें द्रव्य खर्च करना निरर्थक ही होता।

लोग अपनी भूल पर ध्यान न देकर, अपने विवेकको और अपने आपको दोष न देकर व्यर्थ ही भाग्यकी पूर्वजन्मके संस्कारकी और विधाताकी निन्दा किया करते हैं।

इस बातमें उतना अन्धेर भारतमें है वैसा संसारके किसी भी भागमें नहीं है। कुछ वर्ष हुए जब रेल टूट गई—सब किस्मतमें रेलका टूटना लिखा था। बाबाजीसे

सधवा सास और विधवा बहू।
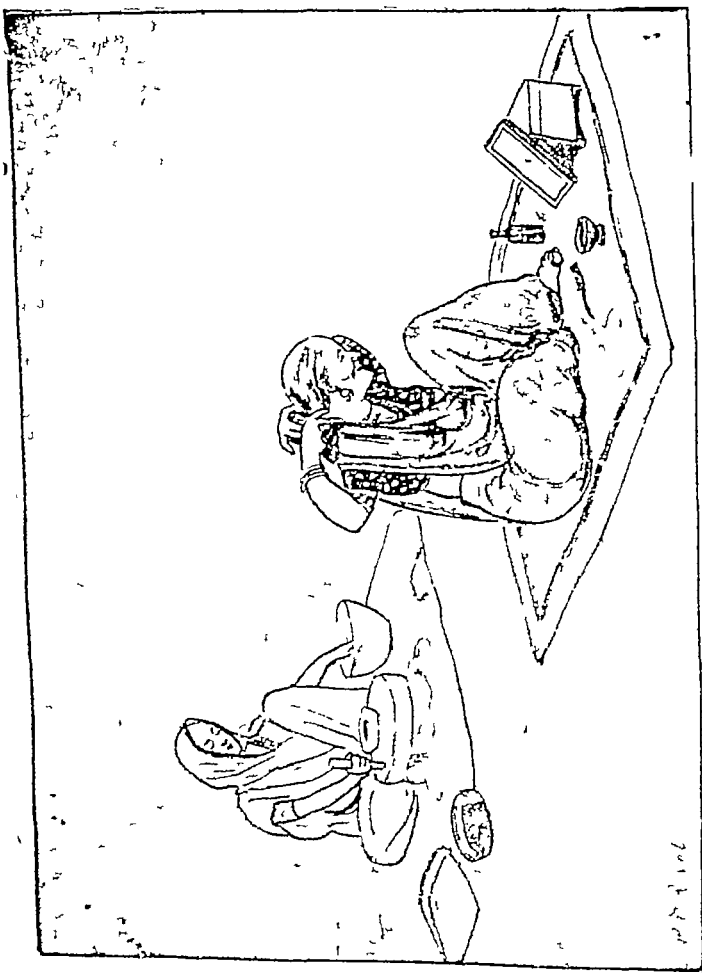
(देशदर्शन पृ० १६३)
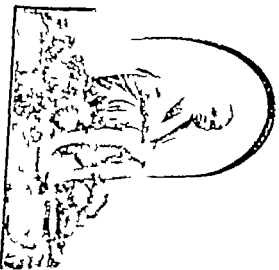
टिकट नहीं खरीदा, चलती गाड़ीमें पकड़े गये, सजा मिली—यह भी किसमतमें लिखा था। 'किसमतमें लिखा था' इस उत्तरसे अधिक नीच उत्तर नहीं हो सकता। यह केवल कायर, डरपोक और मूर्खोंका उत्तर है।

पूर्वजन्मके कर्मोंके फलसे क्या मतलब ? यदि कोई खून करे और कह दे कि 'जो शख्स मर गया उसकी किसमतमें मेरे हाथसे मरना लिखा था, इसमें मेरा क्या दोष ?' बस, चलिए छुट्टी हुई। इस एक कहने पर दुनियाकी सब बातें खतम हो जाती हैं।

विचार कीजिए, आपने ही अपनी पुत्रीको पैदा किया। आपने ही उसे पालपोस कर बड़ा किया। वह कोमल लताकी तरह आपके हृदयसे लगी रही। आपहीने बचपनमें किसी अयोग्य पतिसे उसका विवाह कर दिया। इस लिए कि ऐसा न करनेसे अथवा इसके विरुद्ध करनेसे समाजमें आपकी हँसी होती, कुछ लोग आपसे सम्बन्ध छोड देते और ताने मारते। अतएव आपने अपनी प्रिय पुत्रीका भला न देखकर स्वार्थवश उसे अयोग्य पतिसे व्याह दिया। कुछ ही दिनोंमें वह विधवा हो गई। अब वह अच्छे कपड़े नहीं पहिन सकती, शादियोंमें शरीक नहीं हो सकती। जहाँ और स्त्रियाँ खिलखिला कर हँस रही हैं, नाच रगमें आनन्द कर रही हैं, प्यारी पुत्री उसी घरके एक कोनेमें बैठ कर रो रही है। वह स्वय रोना नहीं चाहती, उसकी आँखोंमें जो आँसू आ रहे हैं वे पतिके प्रेम या विरहसे नही आ रहे हैं, पति देवताका तो उसे दर्शन ही नहीं प्राप्त हुआ, किन्तु उसके मनमें रह-रहकर अन्य लडकियोंके साथ मिलकर, दिल खोलकर हसनेकी और चिड़ियोंकी तरह इधर उधर फुदुकनेकी इच्छा होती है। पर ऐसा करनेसे आप—हाँ, हाँ, आप ही, उसे रोकते हैं कि लोग आप पर हँसेंगे। आप ही लोग उसे रुलाते हैं, और जिन्दगी भर रुलावेंगे। हाय ! हाय ! हमारे घरमें, हम हिन्दुओंके यहाँ, नित्य एक न एक तेहवार आया ही करता है। हमारी स्त्री और हमारी माँ तक पैरोंमें महावर लगावें, अच्छे अच्छे कपडे पहने और हमारी पुत्री देख देख तरसा करे। उसे जन्म भर इसी तरह रहना है। वह कभी पति देवताका दर्शन न कर पायेगी, वह कभी पुत्रवती होकर पुत्रमुखका चुम्बन न कर सकेगी। उफ ! बाल्यावस्थासे वृद्धावस्था तक उसे इसी दीन अवस्थामें रहना होगा। प्रतिदिन रोना, धिक्कार, तिरस्कार, और अपमानित किया जाना उसके भाग्यमें लिखा है और साथ ही साथ उसे कामदेवके

विधवाश्रमकी बालविधवायें।

(समरस्थान प ...)

मुण्डितमस्तका विधवा।

कि आपको यह बात कितनी अच्छी लगेगी ? यह कष्ट तो आपका एक आध दिनमें दूर हो जायगा, पर पुत्रीको जीवनपर्य्यन्तके लिए किस्मतके हीलेसे दु ख भोगनेके लिए छोड़ना कितना बुरा है—कैसी नीचता है, कैसी नामर्दी है ! दूसरे ही दिन सुबह आप लोहार बुलाकर उस छत पर जंगला (Railings) लगवा देते हैं कि कदाचित् फिर न गिर जायँ और जंगला लगा देने पर फिर कभी नहीं गिरते, आपके पूर्वजन्मका पाप फिर कभी नहीं उदय होता। लेकिन पुत्रियाँ रोज गिरती हैं, और आप बडी बडी दोनों आँखें खोले देखा करते हैं, पर ऐसा प्रबंध नहीं करते कि उनका गिरना बंद हो। उनका कष्ट तब ही दूर हो सकता है जब विवाह-रूपी खुली छत पर योग्य विवाहकी जाली लगा दी जाय।

'कर्म' है क्या ? प्रकृतिका अचल नियम। जैसे पृथ्वीमें आकर्पण शक्ति है। इस शक्तिका काम है कि सब चीजोंको अपनी ओर खींचे, लेकिन मनुष्यको फिर भी अधिकार है—उसमें सामर्थ्य है कि वह अपने सुभीतेके मुताबिक उस शक्तिको अपने अधीन रक्खे। हम सीढीसे, बिजलीके यन्त्र (Electric lift) से, हवाई जहाजसे ऊपर उठ सकते हैं, और इस आकर्पण शक्तिको दबा सकते हैं। हमारी स्वतन्त्र बुद्धिको कोई परतन्त्र नहीं कर सकता। पूर्वजन्मके कर्मके फल, हमें इस जन्ममें परतन्त्र नहीं कर सकते, वे हमारे वर्तमान कालकी स्वतन्त्रतामें बाधा नहीं डाल सकते। प्रकृतिने राजा, प्रजा, धनी, दरिद्र, स्त्री, पुरुष, मनुष्यमात्रको स्वतन्त्र बुद्धि प्रदान की है। इस शक्तिसे हम पूर्वजन्मके कर्मोंके फलको बदल सकते हैं।

पूर्वजन्मका संस्कार, यानी कुछ दिन पहलेका किया हुआ कर्म एक घड़ी पहले—एक दिन पहले—एक वर्ष पहले, या एक जन्म पहले, बात एक ही है। अच्छा, आजसे एक वर्ष पहले दो युवकोंने अपना बल बढानेके लिए संखिया और पारेका भस्म कुछ दिनों तक सेवन किया। आज दोनोंके शरीर रोगग्रसित हैं, सारे शरीरमें फोडे फुन्सियाँ निकल आई हैं। एक, हाथ पर हाथ रखकर किस्मत ठोक कर बैठा रो रहा है कि यह मेरे कर्मोंका फल है, मुझे भोगना ही पड़ेगा और दूसरा, अच्छे डाक्टर या वैद्यसे सलाह लेकर दवा करके अच्छा हो जाता है।

इसी तरह जब तक हम सृष्टि-नियमोंको नहीं जानते, वे हम पर हुकूमत करते हैं, पर जब हम उन्हें जान जाते हैं, तब वे हमारी गुलामी करने लगते

कठिन यातनाओंको सहकर युवावस्थामें तथा जीवनपर्यन्त पवित्र भावसे रहना है। इस लिए नहीं कि उसे इस तरह पर रहना पसन्द है बल्कि इस लिए कि आप उसे उस तरह पर रहनेके लिए मजबूर करते हैं। आप उस पर जबर्दस्ती करते हैं अत्याचार करते हैं।

बतलाइए तो सही इन सब यातनाओंमें पूर्वजन्मके संस्कारका दोष है कि आपका ? और अब भी उस पुत्रीकी दशा बदल देना आपके हाथोंमें है या भाग्यके ? उसके विधाता उसकी किस्मतमें लिखनेवाले आप हैं और हैं या ब्रह्मा ?

यदि आपको उसकी ओर विपत्तिमें सहानुभूति प्रकट करनी है उसका दुःख और कष्ट अखरता मंजूर है तो उसका फिरसे विवाह करना निश्चय कीजिए और देखिए कि उसके पूर्व जन्मके संस्कार भाग जाते हैं और आपको स्वतंत्रतासे काम करनेका अवसर मिल जाता है। आपके घर ८–९ वर्षकी लड़कियोंका विवाह हो जानेकी कुरीति है। आप बाल्यावस्थामें विवाह न करें। १५–१६ वर्षकी हो जाने पर किसी योग्य हृष्टपुष्ट विद्वानके साथ उसका विवाह करें फिर देख लें कि कुण्डली ग्रहस्थान और किस्मत ठीक है या आपके कर्म और ऐसा करनेमें आपकी पुत्रीके अगले जन्मके कर्म रोकते हैं या स्वयं आपकी कदराई आपका डर आपकी खुदगर्जी ? आप ऐसा करनेसे दूर भागते हैं। इस लिए नहीं कि पुत्रीके कर्म आपको रोकते हैं बल्कि इसलिए कि आप अपने संबन्धियोंसे अपनी जातिवालोंसे डरते हैं कि वे लोग आप पर हँसेंगे कुछ लोग शायद आपसे सम्बन्ध न रक्खेंगे आपकी थोड़ी हँसी उड़ावेंगे। बस इसलिए आप कुछ धब्बा पुत्रीके भाग्य पर लगा देना ठीक समझते हैं। बस एक बात वही बेसिर पैरकी बात 'जो विधाताने लिखा है वह हुए बिना न रहेगा।' यह कह देनेसे सारा किस्सा खतम होजाता है। सब झंझट अपने सिरसे दूर हो जाती है।

कल्पना कीजिए कि आप रातको ऊपर छतसे नीचे आँगनमें गिर पड़े। आपकी पुत्री देख रही है कि आपके घावसे खून निकल रहा है और आपको चोटके कारण बड़ा कष्ट हो रहा है। पर यदि वह यह कहकर बैठ रहे कि—पिताजीके भाग्यमें गिरना और चोट खाना बदा था यह उनके पूर्वजन्मके संस्कार हैं अस्तु, पड़े रहने दो, जो भोगना है भोग लेने दो—तो बताइए तो सही

कि आपको यह बात कितनी अच्छी लगेगी ? यह कष्ट तो आपका एक आध दिनमें दूर हो जायगा, पर पुत्रीको जीवनपर्यन्तके लिए किस्मतके हीलेसे दुःख भोगनेके लिए छोड़ना कितना बुरा है—कैसी नीचता है, कैसी नामर्दी है! दूसरे ही दिन सुबह आप लोहार बुलाकर उस छत पर जंगला (Railings) लगवा देते हैं कि कदाचित फिर न गिर जाये और जंगला लगा देने पर फिर कभी नहीं गिरते, आपके पूर्वजन्मका पाप फिर कभी नहीं उदय होता। लेकिन पुत्रियाँ रोज गिरती हैं, और आप बड़ी बड़ी दोनो आँखें खोले देखा करते हैं, पर ऐसा प्रबंध नहीं करते कि उनका गिरना बंद हो। उनका कष्ट तब ही दूर हो सकता है जब विवाह-रूपी खुली छत पर योग्य विवाहकी जाली लगा दी जाय।

'कर्म' है क्या ? प्रकृतिका अचल नियम। जैसे पृथ्वीमें आकर्षण शक्ति है। इस शक्तिका काम है कि सब चीजोंको अपनी ओर खींचे, लेकिन मनुष्यको फिर भी अधिकार है—उसमें सामर्थ्य है कि वह अपने सुभीतेके मुताबिक उस शक्तिको अपने अधीन रक्खे। हम सीढीसे, बिजलीके यन्त्र (Electric lift) से, हवाई जहाजसे ऊपर उठ सकते हैं, और इस आकर्षण शक्तिको दबा सकते हैं। हमारी स्वतन्त्र बुद्धिको कोई परतन्त्र नहीं कर सकता। पूर्वजन्मके कर्मके फल, हमें इस जन्ममें परतन्त्र नहीं कर सकते, वे हमारे वर्तमान कालकी स्वतन्त्रतामें बाधा नहीं डाल सकते। प्रकृतिने राजा, प्रजा, धनी, दरिद्र, स्त्री, पुरुष, मनुष्यमात्रको स्वतन्त्र बुद्धि प्रदान की है। इस शक्तिसे हम पूर्वजन्मके कर्मोंके फलको बदल सकते हैं।

पूर्वजन्मका संस्कार, यानी कुछ दिन पहलेका किया हुआ कर्म एक घड़ी पहले—एक दिन पहले—एक वर्ष पहले, या एक जन्म पहले, बात एक ही है। अच्छा, आजसे एक वर्ष पहले दो युवकोंने अपना बल बढ़ानेके लिए संखिया और पारेका भस्म कुछ दिनों तक सेवन किया। आज दोनोंके शरीर रोगग्रसित हैं, सारे शरीरमें फोड़े फुसियाँ निकल आई हैं। एक, हाथ पर हाथ रखकर किसमत ठोक कर बैठा रो रहा है कि यह मेरे कर्मोंका फल है, मुझे भोगना ही पड़ेगा और दूसरा, अच्छे डाक्टर या वैद्यसे सलाह लेकर दवा करके अच्छा हो जाता है।

इसी तरह जब तक हम सृष्टि-नियमोंको नहीं जानते, वे हम पर हुकूमत करते हैं, पर जब हम उन्हें जान जाते हैं, तब वे हमारी गुलामी करने लगते

हैं। चिकित्साशास्त्रके ज्ञानसे हम प्रकृतिके अनेक नियमों पर अपना अधिकार जमा लेते हैं। रसायन विज्ञान आदि द्वारा हम क्या क्या कर सकते हैं यह बतानेकी जरूरत नहीं। भाप और बिजली हमारी किस तरह पर गुलामी करती हैं बताना व्यर्थ है। आरम-उपमी ईसाने मुर्दे तकको जिला दिया था। क्या ये सब कर्म नहीं हैं? तात्पर्य यह कि पूर्व-जन्मके संस्कारके वशमें हमारे इस वर्तमान जन्मके कर्म नहीं हैं। हमारी बुद्धि स्वतन्त्र है। हमारी स्वतन्त्र बुद्धि इस जन्मके कर्मोंको दबा सकती है और उसका फल बदल दे सकती है। पूर्वजन्मके संस्कारसे नहीं किन्तु अपनी मूर्खताकी इच्छासे मनुष्य गलत काम करता है। यह उसका इस जन्मका कर्म है और इसके लिए वह उत्तरदाता है न कि उसके पूर्वजन्मका संस्कार। एक बार हुक्का पीनेसे रेल छूट गई पर अबसे ? सिगनल पहले पहुँच जानेसे वह कभी नहीं छूटती। पूर्वजन्मके संस्कार भले ही चाहा करें कि रेल छूट जाय। खासी मनुष्य मात्रको संसारके हर स्त्रीपुरुषको प्रकृतिने स्वतन्त्रता दी है। यदि वह चाहे तो कोई कर्म करे और न चाहे तो न करे। इसमें ईश्वर भी दखल नहीं दे सकता। यह भी उसीका बनाया हुआ नियम है। यह भी प्रकृतिका एक नियम है इसमें कोई आश्चर्य या नास्तिकता नहीं है।

जो कुछ कुरीतियाँ आपके घर प्रचलित हो रही हैं चाहे पूर्वजन्मके संस्कारसे और चाहे इस जन्मकी मूर्खोंसे उनका सुधारना आपके अधीन है। आप चाहें तो उन्हें आज ही तोड़ सकते हैं। उनका दण्ड देना आपहीके हाथोंमें है उनके कर्ता और अन्तकर्ता आप ही हैं। यह हमारी अज्ञानता है जो हम भाग्यके नाम रोया करते हैं। स्मरण कीजिए, भगवान बुद्धने उपदेश दिया है कि " हम अपने भाग्यके आप मालिक हैं। अपने भाग्यके रचयिता हमीं हैं। भीष्म पितामहने कहा है कि— 'भाग्यसे कर्म अधिक प्रबल है।" भगवान् कृष्णने गीतामें बारम्बार उपदेश दिया है— कर्मसे न हटो—कर्म करो—कर्म करनेकी कुशलता ही योग है।

यहाँ भी मूर्खतावश लोग वेदान्तका अर्थ उलटा लगाते लगाते हैं कि 'अपने जन्मके कारण भी हमीं हैं—जन्मसे अन्धे अपाहिज या कोढ़ी हों चाहे दीनके घर अथवा अत्यन्त बुरी दशामें जन्म लिया हो—सबके कारण हम ही हैं। हमारे पूर्वजन्मके कर्मानुसार फल ही ऐसी अवस्थामें हमें जन्म दिलाता है। अपने और मातापिताका चुनाव स्वयं हम ही करते हैं। अस्तु। जन्मदाता

मातापिताका ऐसी सन्तानोत्पत्तिमें क्या ? निज पूर्वसंचित कर्म्मानुसार सन्तान उत्पन्न होकर दुःख या सुख भोगती है। इसमें किसीका क्या दोष ? ''

इस आध्यात्मिक पुनर्जन्मके गम्भीर प्रश्नका सक्षेप और साधारण उत्तर यही है कि—''किसी आत्मा या सूक्ष्म शरीरके कर्तव्य, किसी अन्य स्त्री-पुरुषको किसी प्रकारका कार्य करनेके लिए बाध्य नहीं करते। वे अन्य पुरुषोंकी स्वतंत्र बुद्धि या इच्छाको अपने कर्मोंको भोगनेके लिए आकर्षित तक नहीं कर सकते। जन्म लेना एक बात है और जन्म देना दूसरी बात। जन्म लेना एकका काम है और जन्म देना दूसरेका काम। जन्म देनेका भार जन्मदाता मातापिता पर है। जन्म पानेका अच्छा और बुरा फल जन्म पानेवाला अपने कर्मानुसार भोगेगा, पर जन्म देनेका अच्छा या बुरा फल जन्मदाता मातापिताको भोगना होगा।'' इसे यों समझिए कि किसी पापात्माको अपने कर्म्मानुसार एक कोढ़ीके घर जन्म लेना है, और संसारमें कोई कोढी नहीं है या यह कि कोढियोंने निश्चय कर लिया है कि वे सन्तानोत्पत्ति न करेंगे। उन्होंने स्त्रीप्रसंग त्याग दिया है। अब वह पापात्मा क्या कर सकता है ? क्या उसका कर्म संसारमें कोढ रोग फैला दे सकता है ? या कोढियोंको विवाह करनेके लिए मजबूर कर सकता है ? कोढी यह जानते हैं कि उनकी सन्तानको भी यह रोग हो सकता है। यह जानते हुए भी किसीने स्वार्थवश कामातुर होकर भोग किया, और उसके कोढी सन्तान हुई। इस बुरे कर्मका फल किसे मिलेगा ? हालाँ कि जन्म लेनेवाली संतान वही पापात्मा है जिसे ऐसी जगह जन्म लेना है। मतलब यह कि जन्म देनेके पापका फल उस जन्मदाता कोढीको अवश्य भोगना होगा।

एक लोभी डाकूने एक धनी पथिकका सिर काट कर उसका धन लूट लिया और पथिकको कर्मानुसार (उसकी इस जन्मकी गफलतसे और काफी तरह पर अपने हितका सामान न रखनेसे या पूर्वजन्मके कर्मफलसे) धन लुटाने और सिर कटानेका भयंकर कष्ट भोगना पड़ा। पर धन लूटने और सिर काटनेका पाप तो, खूनी डाकूको अवश्य ही होगा। यह कुटिल कर्म उस डाकूने अपनी स्वतन्त्र बुद्धि और इच्छासे किया है न कि पथिकके कर्मोंने उससे ऐसा कराया है। पथिक असावधान था, उसके सिर पर मृत्यु नाच रही थी, पर तो भी डाकू यदि चाहता तो उसे न मारता। लालचको दबाना, अपनी कुबुद्धिको रोकना डाकूका काम था। लूटना, सिर काटना

का छोड़ देना बिलकुल उसीके हाथोंमें था। यदि वह ऐसा न करना चाहता तो ब्रह्मा भी यदि चाहते कि वह भूल करे तो उनका चाहना निष्फल होता।

प्रकृतिने—प्रकृतिने छोटेसे छोटे स्त्री-पुरुषको—मनुष्य मात्रको निर्मल और स्वतंत्र बुद्धि प्रदान की है। किसी ऐसे व्यक्तिको किसी तरहका काम करने या न करनेका पूर्ण अधिकार और स्वतंत्रता है। यदि वह चाहे करे और न चाहे तो न करे। कार्य चाहे क्षुद्र हो और चाहे महान्, इसमें विधाता भी कुछ नहीं कर सकता।

हम देखते हैं कि इस कर्म-जगतमें पुरुषार्थहीसे सब कुछ प्राप्त होता है। आलस्यमें राम राम पुकारनेवालोंकी ईश्वर भी सहायता नहीं करते। देशोद्धारक छत्रपति शिवाजीका जीवनचरित पढ़िए। उन्होंने कैसे कुसमयमें कैसी कैसी कठिनाइयोंका सामना करके देश और धर्मका पुनरुद्धार किया था। बढ़ईके पुत्र ईसाने सारे संसारको उलट पलट दिया। नैपोलियन बोनापार्टने एक सामान्य गड़रियेके घर पैदा होकर अपने बाहुबल द्वारा एक बार सारे यूरोपको हिला दिया। जुलाहेके लड़के जगत्प्रसिद्ध कविवर शेक्सपियरने अपने कर्मोंहीसे अक्षय कीर्ति कमाई। इन्हें छोड़ हमारे आदर्श श्रीरामचन्द्र या कृष्णचन्द्र अथवा भगवान् बुद्धकी जीवनी ही पढ़कर देखिए कि इनकी कीर्ति इतना यश इनका नाम जगतमें क्यों प्रसिद्ध है? इस लिए कि ये राजकुमार थे और राजशय्या पर महलोंमें मान्य द्वारा निवास करते थे या इसलिए कि उन्होंने कर्म अनुपम किये? स्मरण रहे कि जिन्हें हम स्वयं भगवानका अवतार समझते हैं उन्हें भी सामान्य मनुष्योंकी तरह कष्ट सहना पड़ा था। उन्हें भी अपनी विचारशक्तिसे वैसे ही काम लेना पड़ा था जैसे आज हमें लेना है।

जरा सोचिए तो सही कि राम आपके सामने खड़े सोच रहे हैं कि यदि माताजी (कैकेयी) की आज्ञा पालन करते हैं तो पिताजी प्राणघात करते हैं—वन जावें कि न जावें? महाभारत करानेवाले अर्जुनके सारथी और गीताके उपदेशक भगवान् कृष्णको अपने सगे मामा कंसको मारना है—मारें या न मारें? भयंकर युद्ध करना है भाईको भाईसे चचाको भतीजेसे गुरुको शिष्यके हाथों मरवाना है बालब्रह्मचारी भीष्मपितामहको उन्हींके प्रिय प्रतापी अर्जुनसे धोखेसे मरवाना है धर्मराज युधिष्ठिरसे गुरुकी मृत्युके हेतु झूठ कहलाना है और यह सब कुछ कृष्णजीके उपदेशसे होना सम्भव है—उनका उपदेश

करें या न करें ? राजकुमार गौतम, जिसे स्वय कभी किसी तरहकी तकलीफ नहीं उठानी पडी थी, जो बचपनहीसे ऐशोअशरतके साथ पाला गया था और जिससे दुनियाँकी सब तकलीफें छिपाई गई थीं सयोगसे कई दु खी व्यक्तियोंको देख कर संसारके उपकार और उद्धारकी चिन्ता कर रहा है। इस महान् कार्यके लिए, उस समयकी गिरी जातियोंको उठानेके लिए, भाग्यका मिथ्या पाखण्ड तोड़ कर सबको कर्मक्षेत्रमें लानेके लिए, आनन्दमय महलोंको, कोमल राजशय्याको, मनोमोहनी सुन्दरी प्यारी रानीको और प्राणोंसे भी अधिक प्यारे एक मात्र पुत्रको त्यागना है—कुछ न कहकर सबको सोता छोडकर भाग कर जँगलोंकी खाक छानना है। वे जाते जाते ठमक कर घूम पडते हैं और नींदमें भी मुसकुराते हुए बच्चेको चूमा चाहते हैं—उफ! अब जायँ या न जायँ ? पक्षपातरहित विचार करनेसे प्रकट होता है कि ये देवतासे मनुष्य नहीं हुए, बल्कि इन्होंने मनुष्यसे देवताके पदको प्राप्त किया है।

भाग्यके नाम सिर पर हाथ देकर रोनेमे नहीं, बल्कि धीरता धारण करके शत्रुका सामना करनेसे उसका नाश किया जा सकता है, अन्यथा प्रारब्धके नाम बैठे रहनेसे अपना ही विनाश हो जाता है। किसी भी मुसीबत या कष्टका मुकाबला करनेसे शरीरकी सब शक्तियाँ बढती हैं और बैठे रहनेसे न केवल हार होती है बल्कि शक्तियाँ भी प्राय लोप हो जाती हैं।

कसरत करनेसे शरीर क्यों पुष्ट होता है ? इसलिए कि शरीरके अनेक अगोंको किसी न किसी तरहके कष्टका मुकाबला करना पड़ता है। और उसका फल यह होता है कि नित्यकी इस मुठभेडसे शरीर पुष्ट होता है और बल बढता है। किसमें कितना बल है, किसमें कितना पुरुषार्थ है, इसकी जाँच, कार्यके करनेहीसे हो सकती है। कौन कह सकता था कि राममूर्ति या सैण्डोके शरीरमें इतना बल होगा कि उनके सीने पर हाथी चढ़ाया जा सकेगा। यदि बचपनमें वे सोच लेते कि भाग्यमें बलवान् होना लिखा होगा तो हो ही जायँगे, अथवा हनुमानजीको सवा पाव मिठाईकी रिश्वत देकर बलवान् हो जायँगे और इधर नित्य प्रति कठिन परिश्रम न करते, तो क्या उनका बलवान् होना सम्भव था ?

पाठकगण, आप चाहे स्त्री हों या पुरुष, अविवाहित हों या विवाहित, धनाढ्य हों या धनहीन, आप अपना, अपनी सतानका, समाजका और साथ

ही आप देशका सुधार कर सकते हैं। और किसीकी आवश्यकता नहीं है पदाधिकारी बननेकी आवश्यकता नहीं है और धनकी भी मात्रा ज़रूरत नहीं है। इसमें केवल पुरुषार्थकी आवश्यकता है।

यदि आप दृढ़ हो जायँ कि हम अमुक कार्य अवश्य करेंगे तो भाग्य कभी भी आपका हाथ न थाम सकेगा। हाँ कठिनाइयाँ अवश्य मिलेंगी। पग्पग पर आपको उनका मुकाबला करना पड़ेगा। पर अंतमें विजय आपकी ही होगी।

> मामयोंकी जीवनी हैं यह हमें बतला रहीं
> अनुसरण कर मार्ग जिनका उच्च हो सकते सभी।
> कालरूपी रेतमें पदचिह्न जो तजि जायँगे
> मानकर आदर्श उनका ख्याति नर जग पायँगे॥

(ठ)-भारतमें विवाहित जनोंकी, तथा जन्म और मृत्यु-सम्ख्याकी अत्यन्त अधिकता।

इंग्लैण्डमें एक जर्मसे १५ से ४५ वर्षकी विवाहित स्त्रियोंकी संख्या फी सैकड़ा ४ है। अर्थात् १ में कुल ४० स्त्रियां विवाहिता हैं। भारतमें १५ से चौवालाकी विवाहिता स्त्रियोंको छोड़कर जिनकी संख्या कम नहीं है और केवल उन्हींकी संख्या लेने पर जो १५ से ४ वर्षकी हैं मालूम होता है कि फी सैकड़ा ८२.७ अर्थात् १ में ८२ से भी अधिक स्त्रियाँ विवाहिता हैं*। अर्थात् जर्मनीकी सवा तीन करोड़ स्त्रियोंमेंसे कुल १४ लाख विवाहिता हैं और भारतकी १३ करोड़मेंसे ७ करोड़ विवाहिता और ढाई करोड़ विधवा हैं ×। और सुनिए भारतमें जन्मसंख्या संसारके सब देशोंसे अधिक है। (आगे लगा हुआ कोष्टक देखिए।)

इस अत्यन्त अधिक जन्मसंख्याका कारण यह नहीं है कि भारतकी स्त्रियाँ अन्य देशोंकी स्त्रियोंसे अधिक बच्चा देनेवाली होती हैं। इंग्लैण्डमें १ विवाहित स्त्रियोंसे २३७ और भारतमें २०१ बच्चे पैदा होते हैं। इससे जाहिर है कि भारतकी स्त्रियाँ बहुत अधिक बच्चा पैदा करनेवाली नहीं होतीं।

---

* Gov ament Report, Sanitary Measures i India 190 -06, page 80

× Statesman Year Book 1911.

ही आप देशका सुधार कर सकते हैं। बाट देखनेकी आवश्यकता नहीं है पदाधिकारी बननेकी आवश्यकता नहीं है और धनकी भी प्रायः जरूरत नहीं है। इसमें केवल पुरुषार्थकी आवश्यकता है।

यदि आप दृढ़ हो जायँ कि हम अमुक कार्य अवश्य करेंगे तो मानो कभी भी आपका हाथ न थाम सकेगा। हाँ कठिनाइयाँ अवश्य मिलेंगी। पग पग पर आपको उनका मुकाबला करना पड़ेगा। पर अंतमें विजय आपकी ही होगी।

मानवोंकी जीवनी हैं यह हमें बतला रहीं
अनुसरण कर मार्ग जिनका धन्य हो सकते सभी।
कालरूपी रेतमें पदचिह्न जो तजि जायँगे
मानवर आदर्श उनका ख्याति भर जग पायँगे॥

(ठ)–भारतमें विवाहित जनोंकी, तथा जन्म और मृत्यु-संख्याकी अत्यन्त अधिकता।

इंग्लैण्डमें एक अरसेसे १५ से ४५ वर्षकी विवाहित स्त्रियोंकी संख्या फी सैकड़ा ५० है। अर्थात् १०० में कुल ५० स्त्रियाँ विवाहिता हैं। भारतमें १५ से चौबीसकी विवाहिता स्त्रियोंको छोड़कर जिनकी संख्या कम नहीं है; और केवल उन्हींकी संख्या लेने पर जो १५ से ४ वर्षकी हैं मालूम होता है कि फी सैकड़ा ८२.७ अर्थात् १०० में ८२ से भी अधिक स्त्रियाँ विवाहिता हैं*। अर्थात् जर्मनीकी सवा तीन करोड़ स्त्रियोंमेंसे कुल ९८ लाख विवाहिता हैं और भारतकी १२ करोड़मेंसे ७ करोड़ विवाहिता और ढाई करोड़ विधवा हैं ×। और सुनिए, भारतमें जन्मसंख्या संसारके सब देशोंसे अधिक है। (आगे छपा हुआ कोष्टक देखिए।)

इस अत्यन्त अधिक जन्मसंख्याका कारण यह नहीं है कि भारतकी स्त्रियाँ अन्य देशोंकी स्त्रियोंसे अधिक बच्चा देनेवाली होती हैं। इंग्लैण्डमें १००० विवाहित स्त्रियोंमें २१७ और भारतमें २०२ बच्चे पैदा होते हैं। इससे जाहिर है कि भारतकी स्त्रियाँ बहुत अधिक बच्चा पैदा करनेवाली नहीं होतीं।

---

* Government Report, Sanitary Measures in India 1905–06, page 60

× Statesman's Year Book 1911.

स्मरण रहे कि बच्चे मरनेके लिए नहीं पैदा होते और यदि वे मर जाते हैं तो इसमें सर्वथा हमारा दोष है—हमारी न्यूनता है। अपनी दुर्दशा जानते हुए भी यदि हम सन्तानोत्पत्ति करें और वे मर जाये, तो उनका खून हमारे सिर है। उनकी मृत्युके पापभागी हम ठहराये जायँगे। ऐसा करना खामखाह खून करना है। यह वह अपराध है जिसकी क्षमा न मिल सकेगी।

यह हमारी असावधानी, और खुदगर्जीका फल है कि एक वर्षके नीचेके आयुके बच्चे एक हजारमें ३३३ मर जाते हैं। अर्थात् हर ३ बच्चोंमेंसे एक मर जाता है *। इस तरह भारतमें प्रति वर्ष २८ लाख बच्चोंकी मृत्यु होती है। बच्चोंकी मृत्युकी सख्या बराबर बढ़ती ही जा रही है।

प्रति हजार एक वर्षके नीचेके बच्चोंकी मृत्यु—

सन्	१९०५	१९०६	१९०७
लडके	२१६ ६	२२८ ३०	२२१ ७२
लडकियाँ	२०० ४	२१७'५२	२०९ ३३

और यह दशा भारत जैसे गरम देशकी है जहाँकी आबोहवा बच्चोंको जीवित रखनेके लिए माफिक है, जहाँ स्त्रियोंको कारखानोंमें काम नहीं करना पडता, जहाँ जीवन-सम्राम बहुत कड़ा नहीं है, और जहाँ बच्चोंको दाइयाँ नहीं बल्कि स्वय मातायें पालती हैं। इँग्लैण्डमें, जहाँ कडी सरदी पडती है, और जहाँ माताओंको बच्चोंको छोड कर दिन भर बाहर काम करना पढता है और जहाँ अकसर किरायेकी दाइयाँ बच्चोंको पालती हैं, बच्चे इस हिसाबसे मरते हैं—

मैनचिस्टर १६०, एडिन्बरो १५०, बरमिंघम १३०, प्रति हजार।

ये वे शहर हैं कि जिनके निवासियोंको जान टेकर दिनभर कठिन परिश्रम करना पडता है। इनके जीवन-संग्रामका अनुभव करना ही भारतवासियोंको कठिन होगा। तो भी वहाँ भारतसे आधे बच्चे मरते हैं।

आप सोच सकते हैं कि जिस घरमें एक बच्चा मर जाता है उस घरकी क्या दशा होती है। साल भर तक रोना पीटना लगा रहता है, ठीक तरहसे लोग कामकाज भी नहीं करते और मातायें तो उस समय तक रो-रोकर प्राण

---

*Indu Madhav Mallik, M A, B L M, D from last Census Report

भारतमें अधिक जन्मसख्याके दो प्रधान कारण हैं—१ अत्यन्त अधिक विवाह, अर्थात् बहुत लोगोंका विवाहित होना और २ भारतकी दरिद्रता या भारतवासियोंको पेट भर अन्न न मिलना।

" The increased birth-rate is only another proof of the impoverishment of the (Indian) people "

अर्थात् हिंदुस्थानके दरिद्र होनेका एक कारण दिन पर दिन मनुष्यसख्याकी बढती है।

इस अधिक सन्तानोत्पत्ति पर भारतवासियोंको कदाचित् अभिमान हो, शायद वे यह समझते हो कि अन्य देशवालोंसे उनमें सन्तानोत्पत्तिकी शक्ति अधिक है, अत वे ससारकी अन्य जातियोंसे बलवान् और पुरुषार्थी हैं, पर यह ठीक नहीं है। बात बिलकुल उलटी है। यह भी प्रकृतिका एक विलक्षण नियम है कि दरिद्र, कमजोर और अधपेटा भोजन पानेवाली भूखी जातियोंको सन्तान धिक पैदा होती है।

" The fecundity (fruitfulness) of the human animal and of all other living beings is in inverse proportion to the quantity of nutriment available and that an underfed population multiplies rapidly "

" Birth-rate is much smaller in higher than in lower social strata, that fertility in man increases *pari passu* with poverty "

" Everywhere it has been seen that the inhabitants of the poorest quarters are the most prolific "

भारतमें जिस लापरवाहीसे लोग विवाह करते हैं, उससे अधिक लापरवाहीसे सन्तानोत्पत्ति करते हैं। भारतवासी समझते हैं कि सन्तानोत्पत्ति करनेवाला विधाता है। इसमें उनका कुछ भी लगाव नहीं है, या यों कहिए कि यह भी एक किसमतका खेल है। इसमें उनका चारा नहीं। प्रत्यक्ष देखते हैं कि घरमें जो बच्चे मौजूद हैं उनके पालन-पोषणका प्रबन्ध नहीं हो सकता, माता और पिता दोनों अपना पेट काटकर भी सन्तानकी उदरपूर्ति नहीं कर सकते, पर बच्चे यदि हरसाल नहीं तो हर दूसरे साल अवश्य ही पैदा हो जाते हैं। पर इसमें उनका कुछ दोष नहीं, यह उनके कियेकी बात नहीं, यह तो विधाताकी 'देन' है!

जो पढ़े लिखे हैं वे भलीभाँति अपनी आमदनीकी दशा जानते हैं और यह जानते हुए भी कि हम अमुक संख्यासे अधिक बच्चोंकी परवरिश नहीं कर सकते वे सन्तानोत्पत्ति किये जाते हैं। भारतमें दूधकी कमी है और यह कमी दिनों दिन बढ़ती ही जा रही है। यहाँ पर कुल ४ करोड़ गायें और भैंसें हैं और वे बराबर साल भर तक दूध न देकर ६ महीने तक देती हैं। अर्थात् २ करोड़ गाय भैंसोंके दूध पर ३१ करोड़ भारतवासी बसर करते हैं। औसत निकालनेसे १५ जन पीछे एक गाय पड़ती है*। जब दूधका ऐसा अभाव है तो दूध पर ही जीनेवाले बच्चे कहाँ तक जीयेंगे इसका विचार आप स्वयं कर सकते हैं पर आप बच्चे पैदा करनेमें नहीं चूकते। पहले घरमें गाय रख लीजिए, तब बच्चे पैदा कीजिए।

अजब अन्धेर है। एक चित्रकार तसवीर बनानेसे साफ इनकार कर देता है। कह देता है कि इस समय मेरा चित्त दूसरी ओर है; यदि तसवीर बनाऊँगा तो वह ठीक न बन सकेगी। कविको अच्छी कविता बनानेके लिए एक खास जोश (inspiration) होना चाहिए। गानेवालोंके लिए भी यही बात है। मिट्टीके पैसे-पैसेके खिलौने बनानेवाला कुम्हार भी शराब पीकर या लड़ाई झगड़ा करते हुए खिलौने नहीं बनाता इस लिए कि वे ठीक न बन सकेंगे बिगड़ जायँगे। पर वाहरे अन्धेर! इन ईश्वरकी मूर्तियों—देवता और देवियोंकी पवित्र जीवित मूर्तियों—के बनानेमें किसी बातका विचार नहीं किया जाता! शारीरिक और मानसिक दशा चाहे कैसी ही खराब क्यों न हो हम एक नहीं मानते। रातको शराबकी दो पेग और चढ़ा लेते हैं और एक बीबीको भी पिला देते हैं या भंगका एक बड़ा गोला खूब जमा लिया और एक छोटी मात्रा मजबूर बीबीके हाथ घरमें भी भेज दी कि रातको सब झंझटसे परे चित्त किनारे रहे और मौज आवे। यदि इस मौसम कुछ और अधिकता करनी हुई तो कोई रस या मिर्चकी कामोद्दीपक औषधिका सेवन कर लिया। ऐसी अवस्थामें वीर्यकी क्या दशा रहती होगी और ऐसे समयमें गर्भाधानसे कैसी सन्तान पैदा होती होगी यह बतानेकी आवश्यकता नहीं। और उसपरसे तुर्रा यह कि सन्तान पैदा होने पर पोसनेके लिए दूधका भी ठिकाना नहीं! परिणाम क्या होगा? यही जो आजकल हो रहा है।

---

* The Hindoostan Review—November 1913, P 312.

स्मरण रहे कि बच्चे मरनेके लिए नहीं पैदा होते और यदि वे मर जाते हैं तो इसमें सर्वथा हमारा दोष है—हमारी न्यूनता है। अपनी दुर्दशा जानते हुए भी यदि हम सन्तानोत्पत्ति करें और वे मर जायं, तो उनका खून हमारे सिर है। उनकी मृत्युके पापभागी हम ठहराये जायंगे। ऐसा करना खामखाह खून करना है। यह वह अपराध है जिसकी क्षमा न मिल सकेगी।

यह हमारी असावधानी, और खुदगर्जीका फल है कि एक वर्षके नीचेके आयुके बच्चे एक हजारमें ३३३ मर जाते हैं। अर्थात हर ३ बच्चोंमेंसे एक मर जाता है *। इस तरह भारतमें प्रति वर्ष २८ लाख बच्चोंकी मृत्यु होती है। बच्चोंकी मृत्युकी संख्या बराबर बढ़ती ही जा रही है।

प्रति हजार एक वर्षके नीचेके बच्चोंकी मृत्यु—

सन्	१९०५	१९०६	१९०७
लडके	२१६ ६	२२८ ३०	२२१ ७२
लडकियाँ	२०० ४	२१७ ५२	२०९ ३२

और यह दशा भारत जैसे गरम देशकी है जहांकी आबोहवा बच्चोंको जीवित रखनेके लिए माफिक है, जहाँ स्त्रियोंको कारखानोंमें काम नहीं करना पडता, जहां जीवन-संग्राम बहुत कडा नहीं है, और जहाँ बच्चोंको दाइयों नहीं बल्कि स्वयं मातायें पालती हैं। इंग्लैण्डमें, जहाँ कडी सरदी पडती है, और जहाँ माताओंको बच्चोंको छोड कर दिन भर बाहर काम करना पडता है और जहां अकसर किरायेकी दाइयां बच्चोंको पालती हैं, बच्चे इस हिसाबसे मरते हैं—

मैनचिस्टर १६०, एडिन्बरो १५०, बरमिंघम १३०, प्रति हजार।

ये वे शहर हैं कि जिनके निवासियोंको जान देकर दिनभर कठिन परिश्रम करना पडता है। इनके जीवन-संग्रामका अनुभव करना ही भारतवासियोंको कठिन होगा। तो भी वहाँ भारतसे आधे बच्चे मरते हैं।

आप सोच सकते हैं कि जिस घरमें एक बच्चा मर जाता है उस घरकी क्या दशा होती है। साल भर तक रोना पीटना लगा रहता है, ठीक तरहसे लोग कामकाज भी नहीं करते और मातायें तो उस समय तक रो-रोकर प्राण

*Indu Madhav Mallik, M A, B L. M, D from last Census Report

देती रहती है जब तक उसके बदले एक दूसरा बच्चा उसकी गोदमें न आ जाय।

और सबसे खराब बात यह है कि इस तरह पर असावधानीसे सन्तानोत्पत्ति करनेसे आबादी भी नहीं बढ़ सकती। बच्चे पैदा अधिक अवश्य होते हैं पर साथ ही मृत्युसंख्या बढ़ जाती है और आबादीका बढ़ाव रुक जाता है। मर्दुमशुमारीकी रिपोर्ट देखनेसे पता चलता है कि सन् १८८१ में प्रति हजार ३३ १ १८९१ में ३३ १ और १९ १ में ३४ १ जन मरे।

अन्य देशोंमें मृत्युकी संख्या कम होती जाती है। इंग्लैण्डमें किसी समय की हजार ७ जन मरते थे वे ही कम होकर १८६५ में ३ १८८ में २८ आर १ १ में १५ मरने लगा।

पर भारतकी मृत्युसंख्या बढ़ती जाती है। यहाँ १९ १ में की हजार १९, १९ २ म ३१ १९ ३ में ३७ १९ ४ में ३३ १९ ५ में ३६ १९ ५ में ३७ १९ ७ म ३७ और १९ ८ में ३८ जन मरे। किसी किसी प्रांतमें तो इससे भी अधिक लोग मरते हैं। युक्तप्रान्तमें ५३ तक नम्बर पहुँच चुका है। वे अल्पजीवी बालक जो वृथा उत्पन्न किये जाते हैं अपने जन्मके पूर्व और पश्चात् मृत्यु तक माताकी शक्ति तथा धनको व्यर्थ चूसनेवाले होते हैं। वे माताको युवावस्थाके सुख और सौन्दर्यको नाश करनेके अतिरिक्त कोई आनन्द नहीं देते।

ऐसे बच्चोंको जिनके पालन-पोषणका हम प्रबन्ध नहीं कर सकते जिन्हें हम दीर्घायु और बलवान् नहीं बना सकते पैदा करना महापाप है और असभ्यता है।

Weakli gs ha e no place in the world. It is a sin to be weak. It is a si to beget weak children."

मतलबसार इस अत्यन्त अधिक जन्म और मृत्युसंख्याके बारेमें लिखती है कि जब भारतवासी शरीरशास्त्रके नियमोंको समझ कर विचारपूर्वक विवाह और सन्तानोत्पत्ति करेंगे तब जन्म और मृत्युकी संख्या आपसे आप कम हो जायगी।

विवाहकी वास्तविक देवताओंको उस हो और कामवासनाको अपना मालिक न बना रख े। शरीरशास्त्र और समयके मुताबिक सावधानीके साथ विचार पूर्वक इस शक्तिसे काम लो तो विवाहित जीवनकी मुसीबतें आपसे आप

आधी हो जायँगी। इस तरह पर रहनेसे स्त्री और पुरुष अधिक पवित्र भावमें रह सकेंगे। पति पत्नीमें प्रेम अधिक होगा और उनका सुख और आनन्द बढ़ेगा। लड़के कम पैदा होंगे। लडकों पर माता-पिता अधिक प्रेम, अधिक समय, और अधिक द्रव्य खर्च कर सकेंगे। इससे लड़की-लड़के बलवान्, दीर्घायु और प्रसन्नचित्त होंगे और ऐसा घर वैकुठकासा आनन्द देगा।

स्त्रियाँ केवल भोगाविलासके लिए ही नहीं बनाई गई हैं। जो पुरुष स्त्रियोंके शरीरको, उनके सुख और दु ख पर ध्यान न देकर अपने ही सुख और मजेके लिए खुदगर्जीसे काममें लाते हैं वे विवाहके अधिकारके बाहर जाते हैं और विवाहशय्याको अपवित्र करते है। ऐसे कामी पुरुषोंके विवाहको अँगरेजीमें married or legal prostitution व्यभिचार कहते हैं।

A nation which seeks in sexual life nothing but pleasure is bound to disappear—वह राष्ट्र जो विवाहकी शय्या, केवल भोगविलासके लिए ही ठीक समझता है जीवित नहीं रह सकता,—उस राष्ट्रका विनाश निश्चय होगा।

There should be no more children brought into the world than can presumably be fed and reared—जितने बच्चोंका पालनपोषण हम भलीभाँति कर सकते हों उतनी ही सन्तानोत्पत्ति हमें करनी चाहिए। उससे अधिक नहीं।

" No one should bring beings into the world for whom one cannot find the means of support "

सातवाँ परिच्छेद ।

अन्यान्य रुकावटें ।

Insufficient supply of food to any people does not show itself merely in the shape of famine. It assumes other forms of distress as well, such as generating evil customs, spreading immorality and vice etc.

—*Malthus.*

जब किसी देशके मनुष्योंको पेटभर अन्न नहीं मिलता तब उस देशमें एक मात्र दुर्भिक्ष ही पड़कर नहीं रह जाता; ऐसी दशामें तरह तरहकी तकलीफें पैदा होती हैं बुरे रसम—रिवाज फैलते हैं और व्यभिचार—अनाचारकी वृद्धि होती है ।—माल्थस ।

हम भारतवासी यह माने बैठे हैं कि पहले तो भारतमें अनाचार और व्यभिचारका लेश भी नहीं है और यदि किसी अंशमें है भी तो नाममात्रको । कमसे कम विलायतवालोंके मुकाबले तो इस देशके स्त्रीपुरुष अत्यन्त सच्चरित्र हैं । युरुपमें कहा जाता है कि विलायतमें तो व्यभिचारकी ऐसी अधिकता है कि वहाँ ऐसे घर बने हैं जहाँ स्त्रियाँ छिप कर बच्चे जन जाती हैं और उन बच्चोंको दाइयाँ खिलाती हैं * । उनके यहाँ यदा न

Illegitumate living births वा छिप कर बच्चे जने जानेका ब्योरा—

सन्	इंगलैण्ड	फ्रांस	जर्मनी
१९ ४	३८ ४१२	७१ ७१५	१ ७४ ७६४
१९ ५	३६ ८१४	७१ ५	१ ७ ६
१९ ६	३९ ३१५	७१ ४६६	१ ७१ १७८
१९ ७	३६ १ २	७१ ३ ५	१ ८ ५८७
१९	३७ ५३१	७१ २	१ ८४ ११२
१९ २	३७ ५ २	७१ २ ३	१ ८३ ७
१ १	......		१ ८३ ७ ०

होनेसे जो जिसे चाहता है, अपना लेता है । पराई स्त्रियां पराये पुरुषोंके साथ घूमती हैं और मनमाना आनन्द करती हैं, वे रोकी तक नहीं जातीं । असलमें, उनके यहाँ व्यभिचारका विचार ही नहीं है ।

यह बात कहाँ तक सत्य है इसका निश्चय करना अत्यन्त कठिन ही नहीं, असम्भव है । हमारे यहाँके रिवाज और रहनेके ढंग उनके रहन सहनसे इतने विरुद्ध हैं कि हम खामखाह उनके चरित्रमें धब्बा लगाते हैं और उनका जीवन यदि पवित्र भी हो तो भी हम उन्हें कलक लगाते और पापाचारी कहा करते हैं । समाजमें हर तरहके लोग होते हैं । यद्यपि आगरेके सिविल सर्जन मिस्टर क्लार्क और मिसेस फुलहम * आदिके सदृश कुचरित्र लोग भी इस समाजमें हैं, पर एकदम सारे समाजको अनाचारी मान लेना अन्याय है। कुछ दिनोंके लिए एक स्कूलमें मैं अवैतनिक असिस्टेण्ट हेडमास्टर था। स्कूलके प्रिंसपलसे मुझसे बहुत मेल बढ गया था । मैं प्रायः नित्य ही अपना सन्ध्या का समय उनके बँगले पर बिताता था । ये सपरिवार बडे ही सज्जन थे और सबका बर्ताव मेरे साथ बहुत ही भला था । हम सब एक साथ 'बैड मिन्टन,' 'टेनिस' या 'चेस' आदि खेल खेला करते थे । इसमें मेमसाहबा और उनकी युवा पुत्रियाँ भी शामिल रहती थीं । वे हारमोनियम या पियानो बजाकर बडी आजादीसे गाकर सुनाती थीं, खूब अच्छी तरह दिल खोल कर बातें करती थीं, बहस मुबाहिसा करती थीं, और सभ्यतापूर्ण हँसी दिल्लगी भी करती थीं । अर्थात् जिस आजादीसे दो सभ्य पुरुष मित्र आपसमें व्यवहार

सन्	इंग्लैण्ड	फ्रान्स	जर्मनी
१९११	. .	...	१,७८,५८४
१९१२		.	१,७७,०५६
१९१३	.		१,८३,८५७
१९१४	३७,३२५		. .
१९१५	३६,२४५	...	.
१९१६	३७,६८८	....	. . .
१९१७	३७,०२२	.... .	. .

* Vide the Pioneer and the Leader etc for March 1918 in which the shameful case was published

रखते हैं उसी तरह मिसफकसाहबके घरकी स्त्री और पुरुष दोनोंके साथ मेरा व्यवहार था।

मेरे इस मेल-जोलकी खबर धीरे धीरे स्कूलमें पहुँची। फिर क्या था! हर तरफसे मास्टर लोग कटाक्ष करने लगे। फुरसतके वक्तोंमें सब लोग एक साथ बैठकर मेरी मीठी मीठी चुटकियाँ लेने लगे।

दैव-संयोगसे वहाँ एक नये कलेक्टर बदलकर आये। वे अक्सर मिसफक-साहबके बँगले पर आने लगे। कभी कभी खाना भी वहीं खाते और रातको भी रह जाते। मेम साहबाने तो अपना और कलेक्टरका बँगला एक कर रक्खा था। जब देखिए, वे कलेक्टरसाहबकी कोठी पर नजर आती थीं। हवा खाने दोनों एक साथ, नदीकी सैर एक साथ जहाँ देखिए मिसफककी मेम और कलेक्टर साहब एक ही साथ दिखाई देते थे। दुर्भाग्यवश एक दिन मिसफक साहब जल्दी ही स्कूलसे आये और एकाएक बेहोश हो गये। उनका हृदय बन्द हो गया और वे कुछ ही क्षणोंमें परलोक सिधार गये।

क्रिया करम कर मेम साहबा अपने बँगले पर न आकर साहब कलेक्टरके साथ उन्हींकी मोटर पर सीधी उनके बँगले पर गईं और वहाँ कुछ दो सप्ताह रह कर विलायत चली गईं।

इधर स्कूल क्या सारे शहरके लोग कलेक्टर और मिसफककी विधवाको व्यभिचारी-व्यभिचारिणी कहकर गालियाँ देते थे। कोई कोई तो यहाँ तक कहते थे कि मिसफक साहबको इन्हीं दोनोंने मार डाला है। पर बात यह थी कि स्वर्गीय मिसफक साहब कलेक्टरके बहनोई थे। मेम साहबा कलेक्टरकी सगी बहिन थीं। रंजका यह हाल था कि कुछ दो सप्ताहोंमें वे १२ पौंड अर्थात् १२ सेर घट गई थीं।

भारतके सुप्रसिद्ध मित्र और कांग्रेसके जन्मदाता मिस्टर ह्यूम लिखते हैं कि— भारत और विलायतके लाखों परिवारोंका एक साथ मुकाबला करके देखनेसे यह निश्चय करना या कहना कठिन है कि भारतमें अधिक व्यभि-चार है या विलायतमें। समाजमें कमजोर स्त्रियाँ और पापी पुरुष सदैव रहते हैं जिनका चरित्र किसी प्रकारकी दण्ड शिक्षासे नहीं सुधर सकता। पर साथ ही समाजकी दशा सुधारने स्त्रीपुरुषोंको सदाचारी और सच्चरित्र बनानेका

एक मात्र उपाय उचित शिक्षा ही है। अस्तु, यह किसी तरह नहीं कहा जा सकता कि विलायतके शिक्षित स्त्री या पुरुष व्यभिचारी है।" *

रेनाल्डके झूठे उपन्यास, मिस्ट्रीज आफ कोर्ट आफ लण्डन, स्त्रीत्याग या तलाकके मुकदमें, अथवा इधर उधरकी उडती हुई खबरें सुन कर किसी राष्ट्रको या एक दो आदमियोंके कुचरित्र होनेसे सारे समाजको चरित्रभ्रष्ट समझ लेना ठीक नहीं। इन किस्सोंको पढ कर, और यह देख कर कि उनके यहाँ परदा नहीं है, स्त्रियों तकका विवाह बहुत देरमें होता है, बहुतसे स्त्री-पुरुष आयुपर्यंत अविवाहित रहते हैं, हम, पक्षपातके रंगीन चश्मेसे उन पर दृष्टि डालते हैं और उनमें सर्वथा पाप ही पाप देखते हैं।

खैर, जो हो, मुझे इस लेखमें यह दिखाना अभीष्ट नहीं है कि भारतमें विलायतसे, अथवा विलायतमें भारतसे अधिक व्यभिचार है। मेरे इस कथनका अभिप्राय केवल इतना ही है कि दूसरोंकी फूली देखना और अपना ढेंढर न देखना अच्छा नहीं। अर्थात् हम दूसरोंका दोष देखकर उन पर हसते हैं, परन्तु अपने दोष पर आँखें बन्द कर लेते हैं। इस बातकी जाँचके लिए मैं आपको ब्रिटिश राज्यके—जहाँ कि चौवीसों घण्टे सूर्य अस्त नहीं होते—दूसरे नम्बरके शहरमें, भूमण्डलके प्रधान बारहवें नम्बरके शहरमें और भारतके सबसे बडे शहर कलकत्तेमें, जो जनसंख्या (आबादी) के हिसाबसे बम्बई, दिल्ली, लाहौर आदि सब शहरोंसे बढा है, ले चलता हूँ। आइए, पहले इस शहरकी जाँच घूम कर करें। घबराइए नहीं। लोगोंको उँगली उठाने दीजिए, हँसने दीजिए। शरमकी बात तो उस समय होती जब हम तमाशबीनी करने या ऐशो अशरत करने जाते होते। हम लोग तो मर्दुमशुमारीके अफसरोंकी तरह देशकी सच्ची दशाकी जाँच करने चल रहे हैं।

मछुआ बाजार।

मीलों तक सडकके दोनों तरफ मकानोंके ऊपरके खण्डोंमें वेश्यायें खचाखच भरी हैं। ये बहुधा मारवाडिनें और एतद्देशीय हैं। जैसे दरबेमें कबूतर कसे रहते हैं, वैसे ही मकानका किराया अधिक होनेसे एक एक कमरेमें चार चार पाँच पाँच वेश्यायें सडा करती हैं। सडककी पटरियों पर जगह जगह आठ आठ दस दस बगाली लडकियाँ एक कतारमें नाके नाके पर खडी हैं।

* A. O Hume by Sir William Wedderburn, Page 160

इनका स्थान उसी मकानकी ठीक सामनेवाली गलीमें है। खुले आम बीच सड़कमें लोग इन अभागी लड़कियोंसे हँसी मजाक करते हैं। उस झुण्ड या कतारमेंसे जिसकी तरफ इशारा हो जाता है उसे पुरुषके साथ अपने स्थानको प्रस्थान करना पड़ता है।—कैसी अनोखी सभ्यता है!

लोअर चितपुर रोडके पीछे कोई महल्ला।

इस महल्लेका नाम स्मरण नहीं आता। यहाँकी दुर्दशा देख कर कलेजा कट जाता है खून पानी हो जाता है। कई सौ घर बंगाली वेश्याओंके हैं। गलियोंसे भीतरका कोई कोई हिस्सा दिखाई देता है। आनन्दपूर्वक निडर होकर लोग तख्तों पर मसनद लगाये ताश खेल रहे हैं और अन्य लोग खुलेआम हर तरहका मजाक कर रहे हैं। सबसे दुःखित बात यह है कि इन वेश्याओंमें बहुतोंकी आयु १ वर्षसे अधिक न होगी। पर हाय रे, इतनी दरिद्रता और उन्हें गहरी कन्दरामें गिरानेवाले पुरुषोंकी सभ्यता! हम तुम तीनोंको नमस्कार करते हैं।

सोना गाछी।

यहाँ भी वही हृदयविदारक दृश्य है। रास्ता चलना मुश्किल है। भलमनसी लोग इस रास्तेसे होकर नहीं जाते रास्ता बचाकर किसी दूसरी तरफसे निकल जाते हैं। यहाँ वेश्यायें राह चलतेके हाथ पकड़ लेती हैं टोपी या दुपट्टा ले भागती हैं। समाजसे गिरी हुई लड़कियोंकी अत्यन्त हीन दशा वेश्याओंकी आखिरी हद और भारतकी सभ्यताकी तीसरी झलक यहाँ दीखती है।

इसके अतिरिक्त एक महल्ला गोरी (यूरोपियन) वेश्याओंसे भरा है। यहाँ अँगरेज तो विरले ही देख पड़ते हैं; हाँ मनचले भारतवासी मेमें चखनेके लिए अक्सर आया करते हैं। एक नवयुवक नामधारी ग्रेजुएट डिप्टी कलेक्टर (शायद हमीं लोगोंकी तरह आँख सेकते हुए!) एक मित्रके साथ इन्हीं गोरी वेश्याओंमेंसे एकके यहाँ पहुँच गये। एक तुच्छ बात पर मतभेद होनेसे उस अभिमानिनी वेश्याने डिप्टी साहब पर गुस्सेमें हाथ चला दिया! डिप्टी साहब अपने मुँहसे कहते थे कि दोनों मित्र यदि पाछा हाथमें ही रैंग कर भाग न जाते तो खूब ही पिटते और उससे पुलिसके हवाले कर दिये जाते!

वे कहने लगे—" इस दुर्घटनासे मेरे मित्र, जिनका मैं मेहमान था, बहुत दु:खी हुए। अपनी और मेरी क्षेप मिटानेके लिए मुझसे कुछ न कह कर वे मुझे एक मनोहर वेल, लता और पुष्पोंसे सुशोभित सुन्दर बंगलेमें ले गये। यह सुनकर कि यह एक वेश्याका बंगला है, मैं धक्से रह गया। डरा कि कदाचित् यहाँ भी न ठुक जायँ। पर यहाँका बर्ताव देशी वेश्याओंसे भी अच्छा ठहरा। यह, एक यहूदिन वेश्याका बंगला था। ऐसे बहुतसे बंगले कलकत्तेमें हैं। मैं १५ दिन तक कलकत्तेमें रहा और अकसर शामको किसी ऐसे ही बंगलेमें आनन्दपूर्वक समय व्यतीत करता रहा।"—गिनते जाइए, यह सभ्यताका चौथा नमूना है!

एडेन गार्डन।

मैं—(चौंक कर) क्यों जी, यह अनोखी विक्टोरिया सब्जा पेयर तो मोती बाबूकी है न?

मेरे मित्र—(मुस्कराकर) खूब, गाड़ी और जोडी तो पहचान गये, पर उसके मालिक सवारों पर आँख नहीं ठहरती।

मैं—अरे ये तो स्वयं मोती बाबू हैं, पर उनके बगलमें यह कौन है?

मेरे मित्र—उन्हींकी घरवाली।

मैं—अजी जाओ भी, क्या मैंने उनकी बीवीको नहीं देखा है। यह तो रंग ढगसे कोई वेश्या मालूम पडती है। लेकिन ।

मित्र—वेश्या बीवी नहीं तो और क्या है? लेकिनके बाद चुप क्यों हो गये? तुम्हें आश्चर्य है कि मोती बाबू गौहरजानके साथ बैठ कर हवा खाने निकले हैं। अरे यह कलकत्ता है। वह देखो, जौहरीजी मलकाको लिये उड़े जा रहे हैं।

मैं—और सामने बच्चा किसका बैठा है?

मित्र—जौहरी महाशयका। अभीसे सीखेगा नहीं, तो आगे बापका नाम कैसे रक्खेगा!

मैं—छि! क्या बेहयाई है, कैसी बेशरमी है।

मित्र—बस, तुम तो गँवार ही रहे। कैसी बेशरमी? वह देखो गाड़ियोंकी तीसरी कतार–एक, दो, तीन (कोई २० तक गिनाकर), जानते हो उनमें कौन है? पहचानते हो? सबकी सब वेश्यायें हैं। वे देखो सुशील बाबू उसे

सन् १९११ की मर्दुमशुमारीकी रिपोर्टसे ज्ञात होता है कि कलकत्ते शहरमें १४,२७१ (चौदह हजार ! !) वेश्याये हैं। कलकत्तेकी कुल स्त्रियोंमेंसे जिनकी उमर २० से ४० वर्षकी है , प्रत्येक बारह स्त्रीमें एक वेश्या है ! १२ से २० तककी आयुकी स्त्रियोंमें प्रति सैकडा ६ वेश्यायें हैं ! और १०९६ वेश्या लडकियोंकी आयु १० वर्षसे भी कम है ! ९० फी सदी वेश्यायें हिन्दू हैं। †

भगवन् ! बारह, दस या इससे भी कम आयुकी वेश्यायें ! भारतमें जैसे बाल-विवाहकी कुरीति चल निकली है वैसे ही बालवेश्याओंका भी बुरा रिवाज जारी हो गया है। इस अन्धेरके विषयमें डाक्टर एम सी मैकेंजी एक स्थान पर और खाँबहादुर मौलवी तमीजखाँ दूसरे स्थान पर लिखते हैं कि,—'बेचारी दीन लडकियाँ पानीमें फूलनेवाली लकडीके साथ पानीके टबमें बिठाई जाती हैं जिससे कि वे पुरुषोंके समागमके लिए तैयार हो जाय। कहीं कहीं यह काम केलेसे लिया जाता है।"—Insert a piece of sola and then make the unfortunate girls sit in water tubs or use plantains to train up mere girls for prostitution *

Dr Chevers, ' Means are commonly employed even by *Parents* to render the immature girls *ople Viris* by mechanical means, ' बस यहाँ तो सभ्यताका अन्त हो गया !

सन् १८५२ ईसवीमें कलकत्तेमें १२,४१९ वेश्यायें थीं और उनमेंसे १०,४६१ हिन्दू थीं। ‡

सन् १८७० ई०मे इस शहरमें ७,९३१ हिन्दू, १,१६२ मुसलमान, ५६ यूरेशियन, ५ यूरोपियन और ३५ यहूदिन आदि वेश्यायें थीं।×

यह दशा केवल कलकत्ता शहरकी ही नहीं है। इस खुले व्यभिचारका साइनबोर्ड भारतके प्रत्येक शहरके खास बाजार या चौकमें दिखाई देगा। बम्बईका व्हाइट मारकेट (सफेद गली), लाहारकी अनार कली, दिल्लीका चावडी बाजार, और लखनऊका खास चौक वेश्याओंसे भरा पडा है। तीर्थ-

† All India Census Report 1911, for Calcutta

* Medical Jurisprudence by Chevers P 689

‡ The Chief Magistrate s Report for the state of town of Calcutta 1852 53

× Contegious Disease Act in Calcutta 1870

राम पापनाशक पवित्र काशीनगरमें संयुक्त प्रांतके सब शहरोंसे अधिक वेश्याओंकी संख्या है। डाक्टर और वैद्य भी वहाँ युक्तप्रान्तके सारे शहरोंसे अधिक हैं। + (वेश्याओंकी अधिकताके साथ डाक्टरोंकी ज्यादती होनी ही चाहिए।) मथुरा मथुरा वृन्दावन और हरद्वारतक इनका डेरा जमा रहता है। पवित्र भूमि 'कनखल' में भी आप इन्हें देख लीजिए। नैनीताल आदि पहाड़ोंके ऊपर लोग कुछ ही महीनोंके लिए जाते हैं। पर बाबू साहबोंके साथ साथ नई बीबीयों (वेश्याओं) का डेरा भी बड़ाईं मुरादाबाद तथा बरेलीतकसे वहाँ पहुँच जाता है। अँगरेज तो सामने पत्र बोर्डिंग करते हैं नीचे इनमें कुछ-बाक आदि अनेक लोग खेलते हैं और बाबूसाहबान किसी प्रेमिकाके मेले डेरेमें अपने स्वास्थ्यका सर्वनाश करते हैं। पहाड़से लौटे हुए एक अँगरेज और हिन्दुस्तानीका स्वास्थ्य उनके आचारकी गवाही देने लगता है।

भारतके कुछ शहरोंकी वेश्याओंकी संख्या—जो मर्दुमशुमारीके समय अपना यही पेशा बताती हैं—४ ७१ ९९६ है। × बहुतेरी वेश्यायें डरसे अपना असली पेशा कुछ और बता देती हैं इसलिए उनकी संख्या इसमें शामिल नहीं है। इन पौने पाँच लाखके लगभग वेश्याओंकी वार्षिक आमदनी ११ ११ (लाख करोड़ !) रुपया है।

शोक यह है कि इस प्रकारका खुला व्यभिचार भारतमें दिनों दिन कम होनेके बदले बढ़ता जाता है और वेश्याओंकी संख्यामें अधिकता होती जाती है। पञ्जाबकी हिन्दू सभा लिखती है कि इस प्रांतके प्रत्येक मुख्य मुख्य शहरमें व्यभिचारके लिए लड़कियोंकी खरीद और फरोख्त हो रही है। सन् १९११ में प्रांतीय जज महोदयने इस बातकी तसदीक की है।

अस्पतालोंके रजिस्टर तथा वैद्यहकीमोंके इश्तिहार और औषधियोंकी संख्यासे भी इस देशके व्यभिचारकी हालत मालूम पड़ती है। कोढ़का रोग चाहे पैतृक भी हो पर इस रोगके पीछे सिफ़्लिस (गर्मी) अवश्य हुआ करती है। प्रोफेसर हिर्गिन बाथम—जिन्होंने कोढ़ियोंमें बहुत काम किया है—कहते हैं कि आजतक उन्हें कोई कोढ़ी ऐसा न मिला—जिसे खुद अथवा किसीकी छूतसे उसे यह रोग हुआ—सिफ़्लिस न हो चुकी हो। कोढ़की बढ़

+ All India Census Report for U P 1911
× Lif of Indian Prostitutes, Page 189.

गर्मी है। यह तो खुले हुए व्यभिचारकी कथा हुई। इससे तो कोई इनकार ही नहीं कर सकता। अब रहा गुप्त व्यभिचार, सो उसका जाँचना मनुष्यकी शक्तिसे बाहर है। ईश्वर ही उसकी सच्ची जाँच कर सकता है।

इस देशमें समाजका ऐसा कड़ा नियम है, इसके लिए ऐसी कड़ी सामाजिक सजायें रक्खी गई हैं कि ऐसे लोगोंका प्रत्यक्ष पता लगना कठिन ही नहीं, असम्भव है। पर अनुभव अवश्य किया जा सकता है।

पहले घरकी मजदूरिनियोंको ले लीजिए। ये विवाहिता तो अवश्य होती हैं, पर युवावस्थामें अपने मालिकके घर, किसी न किसी नवयुवक सरदारकी शिकार होनेसे शायद ही बचती हैं। हाँ, अवस्था ढल जाने पर चुपचाप अपने पतिके साथ पतिव्रता बन कर बैठ रहती हैं। सेन्ससके सुपरिंटेण्डेण्टने लिखा है कि,—"मजदूरिनियोंमेंसे बहुतसी तो सचमुच ही वेश्यायें हैं।" +

इसी तरह दूकानों पर बैठनेवाली स्त्रियोंको अर्धवेश्या समझना चाहिए, कमसे कम कुचरित्र स्त्रियोंमें तो इनकी गिनती अवश्य होनी चाहिए।

दक्षिणभारत (मद्रास आदि) में बालिकाओंको मन्दिरमें देवसेवाके निमित्त चढा देनेकी चाल है। वहाँ उन्हें 'विभूतिन' कहते हैं। वे तीर्थयात्रा करती हुई, इस प्रान्त तक आ जाती हैं और अपनी सच्चारित्रताका परिचय दे जाती हैं।

उन विवाहित पुरुषोंकी स्त्रियाँ, जो अत्यन्त निर्बल हैं, रोगी हैं, वृद्ध या शक्तिहीन हैं, और जिन्होंने जान-बूझकर ब्याह करके स्त्रियोंके गले पर छुरियाँ चलाई हैं—कबतक पातिव्रत्य धर्म निबाह सकती हैं? अथवा उन अनाचारी अत्याचारियोंकी स्त्रियाँ, जो अपना घर छोड कर बाजारकी हवा खाते हैं, कबतक और कहाँ तक निरादर सहती हुई पतिव्रता रहेंगी? जो पुरुष स्त्रीभक्त नहीं, वेश्यागामी है, उसे अपनी स्त्रीसे पतिव्रता रहनेकी आशा करना व्यर्थ है। सम्भव है कि उसे अपने घरका हाल कभी न मालूम हो, पर बगलका पडोसी उसका कच्चा चिट्ठा कह सकता है।

सबके ऊपर भारतमें २ करोड ५४ लाखसे अधिक विधवायें हैं। मैं इनके आचरण पर आक्षेप नहीं करता। पर विचार करनेकी बात है कि इनमेंसे प्राय सभी मूर्खा हैं, देव, शास्त्र, धर्म और ज्ञानसे सर्वथा अनभिज्ञ हैं। केवल यह

+ All India Census Report 1911

" हर पार्टीमें पार्टीकी जान एकाद वेश्या अवश्य रहती है। "

(देशदर्शन पृष्ठ १८२)

रूपवती चिपया युवती।

(देखिये पृ १४६)
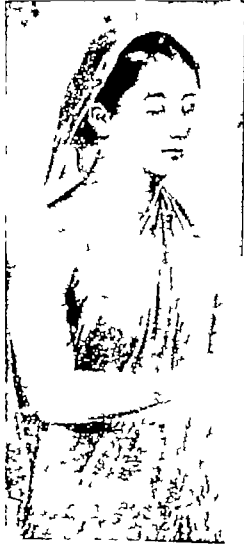
सिविल सर्जन साहब जेल और अस्पताल आदिसे लौटकर लगभग एक बजे बंगले पर आये । टेबुल पर एक तार मिला जिसका आशय यह था कि "रोगी सख्त बीमार है । जल्दी आनेकी कृपा कीजिए ।- देवदत्त ।" साहब बड़े ही दयालु हैं । उसी समय घोड़े पर सवार होकर रवाना हो गये । उन्होंने देवदत्तके घर पहुँच कर पूछा कि रोगी कहाँ है ? देवदत्त हाँफते हाफते आये और बोले—हुजूर, बड़ी गलती हुई, माफ कीजिए। साहबने डपटकर पूछा कि बतलाओ रोगी कहाँ हैं । देवदत्त गिड़गिड़ाते हुए साहबके हाथमें फीस रखकर पैरों पर लोट गये और एबारशनकी (गर्भपात करनेकी) दवा पूछने लगे । साहब लाल हो गये । जमीनपर जोरसे पैर पटककर और 'छि' कहकर लौट गये । बंगले पर पहुँचकर उन्होंने इस बातकी सूचना पुलिस-कप्तानके पास भेज दी ।

उसी दिन रातको देवदत्तकी चचेरी बहिन अकस्मात् मर गई और रातो-रात चिता पर भस्म कर दी गई । यह विधवा थी । कई दिनके बाद देवदत्तकी तलबी कोतवालीमें हुई । सुना जाता है कि वहाँके देवताने अपनी पूजा पाई और रिपोर्टमें लिख दिया कि देवदत्त प्रतिष्ठित रईस हैं । उस दिन, उनकी बहिनको हैजा हो गया था, इसीलिए साहबको बुलाया था । वे एबारशन नहीं बल्कि रेस्ट्रिक्टिव चेक (restrictive check) की या बन्धेजकी दवा पूछना चाहते थे, और यह कानूनन कोई जुर्म नहीं है ।

यह दोहरे खूनका नमूना है । यहाँ तो समाजमें जबतक बात छिपी है, तब तक सब ठीक, और यदि खुलनेकी नौबत आई तो बस 'विष' या 'त्याग'। ले जाकर कहीं दूरके शहरमें या तीर्थस्थानमें छोड़ आये । कुछ दिनोंतक मुह ब्बतके मारे कुछ खर्च भेजा और फिर बन्द कर दिया । ऐसी अनाथा स्त्रियोंकी क्या दशा होती होगी उसे पाठक स्वयं विचार सकते हैं ।

भारतकी ऊपर बतलाई हुई कई लाख वेश्यायें कौन हैं ? हम भारतवासियोंके घरकी विधवायें, हमारी ही बहिनें और बेटियाँ, या उनकी सन्तति । हमारी ही असावधानी, निर्दयता और निष्ठुरताके कारण उनकी यह दशा हुई है ।

१ रामकली, विन्ध्याचल—" मैं क्षत्रानी हूं । बालविधवा हूं । मेरे भाई दर्शन करानेके हीलेसे मुझे छोड़ गये । उनके इस तरह त्याग कर देनेका कारण मैं समझ गई, इस लिए मैंने कभी पत्र नहीं भेजा और न लौटनेकी चेष्टा की । अब भीख माँगकर अपना गुजर करती हूं । मैं सर्वथा असहाय हूँ ।

और कोई जरिया पेट पालनेका नहीं है। उमर १०—११ वर्षकी है। यहीं मुझसी ही अभागिनें ८-९ स्त्रियाँ और हैं। इनका चरित्र ठीक नहीं है।"

२ पद्मनी वृन्दावन—"मैं बङ्गाली हूँ। मेरी सास आदि कई स्त्रियाँ मुझे यहीं छोड़कर चल दीं। पत्र भेजने पर उत्तर मिला कि अपना कर्तव्य स्मरण करो यहाँ लौटकर क्या मुँह दिखाओगी ! यहीं जमुनामें डूब मरो। मेरी माँ नहीं है। पिताने मेरे पत्रका कभी उत्तर नहीं दिया।'

३ श्यामा हरद्वार— मेरे पिता मुझे यहीं छोड़ गये हैं।'

४ राजकुमारी गया— 'मेरे ससुरालके लोग बड़े धनी हैं। वही मुझे पुरोहितजी छोड़ गये हैं। कुछ दिनों तक पाँच रुपया मासिक आता रहा पर अब कोई खबर नहीं लेता। पत्रोत्तर भी नहीं आता।"

५ नलिनी और सरोजिनी काशी—" हम दोनों अभागिनें बंगालकी रहनेवाली हैं। हम दोनोंका एक ही घरमें विवाह हुआ था। नलिनी विधवा हो गई। मेरे पति मुझे एक लड़की होने पर वैराग्य लेकर चल दिये। मेरे ससुरजी पन्द्रह रु॰ मासिक पेन्शन पाते थे। काशीवास करने यहीं आये और हम दोनोंको साथ लाये। तीन महीनेके बाद मर गये। एक परिचित बंगाली महाशय सहायता देनेके बहानेसे मिले और एक दिन हम दोनोंका कुल लेकर चुरा ले गये। फिर इन्हींसे लगी हुई पुलिसकी एक घटनामें बल-पूर्वक हम अनाथाओंका सर्वनाश किया गया और इस हीन दीन दशामें पहुँचाई गई। एक सौ अस्सी बीस रुपया कर्ज हो गया है। इस पुत्रीके सयानी होने पर इसीको बेचकर अथवा वेश्या बना कर कर्ज अदा करूँगी।"

क्या अन्धेर है स्त्रियों पर कैसा अत्याचार किया जा रहा है ! स्त्रियाँ चाहे जितनी ही गई गुजरी क्यों न हों पर बिना बेईमान शैतान पुरुषोंके बहकावे वे अपने धर्मसे कभी नहीं डिगतीं। स्त्रियोंका चरित्र बिगाड़ना पुरुष जातिका काम है। आज हरामजादोंने तो सैकड़ों स्त्रियोंकी मिट्टी खराब कर दी है। यह ठीक है कि ताली दोनों हाथसे बजती है; पर समाज केवल स्त्रियोंको ही क्यों दण्ड देता है ? अनाथा स्त्री ही क्यों घरसे निकाली जाती है ? कुचरित्र पुरुष-जिनका व्यभिचार स्त्रियोंके मुकाबले सौ पचास गुना अधिक होता है-क्या मजा करते हैं ! समाज इन बातोंकी बद चालकी दुष्कर्मी पुरुषोंका क्यों नहीं तिरस्कार करता ? ऐसा न करना इन व्यक्तियोंको

स्त्रियोंका सर्वनाश करनेके लिए सहारा देना और अनाथ, असहाय अबलाओं पर घोर अत्याचार करना है।

हमारा समाज, जिसे हम मूर्खतावश अति उत्तम समझ बैठे हैं और जिसकी पवित्रता पर फूले नहीं समाते, बिलकुल निर्जीव, निर्बल और सर्वथा अशिक्षित मनुष्योंका समूह है। इस समाजको सच्चरित्र स्त्रियोंकी आह और कुचरित्रा स्त्रियोंका पाप भस्मीभूत कर रहा है और यदि इस पर लोगोंने ध्यान न दिया तो यह आह कुछ ही कालमें समाजको जलाकर राख कर देगी—सावधान!

व्यभिचार।

In every part of the world one of the general characteristics of the savages is to despise and disgrace the female sex.—Robertson

भूमण्डलके प्रत्येक भागमें स्त्रियों पर अत्याचार और उनका निरादार करना असभ्यताका मुख्य चिह्न समझा जाता है। वहशी और जंगली आदमी ही स्त्रीजातिको तुच्छ दृष्टिसे देखते हैं। —राबर्टसन।

जैसे लोभीको धन, कामीको उसकी प्रेमिका और चोरको रात प्यारी होती है, व्यभिचारियोंको मादक वस्तुओंसे प्रेम होता है। जहाँ व्यभिचार है वहाँ यह निःसन्देह मौजूद है।

मद्यपान।

मुसलमानी आक्रमणके साथ व्यभिचारिणी वेश्यायें आईं, और अँगरेज व्यापारियोंके साथ यह रंगीन शराब। अब पश्चिमी ठण्डे देशोंमें ऐसी वस्तुओंका तिरस्कार हो रहा है। लोग इनके भयंकर परिणामोंको समझ रहे हैं। वहाँकी वैज्ञानिक और डाक्टरमण्डलीने आन्दोलन मचा दिया है कि यह शराब उनके देशको, उनके राष्ट्रको और उनके समाजको भारी धक्का दे रही है। उसने सर्वसाधारणको चेता दिया है, और अनुभव करा दिया है कि मद्यपानसे बल घटता है, पुरुषार्थ कम होता है, शरीरमें रोग प्रवेश करते हैं और आयु कम हो जाती है। शराबका काम मांसको गला डालना है। इससे दिमाग खराब होता है और निर्मल बुद्धि मैली हो जाती है।

नेशन (Nation) लिखता है,—"शराबसे मस्तिष्कके रोग, अपच रोग और फेफड़ेके रोग अवश्य उत्पन्न होते हैं। जिसके शरीरमें जितना कम

या ज्यादा बल होता है उतने ही अल्प या देरमें ये रोग घुस सकते हैं। पर शराब पेटमें गई और उसने मस्तिष्क पाचनशक्ति और फेफड़े पर कम या ज्यादा बुरा असर डाला। शराबियोंमें फी सैकड़ा १० १ मस्तिष्कके रोगसे ११.२ अरुचक रोगसे और ११ ११ फेफड़ेके रोगसे मरते हैं।'

पश्चिमीय देशोंमें मादक वस्तुओंका व्यवहार यद्यपि अत्यन्त अधिक है पर हर्षकी बात यह है कि वहाँ टेम्परेन्स सुसाइटियोंके उद्योगसे शराब पीना कम रहा है। पादरी लोग तो अकसर पीते ही नहीं। पर खेद कि भारतके दुर्दिन इन वस्तुओंका प्रचार बढ़ाये जा रहे हैं। विलायतमें तो एक शराबहीका अधिक प्रचार है पर भारतमें अँगरेजी शराब देशी शराब कच्ची शराब ताड़ी भंग गाँजा चरस अफीम चण्डू और तमाखू आदि दस चीजोंका प्रचार है। ये दस तो परम्परासे बापदादाओंके वक्तसे चली आ रही हैं। इनमेंसे पाँच भंग और चरसका प्रयोग तो सत्य सनातन धर्म्म है। यह पवित्र बूटी समझी है देवताओंको चढ़ाई जाती है। इसका वेद और शास्त्रानुकूल सेवन किया जा सकता है। इससे धर्म्म नहीं जाता। वैद्यकसे भी इस तम्बाकूके खानेके सेवनसे शरीर आरोग्य रहना बताया जाता है। खैर, जो हो। जब इन दस मादक वस्तुओंसे भी भारतकी तृप्ति न हुई तब लोगोंने और भी कई नई नई चीजें ढूंढ निकालीं।—कोकेन (cocaine) खाने लगे और बतोंमें यह तीखी सुई गोद कर या अन्य द्वारा शरीरमें विष चढ़ाकर नशा पैदा करने लगे।

भारतमें इन वस्तुओंकी माँग अधिक होनेसे सरकारकी आमदनी बहुत बढ़ गई है और दिनों दिन बढ़ती जा रही है। १ वर्ष पहलेकी अपेक्षा आज ५५ गुना आमदनी हो गई है! १८९८ में मादक वस्तुओंसे ७ करोड़ ३ लाख रुपयेकी आमदनी थी और कुल दस वर्षके बाद सन् १९ ८ में यह आमदनी लगभग दूनी अर्थात् ९ करोड़ ७८ लाख और १९ वर्ष बाद अर्थात् सन् १९१० में प्रायः १२ करोड़ रुपये हो गई! *

मादक वस्तुओंसे जो आमदनी हुई है उसका ब्यौरा—

सन्	आमदनी पौण्ड	सन्	आमदनी पौं
१ ८	३ १४९४	१९	१६,३०२ २
१	१८५११८९	१९ १	४ ६६८१

लखनऊके एक चण्डूखानेका दृश्य।

(देशदर्शन पृ० ११०)

लम्बी शिखा और पवित्र यज्ञोपवीत धारण किये हुये ब्राह्मण भिक्षा (आधी पावभर आटा) माँगकर उस धर्मपुस्तकके साथ लगकर ब्राह्मण बना सब पीप मोरकी तरह चिपक जाते हैं।

(देवदर्शन पृ १११)

अँगरेजी पढनेवालोंकी तो कोई बात ही नहीं है, इन लोगोंने तो जिन घरोंमें इसका नाम लेना भी पाप समझा जाता है उनको भी छिप छिप कर पीना शुरू करके पवित्र कर दिया है। यदि आप काशीके किसी ऐसे दवाखा-नेमें जाकर बैठ जाइए जहाँ अँगरेजी शराब भी बिकती है तो तमाशा देखिए कैसी कैसी विलक्षण मूर्तियाँ नजर आती हैं। लम्बी शिखा और पवित्र यज्ञो-पवीत धारण किये, बगलमें पोथी पत्रा दबाये, दबी जबानसे अद्धा (आधी

सन्	आमदनी पौण्ड	सन	आमदनी पौण्ड
१९०२	४४,३६,६६२	१९११	७६,१०,०००
१९०३	४९,८०,०९६	१९१२	८१,८३,०००
१९०४	५३,६३,४१५	१९१३	८८,९४,०००
१९०५	५६,८७,८२०	१९१४	८८,५७,०००
१९०६	५८,९८,२१९	१९१५	८६,३२,०००
१९०७	६२,२७,०१०	१९१६	९१,४९,०००
१९०८	६३,८९,६२८	१९१७	९३,२८,०००

नोट—एक पौण्ड १५ रुपयेका होता है।

इस हिसाबसे सन् १८९८ मे ५,७४,३४,२२० रुपयोंकी और सन् १९१७ में १३,९९,२०,००० रुपयोंकी मादक वस्तुयें आई, अर्थात् १९ वर्षमें ८,२४,८५,७८० रुपयोंकी आमदनी बढ़ी।

केवल एक सालका अर्थात् सन् १९०८ ई० का ब्योरा —

अँगरेजी शराब (विदेशी)	३,५१,४०८ पौण्डकी
देशी शराब	३३,७६,०६२ ,,
ताडी	१०,२७,४०३ ,,
अफीम जो भारतमें खर्च हुई	७,३४,८४७ ,,
अफीम जो विदेश गई	२,७६,३६६ ,,
गाँजा, भग, चरस आदि	६,२६,४५० ,,
सरकारी आमदनीका टोटल	६३,८९,६२८ पौण्ड

नोट—यह केवल सरकारी आमदनी है। इसमें मादक वस्तुयें वेचनेवालोंका नफा शामिल नहीं है।

नशेकी चीजोंके उपयोगसे बल घटता है, स्वास्थ्य बिगड़ता है और कुबुद्धि उपजती है। लोग आलसी हो जाते हैं। काम करनेसे घृणा उत्पन्न हो जाती है। इसका निश्चित परिणाम होता है—

जुर्म या अपराध ।

जहाँ व्यभिचार है, शराबखोरी है, दरिद्रता है, वहाँ जुर्मोंकी अधिकता अवश्य ही होगी। यहाँका एक यह भी अनोखा दस्तूर है कि लोग खुद चाहे दूसरोंकी बहू-बेटियो पर कुदृष्टि डालें, पर यदि उनके साथ वही व्यवहार किया जाय, तो जान लेनेको तैयार हो जायँ। रेलकी सफरमें इसका नमूना देखनेमें आता है। यहाँ किसी भी व्यभिचारका बदला या उसके कम करनेका उपाय उस व्यभिचारीका सिर काट लेना या उससे फौजदारी करना है।

हम शराब तो खुले हाथों लेंगे और देंगे, किन्तु शिक्षामें थोडी रकम खर्च करेंगे। इससे हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि लोग आज जेलसे छूटे हैं और कल ही फिर किसी नये जुर्ममें गिरफ्तार हुए हैं। वारम्बार सजा पाते हैं, पर जुर्म × करनेसे बाज नहीं आते। मनुष्योंके सुधारनेकी यह रीति ही नहीं है। जब तक लोगोंको पेट पालनेके लिए उचित कार्य्य न सिखाये जायगा, तब तक वे और करेंगे ही क्या? जैसे खाली बोरा सीधा नहीं खड़ा रह सकता, वैसे ही खाली हाथ या पेटवाला सदाचारी नहीं रह सकता।

अन्य देशोंमें कैदियोंको भी उचित शिक्षा दी जाती है। उनके काम करनेकी तजवीज कर दी जाती है। डाक्टर और वैज्ञानिक उनकी जाँच करते हैं। यदि उनके शरीरमें कोई ऐसी व्याधि हुई जिसके कारण वे जुर्म करते हैं तो उसे दूर करनेकी चिन्ता की जाती है। यह नहीं कि तीन दिनके उपासके बाद भूखकी ज्वाला बरदाश्त न करके किसी लड़केने सड़कके किनारेवाले सरकारी दरख्तसे आम तोड़कर खा लिया, थानेदार साहबने उसका चालान कर दिया और डिप्टीसाहबने खडे होकर धडाधड ढाई दरजन बेत

विदेशसे खरीदी गई   ६६,७२,९७५ रुपयोंकी
     ??,?४,८६३ पौण्ड

भारतमें खर्च हुई,—कुल ४२,३७,१९,६१५ पौण्ड।

× सन् १९०८ के जुर्मोंका ब्यौरा—

भारतमें गृहसुख नहीं मिलता, इससे लोग वेश्याओंके घर जाकर दिल बहलाते हैं। दु ख अधिक है, चिन्ता चिताकी तरह फूँके डालती है, इस पापिनसे कुछ देरको बचनेके लिए,—मानसिक सन्तापसे एक मुहूर्तभरके लिए छूटनेके इरादेसे लोग मादक वस्तुओंका सहारा लेते हैं। यह जवाब ठीक नहीं। असलमें हम अपने बच्चोंकी रक्षा नहीं कर सकते। उन्हें ब्रह्मचारी और सदाचारी बनानेमें, अधिक द्रव्य और समय खर्च करना पड़ता है। इसीकी हमारे पास कमी है। हमारी ही त्रुटिसे हमारे बच्चे निर्बल, कुचरित्र और अनाचारी, स्त्री या पुरुष दोनों होते हैं। हमारे ही दोष, अत्याचार और अनादरसे हमारी पुत्रियाँ बाजारोंमें जा बैठती हैं और फिर हमारे पुत्र गृहसुखके अभावसे, हमारी ही लापरवाहीके कारण कुसंगमें पड़ कर, उन वेश्याओंको सर्वथा अन्य समझकर अपना और उनका दोनोंका नाश करते है। ये व्यभिचारी या व्यभिचारिणियाँ, शराबखोर, नशेबाज, चोर, चाण्डाल, खूनी, डाकू सब हमारे ही बच्चे हैं। हम लोगोंकी असावधानीसे उनकी यह दुर्दशा हो गई है। इनका सुधार अथवा आगेकी सन्तानकी भलाई या बुराई हमारे ही हाथ है।

यदि हम योग्य माता-पिता हैं, हममें योग्य संतान उत्पन्न करने और उन्हे योग्य स्त्रीपुरुष बनानेका पुरुषार्थ है, सामर्थ्य हे, तब तो हम बच्चे पैदा करें, अन्यथा नहीं। बच्चोंको बिलख बिलख कर मरनेके लिए, वेश्या या खूनी बननेके लिए, कंगाल और कायर बननेके लिए पैदा करना भारी असभ्यता है, अत्याचार है, भयकर पाप है।

'The greatest social evil of the day is to beget children whom one cannot support.'

'No one should bring beings into the world for whom one cannot find the means of support'

बताओ मुझे देश कोई कहीं,
इसी हिन्दका हो ऋणी जो नहीं।
रहा विश्वमें जो बड़ेसे बड़ा,
वही देश हा! आज नीचे पड़ा।
बचाओ उसे, जोश जीमें भरो,
उठो भाइयो, देशसेवा करो॥ —प्रीतम।

आठवाँ परिच्छेद ।

हमारी शिक्षा ।

विद्याधनं श्रेष्ठधनं तन्मूलमितरं धनम् ।

संसार परिवर्तनशील है। हमारी जो आवश्यकतायें आजसे ५ वर्ष पहले थीं वे आज नहीं हैं। जिन चीजोंकी जरूरत उस समय थी वह अब नहीं है। उनके स्थान पर नई नई वस्तुएँ पैदा हो गई हैं। देशकी अवस्था जो उस समय थी वह अब नहीं है। इस लिए स्वभावतः ही शिक्षाका ढंग भी वह नहीं हो सकता जो आजसे ५ वर्ष पहले था।

संसार एक युद्धक्षेत्र है। इसमें वही पुरुष विजयी होता है जो अपनी शक्तिके अनुसार शिक्षासम्पन्न होता है। पुराने अस्त्र शस्त्र किसी काम नहीं आते, वे केवल म्यूजियममें रखने योग्य रह जाते हैं। हमारे देशके विद्यार्थी जब संस्कृतकी उससे उच्च परीक्षा पास करके निकलते हैं तो वे अपनी रोटी तक कमानेमें असमर्थ रहते हैं। उनकी शिक्षा न तो उनको इस योग्य बनाती है कि वे अपना जीवन-निर्वाह भलीभाँति कर सकें और न वे अच्छे नागरिक ही बन सकते हैं। उनकी शिक्षा अति प्राचीन ढाँचेके बिगड़े हुए ढंग पर चली जा रही है। वे देश काल जाति राष्ट्र-संगठन धनोत्पादन आदि विषयोंसे बिलकुल अनभिज्ञ होते हैं। उनकी शिक्षा व्याकरणके वितण्डाओंमें तथा न्यायके 'पात्राधारम् घृतम् वा घृताधारम् पात्रम्' जैसे प्रश्नोंके हल कर देनेमें खतम हो जाती है। हमारे देशके संस्कृतके विद्यार्थियोंकी यही दशा है जो आजसे १ वर्ष पहले यूरोपके विद्वानोंकी थी। वहाँ सूईकी नोक पर कितने फरिश्ते बैठ सकते हैं जैसे विचित्र प्रश्नों पर महीनों शास्त्रार्थ हुआ करते थे। भारतकी अवनतिका बड़ा भारी कारण यदि कोई हुआ है तो वह यह कि हमारी जातिके नेताओंने समयानुसार शिक्षाप्रणालीके बदलनेका यत्न नहीं किया। यदि हमारे देशकी पाठशालाओंमें संस्कृतभाषाके

द्वारा भारत तथा अन्य देशोंका इतिहास पढ़ाया जाता, राजनीति, अर्थ-शास्त्र, रसायनशास्त्र, पदार्थविज्ञान आदि विषयोंकी उसी संस्कृत भाषामें शिक्षा मिलती, अपना साहित्य, अपने आदर्शपुरुषोंके जीवनचरित्र, अपने देशका गौरव भारतीय बच्चोंको पढ़ाया जाता तो भारत आत्मरक्षाकी युक्तियोंमें ढीला न पड़ता, आज हमारा प्यारा देश ससारसे पीछे न रहता और न हम अन्य जातियोंके घृणापात्र बनते।

यह तो मानी हुई बात है कि जैसी शिक्षा देशके बच्चोंको दी जायगी, उसीके अनुसार देशकी राजनैतिक अवस्थामे और देशकी सभ्यतामें उन्नति या अवनति होगी। यदि शिक्षा देशकालके अनुसार वर्त्तमान जीवनसंग्राममें खडे करनेके योग्य नहीं है तो उस शिक्षासे शिक्षित हुए व्यक्ति जीवनसग्रामके भयकर युद्धमें कभी विजयी नहीं हो सकेंगे।

गति जीवनका दूसरा नाम है। जो सभ्यता गतिवान् है, जिसकी शिक्षा कालकी गतिके अनुसार है उसके नष्ट होनेका भय नहीं। शिक्षाप्रणाली भी नये नये अविष्कारोंसे विभूषित, नई नई आवश्यकताओंको पूरा करनेवाली तथा जीवनप्रद होनी चाहिए। नदीका बहता हुआ जल सदा ताजा और जीवनदाता होता है और पोखरका स्थिर जल गन्दगी और बीमारियोंका फैलानेवाला होता है। नदी और पोखर दोनोंहीमें जलत्व समान है—दोनोंहीमें जलके प्रधान गुण विद्यमान हैं, किन्तु भेद केवल यह है कि एक गतिवान् होनेसे शुद्ध और पवित्र होता रहता है और दूसरा स्थिरताके कारण अपवित्रता तथा रोगका पुज बन जाता है। जो स्थिर है वही पीछे है, वही मृतप्राय है, उसीका अन्त निकट है।

'जीवन्मुक्ति' तथा 'वेदान्त' की लापरवाहीकी शिक्षाने भारतके राष्ट्रीय जीवन तथा संघ-शक्तिको नष्ट कर दिया, जिससे इस देश पर मुसीबतोंकी अटूट भरमार होने लगी। सारे देशमें अराजकता, कुप्रबन्ध और अशान्ति फैल गई थी। किसीको राष्ट्रीय कर्तव्यका उचित मार्ग सूझ नहीं पडता था। भारतके सन्मुख जीवन और मृत्युका विकट प्रश्न उपस्थित था। सघ शक्तिके नाश हो जानेसे राष्ट्रीय गौरवको बचानेका कोई उपाय सूझ नहीं पडता था। अत लोगोंके मनमें स्वभावत संरक्षकता (conservativism) के भाव उत्पन्न हुए। लोगोंने देखा कि उस कुसमयमें यदि वे राष्ट्रीय उन्नति नहीं कर सकते तो भी प्राचीनताके कट्टर सरक्षक बनकर हिन्दू सस्था-

जीकर अस्तित्व बचाये रह सकते हैं। उन्नति न सही अस्तित्व तो बना रहेगा। इस संरक्षक बुद्धिका फल यह हुआ कि लोगोंका जीवन और विचारपद्धति बिलकुल नियमित संकुचित और विकृत हो गई। साहित्य दर्शन शास्त्र कलाकुशलता संगीत चित्रकारी आदि विषयोंमें जो किसी राष्ट्रके जीते जागते साक्षी हैं कुछ भी उन्नति न होने पाई। सर्वसाधारणको अपनी बुद्धि शक्ति और युक्तिमें अविश्वास हो गया। वे यह समझने लगे कि अब हममें नई नई बातोंके ढूंढ निकालनेकी शक्ति ही नहीं है। प्राचीनकालके लोगोंहीमें यह शक्ति थी। अब हमारा काम केवल यथाशक्ति उनकी नकल करना है। उनकी ढूंढ निकाली हुई चीजोंकी हम रक्षा करते रहें बस यही बहुत है।

उस समयके इतिहासको पढ़नेसे हमें अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि एक जीते जागते उन्नत राष्ट्रने अपनी अवनति किस प्रकार कर ली और केवल अन्धपरम्पराके या पुरानी लकीरके ही फकीर होनेके कारण भारतने अपनेको किस तरह गारत कर लिया। भारत उस समय अपनी शक्तियोंको पहचान न सका वह अपनी बुद्धि और युक्तिको काममें न लाकर आंख मूंद कर बैठ गया। फिर क्या था देशमें चारों ओर ज्ञान और प्रकाशके बदले अज्ञान और अंधकार छा गया। इस अज्ञानान्धकारका जोर बढ़ता ही गया; यहाँ तक कि राष्ट्रीय जीवन एकदम तहस नहस हो गया। उस समयका हिन्दुस्तान बुद्धि शक्ति और युक्तिमें अत्यन्त जीर्ण दशाको प्राप्त हो गया।

लोगोंको यही मालूम होता था और बहुतोंको अब भी यही भ्रम है कि हमारे पूर्वज किसी समय उन्नतिके शिखर पर चढ़े थे; अब हमारे लिए कुछ उन्नतिका मार्ग ही नहीं है—आगे बढ़नेका हमारे लिए कोई रास्ता ही नहीं है। सुवर्णयुग (Golden age) अथवा सत्ययुग पहले ही हो गया; अब तो कलियुग (Dark age) का जमाना है। इस युगमें उन्नतिके विषय पर अपना मस्तक खपाना व्यर्थ ही नहीं बल्कि साक्षात् अधर्म है।

तात्पर्य यह कि ज्ञानका भाण्डार बन्द हो गया संसारभरमें होनेवाला व्यापार रुक गया राष्ट्रीय स्वाधीनता नष्ट हो गई स्वदेशाभिमानका लोप हो गया और प्रायः सम्पूर्ण भारत मृत्युके मार्गपर चलता रहा। हमारे समझमें देशकी यह दशा ही अँगरेजी राज्यके पूर्वका इतिहास है।

इस बातसे कोई इनकार नहीं कर सकता कि अँगरेजी राज्यने भारतकी दशामें बहुत कुछ परिवर्तन किया है। भारतमें नई जागृति उत्पन्न हुई है। पचीस तीस वर्ष पहले कहा जाता था कि भारत 'संक्रमण' अवस्थामें है, दस बारह वर्ष पहले इस नई जागृतिका नाम 'अशान्ति' था, परन्तु अब कहा जाता है कि भारत अपने 'पुनरुज्जीवन' के मार्ग पर है। इस राष्ट्रीय जागृतिके समय चारों ओर विद्याकी पुकार मची है। देशहितैषी सज्जनोंने इस बातको समझ लिया है कि विद्याके बिना इस देशका पुनरुद्धार नहीं हो सकता। भारतके एक सिरेसे दूसरे सिरे तक यही आवाज गूँज रही है कि 'India must teach or die' अर्थात् भारत या तो शिक्षित हो या रसातलको चला जाय।

और यही सत्य भी है। 'विद्याविहीन पशु'—जिनमें विद्या नहीं है वे इस संसारमें मनुष्यके रूपमें पशुओंका काम करते हैं। इतने बड़े और बलशाली पशु हाथीके मस्तक पर एक छोटासा महावत बैठकर अंकुशसे मारता है और हाथी चिंघाड मारकर उसी महावतकी मर्जीके मुताबिक काम करता है। यही कारण था कि अकबर और औरंगजेबके हिन्दू सेनापति मानसिंह और जयसिंह आदिने जैसे काम अपने प्रभुओंके लिए किये, वैसा काम वे अपने देशके हितके लिए न कर सके। अकबर और औरंगजेब दोनों ही अपने बुद्धिवैचित्र्यसे अपने कट्टरसे कट्टर शत्रुओंको वशमें करके डण्डेके जोरसे उनसे जो चाहते थे करवा लेते थे। मुगलोंकी रोटीके एक टुकडेके बदले राजपूतानेके बडे बडे सरदारोंने अपनी उज्ज्वल आत्माको काला करना और अपने ही देशभाइयोंका गला काटकर देशको तहस नहस करना स्वीकार कर लिया। हमारे पड़ोसी जापानके बच्चोंने जब पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त की, तो अपनी योग्यता और विद्याको अपने देशकी सेवामें लगा दिया। वे स्थान स्थान पर स्कूल कालेज खोलकर अपने अशिक्षित भाइयोंको अपने बराबर बनानेमें लग गये। पचास वर्षके अन्दर उन्होंने अपने देशको खडा करके दिखा दिया। उसके विपरीत हमारे यहा पाश्चात्य शिक्षा पाये हुए लोग अपने ही देशभाइयोंसे घृणा करने लगे। एक दो दर्जन देश-सेवक भी निकले, पर बहुतेरोंको तो अपनी भाषा, अपना भेष, अपना रहन-सहन ही अच्छा नहीं लगता। अपनी योग्यता, अपनी प्रतिभाको वे वेश्याओंकी तरह बेचनेमें जरा भी नहीं लजाते। रुपयेके लिए वे घृणितसे भी घृणित कार्य करनेको उद्यत हैं।

अमेरिकाके एक शिक्षित पुरुष जोसेफ रीड अपने देशका हित साधन करनेके लिए यूरोपके किसी देशमें गये। वहाँके राजाने उन्हें घूस देकर अपनी ओर करना चाहा पर उन्होंने उत्तर दिया कि "यद्यपि मैं बेचारा खरीदे जाने लायक नहीं हूँ, लेकिन जैसा भी हूँ, आपका राजा मुझे खरीदने योग्य धनवान् नहीं है—I am not worth purchasing But such as I am, the king of this country is not rich enough to buy me."

अँगरेजी स्कूलोंमें शिक्षा पाये हुए लाखों भारतीय आज गवर्नमेण्टके भिन्न भिन्न विभागोंमें नियुक्त हैं। हजारों रेलवे कर्मचारियोंका काम करते हैं। भला ये शिक्षित कहलानेवाले देशका क्या उपकार करते हैं? अदालतोंके मुन्शी मुहर्रिर पेशकार और बहुतसे तहसीलदार और डिप्टी कलेक्टर गरीब प्रजा पर कैसा अत्याचार करते हैं! पुलिसवालोंकी तो बात ही निराली है। यूनीवर्सिटियोंके डिग्री-होल्डर कानूनका पेशा करनेवाले लोगोंके अधिकारोंकी रक्षा करते हैं या उल्टा उन्हें लूटते हैं? वे रुपयेके लिए देशबन्धुओंका खून-चूसकर गला कसते हैं। वेश्याओंकी तरह धनके लिए शरीर और आत्माको बेचना ही इनके लिए 'ड्यूटी' है। हाय! हाय! यदि भारतका शिक्षित समाज इस अँगरेजीके मोटे शब्द 'ड्यूटी-(Duty)' का महान् और पुनीत अर्थ समझा होता तो भारतका भी पुनरुद्धार जापानकी तरह ५ वर्षोंमें हो गया होता।

कहनेका तात्पर्य यह कि शिक्षा बहुत अच्छी अँगरेजी या संस्कृत बोलनेमें नहीं है, शिक्षा काले या गोरे चेहरेमें नहीं है, शिक्षा बहुतसे विद्वानोंके नाम रट लेनेमें नहीं है, शिक्षा लम्बे लम्बे व्याख्यानोंमें नहीं है, शिक्षा टोप बूट तथा पतलूनमें नहीं है और शिक्षा बहुत बड़ी बड़ी डिगरियोंके लेनेमें भी नहीं है। शिक्षा वह है जिससे मनुष्यका अन्तःकरण और बुद्धि बढ़े। शारीरिक मानसिक और आत्मिक शक्तियोंके विकाशको ही शिक्षा कह सकते हैं। शिक्षाका मुख्य अर्थ मनुष्यको मनुष्य बनाना है जिससे वह अपनी शक्तियोंको समझकर उनसे निज कुटुम्ब समाज और राष्ट्रकी सेवा करके संसारमात्रके कल्याणका कारण हो।

इंग्लैण्डने हमें किसी अंशमें शिक्षा दी है। इसके लिए हम उसके कृतज्ञ हैं पर वह शिक्षा मात्र उसीके लिए अधिक उपकारकारिणी हुई है। एक खेतमें घाँसका बाड़ा बनाकर चार पाँच सौ भेड़ बन्द कर दीजिए। भेड़ोंके पसीनेका

उपजाया हुआ अन्न उनके सामनेसे ढोकर बाहर ले जाइए। उन्हें भूसा तक खाने मत दीजिए और सुबह शाम जरा खोलकर हरी-हरी दूब दिखा दीजिए। वे बैल भूखों मर जायँगे, पर अपने छुटकारेका यत्न न करेंगे। क्या ५०० बैलोंके सींग आपका मामूली बाडा तोडनेके लिए काफी नहीं हैं? वे निस्सन्देह उस बाढे तथा उनकी पसीनेकी कमाई पर मजा उडानेवाले और उन्हें भूखो मारनेवालोंका चिथडा उडा सकते हैं, पर इतना उनको ज्ञान नहीं।

जिस शिक्षामें सूझ नहीं, जो बुद्धिके विकासमें सहायता नहीं देती और जिसमें सकट दूर करनेके उपाय ढूँढ निकालनेका बल नहीं, वह शिक्षा नहीं कुशिक्षा है।

अँगरेजोंकी वर्तमान शिक्षाप्रणालीने हमें केवल लिखना पढना सिखाकर अपने ही काम करने योग्य बनाया है। उस शिक्षासे हमारी बुद्धिकी गाँठ नहीं खुली, हमने अपनी शक्तियोंको नहीं पहचाना, अपने सच्चे स्वरूप और उद्देश्यको भूलकर हम अपनेको छोटा ही समझते रहे। हमारे अँगरेजी स्कूल और कालेजोंने हमें रट रट कर पास करना ही सिखाया। हमारी तन्दुरुस्ती बिगड जाय, हमारा चरित्र खराब होजाय, इन बातोंसे कालेज और स्कूलके अधिष्ठाताओंको कुछ प्रयोजन नहीं। लडके परीक्षा पास कर लें—बस यही उनका मुख्य उद्देश्य है। वर्तमान अँगरेजी स्कूल और कालेजोंकी शिक्षा शिक्षा नहीं है, यह केवल परीक्षा पास करानेकी मशीन है।

ये परीक्षा पास करानेकी मशीनें कितनी हैं, जरा सन् १९१४–१५ की सरकारी रिपोर्टके अनुसार उनका ब्योरा भी सुन लीजिए —

प्रायमरी स्कूलोंकी सख्या—जिनमें हिन्दी-उर्दूकी प्रारभिक पुस्तकें पढाई जाती हैं—१,२१,७१२ लाख है और पढनेवालोंकी सख्या ५४,४७,८५०। इनमें लडकियोंकी संख्या १९१४—१५ में ५,५९,८२१ थी, पर स्त्रियोंकी आबादीके हिसाबसे यह सख्या बहुत ही कम है।

सेकण्डरी स्कूलोंकी सख्या ६,९८० और उनमें पढनेवालोंकी संख्या १०,९७,९९२ है।

हाई और अँगरेजीके मिडिल स्कूल ४,८३३ हैं, पर इनमें सरकारी स्कूल केवल २९६ हैं, शेष सब गैरसरकारी हैं, उन्हें प्रजा अपने खर्चसे चलाती है।

टेक्निकल और इन्डस्ट्रियल १९८, पढनेवाले ११,१७६

स्कूल आफ आर्ट ९, पढनेवाले १,४११।

सन् १९१३-१४ में कृषिसम्बन्धी स्कूल (कृषिविद्यालय) एक था और पढ़नेवाले ११ थे। १९१४-१५ में वह भी न रहा।

मेडिकल स्कूल (डाक्टरी स्कूल) २४ मेडिकल कालेज ५, जिनमें या पशुओंके रोगोंके डाक्टरी स्कूल ४।

कानूनके कालेज २२ पढ़नेवालोंकी संख्या ४ ७०६।

कमर्शियल (व्यापारी) स्कूल ६१। इनमें केवल ३ सरकारी हैं, शेष सब प्राइवेट हैं।

विश्वविद्यालय ५ और कालेज १९५।

नीचे लिखे कोष्ठकसे साफ साफ समझमें आ जायगा।

विद्यालयोंकी श्रेणी	विद्यालयोंकी संख्या		विद्यार्थी	
	लड़कोंके	लड़कियोंके	लड़के	लड़कियाँ
प्रायमरी स्कूल	११६ १२	१५७	५५,१८ ४	६ २१ ८४६
सैकण्डरी स्कूल	६ ३७८	६ २	१ ११२ ३	८६ ७८१
ट्रेनिंग आदि स्कूल	७ ६५२	१४८	२,१ २८७	१४ ७३१
प्राइवेट स्कूल	३६ ३८५	१६८४	५,५६ ६६	७५,७०१
कालेज	१८५	१	५ ५७१	३६१
कुल	१६ ६६ १२	१८ ४०४	५३ ४६ १४१	११ ८६६८
सबका जोड़	१ ८५, ५६		६४ ५४ ८४	

इन १८५ ५६ विद्यालयोंमेंसे ४ १९७ विद्यालय ऐसे हैं जिनका प्रबंध सरकार लोकल बोर्डों या म्युनिसिपल बोर्डोंके द्वारा होता है; ८८ १५४ विद्यालय ऐसे हैं जिन्हें सरकार लोकल बोर्डों या म्युनिसिपल बोर्डोंसे सहायता मिलती है और ५६ ६०१ विद्यालय ऐसे हैं जिन्हें किसी प्रकारकी सरकारी आदि सहायता बिलकुल नहीं मिलती।

हर्षका समाचार है कि भारतसरकार शीघ्र ही प्राइमरी स्कूलोंकी संख्या एक लाख नब्बे हजार कर देनेवाली है। पिछले ३ वर्षोंमें शिक्षा-विभागका खर्च चार करोड़से बढ़कर ग्यारह करोड़ हो गया है। सन् १९ १-२ में ४ ४४ ४ लड़कियाँ पढ़ती थीं १९१४-१५ में इनकी संख्या १ ७८ ७३१ हो गई
..

	१८९९-१९००
हाईस्कूल—	
लड़कोंके स्कूल	९८३
लड़के	२३०५०८
लड़कियोंके स्कूल	९३
लड़कियाँ	१०००४
कालेज—	
अँगरेजीके कालेज	१३३
विद्यार्थी	१५७५७
पूर्वी भाषा संस्कृत और अरबीके कालेज	५
विद्यार्थी	५३०
कानूनके कालेज	३०
विद्यार्थी	२३७५
डाक्टरीके कालेज	४
विद्यार्थी	११५१
इञ्जीनियरीके कालेज	४
विद्यार्थी	८१३
टीचर्स ट्रेनिंग कालेज	२
विद्यार्थी	७१
एग्रिकलचरल कालेज	१
विद्यार्थी	४७
कुल कालेजोंका जोड़	१७९
कुल विद्यार्थियोंका जोड़	२०७४४

, पर

ढ़ीसी
त भी
१९नी कि
शिक्षा
कृष्ण
२३हूसका
शिक्षा
१शिक्षा
गाधा-
देशमें
१न ही

	१८९९-१९००
हाईस्कूल—	
लड़कोंके स्कूल	९८३
लड़के	२३०५०८
लड़कियोंके स्कूल	९३
लड़कियाँ	१०००४
कालेज—	
अँगरेजीके कालेज	१३३
विद्यार्थी	१५७५७
पूर्वी भाषा संस्कृत और अरबीके कालेज	५
विद्यार्थी	५३०
कानूनके कालेज	३०
विद्यार्थी	२३७५
डाक्टरीके कालेज	४
विद्यार्थी	११५१
इञ्जीनियरीके कालेज	४
विद्यार्थी	८१३
टीचर्स ट्रेनिंग कालेज	२
विद्यार्थी	७१
एग्रिकलचरल कालेज	१
विद्यार्थी	४७
कुल कालेजोंका जोड़	१७९
कुल विद्यार्थियोंका जोड़	२०७४४

ख्या।

०००
०००
०००
०००
०००
०००
०००
,०००

908-9-

है। इसमें कोई शक नहीं कि हमारी शिक्षा दिनोंदिन बढ़ती जाती है, पर किस हिसाबसे, सो अलग छपे हुए कोष्टक+नम्बर १ मे देखिए।

मैं यह नहीं कहता कि पूर्वोक्त शिक्षासे कुछ लाभ नहीं है, इस थोडीसी शिक्षासे भी देशका कुछ न कुछ सुधार अवश्य होगा, पर साथ ही यह बात भी सत्य है कि प्राइमरी, वर्नाक्यूलर और मिडिलकी शिक्षा ऐसी नहीं होती कि उसको पाये हुए व्यक्तियोंकी गणना शिक्षित-समाजमें की जाय। पर यह शिक्षा भी यहाँके बालक और बालिकाओको नहीं मिलती। माननीय गोपाल कृष्ण गोखलेका 'प्राइमरी एज्युकेशन बिल' पास न हो सका। कहा गया कि इसका मुख्य कारण खर्चकी कमी है। अमेरिकामें राज्यकी ओरसे कालेजोंमें भी शिक्षा मुफ्त दी जाती है। वहाँका सिद्धान्त है कि प्रजाको हरतरहकी पूरी शिक्षा देना समाज तथा राज्यका धर्म्म है। जापानी राजा प्रजा दोनो ही सर्वसाधारणकी शिक्षाका पूर्ण उद्योग करते है और इंग्लैण्डका क्या पूछना, उस देशमे भी प्रजाको मुफ्त शिक्षा देनेका प्रचार है। सभ्य ससारमे केवल भारत ही

सभ्य देशोंकी प्रारम्भिक शिक्षाका ब्योराः—

देश।	विद्यार्थियोंकी सख्या।	प्रतिविद्यार्थी खर्च।	आवश्यक आयु।	देशोंकी जनसख्या।
अमेरिका	१,६८,००,०००	४०	८–१६	८,२०,००,०००
आस्ट्रेलिया	७८,००,०००	३६	७–१४	५०,००,०००
स्विटजरलैण्ड	५,०२,०००	३२	६–१४	३५,००,०००
सयुक्तराज्य	७५,००,०००	३०	५–१४	४४२,००,०००
नेटाल	२६,०००	३०	६–१४	५,४४,०००
जर्मनी	९०,००,०००	२७	६–१४	६,५०,००,०००
६ देशोंका जोड़	४,२३,२८,०००			२०,०२,४४,०००
भारत	५४,४७,८५०	०२५		३१,५०,००,०००

+ Statistical Abstract, British India 1899 1900 to 1908 9 page 180

एक अभागा देश है जहाँ शिक्षा पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है और प्रारम्भिक शिक्षाको आवश्यक और मुफ्त नहीं किया जाता।

सभ्य संसारकी प्रारंभिक शिक्षाके हिसाबसे भारतमें ६ करोड़ विद्यार्थी होने चाहिए थे पर हैं कुल ५४ लाख। अर्थात् यहाँ साढ़े पाँच करोड़ बालकोंकी शक्तियोंके विकासके लिए कोई सामान नहीं है।

१९१४–१९१५ में भारतमें प्रति सैकड़ा ११.५ लड़के और प्रति सैकड़ा १.२ लड़कियाँ—जिनकी अवस्था स्कूल जानेकी है—शिक्षा पाती थीं।

अब जुदा जुदा प्रान्तोंकी भी शिक्षाकी दशा देखिए—

सन् १९१२–१३ भिन्न भिन्न प्रांतोंमें स्कूल जानेवाली उमरके लड़कों और लड़कियोंमेंसे नीचे लिखे हिसाबसे लड़के और लड़कियाँ शिक्षा पाती थीं—

प्रांत	लड़के	लड़कियाँ
मदरास	११ १	७ ७
बम्बई	११ २	७ ७
बंगाल	७ ५	१ ८
बिहार और उड़ीसा	२६	१ ३
संयुक्तप्रांत	१०.७	१.५
पंजाब	१८ १	२ २
बरमा	२१ ८	२
मध्यप्रदेश और बरार	२५ ९	२ ८
आसाम	१ ८	१.७
उत्तरपश्चिमीसीमाप्रांत	१५.७	१ ६
कुर्ग	११ ६	१०.७

शिक्षाके बारेमें संयुक्त प्रांतकी दशा बहुत ही गई बीती है। श्रीयुत हृदयनाथ कुंजरूने हिसाब लगाया है कि यहाँ ८ लड़कोंमें ७ को किसी प्रकारकी शिक्षा नहीं मिलती और १ लड़कियोंमें कुल ५ लड़कियोंको थोड़ी बहुत शिक्षा मिलती है।

इसी शिक्षाकी उन्नति पर, इसी शिक्षाके बल पर आप भारतवर्षके ५ से अधिक मत-भेदोंको मिटाकर एकता फैलाना चाहते हैं, १५३ भिन्न भिन्न भाषाएँ बोलनेवाले भारतवासियोंको एक भाषा बोलना सिखाना चाहते हैं चीन और

सूची ।

	१९०६–७	१९०७–८	१९०८–९
वगाल	४५१	६७६	७७९
संयुक्त	२७१	२६१	२३५
पजाव	११६	१४३	१७२
मदरास	५९९	५६४	५७९
वम्बई	३७७	३२६	४०७
अन्य प्र	४१	१०८	८५
कुल प्रा जोड़	१८५५	२०७८	२२५७
वगाल	७६९	६७१	७१५
सयुक्त	२९९	४७३	३९७
पजाव	२९३	२९४	४५९
मदरास	२२०६	२१६३	२९५७
वम्बई	१०२९	८९१	१०६४
अन्य	३७७	४४०	२७४
कुल प्र वा	४९७३	४९३२	४९६६
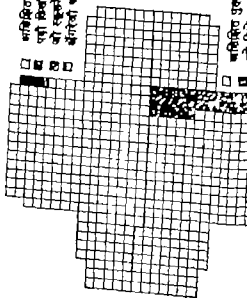
जापानकी तरह उनकी २२ मुख्य * भाषाओंको तोड़ कर एक हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि समस्त भारतमें प्रचलित किया चाहते हैं! क्या ये ही प्राइमरी स्कूलोंके विद्वान् महाभारत, सिकन्दर और शहाबुद्दीनके समयके अन्त-र्युद्धोंको रोकेंगे—पाँच हजार वर्षकी पुरानी स्वार्थसाधुताको, हिन्दू मुसमानोंके झगड़ोंको तोड़ेंगे? ये ही बालक अछूत जातियोंको उठाकर उन्हें छातीसे लगावेंगे? क्या इन्हीं मिडिल-पास कमजोर खम्भोंके सहारे नव्य भारतकी जातीयता खड़ी हुआ चाहती है? यही उसकी नीव है?

आप कहेंगे—नहीं नहीं, यह तो कंक्रीट और चूना है, चट्टानें और मजबूत खम्भे तो हाईस्कूलों और यूनिवर्सिटियोंकी खानोंमे निकलते हैं। किन्तु, उनकी दशा (अलग छपे हुए) कोष्टक नम्बर २ में देखिए, तो ठीक पता चले।

यूनिवर्सिटियोंके ग्रेज्युएटों और अण्डरग्रेज्युएटोंकी–अर्थात् जिन्होंने बी. ए. पास किया है और जो कमसे कम एफ. ए पास हैं–संख्या कोष्टक नं० ३ में देखिए।

भारतकी ३१॥ करोड जनसंख्यामें केवल १३६ कालेज लड़कोंके है, पर अमेरिकामें जहाँकी जनसंख्या केवल ८॥ करोड़के लगभग है, ४९३ कालेज हैं।

यहाँ १९१५ में समस्त भारतमें लड़कियोंके कुल ११ कालेज थे, पर अमेरिकामें ११३ थे। भारतमें ४०६ स्त्रियाँ कालेजोंमें पढ़ती हैं, पर वहाँ १६६७ स्त्रियाँ कालेजोमें पढ़ाती हैं। अमेरिकामें ४,२८,४८० स्त्रियाँ स्कूलोंमें पढानेका काम करती हैं, यहाँ ९,९६,३४१ स्त्रिया लिख पढ़ सकती हैं? (सो भी क्या? क, ख, या अलिफ, बे,) और बाकी १४,२९,७६,७५९ सर्वथा मूर्ख और अनपढ़ हैं। †

भारतमें माननीय गोपाल कृष्ण गोखलेका एलीमेण्ट्री एजुकेशनका बिल, खर्चकी कमीसे पास न हो सका, स्कूलोंमें फीस दूनी हो गई, पर अमेरिकाके

* भारतकी मुख्य २२ भाषायें —आसामी, बंगाली, हिंदी, उड़िया, कनडी, सिन्धी, संस्कृत, बरमी, उर्दू, फारसी, गुजराती, मराठी, कारीन, पोकारीन, सगाउ कारीन, तामिल, तेलगू, मलयालम, अरबिक, मुंडिया, खासी और गुरमुखी।

† १९०१ की मर्दुमशुमारीके अनुसार भारतवर्षमें लिखे पढे लोगोंका और अपढ़ोंका यह हिसाब था—

ख्याका परिणाम ।

।]

५ पाँच लाखसे भी कम संख्याको सामेक भी एक हिस्सेसे दिखाया है। जैसे अँगरेजी जाननेवाली स्त्रियों की १॥ लाखके लगभग संख्या एक खानेके कुछ भागको काला करके प्रकट की गई है।

भारतकी आबादी रूसको छोड़कर सारे योरपके बराबर है। जिस आबादीमें यहाँ ९ विश्वविद्यालय × हैं, उसी आबादीमें वहाँ ७६ हैं। देखिए.—

देश।	जनसंख्या।	विश्वविद्यालय।
इँग्लैण्ड (U K)	४१० लाख	१८
अमेरिका	८५८ ,,	१३४
फ्रांस	३९० ,,	१५
जर्मनी	६४५ ,,	२२
इटली	३२० ,,	२१

पाँचों सभ्य देशोंकी जनसंख्या २६३३ लाख और विश्वविद्यालय २१०
अकेले भारतकी जनसंख्या ३१५० लाख और विश्वविद्यालय कुल ६

शिक्षाका अभिप्राय केवल मानसिक शक्तियोंको ही विकसित करना नहीं है। मानसिक शक्तियोंके साथ साथ शारीरिक शक्तियोंका बल, आयु, आरोग्य आदिका बढ़ाना भी परमावश्यक है। सो इसके विषयमें माननीय डाक्टर राय—जो २३ वर्ष तक प्रेसिडेन्सी कालेजमें साइन्सके प्रोफेसर रह चुके हैं, और जिन्होंने नवयुवकोंकी दशा पर बराबर ध्यान रक्खा है—कहते हैं कि—" यहाँ प्रति सैकड़ा ५० लड़कोंको बदहजमी और भूख न लगनेकी शिकायत रहती है और प्रति सैकडा २५ की तन्दुरुस्ती मलेरिया ज्वरसे खराब हो जाती है।" *

उनकी रायमें विद्यार्थियोंकी इस शोचनीय दशाके मुख्य कारण ये हैं—एक तो मेस—जिनमें वे खाते हैं,—ठीक और उपयोगी खाना नहीं दे सकते। उन्हें कम और बुरी गिजा मिलती है। दूसरे छोटा कमरा, जिसमें छात्रोंको एक साथ रहना पड़ता है, तीसरे बुरी जगह पर मकानोंका होना, और चौथे बहुत ज्यादा दिमागी मेहनत।

यह तो विद्यार्थियोंके स्वास्थ्यका बुरा हाल हुआ, अब लीडरोंकी शोचनीय कहानी † और सुन लीजिए —

× बरमा, और मध्यप्रदेशके नाम अभी विश्वविद्यालयोंकी गणनामें नहीं आ सकते, इनके लिए अभी कुछ समय चाहिए।

* The Indian Raview, January 1913

† Prof D C Ray, D Sc

सारे सरकारी और प्राइवेट स्कूलोंमें बिना फीस शिक्षा देनेका सरकारी कानून है और बिना फीसके शिक्षा दी जाती है।

भारतवर्षमें १९११ ईस्वीमें प्रकाशित होनेवाले दैनिक साप्ताहिक, अर्द्ध-साप्ताहिक और मासिकपत्रोंकी संख्या १ ६३३ थी। अमेरिकामें केवल दैनिक पत्रोंकी संख्या २ ३९९ है। यहाँ १५ ९८३ साप्ताहिक ५५७ अर्द्ध साप्ताहिक और ९९ ७३ मासिक पत्र निकलते हैं। जरा विचार तो कीजिए, कहाँ १ ६३३ और कहाँ ३१ ३१६। भारतवर्ष और अमेरिकाकी आबादीके हिसाबसे यहाँ डेढ़ हजार पत्रोंके बदले डेढ़ लाख पत्र होने चाहिए थे!

माननीय पण्डित मदनमोहन मालवीयने अपने एक व्याख्यानमें कहा था कि– भारतके पाँच विश्वविद्यालयोंमें ९८ विद्यार्थी हैं और अमेरिकामें ९७ प्रोफेसर हैं।

भारत एक लाखमेंसे एक पुरुष उच्चशिक्षा पाता है और इस लाख पुरुषोंमेंसे एकको विज्ञान (सायन्स) की शिक्षा दी जा रही है।*

अमेरिका और जर्मनीके छोटे छोटे लड़के यहाँके विद्वान् विद्यार्थियोंसे अधिक साइन्स जानते हैं और साइन्सके नये नये आविष्कार करते हैं।†

लन्दनके ब्रिटिश म्यूजियम नामक पुस्तकालयमें ४ लाख पुस्तकें हैं और उसमें हर साल ५ हजार नई पुस्तकें बढ़ाई जाती हैं। पुस्तकोंकी आलमारियाँ यदि एक कतारमें रख दी जायँ तो उनकी यह लाइन ११ मील लम्बी होगी! अर्थात् सब पुस्तकोंको यदि आप देखना चाहें तो आपको ११ मील चलना होगा!

	जो लिख पढ़ सकते थे।	जो बिलकुल लिख पढ़ नहीं सकते थे।
मर्द	१ ४६ १ ९ ८	११ ७७५ ९६
औरत	६ ९६ ३४१	१४ ३९ ७६ ७५९
जोड़	१ ५६ ८६ ४३१	२७ ७७ ३८ ४८५

* Professor P C. Ray D Sc., scientist of th worldwide fame.

† Professor M. C. Sinha, M. Sc., famous scholar of J pan, Americ and Germany

भारतकी आबादी रूसको छोड़कर सारे योरपके बराबर है। जिस आबादीमें यहाँ ९ विश्वविद्यालय × हैं, उसी आबादीमें वहाँ ७६ हैं। देखिए —

देश ।	जनसंख्या ।	विश्वविद्यालय ।
इँगलैण्ड (U K)	४१० लाख	१८
अमेरिका	८५८ ,,	१३४
फ्रान्स	३९० ,,	१५
जर्मनी	६४५ ,,	२२
इटली	३२० ,,	२१

पाँचों सभ्य देशोंकी जनसंख्या २६३३ लाख और विश्वविद्यालय २१०
अकेले भारतकी जनसंख्या ३१५० लाख और विश्वविद्यालय कुल ६

शिक्षाका अभिप्राय केवल मानसिक शक्तियोंको ही विकसित करना नहीं है। मानसिक शक्तियोंके साथ साथ शारीरिक शक्तियोंका बल, आयु, आरोग्य आदिका बढाना भी परमावश्यक है। सो इसके विषयमें माननीय डाक्टर राय—जो २३ वर्ष तक प्रेसिडेन्सी कालेजमें साइन्सके प्रोफेसर रह चुके हैं, और जिन्होंने नवयुवकोंकी दशा पर बराबर ध्यान रक्खा है—कहते हैं कि— "यहाँ प्रति सैकडा ५० लड़कोंको बदहजमी और भूख न लगनेकी शिकायत रहती है और प्रति सैकडा २५ की तन्दुरुस्ती मलेरिया ज्वरसे खराब हो जाती है।" *

उनकी रायमें विद्यार्थियोंकी इस शोचनीय दशाके मुख्य कारण ये हैं—एक तो मेस—जिनमें वे खाते हैं,—ठीक और उपयोगी खाना नहीं दे सकते। उन्हें कम और बुरी गिजा मिलती है। दूसरे छोटा कमरा, जिसमें छात्रोंको एक साथ रहना पड़ता है, तीसरे बुरी जगह पर मकानोंका होना, और चौथे बहुत ज्यादा दिमागी मेहनत।

यह तो विद्यार्थियोंके स्वास्थ्यका बुरा हाल हुआ, अब लीडरोंकी शोचनीय कहानी † और सुन लीजिए —

× बरमा, और मध्यप्रदेशके नाम अभी विश्वविद्यालयोंकी गणनामें नहीं आ सकते, इसके लिए अभी कुछ समय चाहिए।

* The Indian Raview, January 1913

† Prof D C Ray, D Sc

दूसरे खण्डका सार

दैवी कारण । हम देखते हैं कि जनसख्या परिमित रहती है जिस संख्या तकके भोजनके लि जनसख्या अन्नकी वृद्धिके साथ ही साथ बढती है निःसीम वृद्धिको रोकने और उसे एक नियत सख्याके भीतर रखनेवाले दो प्रधान कारण हैं— एक दैवी और दूसरा मानवी । दैवी कारण वह है जिससे प्राणी ज्ञान या विवेकरहित पशुओंके समान विषय-वासनाओंके वशीभूत हो सन्तानोत्पत्ति करते जायँ, इस बात पर ध्यान न दें कि जिनको वे उत्पन्न करते हैं उनके आहारका भी उचित प्रबन्ध है या नहीं, और ठीक पशुपक्षियोंकी तरह उनकी वृद्धि स्थानाभाव तथा आहारके कारण प्रकृतिके कठोर नियमोंसे कुचल डाली जाय ।

भोजनकी सामग्रीके अभावके अतिरिक्त और भी कई कारण जनसंख्याकी नि सीम वृद्धि रोकनेमें सहायता किया करते हैं । वे कारण बुरे रीति-रिवाज, नशेबाजी और व्यभिचार आदि हैं । इन सब कारणोंसे मनुष्यका शरीर धीरे धीरे निर्बल होकर बहुत जल्द मौतके पंजेमें फँस जाता है ।

जनसख्याकी निःसीम वृद्धिको रोकनेवाले प्रधान कारण हैं,—युद्ध, दरिद्रता, अकाल, रोग और मृत्यु, कुरीतियाँ, दुराचार या व्यभिचार और नशेबाजी आदि ।

युद्ध । मनुष्योंमें लड़नेका स्वाभाविक गुण या अवगुण है । जीवनरक्षाके लिए उसे दूसरोंसे युद्ध करना पड़ता है । सबल जातियाँ, निर्बल जातियोंका अधिकार दबाना, उनका धन, सम्पत्ति, और देश छीनना और कभी कभी उनके देशमें बसकर उन्हें सर्वथा निर्मूल कर देना चाहती हैं । जब किसी देशमें अविद्या आदिके अन्धकारसे स्वार्थ और फूट जोर पकड़ती है, तब ईर्षा और द्वेषसे वहाँके निवासियोंमें ही आपसमें लड़ाई होने लगती है और विदेशी जातियोंको, सहजहीमें विजय प्राप्त हो जाती है, और धीरे धीरे उनका (देशवासियोंका) सर्वनाश हो जाता है । राजनीतिमें मित्रता आदि कोई सद्गुण नहीं हैं । अपने राष्ट्रकी स्वार्थसिद्धि ही इस नीतिका मुख्य उद्देश है । ससारके प्रत्येक काल और देशमें 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की बात सिद्ध

१—अगम्य है। इससे समय समय पर छोटे बड़े युद्ध हुआ ही करते हैं और
२—भी युद्धद्वारा अत्यन्त बढ़ी हुई जनसंख्याका संहार करती है।

३ दरिद्रता। भारत अन्य देशोंके सम्मुख घोर दरिद्र है। इस विषयमें संसारके किसी सभ्य देशकी तुलना इस देशसे नहीं की जा सकती। भारतवासियोंकी दुधैली गायका मूल्य प्रति वर्ष १७८) और इङ्गलैण्डवालोंका ७५) औसत आता है। आस्ट्रेलिया और भारतके पशुधनकी तुलना पर ऐसे भारतमें १५१ करोड़ या ढाई अरब पशु कम हैं। भारतवासियोंकी वार्षिक आय एक पौण्ड या १५ रुपयेसे कम है; और इङ्गलैण्डवालोंकी ६०५) अमेरिकावालोंकी ५८५) फ्रांसकी ३ ५) और जर्मनीवालोंकी ३१) है। भारतवासियोंकी दैनिक आमदनीकी औसत प्रति जन प्रति दिन दो पैसा पड़ती है। भारतके लगभग आधे काश्तकार पेटभर अन्न नहीं पाते। यहाँ कई करोड़ जन भूखों मरते हैं। दरिद्रताके कारण भारतमें शिक्षाका ठीक प्रबन्ध नहीं हो सकता। धनके अभावसे यहाँ स्कूल नहीं खोले जा सकते। जिस जनसंख्यामें यहाँ कुल ९ विश्वविद्यालय हैं उसी जनसंख्यामें अन्य देशोंमें २१ विश्वविद्यालय हैं। यहाँ एक लाखमें एक जनको उच्च शिक्षा, और दस लाखमें एक जनको विज्ञानकी शिक्षा मिल रही है। भारतके सारे ३१ करोड़में कुल १८५ लाख जन लिख पढ़ सकते हैं बाकी २९ करोड़ १५ लाख भारतवासी सर्वथा अनपढ़ हैं। भारतके कुल बड़े बड़े पदों पर गोरे नियुक्त हैं। भारतवासियोंको वेतन इतना कम मिलता है कि वे किसी तरह अपने कुटुम्बका पालन नहीं कर सकते और नाना प्रकारके दुःख सहकर अकालमृत्युके ग्रास बनते और अनाथ और विधवाओंकी संख्यामें अधिकता करते हैं। भारतके काश्तकार और मजदूरोंकी जाँच करनेसे पता चलता है कि वे घोर दरिद्रताका दुःख भोग रहे हैं। उन्हें पेट भर अन्न नहीं मिलता। उनकी साधारण आमदनीकी औसतसे जेलके कैदियोंके खिलानेमें अधिक व्यय होता है। अन्य देशोंमें काम करनेके लिए आदमी नहीं मिलते, और भारतमें बेकार खाली मुफ्तमें काम करनेवाले मिलते हैं। यहाँ ५१ लाख भीख माँगनेवाले हैं। भारतका कुल धन और स्वत्वका वाणिज्य कुल उद्योगी उद्योग और धन्धे कुल व्यापार और शिल्प-कौशल विदेशियोंके हाथ आ चुका और चला जा रहा है। यहाँका व्यापार विदेशियोंके सूत्रधारसे होता है जिसका नफा विदेश जाता है। भारतमें दिनोंदिन दरिद्रता बढ़ती

जा रही है। यहाँ अधिक सन्तानोत्पत्ति करना पूर्वोक्त विपत्तियोंमें अधिकता करनी है, जिनका निश्चित परिणाम भारतका पूर्ण क्षय और विनाश है। प्रकृति, दरिद्रताद्वारा जनसंख्याका अधिक बढ़ाव बड़ी ही निर्दयतासे रोकती है।

अकाल। अकालोंके पड़नेका प्रत्यक्ष कारण पानीका न बरसना जान पड़ता है, पर सच्चा कारण भारतकी दरिद्रता है। इतिहासके पण्डित बतलाते हैं कि भारतमें पहले बहुत कम अकाल पड़ा करते थे, पर अब तो इनकी भरमार हो गई है। आमदनी नहीं बढ रही है और आबादी बढ़ती जा रही है, इससे जहाँ जरा पानीमें हेर फेर हुआ कि तुरत घोर अकाल पड़ा और प्रकृतिने भयंकररूपसे जनसंख्याका सहार करना प्रारंभ किया। १० वर्षमें १९० लाख (एक करोड ९० लाख!) भारतवासी कालके ग्रास बने हैं।

रोग और मृत्यु। संसारके प्रत्येक देश और कालमें भिन्न भिन्न आयुके मनुष्य रहे हैं। मनुष्यकी आयुका ठीक ठीक निर्णय नहीं किया जा सकता। उचित आहार और विहारसे मनुष्यकी आयु सदा बढ़ती, और विरुद्ध आहार-विहारसे घटती है। भारतमें सात्विक आहार, शुद्ध वायु, पवित्र जल, और पुण्यमय जीवन व्यतीत करनेका अभाव है। इसीसे इस अभागे देशमें लोगोंकी आयुकी औसत दिनोंदिन घटती जा रही है, और मृत्युकी संख्या बढ़ रही है। भारतकी जनसंख्या अत्यन्त अधिक ही नहीं वरन् अत्यन्त घनी भी है। यहाँ, साफ और हवादार मकानोंका अभाव है। काशी और कलकत्ता आदिके अनेक मकानोंकी देखभाल करनेसे बडी बुरी अवस्था दिखाई देती है। गाँवोंके मकान भी बडे बुरे ढंगके होते हैं, स्त्रियाँ और बच्चे ऐसे ही बुरे मकानोंमें रात दिन आयुपर्यन्त बन्द रहते हैं। इससे भारतमें स्त्रियाँ और बच्चे अत्यन्त अधिक मरते हैं। भारतमें व्यभिचारकी अधिकता होती जाती है। कुरीतियोंसे, विधवाओंकी अधिकतासे, मूर्खतासे, और भाग्यको दोषी ठहराने आदिसे, वेश्यायें बढ़ रही हैं। भारतसे वीर्यरक्षा और ब्रह्मचर्यकी महिमा लोप हो गई है। यहाँ नशेबाजी और जुर्म बढ रहे हैं। भारतवासियोंका आचरण नष्टभ्रष्ट हो गया है। इससे, भारतवासियोंकी आयुकी औसत अन्य देशवालोंसे आधी रह गई है, और भारतमें मृत्युसख्या, सारे ससारसे अत्यन्त अधिक होने लगी है।

विवाहकी अधोगति। संसारके किसी देश या जातिमें विवाहसंस्कारका ऐसा सुन्दर, गम्भीर और उत्तम आदर्श नहीं मिलता जैसा भारतके वैदिक

ग्रन्थोंमें मिलता है। इतिहाससे पता चलता है कि वैदिक कालमें स्त्रियोंके अधिकार पुरुषोंके बराबर थे। वे उच्च शिक्षा पाती थीं; उनके पुरुषोंकी तरह यज्ञोपवीत संस्कार होते थे; वे यज्ञोंमें भाग लेती थीं वेदमन्त्र उच्चारण कर लेती थीं और वे वेदोंकी ऋचायें तक रचती थीं। विवाह करने और अपने पतिके चुनने आदिका उन्हें पूर्ण अधिकार था।

पौराणिक समयसे स्त्रियोंकी और विवाहसंस्कारकी अधोगति आरम्भ हुई। स्त्रियोंका अधिकार छीना जाने लगा। वे विद्यासे वञ्चित रक्खी जाने लगीं और शूद्रा कहलाने लगीं। वैदिक समयकी २४ २१ और १६ वर्षकी विवाहकी आयु १२ १ और शेषमें ८ वर्ष और कुछ महीनोंकी आयुमें बदल दी गई। वेद और ईश्वरीय आज्ञाके विरुद्ध मनमानी स्मृतियाँ गढ़ी गईं, जिससे बालविवाहकी कुप्रथा भारतमें चल निकली। भारतकी उष्णता या गरम जलवायुके कारण यहाँ लड़कियाँ जल्द सयानी नहीं हो जातीं। मुसल्मानोंके अनन्तर इस देशमें भी बुरे रीति-रिवाजों और बालविवाहसे लड़कियाँ जल्द सयानी हो जाती हैं—८ वर्षकी लड़कियाँ रजस्वला हुई हैं और १ वर्षकी लड़कियोंको बच्चा पैदा हुआ है। प्रकृतिने भूमण्डलके सब देशोंके लिए एक ही नियम रक्खा है। जिस आयुमें लड़कियाँ भारतमें सयानी होती हैं उसी आयुमें इंग्लैण्ड और जर्मनी आदिमें भी होती हैं। बालविवाहसे भारत नष्ट होता जा रहा है। यहाँ बिना किसी विचारके सब लोग आँख बंद करके विवाह करने और सन्तानोत्पत्ति करनेसे बाज नहीं आते। भारतमें विवाहित पुरुषोंकी संख्या अन्य देशवासियोंकी संख्यासे अधिक है। यहाँपर जिस तरह सारे संसारसे अधिक बच्चे पैदा होते हैं उसी तरह सारे संसारसे अधिक मरते भी हैं। भारतवर्षमें यूरोपके सब प्रधान देशोंसे जन्म और मृत्युकी संख्या अत्यन्त अधिक है। अर्थात् यहाँ लोग सन्तान अधिक पैदा करते हैं पर उसके पालन-पोषणका उचित प्रबन्ध नहीं कर सकते। इससे यहाँ प्रकृतिको हठ बलात्कार कर अधम रीतिसे जनसंख्याका संहार करनेका अवसर मिलता है।

पिछले दो वाक्योंमें हम प्रकृतिका एक विलक्षण नियम देखते हैं। वह यह कि सृष्टिकी उत्पत्तिशक्ति सीमारहित है। यद्यपि प्राणियोंको अपने पूर्ण रूपसे अपनी संख्या बढ़ानेका अवसर नहीं मिलता तो भी इतना अवसर अवश्य मिल जाता है कि वे जोरोंसे अधिक बढ़ जाते हैं और तब प्रकृति अधम रीतिसे उस बढ़ी हुई संख्याका संहार करती है। प्रकृतिकी यह विलक्षण चाल

है कि वह प्राणियोंको अत्यन्त अधिकतासे जन्म लेनेका अवसर केवल इस लिए देती है कि शीघ्र ही भूख, प्यास या स्थान आदिके अभावसे उनका सर्वनाश हो जाय। एक क्षणमें वह करोड़ोंको जीवन प्रदान करके दूसरे ही क्षणमें निष्ठुरतासे छीन लेती है। जहाँ प्रकृतिको एक व्यक्तिकी आवश्यकता होती है, वहाँ वह एक अरब पैदा करती है। उनमेंसे एकको अपनी आवश्यकतानुसार चुनकर बचाती, और बाकी लाखों, करोड़ोंको तड़प-तड़पकर मर जानेके लिए छोड़ देती है।

प्रकृति, अपने ढंग पर तो इस तरह प्राणियोंका अधिक बढाव रोकती है। अब देखना यह है कि इस विलक्षण नियमसे बचनेका भी कोई रास्ता है, या नहीं। कोई तरकीब ऐसी भी है कि जिससे इस भयंकर नियमसे उद्धार हो सके। लेखके आरम्भमें जन-संख्या रोकनेके दो तरीके अधम और उत्तम बतलाये गये हैं। अधम रीति तो हम दिखा चुके, अब उत्तम रीतिसे कैसे जन-संख्या रुक सकती है और कैसे इस प्राणघातक अधम रीतिसे छुटकारा मिल सकता है, सो आगेके खण्डमें दिखाया जायगा।
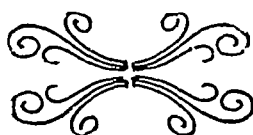
मन्त्रोंमें मिलता है । इतिहाससे पता चलता है कि वैदिक कालमें स्त्रियोंके अधिकार पुरुषोंके बराबर थे । वे उच्च शिक्षा पाती थीं; उनके पुरुषोंकी तरह उत्तमोत्तम संस्कार होते थे, वे यज्ञोंमें भाग लेती थीं वेदमन्त्र उच्चारण करनेकी कौन कहे वे वेदोंकी ऋचायें तक रचती थीं । विवाह करने और अपने पतिके चुननेमें आदिम उन्हें पूर्ण अधिकार था ।

पौराणिक समयसे स्त्रियोंकी और विवाहसंस्कारकी अधोगति आरम्भ हुई । स्त्रियोंका अधिकार छीना जाने लगा । वे विद्यासे वञ्चित रक्खी जाने लगीं और शूद्रा कहाने लगीं । वैदिक समयकी २० २१ और १९ वर्षकी विवाहकी आयु १२ १ और शेषमें ८ वर्ष और कुछ महीनोंकी आयुमें बदल दी गई । वेद और ईश्वरीय आज्ञाके विरुद्ध मनमानी स्मृतियाँ गढ़ी गईं जिनसे बालविवाहकी कुप्रथा भारतमें चल निकली । भारतकी उष्णता या परम आयोग्यताके यहाँ लड़कियाँ जल्द सयानी नहीं हो जातीं । भूमध्यरेखाके अत्यन्त उष्ण देशोंमें भी बुरे रीति-रिवाजों और बालविवाहसे लड़कियाँ जल्द सयानी हो जाती हैं— ८ वर्षकी लड़कियाँ रजस्वला हुई हैं और १ वर्षकी लड़कियोंको बच्चा पैदा हुआ है । प्रकृतिने भूमध्यरेखाके सब देशोंके लिए एक ही नियम रक्खा है । जिस आयुमें लड़कियाँ भारतमें सयानी होती हैं उसी आयुमें इंग्लैण्ड और अमेरिकामें भी होती हैं । बालविवाहसे भारत नष्ट होता जा रहा है । यहाँ बिना किसी विचारके सब लोग आँख बंद करके विवाह करने और सन्तानोत्पत्ति करनेसे बाज नहीं आते । भारतमें विवाहित पुरुषोंकी संख्या अन्य देशवालोंकी संख्यासे अधिक है । यहाँपर जिस तरह सारे संसारसे अधिक बच्चे पैदा होते हैं उसी तरह सारे संसारसे अधिक मरते भी हैं । भारतवर्षमें भूमध्यरेखाके सब प्रधान देशोंसे जन्म और मृत्युकी संख्या अत्यन्त अधिक है। अर्थात् यहाँ लोग संतान अधिक पैदा करते हैं पर उसके पालन-पोषणका उचित प्रबन्ध नहीं कर सकते । इससे यहाँ प्रकृतिको हाथ बढ़ाकर अधम रीतिसे जनसंख्याका संहार करनेका अवसर मिलता है ।

पिछले दो अध्यायोंमें हम प्रकृतिका एक विलक्षण नियम देखते हैं । वह यह कि पृथ्वीकी उत्पादिकशक्ति सीमारहित है । यद्यपि प्राणियोंको अपने पूर्ण बढ़नेकी अपनी संख्या बढ़ानेका अवसर नहीं मिलता तो भी इतना अवसर अवश्य मिल जाता है कि वे जोरोंसे अधिक बढ़ जाते हैं और तब प्रकृति अधम रीतिसे उस बढ़ी हुई संख्याका संहार करती है । प्रकृतिकी यह विलक्षण चाल

तीसरा खण्ड ।

Believe not because some old manuscripts are produced, believe not because it is your national belief, because you have been made to believe from your childhood, but reason it all out, and after you have analysed it, then if you find that it will do good to one and all, believe it, live up to it, and help others to live up to it. —*Buddha.*

पहला परिच्छेद ।
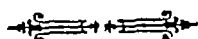
मानवी कारण द्वारा जनसंख्याकी असीम वृद्धिमें रुकावट ।
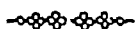
'The growth of numbers among animals is governed by present conditions, among man it is affected by traditions of the past and forecasts of the future' —*Marshall.*

यह किसे नहीं मालूम है कि मनुष्य और पशुओंमें, अन्तर केवल यह है कि मनुष्योंमें पशुओंके समान स्थूल बुद्धिके अतिरिक्त ज्ञानशक्ति भी है। वनस्पतियों और पशुओंमें, मनुष्यकी तरह, अच्छे और बुरेका ज्ञान या विवेक नहीं। उनमें एक प्रकारकी स्थूल बुद्धि होती है। उसीकी प्रेरणासे वे अपने समूह या दल बढ़ाते चले जाते हैं। वे इस बातसे कभी नहीं हिचकते कि जिनको वे उत्पन्न करते हैं उनके आहारका क्या प्रबन्ध है। वे वर्तमान-कालकी आवश्यकता पूरी करना जानते हैं। उन्हें भूत या भविष्यत्कालकी आपत्ति विपत्तिसे कोई मतलब नहीं। आवश्यकतानुसार स्वच्छन्दतासे अपना वर्ग बढ़ानेकी शक्तिसे वे काम लेंगे, अंतमें, स्थानाभाव तथा आहाराभावके कारण प्रकृति उनकी वृद्धिको चाहे कुचल भले ही डाले।

पर मनुष्य जब स्थूल पशु-बुद्धिके वशीभूत होकर अपना वर्ग बढ़ाने लगता है तब ज्ञान-शक्ति उससे पूछती है कि जिनको वह उत्पन्न करेगा उनके भरण-पोषणका भी उसने कुछ प्रबन्ध किया है या नहीं। विवेक-शक्ति भावी शुभ या अशुभ, अच्छे या बुरे परिणामको सामने रख देती है और उससे वादवि-वाद करने लगती है कि विवाह करनेसे समाजमें उसे किसी तरहका अनादर तो न सहना पड़ेगा। वह अपनी स्थिति पर विचार करता है कि उसके पास कितनी पूँजी है, उसकी आमदनी क्या है या आगे कितनी होगी, जितना धन वह आजकाल अपने आरामके लिए केवल अपने शरीर पर खर्च करता है,

विवाह होने पर या सन्तान उत्पन्न होने पर यदि वह औरोंमें फँसे तो क्यों अपना जिससे उसे आश्रित कुटुम्बको या भावी सन्तानको कष्ट उठाना पड़े। रोटी कमानेके लिए उसे इतनी मेहनत तो न करनी पड़ेगी जिसे वह सह न सके और अन्तमें उसे रोगग्रसित होना पड़े। वह अपनी स्त्री तथा भावी सन्तानका भार उठाने योग्य है या नहीं और अपनी सन्तानकी शिक्षा आदिका प्रबन्ध ठीक तरह पर कर सकेगा या नहीं—ये सब और इनके समान और अनेक विचार संसारमात्रके सभ्य स्त्री-पुरुषोंको पवित्र भावसे अविवाहित रहने अथवा विवाह हो जाने पर भी सन्तानोत्पत्तिको एक नियमित सीमाके भीतर रखनेके लिए बाधित करते हैं।

ज्ञान-शक्तिके इस संकेतकी ओर पूर्ण ध्यान देकर विवाह करना और उतनी ही सन्तान उत्पन्न करना—जितनी कि सर्वथा आरोग्य योग्य सुशिक्षित तथा मितकुटुम्ब जाति और देशके कल्याणकी कारण बनाई जा सके—मानवी कल्पनाद्वारा जनसंख्याकी असीम बाढ़ रुकना कहलाता है। इसी विवेक-शक्तिके संकेत पर न्यून या अधिक संख्यामें सन्तानवृद्धि करनेकी उत्तम रीतिको रेस्ट्रिक्टिव (Restrictive) या प्रुडेन्शल (Prudential) चेक कहते हैं।

दूसरा परिच्छेद ।

वृक्ष और पशु-जगत् ।

'Animals, at any rate, know nothing of the prevention of conception, that is a privilege of human species'

—*Bradlaugh*

ज्यों ज्यों पश्चिमीय सभ्यता आगे बढ़ रही है, विद्या और विज्ञानमें जितनी ही तरक्की होती जाती है, उतनी ही हमारे पूज्य पूर्वजोंकी बातें सत्य और अटल प्रमाणित होती जा रही हैं। हमारे यहाँ लोग वनस्पतियोंको चैतन्य-जगतके अंतर्गत मानते हैं। जगत्प्रसिद्ध वैज्ञानिक डाक्टर जगदीशचंद्र बोसकी बीस वर्षकी निरंतरकी खोज और परिश्रमशीलताने संसारको स्पष्ट रूपसे दिखा दिया कि वृक्ष भी पशुओंकी तरह हर तरहके आन्तरिक अवयव रखते हैं। पशुओंकी तरह वृक्षोंमें भी नर्वस सिस्टम (Nervous system) या नसें मौजूद हैं और उनमें अनुभवशक्ति भी पाई जाती है ।

जैसे पशुओंके साथ बुरा बर्ताव करनेसे उन्हें कष्ट होता है, ठीक उसी तरह वृक्षोंको भी कुव्यवहारसे दुःख होता है । वृक्षोंमें भय उत्पन्न किया जा सकता है, वे नशेमें मतवाले बनाये जा सकते हैं और उन्हें विष देकर मारा जा सकता है । यह हमारी अज्ञानता है कि बिना सोचे समझे, बिना किसी खास कारण या आवश्यताके भी, हम निष्ठुरतासे उनकी डालियाँ काटते, उनके फल और फूलोंको नोच कर नाहक मरोड़कर फेंक देते हैं और एक एक फलके लिए उन पर अनेक ईंटें और पत्थर मारते हैं ।

संसारके समस्त चैतन्य पदार्थोंमें देखा जाता है कि प्रत्येक जीव अपनी जाति या श्रेणी बढानेका तथा कायम रखनेका यथाशक्ति उद्योग और प्रयत्न करता है । पशु-जगतमें इसके उदाहरण प्रति दिन देखे जाते हैं । पक्षी किस सावधानीसे घोंसले बनाते, नियमित कालतक अपने अण्डोंपर बैठते, और फिर जी जानसे बच्चोंकी देखभाल करते हैं । वे न जाने कहाँ कहाँसे ढूँढकर

बच्चोंके लिए आहार लाते हैं और जब तक बच्चे स्वयं अपनी रक्षा करनेके योग्य नहीं होजाते, उनके साथ साथ रहते हैं। मुर्गी एक छोटीसी चिड़िया है जो अनेक अण्डे देती है। वह अपने अण्डों पर तीन सप्ताह तक लगातार बैठती है और जबतक कि बच्चे नहीं निकल आते किसीको उनके पास फटकने नहीं देती। दुर्बलसे दुर्बल बच्चोंको अपने परोंके नीचे दबाये रखती है इस तरह उनकी रक्षा करती है धीरे धीरे छोड़नेका उन्हें अभ्यास कराती है और जबतक वे स्वयं अपना गुजारा करनेके योग्य नहीं बन जाते तबतक वह बराबर उनके साथ रहती है। उन्हें योग्य बनाकर छोड़ देती है और फिर संतानवृद्धिके कार्यमें लिप्त हो जाती है।

वृक्ष-जगत् भी संतान-वृद्धिमें नहीं चूकता। पशुओंकी तरह वह भी अपनी जाति बढ़ाने और कायम रखनेका यत्न किया करता है। जिस तरह पशुओंमें नर-मादाके संयोगसे वीर्य और रजःकण मिलनेसे संतानोत्पत्ति होती है, ठीक यही नियम वृक्षोंमें भी जारी है। वृक्षोंमें संतानोत्पत्तिका मूल शक्तियोंकी अलौकिक लीलामें होता है। इसे पुष्प कहते हैं। प्रत्येक पुष्पमें नर और मादा दोनोंके अवयव नहीं होते। कोई पुष्प नर होता है और कोई मादा। वृक्षोंमें गर्भ-स्थिति-काल जब उनमें पुष्प आते हैं तब प्रारम्भ होता है।

उस समयसे लेकर फल आने तथा फल पकनेके समयतक प्रकृतिकी अद्भुत लीला देखनेमें आती है। पुष्पकी महकसे और मनोहर रंगसे मुग्ध होकर मधु-मक्खी कीट-पतंग या रसिक पक्षी पुष्पों पर इधरसे उधर फुदकते फिरते हैं। उनकी टांगों या चोंचोंमें फंस कर वीर्यकण, रजःकणोंमें आ मिलते हैं। मधु-मक्खी या भौंरे तो यह समझ रहे हैं कि वे पुष्पोंका रस ले रहे हैं और उधर प्रकृति उनसे वृक्षोंकी सेवा करा रही है! वायुको भी वनस्पतियोंकी इस प्रकारकी सेवा करनी पड़ती है।

कभी कभी यह भी देखा जाता है कि एक ही वृक्षके पुष्पोंमें दोनों प्रकारके अवयव होते हैं। इन दोनों अवयवोंके होते हुए भी प्रकृति इस विचारसे कि एक ही कुटुम्बमें विवाह और गर्भाधान संस्कार होनेसे संतान निर्बल हो जायगी कीट पतंग और पक्षियों द्वारा दूरस्थ वृक्षोंसे संयोग होनेका प्रबन्ध करा देती है। छोटे छोटे जंतु एक वृक्षसे दूसरे वृक्ष पर बैठकर सहज यह कार्य संवार देते हैं—हजारों वृक्ष-स्त्रियाँ नित्य गर्भधारण करके संतानरूप फल या बीज पैदा करती हैं।

वनस्पतिशास्त्रके पण्डित नर और मादा पुष्पोंको भलीभाँति पहचानते हैं। वे यदि नर-पुष्पोंको नष्ट कर दें तो मादा-पुष्पोंमें फल न लगें, अर्थात् किसी तरह पर यदि नर और मादा-पुष्पोंके वीर्य्य और रज कण मिल न पावें, तो फल न लगें। *

वृक्षोंकी सतानवृद्धिके लिए प्रकृति अनेक उपाय करती है। कई वृक्षोंके फलोंमें वीज नहीं होते, वाल्कि पुष्पोंहीमें वीज होते है। मनुष्य सुगधिके लोभसे इन पुष्पोंको तोड लेते हैं और जान अथवा अनजानमें उनको इधर उधर बखेर देते हैं। मानों पुष्प अपनी सुगधिकी दक्षिणा देकर मनुष्यसे अपनी सतानकी वृद्धि कराता है।

जिस तरह पशुओं और मनुष्योंमें कुटुम्बके वढ़ने पर दूर दूर जाकर वसनेकी आदत है वैसे ही वृक्षोंमें भी है। वे भी अपने वीज दूर दूर भेज देते हैं। पशुओंमें पैरोंद्वारा एक स्थानसे दूसरे स्थानकी यात्रा होती है, पक्षी परोंके वल सैकडों मील उड जाते हैं, और मनुष्य, रेलों मोटरों और जहाजोंमें वैठकर उपनिवेशन करने जाते हैं, किन्तु वृक्षोंके पैर या पख न रहते हुए भी वे एक स्थानसे दूसरे स्थानकी यात्रा करते हैं। वाल्कि अनेक वनस्पतियोंकी सन्तान तो हजारों मीलके फासले पर जा-जाकर उपनिवेशन करती है–' विनु पग चलै सुनै विनु काना, विनु कर कर्म करै विधि नाना।' कुछ वृक्षोंके वीज हवाके घोडों पर वैठ कर इधर उधर जा वसते हैं, कुछ वीज पक्षियोको अपनी मिठासकी लालच दिला, उनके पेटमें प्रवेश कर स्थान स्थानमें पहुंचा करते हैं और वीठके स्वरूपमें वाहर निकल कर वडे वडे वृक्ष वन जाते हैं।

जिन वृक्षोंके वीज वडे होते हैं और इस कारण जो पक्षियों या वायुद्वारा नहीं ले जाये जा सकते, पर जिन्हें हजारों मील सफर करनेकी इच्छा होती है वे मनुष्यों या वन्दरों आदिसे अपना काम लेते हैं। गुलाव फारससे, तम्बाकू अमेरिकासे और आलू यूरोपसे लाकर भारतमें लगाये गये और अव ये हिमालयसे केप केमोरिन तक हर जगह खूब उगते हैं। कौन नहीं जानता कि काशीके लँगडा आम, कावुलके सेव, कन्धारके अनार, काश्मीर और पेशावरके अगूर अपनी मिठासके कारण मनुष्यको लोभमें फँसाकर सारी दुनियामें अपने वीज भेजते हैं। क्या किसी धनी व्यापारीका लडका रुपयोंके वलसे इन

---

* Darwin.

बच्चोंके लिए आहार लाते हैं और जब तक बच्चे स्वयं अपनी रक्षा करने योग्य नहीं होजाते उनके साथ साथ रहते हैं। मुर्गी एक छोटीसी चिड़िया है जो अनेक अण्डे देती है। वह अपने अण्डों पर तीन सप्ताह तक लगातार बैठती है और जबतक कि बच्चे नहीं निकल आते किसीको उनके पास फटकने नहीं देती। इसीके दुर्बल बच्चोंको अपने परोंके नीचे ढके रखती है इस तरह उनकी रक्षा करती है कीड़े मकोड़े खोदनेका उन्हें अभ्यास कराती है और जबतक वे स्वयं अपना गुजारा करनेके योग्य नहीं बन जाते तबतक वह बराबर उनके साथ रहती है। उन्हें योग्य बनाकर छोड़ देती है और फिर संतानवृद्धिके कार्यमें लिप्त हो जाती है।

वृक्ष-जगत् भी संतान-वृद्धिमें नहीं चूकता। पशुओंकी तरह यह भी अपनी जाति बढ़ाने और कायम रखनेका यत्न किया करता है। जिस तरह पशुओंमें नर-मादाके संयोगसे वीर्य और रजःकण मिलनेसे संतानोत्पत्ति होती है ठीक वही नियम वृक्षोंमें भी पाया जाता है। वृक्षोंमें संतानोत्पत्तिका काम शाखियोंकी प्रत्येक शिखामें होता है। इसे पुष्प कहते हैं। प्रत्येक पुष्पमें नर और मादा दोनोंके अवयव नहीं होते। कोई पुष्प नर होता है और कोई मादा। वृक्षोंमें गर्भ-स्थिति-काल जब उनमें पुष्प आते हैं तब प्रारम्भ होता है।

उस समयसे लेकर फल आने तथा फल पकनेके समयतक प्रकृतिकी अद्भुत लीला देखनेमें आती है। पुष्पकी महकसे और मनोहर रंगोंसे मुग्ध होकर मधुमक्खी कीट-पतंग या रसिक पक्षी पुष्पों पर इधरसे उधर फुदकते फिरते हैं। उनकी टांगों या चोंचोंमें फँस कर वीर्यकण, रजःकणोंमें जा मिलते हैं। मधुमक्खी या भौंरे तो यह समझ रहे हैं कि वे पुष्पोंका रस ले रहे हैं और उधर प्रकृति उनसे वृक्षोंकी इच्छाकी पूर्ति करा रही है। वायुको भी वनस्पतियोंकी इस प्रकारकी सेवा करनी पड़ती है।

कभी कभी यह भी देखा जाता है कि एक ही वृक्षके पुष्पोंमें दोनों प्रकारके अवयव होते हैं। इन दोनों अवयवोंके होते हुए भी प्रकृति इस विचारसे कि एक ही कुटुम्बमें विवाह और गर्भाधान संस्कार होनेसे संतान निर्बल हो जायगी कीट पतंग और पक्षियों द्वारा दूरस्थ वृक्षोंसे संयोग होनेका प्रबन्ध करा देती है। छोटे छोटे जंतु एक वृक्षसे दूसरे वृक्ष पर बैठकर उनका यह कार्य सँवार देते हैं—हजारों वृक्ष-स्त्रियाँ नित्य गर्भधारण करके संतानरूप फल या बीज पैदा करती हैं।

तीसरा परिच्छेद ।

मनुष्य जगत् ।
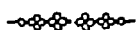
जनसंख्याका इतिहास ।

' The problems of population are older than civilization '

—*Adam Smith*

जनसंख्याके विषय पर विचार करना कोई नई बात नहीं है। प्रत्येक देश और कालके विचारवान् पुरुषोंका ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है। सभ्य-जगतका इतिहास इसका साक्षी है। समय समय पर सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक नेता, आवश्यकतानुसार जनसंख्या बढाने या घटानेका आदेश जनसाधारणको देते आये हैं।

प्राचीन ग्रीसमें, उपनिवेशन तथा कृषि और व्यापारसम्बन्धी सुभीता होनेसे जनसंख्याकी वृद्धि होना स्वाभाविक था, पर निःसीम वृद्धिसे जो आपत्तियाँ उपस्थित होती हैं उनसे बचना भी असम्भव था। उस कालके नेताओंका ध्यान भी इस ओर आकर्षित हुआ। क्रीट, सोलन, फीडन, प्लेटो और अरस्तू आदिको जनसंख्याको सीमाबद्ध करनेकी आवश्यकता जान पड़ी थी।

प्लेटोने स्वतन्त्र राज्योंकी स्वतन्त्र प्रजाके मनुष्योंकी और निवासस्थानोंकी संख्या ५०४० निर्णीत की थी। इस संख्यामें कमी और बेशी न होने पावे, इसका प्रबन्ध करना उस राज्यके मजिस्ट्रेटका काम था। पिताको यदि एकसे अधिक पुत्र हों तो वह उन लोगोंको दे डाले जिन्हें पुत्र नहीं हों, और पुत्रीको ब्याहमें दान देकर अपनी सम्पत्तिका मालिक अपने एक पुत्रको बनावे। इस तरह पिताकी मृत्युके पश्चात् उस घर तथा कुटुम्बमें एक ही पुरुष रह जायगा और स्वतन्त्र प्रजाकी संख्या समान स्थिर रहेगी। *

राजाज्ञासे खास खास जगहों पर मेले स्थापित किये जायें। उनमें देशके युवक और युवतियाँ सम्मिलित हों। मजिस्ट्रेटकी आज्ञासे सर्वोत्तम युवकोंका सम्बन्ध

* Republic 459, Laws 773 and elsewhere

मेढ़ोंकी गुफाओंसे अधिक बाहर कर सकता है ? इससे सिद्ध है कि पशु और वृक्ष-जगतमें सन्तानोत्पत्ति संतानवृद्धि और संतानरक्षाके लिए वे ही गुण विद्यमान हैं जो सर्वोत्तम पशु— मनुष्य —जगतमें हैं।

अन्तर केवल यही है कि मनुष्यमें विवेकशक्ति है। वह भूत और भविष्य-कालपर ध्यान देकर अपना शुभ अशुभ विचार कर सकता है और पशु या नहीं कर सकता। पशु सन्तानवृद्धि करना जानते हैं, पर आवश्यकतानुसार सन्तानोत्पत्तिमें कमीबेशी करना उनकी शक्तिके बाहर है। मक्खी अण्डे दिये जाया करेगी चाहे वे सबके सब बरबाद जाया करें। बरगद और पीपलमें लाखों बीज पैदा होंगे और नष्ट हो जाया करेंगे, पर वे कम बीज पैदा करना न सीख सकेंगे। पशु और वृक्ष दूरदर्शितासे काम लेकर ऐसा करनेमें असमर्थ हैं। उनमें यह शक्ति ही नहीं है कि प्रकृतिके दैवी असन्तुलता का होनेसे अपनी सन्तानकी रक्षा कर सकें। पशु और वृक्ष स्वयं उत्तम रीतिसे काम नहीं ले सकते इसमें वे सर्वथा असमर्थ हैं। उत्तम रीतिसे एक मात्र सर्वोत्तम पशु मनुष्य ही काम ले सकता है।

ल्याको बढ़ाने और बहुत दिनोंकी शान्तिके पश्चात् बहुत बढ़ जाने पर उसे घटानेका यत्न किया करते हैं। काली मृत्यु (Black death) ने इँग्लैण्डकी, आलूके अकाल (Potato Famine) ने आयरलैण्डकी और ३० वर्षव्यापी युद्धने जर्मनीकी जनसख्या घटाकर आधी कर दी थी।

इस ह्रास या क्षीणताको पूरा करनेमें सैकड़ों वर्ष बीत गये। १८ वीं शताब्दीके अन्तमें इँग्लैण्डके नेता पेटी, केरी, वेकफील्ड आदिने वहाँकी जनसंख्याको घटी हुई देखकर इस बात पर जोर दिया था कि जनसख्या खूब बढ़ाई जाय। पेटीका मत था कि "किसी देशकी उन्नति या अवनति उस देशकी जनसख्याकी अधिकता या न्यूनता पर निर्भर है न कि उस देशके उपजाऊ या ऊसर होने पर। जिस देशकी जनसख्या घनी होती है वह देश सुख और सम्पत्तिसे परिपूर्ण रहता है, और जहाँकी जनसख्या कम होती है वह देश दरिद्र और कगाल होता है।" +

इसी शताब्दीमें जब फ्रासने सारे ससारको विजय करनेका सकल्प किया था, तो इँग्लैण्डमें हलचल मच गई थी। उस समय अधिक सेनाकी आवश्यकता थी। अतः उस युद्धकालमें लोगोंका यह मत था कि जो पुरुष अधिक सन्तान उत्पन्न करता है वह धन्य है। महामन्त्री पिटका कथन था कि "जो देशको सन्तानसे परिपूर्ण करते हैं वे देशके सच्चे शुभचिन्तक हैं और ऐसे सज्जनोंकी सहायता राजा अपने कोषसे करेगा।" १८०६ में इँग्लैण्डमें एक एक्ट पास हुआ कि जिन पुरुषोंको दोसे अधिक सन्तान हो वे टैक्ससे बरी किये जायँ। पर जब नेपोलियन सेण्ट हेलीनामें कैद कर लिया गया और युद्धका भय कम हुआ तो पूर्वोक्त एक्ट खारिज कर दिया गया। अर्थात् दो सन्तानवाले पिताका कर जो माफ हो गया था वह फिर लगा दिया गया।

+ Whatever tends to the depopulating of a country tends to the impoverishment of it, and that most nations in the civilized part of the world are more or less rich or poor Proportionately to the paucity or plenty of their people and not to the sterility or fruitfulness of their land' —*Petty*

(यदि पूर्वोक्त सिद्धान्त ही सत्य होता तो भारत और चीन जैसे घनी आबादीवाले देश भूमण्डलके सारे सभ्य देशोंसे कगाल न होते।—लेखक।)

सर्वोत्तम युवतियोंके साथ धार्मिक विधिसे करा दिया जाय । पर विवाहकी संख्याका विचार करना और यह अन्दाज़ा देना कि कितने युवक और युवतियोंका सम्बन्ध होगा मजिस्ट्रेटके अधीन होगा । मजिस्ट्रेट युद्ध, रोग और मृत्युसे क्षीण हुई जनसंख्याकी कमी और बेशीके अनुसार विवाह-सम्बन्धी संख्या निश्चित करेगा—न बहुत ज्यादा न बहुत कम—जैसी उस समय उस राज्यकी प्रजा-सम्बन्धी आवश्यकता जान पड़ेगी ।

प्लेटोने २ वर्षकी अवस्था स्त्रियोंके लिए और ३ वर्षकी पुरुषोंके लिए विवाहके योग्य ठहराई थी । २० से ४ वर्षकी अवस्था तक स्त्रियोंको और ३ से ५५ वर्षकी अवस्था तक पुरुषोंको सन्तानोत्पत्तिका अधिकार दिया था । इस बीचमें राज्यके लिए कितने पुत्र चाहिए इसकी सूचना मजिस्ट्रेट देता था ।

मजिस्ट्रेटके आज्ञाके विरुद्ध विवाह करना अधिक सन्तानोत्पत्ति करना निर्धारित आयुके पूर्व या पश्चात् सन्तान उत्पन्न करना राज्याज्ञाके विरुद्ध चलना था । ऐसे स्त्रीपुरुषोंको राजदण्ड दिया जाता था ।

मजिस्ट्रेटकी आज्ञानुकूल सर्वोत्तम प्रजाकी सन्तति शहरके बाहर उन धाययोंके पास भेज दी जाती थी जो इसी कार्यके लिए नियत थीं और इसके अतिरिक्त मजिस्ट्रेटकी आज्ञाके विरुद्ध विवाह करनेवालोंकी अयोग्य रोगग्रसित स्त्रीपुरुषोंकी अथवा निश्चित संख्यासे अधिक सन्तान उत्पन्न करनेवालोंकी सन्ततिको राज्यके किसी गुमनाम कोनेमें गाड़ देनेका नियम बना था ।

अरस्तूने विवाहके लिए स्त्रियोंकी आयु १८ और पुरुषोंकी ३७ ठहराई थी । स्वभावतः इस बेढब आयुके कारण कितने ही स्त्री और पुरुषोंको लाचार होकर आजन्म अविवाहित रहना पड़ता था । क्योंकि १८ और ३७ की आयुका जोड़ा कम होता है; ऐसोंका मेल कठिन हो जाता है । और यदि कोई स्त्री निश्चित संख्यासे अधिक गर्भ धारण करती थी तो उसका गर्भ (गर्भमें जीव प्रवेश करनेके पूर्व ही) पात करा दिया जाता था । पूर्वोक्त नियमोंसे पता चलता है कि आजसे २१   वर्ष पूर्व जनसंख्याकी निस्सीम वृद्धिकी आपत्तियोंसे बचनेके लिए कैसे कठिन नियम बनाये गये थे और इतने दिन पहले भी प्रजोत्पत्तिको सीमाबद्ध किये बिना काम चलना कठिन था ।

अर्वाचीन कालका इतिहास भी जनसंख्याके विषयसे खाली नहीं पाया जाता । देखा जाता है कि भीषण युद्ध या घोर अकालके पीछे लोग जनसं-

देते, तो फ्रांसमें जनसख्या बढ़ानेका उलटा असर इतना जोर न पकड़ता, उस समय खूनकी भयकर नदियाँ न बह निकलतीं, इंग्लैण्डका पैर जो स्वतत्रताकी ओर बढ रहा था, रुक न जाता, और ससारमात्रकी उन्नति कहीं अधिक हुई होती।"

पश्चिमीय पण्डितोंका ध्यान जनसंख्याके विषयकी ओर निरन्तर आकर्षित होता रहा है और समय समय पर उनके गम्भीर विचार प्रकट होते रहे हैं। माल्थसने बड़ी खोज और परिश्रमसे यह सिद्ध किया है कि ससारकी उन्नतिका सबसे बड़ा बाधक कारण जनसख्याकी नि सीम वृद्धि है। सभ्य ससारने इस सिद्धान्तसे अपने सुभीतेके अनुसार फायदा उठाया है और किसी न किसी रूपमें वह अब भी इससे लाभ उठा रहा है। माल्थसके सिद्धान्तके तीन भाग हैं,—

(१) ससार भरके प्रत्येक देश, काल और जातिमें जिसका इतिहास किसी अंशमें भी प्राप्त हो सकता है यह देखा जाता है कि खानेवाले अधिक और खोराक कम पैदा होती है। किसी न किसी समय खानेवाले हदसे ज्यादा बढ़ जाते हैं और खोराक कम हो जाती है। (यहाँ केवल मनुष्य-जगत् पर विचार कीजिए।)

(२) जब आबादी बेहद बढ़ जाती है तो उसमें कमी होनेके द्वार हैं— लड़ाइयोंमें कट मर जाना, अकालोंमें भूखों मरना, तरह तरहकी बीमारियोंसे मरना, बुरे रीति-रिवाजोंके फैल जानेसे कमजोर होकर मरना, वगैरह। और

(३) जैसी बातें दुनियामें पहले हुई हैं, वैसी ही आगे चलकर हो सकती हैं। भूतकालमें जनसंख्याकी असीम वृद्धिसे जो आपत्तियाँ उपस्थित हुई हैं, भविष्यत्कालमें भी उनके उपस्थित होनेकी सम्भावना है।

माल्थसका पहला सिद्धान्त इस समय तक अखण्डनीय है। इस बीसवीं शताब्दीने भी उस पर मतविरोध नहीं प्रकट किया है। * किन्तु उसके दूसरे

यादा अच्छा है बनिस्वत उस दशाके जब कि आबादी बढ जाती है, खर्चेकी ागी होने लगती है और बढ़ी हुई जनसख्याके जीवन-निर्वाहकी कठिन समस्या हर समय सामने उपस्थित रहती है। —Quesney's Protest.

* भूमण्डलकी लोकसख्या इस समय लगभग २५० करोड़ है और रैवि-न्स्टीन (Ravenstein) साहबके हिसाबसे पृथ्वी पर २८० लाख वर्गमील

फ्रांसके राजा चौदहवें लुईने उन सब पुरुषोंको जो २० वर्षकी आयुके पूर्व विवाह कर लेते थे अथवा उनको जिन्हें १० सन्तति थीं हर तरहके राजकरसे मुक्त कर दिया था। बेसोलिनन (पहले) ने नियम बना दिया था कि जिस घरमें ७ बालक हों उनमेंसे एकके शिक्षण तथा पालन-पोषणका भार वह (मेसोलिनन) स्वयं उठावेगा। सन् १८८५ और १८९ में फ्रांसमें अधिक सन्तानोत्पत्तिके लिए अनेक नियम बने। उनमेंसे एक यह था कि प्रत्येक सिपाही उसकी सन्तानकी संख्याके अनुसार १-२-३ या ४ वोट देनेका अधिकार प्राप्त होगा।

राज्य कर्मचारी और धनिमान् पुरुष युद्धमें विजय प्राप्त करने तथा धन बढ़ानेके लोभसे जनसाधारणको अधिक सन्तान उत्पन्न करनेके लिए उत्साहित करते थे। पर विचारवान् पुरुष जो सामाजिक प्रश्नों पर भलीभाँति ध्यान देते थे इस दृष्टिके विरोधी थे। उनका मत था कि जनसंख्याकी अधिक वृद्धि चाहे राज्यका बल बढ़ाय पर, जनसाधारणके लिए यह वृद्धि लौट कर दुःख देनेवाली होती है और राजाओंको कोई अधिकार नहीं कि वे अपने बल और फायदेकी गरजसे प्रजाके सुखकी आहुति दिया करें।

राज्य तथा सम्पत्तिवाली पुरुषोंकी इस जबर्दस्तीका असर फ्रांस न कुछ भयानक पड़ा। यहाँ विरुद्धमतवालोंका प्रभाव उलटा ओर पकड़ गया और जनसाधारणमें कम सन्तान उत्पन्न करनेकी ऐसी बलवती चाह चली कि वह उचित सीमाको भी लाँघ गई। ×

मारशलका कथन है कि "यदि उस समयके राजे और धनिकोंने लोग स्वार्थान्ध होकर अपने लाभके लिए सर्वसाधारणके हितका बलिदान न करते और यदि वे उस समयके विचारवान् समाजसुधारकों और देशभक्तोंके उन सलाहोंकी पुकार सुनते * जनसंख्याके बढ़के मनुष्यत्वको जरा भी क्षय

× अपने समीपवाली देशोंके सम्मुख फ्रांसकी जनसंख्या घटने पर राजनैतिक तथा सैनिक दृष्टिसे (From the political and military point of view) चाहे जितना शोक प्रकट किया जाय किन्तु इस बुराईमें भलाईका अंश कहीं अधिक मिश्रित है। सामाजिक तथा आर्थिक दशाकी दृष्टिमें इसने लाभ दिया है।—Levasseur

* लोगोंको जनसंख्या बढ़ाने पर कम और जातीय आय बढ़ाने पर अधिक जोर देना चाहिए। क्योंकि अधिक आराम भी अच्छी आमदनीसे मिलता है

होते, तो फ्रासमें जनसख्या बढ़ानेका उलटा असर इतना जोर न पकडता, उस समय खूनकी भयकर नदियाँ न बह निकलतीं, इंग्लैण्डका पर जो स्वतंत्रताकी ओर बढ रहा था, रुक न जाता, और ससारमात्रकी उन्नति कहीं अधिक हुई होती।"

पश्चिमीय पण्डितोंका ध्यान जनसख्याके विपयकी ओर निरन्तर आकर्पित होता रहा है और समय समय पर उनके गम्भीर विचार प्रकट होते रहे हैं। माल्थसने बडी खोज और परिश्रमसे यह सिद्ध किया है कि ससारकी उन्नतिका सबसे बडा बाधक कारण जनसख्याकी नि सीम वृद्धि है। सभ्य संसारने इस सिद्धान्तसे अपने सुभीतेके अनुसार फायदा उठाया है और किसी न किसी रूपमें वह अब भी इससे लाभ उठा रहा है। माल्थसके सिद्धान्तके तीन भाग हैं,—

(१) ससार भरके प्रत्येक देश, काल और जातिमें जिसका इतिहास किसी अंशमें भी प्राप्त हो सकता है यह देखा जाता है कि खानेवाले अधिक और खोराक कम पैदा होती है। किसी न किसी समय खानेवाले हदसे ज्यादा बढ जाते हैं और खोराक कम हो जाती है। *(यहाँ केवल मनुष्य-जगत् पर विचार कीजिए।)*

(२) जब आबादी बेहद बढ जाती है तो उसमें कमी होनेके द्वार हैं— लडाइयोंमें कट मर जाना, अकालोंमें भूखों मरना, तरह तरहकी बीमारियोंसे मरना, बुरे रीति-रिवाजोंके फैल जानेसे कमजोर होकर मरना, वगैरह। और

(३) जैसी बातें दुनियामें पहले हुई हैं, वैसी ही आगे चलकर हो सकती हैं। भूतकालमें जनसख्याकी असीम वृद्धिसे जो आपत्तियाँ उपस्थित हुई हैं, भविष्यत्कालमें भी उनके उपस्थित होनेकी सम्भावना है।

माल्थसका पहला सिद्धान्त इस समय तक अखण्डनीय है। इस बीसवीं शताब्दीने भी उस पर मतविरोध नहीं प्रकट किया है। * किन्तु उसके दूसरे

ज्यादा अच्छा है बनिस्बत उस दशाके जब कि आबादी बढ जाती है, खर्चकी तगी होने लगती है और बढी हुई जनसख्याके जीवन-निर्वाहकी कठिन समस्या हर समय सामने उपस्थित रहती है। —Quesuey's Protest.

* भूमण्डलकी लोकसख्या इस समय लगभग २५० करोड है और रेविन्स्टीन (Ravenstein) साहबके हिसाबसे पृथ्वी पर २८० लाख वर्गमील

और तीसरे सिद्धान्तके रूपमें कुछ अन्तर आ गया है। रेलों और रेल जहाजों-ने इन आखिरी दो सिद्धान्तोंके ऊपरी रूपमें कुछ अन्तर डाल दिया है—पर असलियतमें वे ज्योंके त्यों हैं। रेलों और जहाजोंके द्वारा अन्न आदि एक स्थान या देशसे दूसरे स्थान या देशमें ले जानेका सुभीता बहुत बढ़ गया है, और बहुत थोड़े खर्च पर दूर दूर देशोंमें भेजा जा सकता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि प्रत्येक देशकी जनसंख्याको एक मात्र अपने ही देशकी उपज पर गुजारा नहीं करना पड़ता; एक देशका अन्न दूसरे देशवालोंके भी काम आता है।

मालथसका सिद्धान्त यथार्थमें सत्य प्रमाणित होता है। जनसंख्याकी बेरोक बाढ़से जो बुराइयाँ पहले पैदा होती थीं वही अब भी होती हैं; अन्तर केवल यह पड़ता है कि एक देशकी मुसीबत दूसरे देशको भोगनी पड़ती है—एक देशकी आबादीकी बेहद बाढ़का असर दूसरे देशों पर अमलमें करने पड़ता है। उदाहरणार्थ जर्मनीकी बढ़ी हुई जनसंख्याकी खपत बस (जर्मनी) देशमें नहीं हो सकती; उसे संसारमें अधिक स्थान चाहिए—कृषिके लिए नई भूमि शिल्पकलाकी निकासीके लिए नये बाजारों पर प्रभुता और प्रजाके उत्तमोत्तम दशामें रखनेके लिए उपनिवेश चाहिए। इसके लिए जर्मनी संसार मात्रको उलट पलट देगा—बेल्जियम क्या और सभ्यताका सर्वनाश ही क्यों न

खेतीके योग्य उपजाऊ जमीन और १४ लाख वर्गमील अनउपजाऊ जंगल और ऊसर जमीन है। यदि लोकसंख्याकी वृद्धिकी औसत प्रति सहस्र ८ रखी जाय (According to the calculations of the British Association) तो १ वर्षोंके भीतर ही लोकसंख्या बढ़कर ६ करोड़ हो जाती है। प्रत्येक उपजाऊ वर्गमील पर १ मनुष्योंका निर्वाह होगा। यह मान लिया जाय कि १ वर्षोंमें खेतीके औजार तथा खाद आदिमें बहुत कुछ सुधार होकर भूमिकी उपज बढ़ेगी पर भूमिकी उपज बढ़नेसे भी आबादीकी बाढ़ केवल १ वर्ष तक जारी रह सकेगी। इसके आगे नहीं। अर्थात् यदि पृथ्वी भरकी उपज भूमण्डलके प्रत्येक जनमें बराबर बाँटी जाय—एक रत्तीकी खोराक कम कर खानेवालोंमें अन्त हो जाय तब भी लोगोंको केवल १ वर्ष तक खानेको अन्न मिल सकेगा। १ वर्षोंके आगे फिर वही अकालकी कमी—अकाल, मरक रोग और युद्ध।

हो जाय, पर जर्मनी अपनी जनताके विस्तारके लिए दूसरोंका अधिकार हड़पनेमें तनिक भी संकोच न करेगा। ×

इंग्लैण्डकी जनताका निर्वाह इंग्लैण्डमें न हो सकेगा। वे कैनेडा, न्यूजीलैण्ड और आस्ट्रेलिया आदिमें जा बसेंगे और वहाँके भोलेभाले कमजोर निवासियोंको कठोर नियमोंसे कुचल डालेंगे। माउरीजका * अस्तित्व उठ जायगा और अँगरेजोंके बच्चे उनके देशमें फूलें फलेंगे। भारतके अन्नसे इंग्लैण्डकी बढ़ी हुई आबादीका पालन-पोषण होगा और भारत-संतानका सर्वनाश दुर्भिक्ष आदिसे हुआ करेगा।

सारांश यह कि इस बीसवीं शताब्दीके आविष्कारोंसे सुरक्षित और स्वतन्त्र देशोंकी जनसंख्याकी बाढ़का बुरा असर आत्मरक्षाके उपायोंमें ढीले परतन्त्र या दुर्बल देशों पर पड़ता है। रेलों, तारों और जहाजोंने भारतकी स्थितिमें भयंकर परिवर्तन कर डाला है। भारतका जीवन भारी संकटमें फँस गया है। इस समय इस अभागे देश पर अपनी जनताकी निःसीम वृद्धिके भारके अतिरिक्त अन्य देशोंकी आबादीकी बाढ़का भी बुरा असर पड़ रहा है—यह भारतका दुस्सह दुर्भाग्य है!

× स्पेनवालों (Spaniards) ने हेटी नामक द्वीपको जीतकर उसको अपना उपनिवेश बनाया। थोड़े ही दिनोंमें हेटीके खास निवासियोंकी संख्या घटकर कुल एक चौथाई रह गई! अमेरिकामें वहाँके असली बाशिन्दों (Red Indians) की संख्या मुश्किलसे २ लाख रह गई है, और औपनिवेशिक गोरी जातिवाले ७ करोड़ हो गये हैं। आफ्रिकामें भी यही दृश्य दीखता है।

* न्यूजीलैण्ड पासिफिक महासागरका एक द्वीप है। यह अँगरेजोंका उपनिवेश है। यहाँके प्राचीन निवासियोंको माउरीज कहते हैं। इनकी संख्या बराबर घट रही है। थोड़े ही समयमें इनके अस्तित्वके लोप हो जानेका भय है। माउरीज कुल ४० हजार बच रहे हैं और उनके देशमें अँगरेजोंकी संख्या ८ लाख हो गई है।—' A Dying Race' page 4 by U. N Mukerjee

चौथा परिच्छेद।

भारतवर्षमें प्रचलित चंचा-बुद्धि-धर्म्म।

The measure of goodness or badness of an act is almost always its expediency or inexpediency and that conscience deals with accustomed morality and not with expediency

भले या बुरे कार्य्यका निर्णय समयिक आवश्यकतासे किया जा सकता है न कि अन्तःकरणके संकेतोंसे। अन्तःकरण आवश्यक कार्य करनेका संकेत नहीं करता वह केवल प्रचलित धर्म्म या कार्य—जिसे करनेका उसे अभ्यास हो गया है—करनेका इशारा किया करता है। +

जिस समय भारतवर्षने धर्म्म विज्ञान शिल्प कला व्यापार और वाणिज्यमें पूर्णता प्राप्त की थी जिस समय भारतीयोंके अगणित योद्धाओंने अजायबके सहस्रों आविष्कारोंसे पृथ्वीभरकी जातियों पर प्रभुत्व और चक्रवर्ती राज्य प्राप्त कर लिया था जिस समय भारतके विमान स्वच्छन्दतासे गगनमण्डलमें उड़ा करते थे और सहस्रों भारतीय जहाज फारस मिस्र अमे-

---

+ अन्तःकरण कोई वस्तुविशेष या ईश्वरदत्त शक्ति नहीं है। यह भला बुरा पहचाननेवाली शक्ति इन्द्रियोंद्वारा संग्रहित ज्ञानसे बनती है। जिस देश काल समाज या धर्म्ममें मनुष्य उत्पन्न होता है उसी देश काल समाज या धर्म्मकी परम्पराओंके अनुसार ही उसका अन्तःकरण बनता है। विषय गम्भीर है तो भी आगेके वाक्योंमें बहुत कुछ स्पष्ट हो जाता है। मनुष्य इस संसारमें जन्म लेता है तबसे बल्कि गर्भमेंसेही उसकी सूक्ष्म इन्द्रियाँ—नाक कान आँख और स्पर्श तनु आदि—काम करने लगती हैं। आर्य्य और अँगरेज जातिके बालकोंमें कोई अन्तर नहीं होता। जन्मके समय रंग रूप और बनावटको छोड़कर सभी बालक एकसे होते हैं। किन्तु, ज्यों ज्यों वे बढ़ते हैं, और देश काल तथा समाजके आचार-विचारोंकी छाप उनके मस्तिष्क पर पड़ती है त्यों त्यों उनमें

रिका और यूनानमें जाया करते थे, जिस समय पश्चिमीय गोरी जातियोंके पुरखे असभ्य और कगाल थे, जिस समय इस महान् जातिको ईसा, मह-म्मद, कन्फ्यूसियस आदि ससारके सारे बड़े बड़े धर्मोंके जन्मदाताओंको जन्म लेनेके लिए तैयार करना था, उस महाप्रभुत्वके समयमें इस जातिको अधिक संतानकी आवश्यकता थी। इसे सारे भूमडलमें अपनी सभ्यताका प्रचार करना था, युद्ध करना था, व्यापार करना था, और उपनिवेशन करता था। इन महान् कार्योंकी पूर्तिके लिए अधिक सतानकी आवश्यकता थी। इस आवश्य-कताकी पूर्तिके लिए इसने उत्तम प्रजाका उत्पन्न करना प्रत्येक आर्य्यका कर्तव्य कर्म बना दिया था। वेदोंमें सुदृढ, सुन्दर और सदाचारी सन्तान उत्पन्न कर-नेकी वडी महिमा गाई है। स्थान स्थान पर अनेकानेक प्रार्थनायें और सदुप-देश दिये हुए हैं। जैसे—'इस वधूको १० पुत्ररत्न उत्पन्न हों। तुम सम्पूर्ण

भिन्नता आती जाती है। जिस धर्म्म या समाजमें वालक उत्पन्न होता है उसी धर्म्म और समाजके नियम उसे पालन करने पड़ते हैं। नियमविरुद्ध चलनेवालोंको वह दण्ड पाते देखता है। इस दण्डके भयसे स्वभावत धीरे धीरे उसे यह मालूम हो जाता है कि क्या करना उचित है और क्या करना अनुचित। ब्राह्मणका लड़का गोमासके स्मरणमात्रसे पापके भयसे काँप उठता है, किन्तु इसके विपरीत यूरोपियन पादरीका लड़का वडे हर्षसे गोमास भक्षण कर जाता है।

एक ही देशके लोगोंमें वर्ण और धर्म्मकी विभिन्नतासे अत करणमें भिन्नता उत्पन्न हो जाती है। किसी चमारको खुले आम मदिरा पीनेमें तनिक भी सकोच न होगा, पर ब्राह्मण शरावकी वोतल ले जानेमें हिचकिचायगा। किसी जैनमता-वलम्बीके पैरके नीचे यदि जान बूझकर एक चिउँटी भी मर जाय, तो उसका कलेजा धक धक करने लगता है, पर शाक्तमतावलम्बी वडी प्रसन्नतासे भेडों, वकरियों और भैंसोंकी गर्दनों पर छुरी फेरकर वलिदान चढ़ाता है। नरहत्यासे वडा कोई पाप नहीं है, पर जगली और असभ्य जातियाँ अपने बूढे माँ-वापोंको आनन्दपूर्वक खातीं और इस महामाससे पडोसियोंकी दावत करती पाई गई हैं। अत अत करणका सकेत ईश्वरीय अकुश नहीं है। हृदयकी सकीर्णता और पक्ष-पातको त्यागकर सामाजिक, सामायिक और दैशिक आवश्यकताओंसे धर्म्म और अधर्म्मका निर्णय किया जासकता है, न कि प्रचलित धर्म्मशास्त्रकी आज्ञा या अन्त करणके सकेतोंसे।

आयुको—सौ १ वर्षोंसे कम नहीं है—प्राप्त होओ और पुत्रों तथा नातियोंके साथ आनन्द करो। गृहाश्रममें स्थिर रहकर इस पतिके लिए उत्तम प्रजाको उत्पन्न करो आदि। * "मनु भगवान्ने वंश-वृद्धिकी प्रशंसामें बहुत कुछ किया है। आपका वचन है कि गर्भधारण करनेके लिए स्त्रियाँ और गर्भाधान करनेके लिए पुरुष उत्पन्न किये गये हैं।"

---

*—इमां त्वमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रां सुभगां कृणु।
दशास्यां पुत्राना धेहि पतिमेकादशं कृधि॥

—ऋ० मं० १० अ० ७ सू० ८५, मं० ४५।

अर्थात्—हे भगवन्! इस वधूको सौभाग्यवती बनाओ और यह १० पुत्रोंकी माता होवे।

इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।
क्रीळन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे॥

—ऋ० मं० १० अ० ७ सू० ८५, मं० ४२।

अर्थात्—हे वधू और वर तुम दोनों आनन्दपूर्वक १ वर्षोंसे अधिक जीओ और पुत्रों तथा नातियोंके साथ खेलो। (४२ २७ २५, आदि मन्त्रोंमें भी ऐसी ही प्रार्थनायें हैं।)

आरोह तल्पं सुमनस्यमानेह प्रजां जनय पत्ये अस्मै।
इन्द्राणीव सुबुधा बुध्यमाना ज्योतिरग्रा उषसः प्रति जागरासि॥

—अ० कां० १४ अ० २ सू० २, मं० ३१।

अर्थात्—हे वराङ्गने! तू प्रसन्नचित्त होकर इस गृहाश्रममें स्थिर रह और इस पतिके लिए उत्तम प्रजाको उत्पन्न कर।

देवा अग्रे न्यपद्यन्त पत्नीः समस्पृशन्त तन्वस्तनूभिः।
सूर्येव नारि विश्वरूपा महित्वा प्रजावती पत्या संभवेह॥

—अ० कां० १४ अ० २ सू० २, मं० ३२।

अर्थात्—हे सौभाग्यप्रदे, तू सूर्यके साथ कान्तिकी तरह अपने स्वामीके साथ मिलकर अच्छी प्रजाको प्राप्त हो। (३७ ३८ ४३ आदि अनेक मन्त्रोंमें भी ऐसी ही प्रार्थनायें और उपदेश हैं।)

सुप्रजाः प्रजाभिः स्यां सुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः।
नर्य प्रजां मे पाहि शंस्य पशून्मे पाहि अथर्य पितुं मे पाहि॥

—य० अ० ३, मं० ३७।

* जैसे सब बड़े बड़े नद और नदियाँ समुद्रमें जाकर ही स्थिर होती हैं वैसे ही सब आश्रमी गृहस्थहीको प्राप्त होकर स्थिर होते हैं। जैसे वायुके आश्रयसे सब प्राणधारी जीते हैं वैसे ही गृहस्थके आश्रयसे ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी, अर्थात् सब आश्रमोंका निर्वाह होता है। ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और सन्यासी तीनों आश्रम गृहस्थहीसे प्रतिदिन अन्नादि पाते हैं, इससे गृहस्थ ही सबसे ज्येष्ठाश्रम है। वेद और स्मृतिके प्रमाणसे सब आश्रमोंके बीचमें गृहस्थाश्रम ही श्रेष्ठ है, क्योंकि यही आश्रम तीनों आश्रमोंको पालन करता है। ×

'पुं' नामक नरकसे जो पिताकी रक्षा करता है, वही पुत्र कहलाता है। ब्रह्माने नामहीसे पुत्रका कर्तव्य बतला दिया है। पुत्र-शब्दका अर्थ बतलाया जाता है—'पुनाति स्ववंशान् इति पुत्रः।' अपने वंशजोंको सुकृत्यों द्वारा जो पवित्र करे उसीका नाम है 'पुत्र'। पुत्र अपने अच्छे कर्म्मोंसे दस पीढ़ी आगेके अपने पूर्वजोंको, दस पीढ़ी पीछेकी अपनी सन्तातिको तथा स्वयं अपने आपको अर्थात् कुल २१ पीढ़ियोंको दुर्मरण आदि प्रायश्चित्तोंसे मुक्त और पवित्र कर सकता है।

अर्थात्—मैं त्रिविध सुखसे युक्त होकर उत्तम प्रजायुक्त होऊँ, उत्तम पुत्र, बन्धु, सम्बन्धी भृत्योंके साथ उत्तम वीरोंसे महित होऊँ, आदि।

* प्रजनार्थं स्त्रिय सृष्टा सन्तानार्थञ्च मानवा।
तस्मात् साधारणो धर्म्मं श्रुति पत्न्या सहोदिता ॥—मनु।

अर्थात्—गर्भधारण करनेके लिए स्त्रियाँ और गर्भाधान करानेके लिए पुरुष उत्पन्न किये गये हैं, इस लिए स्त्रीके पास पुरुषका रहना आवश्यक धर्म्म है।

×—यथा नदीनदा सर्वे सागरे यान्ति सस्थितिम्।
तथैवाश्रमिण सर्वे गृहस्थे यान्ति सस्थितिम् ॥
यथा वायु समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तव।
तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्त्तन्ते सर्व आश्रमा ॥
यस्मात् त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम्।
गृहस्थेनैव धार्य्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही ॥
सर्वेषामपि चैतेषा वेदस्मृतिविधानत।
गृहस्थ उच्यते श्रेष्ठ स त्रीनेतान् बिभर्ति हि ॥—मनु।

पुत्र अथवा पुत्रके पुत्रकी आवश्यकता केवल पिण्डदान और श्राद्ध करके पितरोंको सन्तुष्ट कर देनेहीके लिए नहीं है बल्कि 'अपुत्रस्य गतिर्नास्ति'—जिसे पुत्र या सन्तान नहीं उसकी सद्गति ही नहीं हो सकती। पुत्रहीनके लिए मोक्षका द्वार ही बन्द रहता है।

एक ओर तो धार्मिक सुगमता और दूसरी ओर वंशवृद्धिसम्बन्धी साधनोंकी ऐसी सुन्दर व्यवस्था और अपूर्व पुत्रमहिमा। जब वंशवृद्धिसे लोक और परलोक दोनों ही बनते हैं तब फिर क्या पूछना है! पतिपरायणा मनोहर रूपगुणशालिनी सुंदरी पत्नीकी प्रेमपूर्ण सेवाका स्वर्गीय आनंद लूटना किसे रुचिकर न होगा अनेक पीढ़ियोंको मुक्ति देनेवाले शिशुजन्मकी किसे अभिलाषा न होगी कौन ऐसा मूर्ख और अभागा होगा जो वंशवृद्धि न करके इस लोक और परलोक दोनोंके आनन्दसे वंचित रहना चाहेगा!

इस अन्तिम शास्त्राज्ञाने भारतमें भारी उलट फेर कर दिया—प्रत्येक स्त्रीपुरुषके हृदय पर बड़ा प्रभाव डाल दिया। योग्यायोग्यका विचार न करके सबको पुत्रप्राप्तिके लिए गृहस्थधर्मका पालन करना चाहिए और संसार-व्यवहार चलाना चाहिए। सब किसीको पुत्र उत्पन्न करना चाहिए। ऐसा करनेहीसे परमार्थ सधेगा और वास्तविक मुक्ति मिल सकेगी अन्यथा नहीं। शास्त्रोंके सत्य मर्मको न समझनेवाले भारतवासियोंके मनमें यह बात समा गई है कि सन्तानोत्पादन करनेहीसे मोक्ष प्राप्त हो सकता है। बिना पुत्रके उनका जीवन ही वृथा है। प्राचीन कालका इतिहास उनके इस विचारको और भी पुष्ट करता है। रामायण आदि पुस्तकोंमें वे पुत्रमहिमाकी अनेक कथाएँ पढ़ते हैं। वे देखते हैं कि दशरथ आदि महाप्रतापी राजाओंने सन्तानके लिए बड़े बड़े कष्ट सहे थे पुत्र उत्पन्न करनेके लिए महान् यज्ञ और तप किये थे। क्योंकि बिना पुत्रके मोक्ष नहीं प्राप्त हो सकता।

सहस्रों वर्षोंसे यह भावना हमारे हृदयमें चली आ रही है कि जो पुत्र अपने माता-पिताके पीछे श्राद्ध नहीं करता और पिण्डदान नहीं करता उसके माता-पिताओंकी सद्गति नहीं होती। यह विश्वास दृढ़ और अटल हो गया है। इसका परिणाम बड़ा भयानक हो रहा है। अन्धविश्वासी पुरानी लकीरके फकीरोंके यहाँ सन्तान होनी चाहिए—बस। पुत्र चाहे जैसा दुरात्मा होगा कि शराबी जुआरी—वेश्यागामी पितृघातक व्यभिचारी कपटी आदि जो कुछ भी हो इससे कुछ मतलब नहीं। जिन्होंने माता-पिताको उनकी जीवितावस्थामें

खानेको पूरा अन्न भी नहीं दिया है, वल्कि उलटे उन्हींका जीवन चूस चूस कर अपना निर्वाह किया है वे कपूत भी पिताकी मृत्युके पीछे पिण्डे ढँगला कर पितरोंको स्वर्ग पहुँचावेंगे ! हाय ! यह कैसी धर्मकी समझ और कैसी अन्धश्रद्धा है ।

पिण्डदानसे पारमार्थिक सिद्धि चाहे कुछ भी होती हो, पर श्राद्धादि क्रियायें फलदायिनी तभी होंगी जब शास्त्राज्ञाका सत्य उद्देश्य और उन क्रियाओंका मर्म अच्छी तरह समझमें आजायगा। मृत्युके पश्चात् पुत्र पिताको नरकसे मुक्त करता है, यह बात अप्रत्यक्ष और काल्पनिक है। इसे न तो किसीने आँखसे देखा है और न बहुत दिनों तक इसके दिखाई देनेकी आशा ही है। किन्तु पिताकी जीवित अवस्था तो प्रत्यक्ष है। स्वर्गके सुखको कोई नहीं देख सकता, पर इस ससारमें पुत्र पिताको कितना सुख देता है इसे तो सभी देखते हैं। यह बिलकुल खुली हुई बात है।

स्वर्ग और नरकका सीधासादा नाम सुख और दु.ख है । इस जीते जागते सत्य और सार ससारमें नरकसे मुक्त करनेका अर्थ है, दु खसे, भयसे, चिन्तासे, पराधीनतासे छुटकारा दिलाना। माता-पिताके सुखकी या मोक्षमार्गकी सुगमताके लिए, कुल, जाति या स्वदेशके उद्धारके लिए, ससारके प्राणीमात्रके कल्याणके लिए, बड़ोंके आरंभ किये हुए कार्यको पूर्ण करनेके लिए, कुल-दीपक पुत्र और प्रकाशमयी पुत्रियोंकी आवश्यकता होती है । सुपुत्र और सुपुत्रियाँ अपने बल, ज्ञान, आत्मत्याग और सत्कर्मोंसे इस ससारके यात्रियोंसे भरी हुई नौकाका बेड़ा पार करती हैं। इस तरह कुटुम्बकी एक प्रधान स्त्री या पुरुष सत्कार्योंकी प्रवृत्ति करता हुआ मरणको प्राप्त होता है और अपने स्थान पर अपने आरम्भ किये हुए या अधूरे छोड़े हुए कार्योंको पूर्ण करनेके लिए या उनमें वृद्धि करनेके लिए अपने स्थान पर एक या अधिक, अपने समान, नहीं नहीं अपनेसे अधिक, रूपवान्, बलवान्, स्वकुटुम्बप्रेमी, स्वदेशानुरागी वीरों या वीरागनाओंको छोड़ जाता है। आर्यधर्म्मकी आज्ञानुसार प्रत्येक नर और नारी, हर एक गृहस्थ ऐसी पुनीत प्रवृत्ति करनेके लिए, ऐसे मनोवाञ्छित उत्तराधिकारीको छोड़ जानेके लिए बँधा हुआ है । कर्त्तव्य रूपसे आरंभ किये हुए कार्योंको परिपूर्ण करनेके लिए पुत्रकी इच्छा मनुष्योंमें स्वाभाविक है। इस प्राकृतिक, स्वाभाविक और धार्मिक इच्छाको पूरा करनेके लिए प्राचीन आर्यगण गृहाश्रमके दृढ नियम सङ्गठित कर गये हैं। इन

नियमोंके अनुसार चलनेसे कुपुत्र जन्म ही नहीं सकते। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। यही नहीं बल्कि इससे मनमानी सर्वोत्तम संतति पैदा की जा सकती है। किसी वेद किसी शास्त्र और किसी धर्ममें दुर्बल जर्जर अपाहिज या दुर्बल संतान पैदा करना नहीं लिखा है। गृहाश्रम धर्ममें प्रवेश करना बालकोंका खेल नहीं बतलाया गया है। मनुमहाराजने साफ साफ लिख दिया है कि गृहाश्रममें बड़ी सावधानीसे रहना चाहिए। दुर्बल और अयोग्य जन इस महत्त्वपूर्ण धर्मका पालन नहीं कर सकते *। उन्होंने ऐसे लोगोंको गृहाश्रममें जानेका अधिकार ही नहीं दिया है। बल्कि विवाह कैसे लोगोंसे करना चाहिए और कैसे लोगोंसे नहीं यह भी लिख दिया है। जिस कुलमें सुकर्म न होते हों जिसमें अच्छे बालक न उत्पन्न होते हों जिसमें वेदाध्ययन न होता हो जिस कुलके बालकोंके शरीर पर लम्बे बाल हों जिस कुलमें क्षय मृगी वा सफेद कोढ़ हो उन कुलोंमें न तो कन्या देनी चाहिए और न ऐसे कुलोंकी कन्या लेनी चाहिए।"

" पीले वर्णवाली अधिक अङ्गवाली (जैसे छंगुली) रोगवती जिसके शरीर पर कुछ भी लोम न हों या अधिक लोम हों व्यर्थ अधिक बात बकनेवाली हो जिसके बिल्लीकी तरह पीले नेत्र हों जिसका नक्षत्र पर नाम हो (रेवती रोहिणी आदि) जिसका नदी पर नाम हो (गङ्गा यमुना आदि) जिसके पर्वत पक्षी (कोकिला मैना आदि) सर्प (उरगा भोगिनी), प्रेष्य (दासी) वाचक नाम हों और जिसका भीषण (कालिका चण्डिका इत्यादि) नाम हो उस कन्याके साथ विवाह न करना चाहिए। किन्तु जिसके सुन्दर अंग हों उत्तम नाम हो जो हंस और हाथीकी तरह चलनेवाली हो जिसके सूक्ष्म लोम सूक्ष्म केश और सूक्ष्म दाँत हों जिसके सब अंग कोमल हों उस स्त्रीसे विवाह करना चाहिए। †

स सन्धार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।
सुखं चेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः॥

†—हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम्।
क्षय्यामयाव्यपस्मारिश्वित्रिकुष्ठिकुलानि च॥
नोद्वहेत्कपिलां कन्यां नाधिकाङ्गीं न रोगिणीम्।
नालोमिकां नातिलोमां न वाचाटां न पिङ्गलाम्॥

" चाहे ऋतुमती कन्या पिताके घरमें मरणपर्यन्त विना विवाहके बैठी रहे, परतु गुणहीन, असदृश, या अयोग्य पुरुषके साथ उसका विवाह कभी न करे।" +

नारद ऋषिने कहा है कि " कुमारोंकी परीक्षा वैद्यसे कराकर उसकी आज्ञा होने पर विवाह करना चाहिए। यदि कुमारीमें सक्रामक, और घृणोत्पादक रोग, शरीरकी कुरूपता, ब्रह्मचर्यका भग आदि दोष हों तो उसका विवाह नहीं हो सकता और यदि उपर्युक्त दोष या पागलपन, जातिहीनता, नपुसकता, दरिद्रता आदि दोष कुमारमें हों तो वह भी विवाहका आधिकारी नहीं।" इनके अतिरिक्त ज्योतिष शास्त्र, सामुद्रिक शास्त्र, लक्षण शास्त्र आदि भी ऐसी बातोंसे भरे पडे हैं कि कैसी स्त्रीसे या कैसे पुरुषसे किस समय विवाह करना चाहिए। मनुष्यके शरीर और आत्मा दोनों उत्तम रहें, इसके लिए गर्भाधानसे लेकर श्मशानात, अर्थात् मृत्युके पश्चात् मृतक शरीरका दाह करने पर्यन्त १६ सस्कार होते हैं। शरीरका आरभ गर्भाधान और अन्त अन्त्येष्टिसे होता है। इन सोलहो सस्कारोंको नियमपूर्वक करना प्रत्येक आर्य्यका कर्तव्य है।

मैं पूछता हूँ कि ऋषियोंके प्रचलित नियमोंमेंसे क्या आज एक नियम भी उनकी अज्ञानुसार माना जाता है? क्या आज भी केवल हृष्टपुष्ट, निरोगशरीर, विद्वान्, विद्याभ्यासी, सत्यासत्यविवेकी और कर्तव्यपरायण लोग गृहस्थाश्रममें प्रविष्ट होते हैं? क्या दुधमुँहे बच्चोंके—गोदमें खेलनेवाले या स्कूलोंमें फुदुकनेवाले बच्चोंके—सिर पर गार्हस्थ्य रख देना धर्म्म है? क्या शराबी, कोढी, पागल, दुर्बल, दरिद्रोंका सतानोत्पादन करना धर्म्म है? साक्षात् देखते हुए कि १०० लड़कोंमेंसे ५० लड़के बाल्यावस्थामें ही (एक वर्षके भीतर ही) कालके ग्रास बन रहे हैं, यह जानते हुए भी कि इन बच्चोंकी मृत्युका कारण उनके

नर्क्षवृक्षनदीनाम्नीं नान्त्यपर्वतनामिकाम्।
न पक्ष्यहिप्रेष्यनाम्नीं न च भीषणनामिकाम्॥
अव्यगांगीं सौम्यनाम्नीं हसवारणगामिनीम्।
तनुलोमकेशदशनां मृद्वगीमुद्वहेत् स्त्रियाम्॥

+ —काममामरणात्तिष्ठेद्गृहे कन्यर्तुमत्यपि।
न चैवैना प्रयच्छेत्तु गुणहीनाय कर्हिचित्॥

माता-पिताकी बुद्धि है सन्तान पर संतान पैदा करते हुए स्मशान या कब्रस्तान भरते जाना अभागी भारतका ही धर्म हो सकता है।

धर्म और अधर्मका निर्णय मनुष्य करें या न करें मनुष्य किसी अधर्मको ही धर्म कह कर अपने भोलेभाले भाई मनुष्योंको बरगला लें, किन्तु प्रकृति धोखा नहीं खा सकती। कालचक्र आपसे आप दोनोंको अलग कर देगा। धर्मसे उत्थान और अधर्मसे अधःपतन होगा और अवश्य होगा। उसे संसारकी कोई कृत्रिम शक्ति रोक नहीं सकती। प्रजाके धार्मिक जीवनसे देशकी उन्नति और अधार्मिक जीवनसे अवनति होगी और निश्चय होगी। सभ्य संसारके सम्मुख इस देशकी कैसी हीन दशा है यह कैसे घोर अधःपतनको प्राप्त है यह बतानेकी आवश्यकता नहीं।

यह भयंकर अधर्म क्या है? प्रजामें स्वदेशाभिमानका न होना। प्रजाका आलसी और निरुद्योगी बन जानेका मूल कारण क्या है? इसका उत्तर है— 'भारतवासी प्रजा उत्पन्न करनेका साधन भूल गये हैं और इतनी अधिक संतान उत्पन्न करते हैं कि वे उसको सुयोग्य बनानेमें असमर्थ रहते हैं।

दो माली बाग लगा रहे हैं। उनमेंसे एक वनस्पतिशास्त्रका पण्डित है और दूसरा गवाँर। चतुर माली भूमिको उर्वरा बनाकर उचित समय पर बीज बोता है और उतने ही बोता है जितनेकी देखरेख और खाद-पानी आदिका प्रबन्ध वह ठीक ठीक कर सकता है। पर मूर्ख माली समय-कुसमय बुरी भली भूमि पर ध्यान न देकर बीज बोता ही चला जाता है। उसके कुछ बीज तो उगते ही नहीं सड़ या सूख जाते हैं, बाकी जो निकलते हैं वे इतनी अधिक संख्यामें कि वह उनकी देखरेख नहीं कर सकता। परिणाम यह होता है कि चतुर माली फलों और फूलोंसे सम्पन्न होकर मालामाल हो जाता है और मूर्ख मालीका सबका सब या अधिकांश द्रव्य और परिश्रम निष्फल जाता है और अन्तमें वह दरिद्र और भिखारी होकर चतुर मालीका आश्रित बनता है।

केवल संतान उत्पन्न करते रहनेसे क्या लाभ? बच्चे पैदा हुए और मर गये या कुछ दिन जी कर मरे। जो द्रव्य और शक्ति इन बच्चों पर खर्च हुई वह व्यर्थ गई। सूदको कौन पूछे मूल धन ही मारा गया। पर सभ्य देश वाले केवल ऐसी ही संतान पैदा करते हैं जो जीती जागती हुई पूर्ण आयुको प्राप्त होती है। उन्होंने जो शक्ति और द्रव्य अपनी संतान पर लगाया वह जमा होता गया और अपने समय पर सूद-ब्याज सहित फिर कमाया गया। इस

तरह पर वह शक्ति और द्रव्य दोनों वढ़ते ही जाते हैं। मूल धन खो देनेवाले और सूद-दरसूद वढानेवाले महाजनोंका भला क्या मुकावला हो सकता है ?

साराश यह कि अपनी कमजोरियोंको, अपनी त्रुटियों और भूलोंको धर्म्म या अधर्म्मके माथे मढना ठीक नहीं। धर्म्मके हीलेसे साक्षात् और वरवस अधर्म्म करनेका फल वढ़ा ही जहरीला होता है जिसका निश्चित परिणाम है 'मृत्यु।'

इन सर्व घटनाओं, दोषों और निर्वलताओंके दिखानेसे मेरा यही अभिप्राय है कि आप अपनी वास्तविक दशाका अवलोकन करके उनके दूर करनेके उपायों पर ध्यान दें। प्रत्येक काल, देश और समाजमें सदैव एक ही धर्म्मशास्त्र, एक ही नियम, एक ही सभ्यता स्थिर नहीं रह सकती। समयके साथ साथ इन सबमें भी परिवर्तन होता ही रहता है, या होना जरूरी होता है *। इससे समयानुसार देशकी परमावश्यक बातोंका करना किसी तरह अधर्म्म नहीं हो सकता। जिससे अपना मतलव सधे, जिससे अपनी जाति और अपने देशकी दशा सुधर सकती हो, वह बात चाहे नई हो और चाहे उसके बारेमें अपने धर्म्मशास्त्र कुछ न कहते हों, तो भी उसका करना परम धर्म ही होगा। देशके उत्थानसे बढकर दूसरा पुण्य कार्य कुछ नहीं हो सकता।

यतोऽभ्युदयनिःश्रेयस्सिद्धिः स धर्म्मः।

---

* अन्ये कृतयुगे धर्मास्त्रेताया द्वापरेऽपरे।
अन्ये कलियुगे नृणां युगन्हासानुरूपतः ॥ —मनुस्मृति।

पाँचवाँ परिच्छेद।

जन-वृद्धि निरोधका उत्तम उपाय।

The nation is an organism in struggle to survive, and its success in that struggle depends on the strong increase of the best elements of its population. —Karl Pearson.

इस युद्ध-क्षेत्र या कर्मक्षेत्र संसारमें प्रत्येक राष्ट्र अपने अपने अस्तित्वके लिए युद्ध कर रहा है। विजयका प्राप्त होना राष्ट्रोंके लोकसमुदायकी व्यक्तिगत उत्तमता पर अवलंबित है।

इस जीवनसंग्रामसे कोई बच नहीं सकता। प्रत्येक कालमें प्रत्येक[1] देशमें प्रत्येक राष्ट्र, जाति और मनुष्यमें यह झगड़ा अनन्तकालसे जारी है। इसी नियमके अनुसार भारतको भी इस क्षेत्रमें उतरना पड़ा है, किन्तु दुःख और लज्जाके साथ स्वीकार करना पड़ता है कि भारतकी हार हुई और अब इस प्यारे देशके सम्मुख जीवन और मृत्युका भयंकर प्रश्न उपस्थित है।

किसी जाति या राष्ट्रकी ऐसी हीन, दीन और मरणप्राय दशाको सुधारने अथवा उन्नत बनानेका गम्भीर विचार उपस्थित होने पर ये दो प्रश्न आपसे आप मनमें उठते हैं;—एक तो ये कौन कौनसे कारण हैं जो अब तक उस जातिकी उन्नतिको रोकते रहे हैं और दूसरा क्या भविष्यमें उन सब कारणों या सब न सही तो उनमेंसे कुछ कारणोंके दूर होनेकी आशा है?

इन प्रश्नोंको पूरी तरह हल करना और उस जाति या राष्ट्रकी उन्नतिके बाधक कारणों पर पूरी तरहसे विचार करना किसी एक मनुष्यकी शक्तिसे बाहर है। और न कोई एक ऐसा उपाय ही बतलाया जा सकता है जिसके करने या न करनेसे उस राष्ट्रकी दशा सुधरकर बिल्कुल ठीक हो जाय। यह सर्वथा असम्भव है। इस लिए भिन्न भिन्न देशों तथा भिन्न भिन्न समयोंके विद्वानों तत्त्ववेत्ताओं तथा लोकहितैषी मनुष्योंने इन प्रश्नोंको अपने अपने

---

[1] National lif from the tand point f Science by Professor K. Pearson.

ढँग पर अलग अलग हल करनेका प्रयत्न किया है और उन्नतिके बाधक कारणोंमेंसे किसी एक पर अपना विचार प्रकट किया है।

भारतवर्षमें चारों ओरसे उन्नतिकी पुकार है। कोई कहता है कि भारतीय प्रजामें स्वदेशाभिमान नहीं है, कोई कहता है कि वे अपना धर्म्म नहीं समझते, कोई कहता है कि वे आलसी और निरुद्योगी बन गये हैं और कोई कहता है कि देशमें एकता नहीं है। अनेकानेक सज्जन भारत-सुधारके लिए तन-मन-धन अर्पण कर रहे है और इसके एक एक अगको सुधारनेका प्रयत्न कर रहे हैं। बहुतसी संस्थायें लेखों और व्याख्यानोंद्वारा भारतीय प्रजामें स्वदेशाभिमान फैला रही हैं, बहुतसी सभायें धर्म्मको ही मूल मानकर धार्म्मिक शिक्षाका प्रचार कर रही हैं और बहुतसी सुसाइटियाँ सार्वजनिक प्रेम और संघशक्तिके महत्त्वको लक्ष्य मानकर अछूत जातियोंके उद्धारमें लगी हुई हैं। ये और इसी प्रकारके और भी कार्य प्रशसनीय हैं और इन सभीसे देशका कल्याण होगा, यह निश्चय है, किन्तु यदि कुछ थोडेसे देशहितैषी अपना जीवन देशसेवामें बितावें और बहुतसे देशबन्धु उनके कार्य करनेमें बाधा डालें, तो क्या कभी यथेष्ट सुधार हो सकता है? यदि हम अनाथ-रक्षाके लिए चिल्लाया करें, पर मरते समय आधे दर्जन अनाथ छोड जायँ, समाजसुधारका बीड़ा उठावें, पर अयोग्य सन्ततिसे समाजको भरते रहें, तो इससे क्या लाभ? किसी कविने कहा है कि—

'If every one looks to his own reformation,
'How very easy to reform a nation'

अर्थात्—यदि किसी राष्ट्रका प्रत्येक जन अपने अपने सुधारका प्रबन्ध करे तो उसका सुधरना बहुत ही सहज हो जाय। किन्तु, यदि सब लोग देशकी अधोगति तथा सुधारकी ओर ध्यान न देंगे, तो एक मुट्ठीभर सुधारकोंसे देशकी दशाका परिवर्तन बहुत बडी कठिनता और विलम्बसे हो सकेगा। साथ ही यह भी स्मरण रहे कि बहुतसी बातें ऐसी हैं कि जो स्वयं अपने ही किये हो सकती हैं। दूसरोंका कर्तव्य उनमें कुछ भी लाभ नहीं पहुँचा सकता। यह महत्त्वपूर्ण विषय भारत-जनताकी वृद्धिका है। इसमें सुधार करना या न करना प्रत्येक भारतवासीके अधीन है।

इस बातका वर्णन अच्छी तरह किया जा चुका है कि हतभाग्य भारतमें प्राकृतिक निरोध (Positive check) किस भयकर निर्दयतासे निःसीम

पाँचवाँ परिच्छेद ।

जन-वृद्धि निरोधका उत्तम उपाय ।

The nation is an organism in struggle to survive, and its success in that struggle depends on the strong increase of the best elements of its population. —Karl Pearson.

इस युद्ध-क्षेत्र या कर्मक्षेत्र संसारमें प्रत्येक राष्ट्र अपने अपने अस्तित्वके लिए युद्ध कर रहा है। विजयका प्राप्त होना राष्ट्रोंके लोकसमुदायकी व्यक्तिगत उत्तमता पर अवलम्बित है।

इस जीवनसंग्रामसे कोई बच नहीं सकता। प्रत्येक कालमें प्रत्येक देशमें प्रत्येक राष्ट्र, जाति और मनुष्यमें यह झगड़ा अनन्तकालसे जारी है। इसी नियमके अनुसार भारतको भी इस क्षेत्रमें उतरना पड़ा है; किन्तु दुःख और लज्जाके साथ स्वीकार करना पड़ता है कि भारतकी हार हुई और अब इस प्यारे देशके सम्मुख जीवन और मृत्युका भयंकर प्रश्न उपस्थित है।

किसी जाति या राष्ट्रकी ऐसी हीन दीन और मरणप्राय दशाको सुधारने अथवा उन्नत करनेका गम्भीर विचार उपस्थित होने पर ये दो प्रश्न आपसे आप मनमें उठते हैं;—एक तो ये कौन कौनसे कारण हैं जो अब तक उस जातिकी उन्नतिको रोकते रहे हैं और दूसरा क्या भविष्यमें उन सब कारणों का सब न सही तो उनमेंसे कुछ कारणोंके दूर होनेकी आशा है!

इन प्रश्नोंको पूरी तरह हल करना और उस जाति या राष्ट्रकी उन्नतिके बाधक कारणों पर पूरी तरहसे विचार करना किसी एक मनुष्यकी शक्तिसे बाहर है। और न कोई एक ऐसा उपाय ही बतलाया जा सकता है जिसके करने या न करनेसे उस राष्ट्रकी दशा सुधरकर बिलकुल ठीक हो जाय। यह सर्वथा असम्भव है। इस लिए भिन्न भिन्न देशों तथा भिन्न भिन्न समयोंके विद्वानों तत्ववेत्ताओं तथा लोकहितैषी मनुष्योंने इन प्रश्नोंको अपने अपने

National life from the stand-point of Science by Professor K. Pearson.

छठा परिच्छेद ।

सन्तानशास्त्र
अर्थात्
उत्तम संतति उत्पन्न करनेके नियम ।

'Positive and negative Eugenics are one and the same, that the relative increase of the better is the relative decrease of the worse' ×

—*Whetham.*

धनात्मक और ऋणात्मक सन्तानोत्पादन (Eugenics) का परिणाम वास्तवमें एक ही है। क्योंकि उत्तम प्रजाकी जितनी ही वृद्धि होगी अधम प्रजामें उतनी ही कमी होगी। —व्हीथम।

यह विषय बड़े महत्त्वका है। किसी जातिकी उन्नति उस जातिकी उत्तमोत्तम उत्पादकशक्ति पर निर्भर है। जो जाति जितनी ही अधिक और सर्वोत्तम प्रजा उत्पन्न कर सकती है, वह जाति उतनी ही शीघ्रतासे उन्नतिके शिखर पर विराजमान होती है। कृत्रिम निरोध (Artificial check) या इन्द्रियदमन द्वारा अधम प्रजाकी उत्पत्ति रोकनेकी अपेक्षा उत्तम प्रजाकी वृद्धि पर ध्यान देना कहीं अधिक आवश्यक है। * जर्मन और फ्रास इस विषयके उत्तम उदाहरण हैं। जर्मन जातिने उत्तम प्रजाकी वृद्धि पर और फ्रासने अधम प्रजा न उत्पन्न करने और अपनी जनसंख्याको सीमाबद्ध करने पर

× 'Family and the Nation' by Whetham.

*"The possibility of improving the race of a nation depends on the power of increasing the productivity of the best stock This is far more important than that of repressing the productivity of the worst '—Enquiries into Human Faculty page 336

वृद्धिको रोककर भोजन और जनसंख्याकी समता स्थिर रखता है। इससे देशको भारी धक्का लगता है और वह दिनोंदिन अधोगतिको प्राप्त होता जाता है। देशके अभ्युदय और कल्याणके लिए यह आवश्यक है कि आबादी बहुत न बढ़ने पावे। अतः अब जनवृद्धि-निरोधके कुछ मानुषी उपाय (Prudential or Restrictive check to Population) बतलाये जाते हैं।

जनसंख्या रोकनेके मानुषी कारण जितने हैं उनके तीन भाग किये जा सकते हैं—

१ केवल उत्तम सन्तान उत्पन्न करना (सन्तान-शास्त्र)।

२ इन्द्रियदमनद्वारा सन्तानकी संख्या न बढ़ने देना।

३ कृत्रिम निरोध (Artificial check) अर्थात् ओषधियों या यन्त्रों का प्रयोग करके जितनी चाहिए उतनी ही सन्तान उत्पन्न करनी।

अन्न और युधिष्ठिर, अखण्ड ब्रह्मचारी पितामह भीष्म और हनुमान, महारथी अर्जुन, भीम और कर्ण, विद्वान् नरेश जनक और श्रीहर्ष, परोपकारी शिवि और भोज, कविकुलभूषण कालिदास, भवभूति, दण्डी और माघ, जगद्गुरु भगवान् व्यास और शुकदेव, गौतम और शंकर, स्त्रीसमाजका मुख उज्ज्वल करनेवाली सीता और सावित्री, द्रौपदी और शकुन्तला आदि कोटि कोटि उदाहरण हैं जिनके जीवनसे हमें अपने प्राचीन पुरुषोंके आदर्शजीवनकी तथा उत्तम सन्ततिशास्त्रके ज्ञानकी झलक दिख जाती है।

ससारमें ऐसी अनेक जातियोंके उदाहरण मिलते हैं जो बड़े जोरोंसे उठीं, जिन्होंने शताब्दियोंपर्यंत राज्य किया, पर अन्तमें नष्ट भ्रष्ट हो गईं और अब उनके आस्तित्वका पता केवल उनकी कब्रों या पृथ्वीके पेटमें पड़ी हुई उनकी वस्तुओंको देखनेसे चलता है*। किन्तु हजारों वर्षोंसे पराधीनताके दुःख भोगते रहने पर भी बूढ़ी आर्य जाति नष्ट न होकर अपना आस्तित्व बनाये हुए है। इन बुरे दिनोंमें भी इसने स्वदेशभक्त राणा प्रताप, महाराष्ट्रकेसरी शिवाजी, गुरु गोविंदसिंह, रानी दुर्गावती और लक्ष्मीबाई आदि अगणित वीर और वीरागनाओंको जन्म दिया है। यह उसी महान् और पवित्र संस्कारका या सन्तानशास्त्रके नियमोंके प्रचारका ही फल है। पर आज हम उन नियमोंको भूलते जा रहे हैं, हममेंसे उनका प्रचार उठता जा रहा है। आधुनिक सभ्य जातियोंने भी सन्तान शास्त्रके नियमोंकी खोज की है और उनके द्वारा उन्होंने अपनी बहुत कुछ उन्नति कर ली है। पर हम इन नये नियमोंसे भी परिचित नहीं हैं। इस तरह प्राचीन और अर्वाचीन नियमोंकी अज्ञानतासे हम अवनतिके गहरे गढ़ेमें गिरते जा रहे हैं। जिस वेगसे हमारा अधःपतन हो रहा है उससे भय है कि कहीं संसारसे हमारा नामोनिशान ही न मिट जाय। अत यह अत्यन्त आवश्यक है कि भारतजनताको सन्तानोत्पत्ति-शास्त्रका मर्म समझाया जावे, और शिशुपालन तथा शिक्षणका महत्त्व दिखलाया जावे। ये सन्तानशास्त्रसबधी विचार चाहे आधुनिक ससारके हों और चाहे हमारे प्राचीन पूर्व पुरुषोंके, इससे कोई मतलब नहीं, इनका जानना जरूरी है। पूर्वजोंकी आचारपद्धति पर ध्यान देतेहुए आधुनिक वैज्ञानिक देह-धर्म-शास्त्रका ज्ञान

---

* जैसे मिसरके पिरामिड, बाबिलन, ग्रीस, मेक्सिको तथा दक्षिणअमेरिकामें खोदी हुई वस्तुयें और खडहर आदि।

अधिक ध्यान दिया है। फल यह हुआ है कि यद्यपि फ्रांस स्वयं बहुत अच्छी दशामें है और चीन या भारतसरीखे देशोंसे जहाँ अधम प्रजाकी भरमार है उसका मुकाबला नहीं किया जा सकता तो भी जर्मनीने उसे बेतरह नीचा दिखाया है। जैसे चीन और भारतसे फ्रांस कहीं अच्छी दशामें है; किन्तु, जर्मन फ्रांससे भी अच्छा निकला ठीक इसी तरह अधम प्रजाकी उत्पत्ति किसी न किसी तरहसे रोकना तो अच्छा है ही; पर इससे भी कहीं अच्छी बात यह है कि एकमात्र सर्वोत्तम प्रजाकी उत्पत्ति पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाय। क्योंकि प्रकृति असीम वृद्धिको अवश्य ही रोकेगी चाहे वह उत्तम प्रजाकी हो और चाहे अधमकी। अयोग्य प्रजावाले राष्ट्रको जैसा कि एक चीनी विद्वानने कहा है 'Fankwei Foreign Devil —विदेशी राक्षस भक्षण करेंगे और इन बलवान् राक्षसोंकी वृद्धि यूरोपीय महाभारतसरीखे युद्ध-युद्धोंमें स्वाहा हो जायगी। इस तरह प्रकृति भूमण्डलकी अन्न और लोगोंकी समता स्थिर रक्खेगी। पर तैमूर, नादिर प्लेग दुर्भिक्ष दरिद्रता और इन सबसे बुरे पराधीनताके पंजुओंमें फँसकर मरनेसे तो चक्रवर्ती राज्याभिलाषी जर्मनकी तरह रूस फ्रांस और इंग्लैण्डसे ही भिड़कर मर मरना अच्छा है। जहाँ संघर्ष नहीं वहाँ जीवन नहीं। इस राष्ट्रीय संघर्षमें विजयी होनेके लिए योग्यता चाहिए, इसलिए राष्ट्रमें योग्यता बढ़ानेकी कामना प्रशंसनीय है। इसी कारण मैं पहले कृत्रिम उपायोंसे अधम प्रजाकी उत्पत्ति रोकना न बताकर सुदृढ़ सुन्दर और सदाचारी सन्तान उत्पन्न करने पर जोर देता हूँ। जब उत्तम प्रजाकी उत्पत्ति होने लगेगी तब अधम प्रजाकी कमी आप-ही-आप हो जायगी। *

भारतके प्राचीन शास्त्रोंसे पता चलता है कि हमारे पूर्व पुरुषोंने इस विषयमें बहुत कुछ अनुसन्धान किया था। प्राचीन आचार-प्रणालीसे यह विदित होता है कि उन लोगोंने केवल विचार ही नहीं किया था बल्कि वे इस विषयके व्यवस्थापित नियमोंके अनुसार चलते भी थे। राम और कृष्ण, सम्भवतः इसी

That success in lif indicates ability and that ability is a desirable possession for a race.

I have not spoken f th repression of th inferior stock believing th t t will ensue ind reotly as a matter of course.

—*The Parenthood and Race-culture.*

बढ़ती जाती है और यह ससारमें बड़े महत्त्वपूर्ण और आश्चर्यजनक कार्य करनेमें समर्थ होता जाता है। मनुष्यजातिकी उन्नति और लाभके लिए इन नियमोंका जान लेना, इनको मालूम कर लेना, इन्हें समझ लेना बहुत जरूरी है। जिन जातियोंमें इस ज्ञानका अभाव है, जो इन नियमोंसे अनभिज्ञ हैं, वे इस संसारमें अज्ञानान्धकार और अधोगतिके दलदलमें फँस कर मर मिटती हैं, और जो जातियाँ इन प्राकृतिक रहस्यों, शक्तियों और नियमोंको जान लेती हैं, समझ लेती हैं और उन्हींके अनुसार कार्य करती हैं, वे ससारमें सबसे अधिक उन्नति कर लेती हैं, वे मार्गदर्शिका और नेत्री मानी जाने लगती हैं।

इन्हीं प्राकृतिक नियमोंके ज्ञानसे स्वार्थत्यागी और जातिहितैषी विद्वानोंने अगणित विषयोंमें अगणित ही अविष्कार किये हैं। भाप, बिजली, तार, छापखाना, हवाई जहाज आदि इसी ज्ञानके फल हैं। हीरा और नीलम जैसे बहुमूल्य रत्नोंके भी बनानेका यत्न विद्वानोंने किया और उन्हें सफलता हुई। पहले इस बातका ज्ञान प्राप्त किया गया कि हीरा या नीलम किन पदार्थोंसे बने हुए हैं—उनमें कौन पदार्थ कितने कितने अशमें मिश्रित हैं—पृथ्वीके अन्दर कितने कितने दबाव और गरमीसे वे तैयार हुए हैं, और फिर उन्हीं पदार्थोंको उतने ही अशोंमें अपनी निश्चित रीतिसे मिला कर आवश्यक गरमी और दबाव पहुँचा कर हीरा और नीलम बना लिये गये।

माताका गर्भस्थान प्रकृतिकी एक प्रयोगशाला है। इस प्रयोगशाला (Laboratory) में बहुमूल्य और सस्ते हर तरहके मनुष्य-रत्न ठीक उसी प्रकारसे तैयार होते हैं जिस प्रकार कि रसशालामें रसमात्रायें। रसशालामें रासायनिककी बुद्धि, यन्त्रोंकी उत्तमता तथा पदार्थोंके उचित अशके मिश्रण पर ओषधियोंकी उपयोगितामें अधिकता या न्यूनता होती है, काचके कारखानेमें काचके मावेकी जातिके अनुसार न्यूनाधिक निर्मल और पारदर्शक काचकी वस्तुयें बनती हैं, सूई, कारीगर और मशीनकी उत्तमताके अनुसार सुन्दर और टिकाऊ या भद्दे और कमजोर कपड़े बनते हैं, कुम्हार जिसतरहकी मिट्टीका उपयोग करता है, चाकके ऊपर जैसा आकार देता है, जिस सावधानी और चतुरतासे उन्हें पकाता है वैसे ही उत्तम या निकम्मे पात्र तैयार होते हैं। भट्टीमेंसे निकालनेके पश्चात् पात्रों पर चाहे जैसा रग चढाया जाय, चित्रकारी और पच्चीकारी की जाय, इससे उनकी सुन्दरता कुछ बढ़ सकती है, किन्तु

प्रत्येक भारतवासीको होना चाहिए। प्रत्येक विचारशील भारतवासीको यह महान् सन्देश घर घर पहुँचाना, इस विषयकी ओर लोगोंका ध्यान आकर्षित करना और इसे उनका कर्तव्यकर्म बना देना उचित है।

It must be made familiar as an academic question until its exact importance has been understood and accepted. It ought to be introduced into the National Conscience like a new religion. It may be defined as the science which deals with those social agencies that influence the racial qualities of future generations. ×

मनुष्य जातिकी उत्तरोत्तर वंशवृद्धिके नियमोंके बतलानेवाले शास्त्रका आधुनिक नाम है अभिजनन-शास्त्र 'प्रजननशास्त्र' या 'सन्तानशास्त्र' आदि। अंगरेजीमें इसे यूजेनिक्स (Eugenics) कहते हैं। सन्तानशास्त्रका विषय बड़ा ही गम्भीर और विस्तृत है। इसका सम्बन्ध जीवन-विद्या (Biology), नर विद्या (Anthropology), शरीर-रचना-विद्या (Anatomy), मानस-शास्त्र (Physiology) समाज-शास्त्र (Sociology) और आचार-शास्त्र (Ethics) आदि अनेक शास्त्रोंसे है। इस छोटेसे ग्रन्थमें न तो इतना स्थान है और न मुझमें इतनी योग्यता है कि इस गम्भीर विषय पर विस्तारपूर्वक लिखा जाय। यहाँ मैं यथाशक्ति इस विषयके मन्तव्योंकी केवल छाया या आभासमात्र (Bird's-eye-view), देनेका प्रयत्न करता हूँ।

संसारमें प्रत्येक कार्य नियमपूर्वक होता है। दृष्टि जहाँतक जा सकती है और बुद्धि जहाँतक अपना कार्य कर सकती है प्रकृतिमें कोई बात नियम-विरुद्ध होती नहीं दिखाई देती। पृथ्वी आकाश तेज वायु प्रकाश ग्रह नक्षत्र चन्द्र सूर्य आदि सभी नियमानुसार अपना कार्य किया करते हैं। प्रकृतिने प्रत्येक कार्यके लिए नियम बना रखे हैं। इन्हीं नियमोंको ईश्वरीय भेद गुप्त रहस्य अमोघ शक्ति और अगाध विधानोंका खजाना कहा जाता है। मनुष्यजातिकी भलाई और क्षेम इन्हीं प्राकृतिक नियमोंके ज्ञान पर निर्धारित है। ज्यों ज्यों मनुष्यकी बुद्धि विकसित होती या बढ़ती जाती है त्यों त्यों वह इन नियमोंके गुप्त भेदोंको समझता जाता है और ज्यों ज्यों वे रहस्य मनुष्य पर प्रकट होते जाते हैं त्यों ही त्यों मनुष्यका क्षेम और विशेषता

× ...ical Lif from th ...tand point—Science page 20.

(क)–प्राकृतिक प्रयोगशालाका रहस्य । *

'Nature is not on the side of sentiment She is always a prodigal, acting in and for the plural on a grand scale, with one great aim before her of ensuring the continuance of the race. She has fitted man and woman not to love one, but hundreds, and our senses act automatically on the side of Nature'

—*Victoria Cross.*

जिधर ऑख उठाकर देखिए प्रकृतिकी विचित्र लीलायें दिखाई देती है। सृष्टिकी प्रत्येक बात अपूर्व रहस्यसे भरी हुई है। प्रकृति जिस अनुपम रीतिसे सृष्टिके विस्तारका कार्य करती है उस पर जितना ही ध्यान दीजिए उतना ही आनन्द और आश्चर्य होता है।

प्रकृतिने इस विचित्र ससारमें असख्य प्राणिवर्ग उत्पन्न किये हैं और वह प्रत्येक वर्गके निरन्तर स्थिर रखनेका पूर्ण यत्न करती है। किसी जाति या श्रेणीके जीवोंका वह अन्त नहीं देखा चाहती, वह उनकी वृद्धि बड़ी ही उदारतासे करती है। जैसा बतलाया जाचुका है कि जहाँ उसे एक वट-वृक्ष उत्पन्न करना होता है वहाँ वह लाखों करोड़ों बीजोसे काम लेती है। यद्यपि एक वृक्षके लिए एक ही बीज काफी है, किन्तु सयोगवश यदि वह बीज नष्ट हो जाय और वृक्ष न पैदा हो सके तो प्रकृतिके विस्तार-कार्यमें बाधा पड़

---

* लज्जा मनुष्य-समाजका स्वाभाविक गुण है। गुण ही नहीं बल्कि मानव-जातिके लिए एक उत्तम भूषण है। किन्तु उचित सीमामें ही वह गुण कहा जा सकता है। उचित सीमाका उल्लघन होने पर वह गुण न रहकर अवगुण हो जाता है। जिसके ज्ञानपर हमारी भावी सन्तानका, हमारे देशका बल्कि ससार मात्रका जय या क्षय निर्भर है उस महत्त्वपूर्ण विषयको लज्जाप्रद या अश्लील समझकर त्याग देना अच्छा नहीं। इस लज्जाप्रदताके भ्रमको छोड़कर प्रत्येक स्त्री-पुरुषको, मुख्यत स्त्रियोंको उचित अवस्थामें इस विषयके ज्ञानसे लाभ उठाना चाहिए। पुरुषका तो गर्भाधान करने तक ही बच्चेके सुधारसे सम्बन्ध है, किन्तु स्त्रियोंका गर्भ रहनेके पहलेसे, बच्चा अच्छे प्रकार समझने न लगे तबतक, सम्बन्ध है। सन्तानके सुधार या बिगाड़की जिम्मेदारी स्त्रियों पर अधिक है। इस लिए स्त्रियोंको उचित समय पर इस विषयका ज्ञान प्राप्त करा देना परम आवश्यक है। इसमें लज्जाकी या अश्लीलताकी कोई बात नहीं है।

पात्रोंका वास्तविक मूल्य उपयोगमें लाई हुई मृत्तिकासे, साँचे या चाक पर दिये हुए आकारसे और भट्टीमें चतुराईके साथ पकानेसे ही आँका जाता है—

> It isn't all in the bringing up,
> Let folks say what they will,
> You may silver Polish a Pewter cup,
> But it will be Pewter still.

बालकरूपी पुतला माताके गर्भरूपी साँचेमें बनकर तैयार होता है। जैसे उत्तम या मध्यम पदार्थोंका प्रयोग इस महान् रसशालामें किया जाता है वैसा ही अच्छा या बुरा पुतला तैयार होता है। यदि चतुर रासायनिक माता-पिताने हीरा बनानेका मसाला एकत्र करके उसे उचित समय और विधिवत् रीतिसे सावधानीके साथ मिलाया तो बहुमूल्य हीरा बनता है यदि सीसेके मसालोंसे काम किया तो सीसा तैयार होता है और यदि काच बनानेके पदार्थोंका प्रयोग किया तो काच प्राप्त होता है। राम और रावण कृष्ण और कंस युधिष्ठिर और दुर्योधन पृथ्वीराज और जयचन्द आदि उत्तम और अधम मनुष्योंकी रचना माताकी इसी अद्भुत रसशालामें हुई है। अन्तर केवल पदार्थोंकी उत्तमता अधमताका हुआ है। जैसे पदार्थका प्रयोग हुआ माताकी प्रयोगशालामेंसे वैसी ही वस्तु बनकर बाहर निकली। राम या रावण कौशल्या या कैकेयीके पैदा करना अब भी हमारे ही अधीन है। जैसे मसालोंका प्रयोग किया जायगा वैसी ही सन्तति प्रयोगशालासे तैयार होगी। यह प्रकृतिका अटल और निर्विवाद नियम है। अतः विचार इस बातपर करना है कि इच्छानुसार उत्तम सन्तति उत्पन्न करनेके लिए किन किन पदार्थोंकी आवश्यकता पड़ती है जिनके प्रयोगसे केवल सर्वोत्तम सन्तान उत्पन्न हो सके।

इस विषयके चार भाग किये जा सकते हैं—

(क) प्राकृतिक प्रयोगशालाका रहस्य।
(ख) वंशपरम्परासे आनेवाले गुण।
(ग) सम्भावना और प्रेमका प्रभाव।
(घ) सन्तानका पालन-पोषण और शिक्षण।

जीवनकालमें एक ही जनसे पूर्ण प्रेम होता है। 'One life one love' और यही प्रेमके बन्धनसे बँधी हुई दो व्यक्तियाँ वैवाहिक सम्बन्धसे जुडकर दम्पति बनती हैं। उचित भी यही है कि जो एक दूसरेको हृदयसे प्रेम करते हों वे ही वैवाहिक सम्बन्ध करें-'Those who love in spirit should unite in person' सामाजिक और मानसिक झुकाव भी इसी ओर होता है कि जीवन मात्रमें केवल एक ही प्रेमपात्र हो, किन्तु प्रकृतिका रुख दूसरा ही है। प्रकृति सामाजिक या मानसिक भावोंकी ओर ध्यान नहीं देती, वह केवल अपनी वंशवृद्धिकी बात देखती है। इस भयसे कि यदि किसी कारण एक प्रेमी और प्रेमिकामें वियोग हो जाय अथवा उनमेंसे किसी एककी भी मृत्यु हो जाय तो सन्तान-वृद्धिका कार्य बन्द हो जायगा, वह एक व्यक्तिके प्रेमको काफी नहीं समझती।

वंश-वृद्धिकार्यको निर्विघ्नतासे चलाते रहनेके लिए, एकके वियुक्त हो जाने या मर जानेके पश्चात् दूसरेसे काम लेनेके अभिप्रायसे उसने एकके बदले सैकडों व्यक्तियों पर प्यार करनेकी शक्ति मानवजातिको दी है। प्राकृतिक झुकाव एक ही व्यक्तिकी ओर नहीं होता, वह कितने ही सुन्दर और गुण-वानोंकी ओर ढुलता है। मानसिक शक्तिके द्वारा मनुष्य इस प्राकृतिक चचल-ताको दबाकर अपने प्रेमको एक पात्रमें स्थिर रखता है और इसे ही हम सच्चा प्रेम (Fidelity in love) कहते हैं। किन्तु सच्ची बात यह है कि हमारा हृदय प्रकृतिके संकेतोंकी ओर अवश्य चलायमान हुआ करता है। एक स्त्री अपने प्रथम प्रेमीके अतिरिक्त किसी दूसरेके रूप या गुणको देख कर उसे पसन्द करती है और स्वभावत बिना इच्छा किये ही आपसे आप उसकी ओर आकर्पित होती है। यह प्रकृतिका ही कार्य है। इस समय स्त्रीका प्राकृ-तिक भाव यह नहीं होता कि वह इस दूसरे मनुष्यको प्रेम करना नहीं चाहती, बल्कि सामाजिक पातिव्रत धर्म्मके भयसे अथवा यह सोच कर कि इस दूसरे मनुष्यको प्यार करनेसे उसके पहले प्रेमीको दु ख होगा वह अपनी मानसिक शक्तिसे इस नये प्रेमको कुचल डालती है।

यही दशा पुरुषकी भी है। अपनी पहली प्रेमिकाके अतिरिक्त जब वह किसी दूसरेकी सुन्दरता पर या गुणों पर मुग्ध होता है तब स्वभावत उसकी ओर झुका चाहता है। चित्त आकर्पित होता है, किन्तु इस भयसे कि नई प्रेमिकासे पुरानीको [illegible] ख होगा उसकी ओरसे मनको [illegible] म करता

जाय। इस लिए वह अत्यन्त उदारताके साथ लाखों बीजोंसे काम लिया करती है जिससे कि नष्ट होते होते भी दो एक नये वृक्ष पैदा हो जायँ।

मानव-जातिके विस्तार और अस्तित्वके लिए उसने कम बुद्धि नहीं खर्च की है। उसने इस जातिके प्रत्येक प्राणीको स्वतन्त्र रखते हुए प्रेमबन्धनमें ऐसा जकड़ रक्खा है कि वह हिल नहीं सकता। प्रेम एक ऐसी वृत्ति है कि जिससे मनुष्यका किसीसे प्रेम किये बिना छुटकारा ही नहीं। संसारके प्रत्येक स्त्री-पुरुषको—बच्चेसे लेकर बूढ़ेको—राजा रंक गृहस्थ संन्यासी सभीको इस विभूतिके अधीन रहना पड़ता है और किसी न किसीसे प्रेम रखना ही पड़ता है। ईश-प्रेम देश-प्रेम जाति-प्रेम कुटुम्ब-प्रेम माता पिता भाई, बहिन पुत्र और पुत्री आदिका प्रेम इस प्रकार किसी न किसी प्रेमके बन्धनमें बँधा ही रहना पड़ता है।

ये जितने प्रेम हैं सब मानवजातिकी स्थिति विकास और विस्तारमें सहायता देते हैं किन्तु इन सबोंसे अधिक शक्तिमान् स्त्रीविषयक प्रेम है। यह वह शक्ति है जो मानवको पागल देती है—स्त्रीपुरुषोंका काया पलट कर देती है—उसके स्वभावमें उसके आचरणमें उसके जीवनमें परिवर्तन कर देती है। इस प्रेमसे उसकी भावना उसके विचार उसकी बुद्धि, उसकी प्रतिभा उसकी सदाचारशीलता और उसकी संकल्पशक्तिमें बिजलीकीसी संजीविनी शक्ति उत्पन्न हो जाती है—भंगाकी सन्त निर्दय दयालु डरपोक बहादुर और मूर्ख विद्वान बन जाता है।

प्रकृतिने स्त्री-पुरुषोंमें ऐसी आकर्षणशक्ति उत्पन्न कर रक्खी है कि वे एक दूसरेकी सुन्दरता पर या गुणवत्ता पर ऐसे मुग्ध हो जाते हैं कि अपने आपको भूल जाते हैं। देखनेसे छूनेसे प्रेमपात्रके विषयमें बात करनेसे या बात सुननेसे हृदय प्रफुल्ल हो जाता है। प्रेमपात्रके ध्यानमात्रसे प्रत्येक शारीरिक ज्ञान-तन्तु उत्तेजित और प्रफुल्लित हो उठता है—चेहरेपर ललाई और प्रसन्नता आँखोंमें चमक और चंचलता और हृदयमें आनन्द और उत्साहकी लहरें उमड़ आती हैं। दो शरीर एक प्राण का सच्चा उदाहरण यही प्रेमी प्रेमिकाका जोड़ा है। स्त्री और पुरुष इन दो पृथक् प्राणियोंको एक कर देनेके लिए उनको एक दूसरेमें लीन कर देनेके लिए, तन्मय कर देनेके लिए, मिला देनेके लिए प्रकृतिने इस प्रेमशक्तिको उत्पन्न किया है।

गर्भाधानके समय दम्पत्तिकी जो मनोवृत्ति होती है वे जिस स्थितिमें होते हैं उसका प्रभाव संतान पर पड़ता है। इसी लिए प्रकृतिने प्रेममयी संतानोत्पत्तिक्रियामें एक विशेष प्रकारके आनंदका समावेश कर रक्खा है।

उपर्युक्त विवेचनसे यह सिद्धान्त स्थिर होता है कि प्रकृतिने सतानोत्पत्तिके लिए सयोग (मैथुन) और संतानको उत्तम बनानेके लिए उसमें आनन्द सृष्ट किया है। अधम कामवासनाको तृप्त करनेके लिए प्रकृतिने आनन्दकी सृष्टि नहीं की है। सृष्टिमात्रके पशु और पक्षियोंमें जब कभी यह क्रिया होती है तब एकमात्र सतानोत्पत्तिके लिए होती है। ससारमें एक मानव जाति ही ऐसी पापकलुषित है जो मैथुनके आनन्दको एक बात और सतानोत्पत्तिको दूसरी बात मान बैठी है, बल्कि उसके समाजमें क्षणिक इन्द्रिय वासनाकी तृप्ति ही प्रथम बात समझी जाने लगी है। इस इच्छाको तृप्त करनेमें यदि गर्भ रह जाय तो हरीच्छा! कामवासनाकी तृप्ति अपने हाथमें और सतानका उत्पन्न होना या न होना भाग्यके हाथमें! पाश्चिमीय अधम साहित्यने भारतको और भी गारत कर रक्खा है। स्मरण रहे कि प्रकृतिको धोखा नहीं दिया जा सकता। सन्तानोत्पत्तिके अतिरिक्त अन्य किसी भी हेतुसे वीर्यपात करना प्रकृतिनियमके विरुद्ध कार्य करना है। इसका दण्ड हमें प्रकृति दे रही है। पापका प्रायश्चित्त किये विना उद्धार नहीं हो सकता। हम गिर तो गये ही हैं, किन्तु अब और नीचे न जायँ, बस इसीमें कुशल है। सावधान!

उत्पादक सस्थान। *

वे अग जिनके द्वारा सन्तानोत्पत्ति की जाती है उत्पादक सस्थान (Reproductive system) कहलाते हैं। वे शिश्न, अढकोप, योनि और गर्भाशय आदि है।

पुरुषके उत्पादक सस्थानके मुख्य अग हैं—अण्डकोष, अण्ड, शुक्रजनक ग्रन्थि, शुक्राशय और शिश्न। अढकोप वह अङ्ग है जो सारे शरीरसे वीर्यको एकत्र करता है। मैथुनद्वारा वीर्य बनानेका यही अग है। यह केवल पुरुषोंको होता है। बाहरसे इसकी शकल एक लटकती हुई थैलीकी तरह होती है। इस थैलीके भीतर दो अडाकार अड होते हैं। एक इस थैलीके दाहिनी

* The Modern Family Doctor—T C Jack—London 1914

है। इस स्त्रियोंके पुरुषोंकी ओर आकर्षित होनेमें और पुरुषोंके स्त्रियोंकी ओर खिंचनेमें उनका दोष नहीं है यह प्रकृतिका रहस्य है। उसके उत्पन्न किसमयमें बाधा न पड़े इसी लिए वह युवा और युवतियोंमें यह आकर्षण पैदा किया कर उनको चलायमान किया करती है—In both it is the anxiety of Nature that neither should be left mateless—part of her tremendous scheme of insurance against mischance.

मनुष्य आनन्दकी ओर स्वयं ही आकर्षित होता है। आनन्दकी ओर आकर्षित होना उसकी प्रकृति या स्वभाव है। संसारमें मनुष्य उसी कार्यकी तरफ अनुराग प्रकट करता है जिसमें उसे कुछ आनन्द मिलनेकी सम्भावना होती है। आनन्द चाहे क्षणिक हो और चाहे स्थायी किन्तु यह तो सर्वथा निश्चित है कि मनुष्य यदि झुकेगा तो आनन्दहीकी ओर। यदि उसे विश्वास हो जाय कि अमुक कार्यमें लेशमात्र भी आनन्द नहीं है तो वह उस कार्यके करनेकी चेष्टा तक नहीं करेगा। इसी लिए प्रकृतिने मानव-जातिकी वृद्धि-क्रियामें एक विशेष प्रकारके आनन्दका समावेश कर रक्खा है।

डाक्टर कारपेन्टरका कथन है कि Love is a transmitting agent—प्रेम अपने प्रेमपात्रोंका रूप और गुण पुनः उत्पन्न करता है; अर्थात् प्रेमियोंके हृदयमें यह इच्छा हुआ करती है कि वे अपने प्रेमपात्रका रूप और गुण भावी सन्तानमें देखें। प्रेमका यह स्वाभाविक गुण है कि यह प्रत्येक प्यारेकी शक्ल—जिस पर उसका प्रेम हो उसकी सच्ची मूर्ति—गढ़कर संसारको देना चाहता है—Bea ty th t women seek after that they m y gi to th world again.

यौवन सौन्दर्य और गुणस प्रकृति ही और पुरुषोंको एक दूसरेकी ओर आकर्षित करके प्रेमसे परस्पर खींच कर देती है और फिर उन्हें आनन्दके लोभसे मतवाला करके उनसे वंश-वृद्धिका कार्य्य लिया करती है।

आगे चलकर मालूम होगा कि दम्पतिके परस्परके प्रेमसे आनंदमय वीर्य बने उमंग और उत्साहसे सन्तानमें उत्तमता आती है। उत्तम स्थितिमें उत्पन्न होनेवाली सन्तान उत्तम ही गुणोंसे विभूषित होती है। प्रेमपात्रके साथ संयुक्त होनेसे गहरा आनन्द प्राप्त होता है। इस आनन्दसे उमंग और उत्साह बढ़ता है और इस उमंग और उत्साहके बढ़नेसे स्थितिमें उत्तमता आती है।

गर्भाधानके समय दम्पत्तिकी जो मनोवृत्ति होती है वे जिस स्थितिमें होते हैं उसका प्रभाव संतान पर पडता है। इसी लिए प्रकृतिने प्रेममयी सतानोत्पत्तिक्रियामें एक विशेष प्रकारके आनंदका समावेश कर रक्खा है।

उपर्युक्त विवेचनसे यह सिद्धान्त स्थिर होता है कि प्रकृतिने सतानोत्पत्तिके लिए सयोग (मैथुन) और सतानको उत्तम बनानेके लिए उसमें आनन्द सृष्ट किया है। अधम कामवासनाको तृप्त करनेके लिए प्रकृतिने आनन्दकी सृष्टि नहीं की है। सृष्टिमात्रके पशु और पक्षियोंमें जब कभी यह क्रिया होती है तब एकमात्र सतानोत्पत्तिके लिए होती है। ससारमें एक मानव जाति ही ऐसी पापकलुपित है जो मैथुनके आनन्दको एक बात और सतानोत्पत्तिको दूसरी बात मान बैठी है, बल्कि उसके समाजमें क्षणिक इन्द्रिय वासनाकी तृप्ति ही प्रथम बात समझी जाने लगी है। इस इच्छाको तृप्त करनेमें यदि गर्भ रह जाय तो हरीच्छा ! कामवासनाकी तृप्ति अपने हाथमें और सतानका उत्पन्न होना या न होना भाग्यके हाथमें ! पाश्चिमीय अधम साहित्यने भारतको और भी गारत कर रक्खा है। स्मरण रहे कि प्रकृतिको धोखा नहीं दिया जा सकता। सन्तानोत्पत्तिके अतिरिक्त अन्य किसी भी हेतुसे वीर्यपात करना प्रकृतिनियमके विरुद्ध कार्य करना है। इसका दण्ड हमें प्रकृति दे रही है। पापका प्रायश्चित्त किये विना उद्धार नहीं हो सकता। हम गिर तो गये ही हैं, किन्तु अब और नीचे न जायँ, बस इसीमें कुशल है। सावधान !

उत्पादक संस्थान। *

वे अंग जिनके द्वारा सन्तानोत्पत्ति की जाती है उत्पादक संस्थान (Reproductive system) कहलाते हैं। वे शिश्न, अडकोप, योनि और गर्भाशय आदि हैं।

पुरुपके उत्पादक सस्थानके मुख्य अग हैं—अण्डकोप, अण्ड, शुक्रजनक ग्रन्थि, शुक्राशय और शिश्न। अडकोप वह अङ्ग है जो सारे शरीरसे वीर्यको एकत्र करता है। मैथुनद्वारा वीर्य बनानेका यही अग है। यह केवल पुरुषोंको होता है। बाहरसे इसकी शकल एक लटकती हुई थैलीकी तरह होती है। इस थैलीके भीतर दो अडाकार अंड होते हैं। एक इस थलीके दाहिनी

* The Modern Family Doctor—T C Jack—London 1914

ओर और दूसरा बाईं ओर लटका करता है। प्रौढ़ावस्थामें ये १½ इंच लम्बे, १ इंच चौड़े और ¾ इंच मोटे होते हैं। ये एक प्रकारकी अति सूक्ष्म रेशेदार वस्तुसे ढके रहते हैं और उसकी बनावट ऐसी होती है कि वह अंडको कई भागोंमें विभक्त कर देती है। एक भागमें शुक्रजनक ग्रन्थि होती है और दूसरेमें अति सूक्ष्म लपेटे हुए (Coiled) सूतके सदृश एक बहुत लम्बा तंतु होता है जिसमें शुक्रकीट उत्पन्न होते और रहते हैं। इसी शुक्रकीटमें पुरुषके सन्तानोत्पादक मुख्य गुण होते हैं।

अण्डसे बिलकुल मिली हुई उसके पीछे इपिडिडिमिस होती है। अंडके बारीक तंतुका जाल इससे रहता है। इसकी शकल कुछ अर्धचन्द्रकीसी होती है। इसके ऊपर अतिसूक्ष्म नलियाँ होती हैं जो कि ऊपर जाकर मिल जाती हैं और एक मोटी नली बन जाती है। यह नली उदरसे होती हुई मूत्रनलीमें मिलकर शुक्राशयमें प्रवेश करती है।

शुक्राशय (Seminal Vesicles) एक प्रकारकी दो थैलियाँ हैं जिनका कुछ अंश लपेटे हुए (coiled) सूतकीसी वस्तुका बना होता है। ये मूत्राशय (Bladder) से बिलकुल मिली हुई होती हैं। इनमें अंडसे उत्पन्न किया हुआ शुक्र एकत्रा होता है और ये मूत्रमार्गसे मिल जाती हैं।

मूत्रमार्ग (Urethra) मूत्राशयके नीचेवाली नलीको कहते हैं। पुरुषमें (प्रौढ़ावस्थामें) इस नलीकी लम्बाई ८ या ९ इंच होती है। इस नलीका आरम्भ मूत्राशयके नीचेसे होता है और यह लिंगके नीचेसे होती हुई लिङ्ग-मुण्डमें समाप्त हो जाती है। लिंगके मणि (सोपारी) में जो छिद्र होता है वह इसी मूत्रमार्गकी नलीका अन्त है। इसी नलीके मार्गसे मूत्र और शुक्र बाहर निकलते हैं।

शिश्न (Penis) तीन बेलनाकार (cylindrical) मांसतंतुओंसे बना होता है। सिकुड़कर छोटा हो जाना और फिर बढ़कर अपने पूर्व प्रमाणमें आ जाना इसका गुण है। इसके अन्तमें शिश्नमणि या सोपारी होती है जो कुण्डी नामक चमड़ेसे ढकी होती है ये शिश्न और अण्डकोष सारे शरीरके वात-मेरुदण्डसे (Ner us System) मिले रहते हैं। ज्ञान या कर्मेन्द्रियोंके कार्यसे स्पर्शसे शिश्नमें उत्तेजना उत्पन्न हो जाती है। पहला कार्य वातसूत्रका ऊपर पहुँचाता है उसके उत्तरमें रक्तकी नाड़ियोंसे तीनों बेलनाकार मांस तंतुओंमें

रक्त उमड़ पढ़ता है, तब शान्त शिश्नमें बडी तीक्ष्ण उत्तेजना उत्पन्न होजाती है और वह एक बारगी बढ़ जाता है।

स्त्रियोंके उत्पादक सस्थानके मुख्य अंगोंका नाम है—डिम्बजनक ग्रन्थि, गर्भाशय, फालोपियन नली और योनि अथवा भग *। पुरुषोंके अंडके स्थान पर स्त्रियोंकी डिम्बजनक ग्रन्थियाँ (Ovary) होती हैं। ये एक इंच लम्बी, बादामके शकलकी, वस्ति (Pelvis) के भीतर एक दाहिनी ओर और दूसरी बाईं ओर होती हैं। ये गर्भाशयके दोनों ओर उससे जरासे फासले पर ऊपरकी ओर रेशेदार तंतुसे जुडी रहती हैं। इसीसे डिम्ब नामक कीट उत्पन्न होते हैं जो स्त्रीके सतानोत्पादक मुख्य द्रव्य होते हैं।

+ मूत्राशयके पीछे जिस स्थान पर पुरुषोंके शुक्राशय होता है उसी स्थान पर स्त्रियोंके गर्भाशय (uterus or womb) होता है। यह नासपातीके शकलका एक खोखला मांसपिण्ड है। यह ऊपर मोटा और नीचे आकर पतला हो जाता है। इसके ऊपरके भागको शरीर (Body) और नीचेके भागको ग्रीवा कहते हैं। जब स्त्री गर्भवती नहीं होती तब इसकी लम्बाई ३ इंच, चौडाई २ इंच और शरीरकी मोटाई लगभग १ इंच हुआ करती है। गर्भाशयकी ग्रीवा योनितक चली आती है और एक छोटेसे दानेकी भाँति दिखाई देती है। यह दाना गर्भाशयका मुख कहा जाता है। इसमें खुलने और बन्द होनेकी शक्ति होती है। गर्भाशयके शरीरके दोनों तरफ दो नलियाँ होती हैं। इन्हें 'फालोपियन' नली (Fallopian tube) कहते हैं। यह नली गर्भाशयको डिम्बजनक ग्रन्थिसे मिलाती है। गर्भाशय ही वह स्थान है जहाँ गर्भस्थिति होती है और जहाँसे नौ मासके पश्चात् बच्चेका जन्म होता है।

पुरुषोंके जननेन्द्रियके स्थान पर स्त्रियोंके भग या योनि होती है। यह युवतियोंमें लगभग ३ इंच गहरी होती है। इसमें दो छिद्र होते हैं, एक छोटा और दूसरा बडा। छोटे छिद्रसे मूत्रमार्ग (Urethra) की नली मिली होती है।

---

* स्त्रियोंकी छाती या स्तनयुगम भी उत्पादक सस्थानका एक अग माना जाता है।

+ स्त्री और पुरुषके मूत्रमार्ग (Urethra) में अन्तर होता है। स्त्रियोंका मूत्रमार्ग पुरुषोंसे छोटा लगभग २ इंचका ही होता है।

बड़े छिद्रका समान गर्भाशय मादिसे रहता है। इसे योनिद्वार कहते हैं। यही मासिक धातका मार्ग है और इसी मार्गसे बच्चा जन्म लेता है। इसके ऊपर दो मुलायम गद्दियां होती हैं जिन्हें भगोष्ठ कहते हैं। स्त्रियोंमें मैथुनका यही अंग होता है।

स्त्री और पुरुष दोनोंकी जननेन्द्रियाँ बड़ी ही सचेत (sensitive) होती हैं। शरीरके किसी भी भागमें ज्ञान या स्पर्शेन्द्रियद्वारा तनिक भी विकासक कार्य होनेसे इनमें तत्काल ही किसी न किसी अंशमें उत्तेजना पदा हो जाती है। इन इन्द्रियोंका लगाव शरीरके प्रत्येक अंगसे है। उदर रीढ़ हृदय और मस्तिष्ककी प्रधान वातरज्जुओं (Nerves) से लेकर शरीरके अति सूक्ष्म भागों तक इन अवयवेन्द्रियोंका घनिष्ट लगाव है। इन दो अंगोंकी तरह शरीरका और कोई अंग नहीं है जिसका इतनी वातरज्जुओंसे लगाव हो। शरीर मात्रके वातमण्डल (Nervous system) पर दो अंगोंका शासन है। * इन्हीं दो अंगोंके सम्बन्धसे सारे शरीरका रस खिंचकर है जो मानव-सृष्टिकी उत्पत्तिमें बीजका काम देता है। इसी मसालेसे प्राकृतिक प्रयोगशालामें संतान तयार होती है।

प्राकृतिक प्रयोगशालाके मसाले।

जो कुछ आहार किया जाता है वह आमाशय (Stomach)में जाता है वहां अनेक शक्तियोंके द्वारा पाचन होता है और एक प्रकारका रस बनता है। सार भाग शरीरमें रह जाता है और अनावश्यक भाग मल और मूत्रके रूपमें बाहर निकल जाता है। इस रसका फिर पाचन होता है और सार भाग रुधिरमें लग जाता है। इस रुधिरका भी पाचन होता है और उसके तीन भाग होते हैं—सूक्ष्म स्थूल और मल। सूक्ष्म भाग रुधिरमें मिलकर उसका पोषण करता है स्थूल भागसे मांस बनता है और मलसे पित्त। इस पाचनक्रियाका

---

* A . . . no other point in the body is there . . . junction of so many important nerve—extremities as in th . . . reprod . . . ctive organ These, part . . . ula . . . th . . . branches or many . . . pinal nerves and f . . . th . . . e . . . ou . . . ympathic a and through their connection w th th . . . brai . . . re capable . . . f exerting an influence on the entire . . . ervous . . . y tem They are m . . . ence the root of the whole tree of l fe.

— R. Porter.

तार टूटने नहीं पाता। एक सारको पचाकर उसमेंसे दूसरा, फिर तीसरा, और फिर उससे भी सूक्ष्म चौथा सार, इस तरह एकसे एक उत्तम वस्तुयें तैयार हुआ करती हैं। आवश्यक वस्तुयें शरीरके प्रत्येक भागमें मिला करती हैं और अनावश्यक वस्तुयें मल, मूत्र, पसीना, नाक-कानका मैल, नख और बाल बन कर बाहर निकल जाती हैं। इसी क्रमसे भोजन किये हुए पदार्थसे रस, रससे रक्त, रक्तसे मांस, माससे मेदा, मेदासे अस्थि, अस्थिसे मज्जा और मज्जासे वीर्य्य या रज * बनता है।

आहार करनेसे वीर्य्य बनने तक रसका पृथक् पृथक् छः धातुओंमें पाचन होता है। प्रत्येक पाचन और शुद्धिक्रियामें ५ दिनसे कुछ अधिक समय लगता है। इस हिसाबसे आहारसे वीर्य बननेमें प्राय ३० दिन और कुछ घण्टे लगते हैं। शरीरमें वीर्य्य सबसे शुद्ध रस होता है। इसीसे मानवशरीरका पोषण होता है। इसका कोई एक स्थान नहीं है। जैसे दहीमें घी, तिलमें तेल और ईखमें रस रहता है वैसे ही वीर्य्य भी समस्त शरीरमें प्रत्येक स्थानमें रहता है। यही शरीरका राजा है। वीर्य्यहीसे बल है, वीर्य्यहीसे बुद्धि है। इसीसे उत्साह, धैर्य, लावण्य और सौन्दर्य है। शरीरकी उत्तमता इसी वीर्य्य पर निर्भर है। इसकी वृद्धिसे इन विभूतियोंमें वृद्धि होती है और इसके क्षयसे उपर्युक्त सब बातें, बल्कि जीवन तक नष्ट हो जाता है। इसी लिए सन्तानोत्पत्ति कार्य्यके अतिरिक्त और किसी इच्छाकी पूर्तिके लिए वीर्य्यपात करना अनुचित कहा गया है। जैसे दहीके मथनसे मक्खन निकलता है वैसे ही 'रति-सेवन' द्वारा समस्त शरीरका मथन होकर वीर्य्य बनता है और वीर्य तथा रजके मेलसे सन्तानोत्पत्ति होती है।

वीर्य्य सफेद, लसदार और चिकना पदार्थ है। इसमें एक खास तरहकी गन्ध होती है। पाश्चात्य विद्वानोंने सूक्ष्म-दर्शक यन्त्रोंसे वीर्य्यका निरीक्षण करके पता लगाया है कि इसमें क्या क्या पदार्थ हैं। शुद्ध वीर्य्यमें दो द्रव्य पाये जाते हैं—एक शुक्रकीट (Spermatazoa) और दूसरा वीर्यके दाने (Seminal granule)। बस, पुरुषवीर्य्यमें यही दो चीज हैं।

---

* स्त्री और पुरुष-वीर्यमें भिन्नता होती है। इससे दोनोंका एक नाम नहीं हो सकता। स्त्रीकी सातवीं धातु, जो शुद्ध होकर बनती है, रज है।

बड़े पिण्डका प्रभाव गर्भाशय आदिसे रहता है। इसे योनिद्वार कहते हैं। यही मासिक स्रावका मार्ग है और इसी मार्गसे बच्चा जन्म लेता है। इसके ऊपर दो मुलायम गद्दियां होती हैं जिन्हें भगोष्ठ कहते हैं। स्त्रियोंमें मैथुनका यही अंग होता है।

स्त्री और पुरुष दोनोंकी जननेन्द्रियाँ बड़ी ही सचेत (sensitive) होती हैं। शरीरके किसी भी भागमें ज्ञान या स्पर्शेन्द्रियद्वारा तनिक भी विकारात्मक कार्य होनेसे इनमें तत्काल ही किसी न किसी अंशमें उत्तेजना पैदा हो जाती है। इन इन्द्रियोंका लगाव शरीरके प्रत्येक अंगसे है। उदर रीढ़ हृदय और मस्तिष्ककी प्रधान वातरज्जुओं (Nerves) से लेकर शरीरके अति सूक्ष्म भागों तक इन जननेन्द्रियोंका अविच्छिन्न लगाव है। इन दो अंगोंकी तरह शरीरका और कोई अंग नहीं है जिसका इतनी वातरज्जुओंसे लगाव हो। शरीरमात्रके वातमण्डल (Nervous system) पर दो अंगोंका शासन है। * इन्हीं दो अंगोंके मन्थनसे सारे शरीरका रस निकलता है जो मानव-सृष्टिकी उत्पत्तिमें बीजका काम देता है। इसी मसालेसे प्राकृतिक प्रयोगशालामें संतान तयार होती है।

प्राकृतिक प्रयोगशालाके मसाले।

जो कुछ आहार किया जाता है वह पक्वाशय (Stomach)में जाता है जहाँ अनेक शक्तियोंके द्वारा पाचन होता है और एक प्रकारका रस बनता है। सार भाग शरीरमें रह जाता है और अनावश्यक भाग मल और मूत्रके रूपमें बाहर निकल जाता है। इस रसका फिर पाचन होता है और सार भाग रुधिरमें मिल जाता है। इस रुधिरका भी पाचन होता है और उसके तीन भाग होते हैं—सूक्ष्म स्थूल और मल। सूक्ष्म भाग रुधिरमें मिलकर उसका पोषण करता है स्थूल भागसे मांस बनता है और मलसे पित्त। इस पाचनक्रियाका

---

* At no other point in th body is there a junction of so many important nerve—extremities as in th reproductive organs. These, in particular th branches of many spinal nerves and of th nervous sympatheticus, and through their connection with th brain are capabl of exerting an influence on the entire nervous system. They are in a sense the root of the whole tree of life.

— B. Porter

सार टूटने नहीं पाता। एक सारको पचाकर उसमेंसे दूसरा, फिर तीसरा, और फिर उससे भी सूक्ष्म चौथा सार, इस तरह एकसे एक उत्तम वस्तुयें तैयार हुआ करती हैं। आवश्यक वस्तुयें शरीरके प्रत्येक भागमें मिला करती हैं और अनावश्यक वस्तुयें मल, मूत्र, पसीना, नाक-कानका मैल, नख और बाल बन कर बाहर निकल जाती हैं। इसी क्रमसे भोजन किये हुए पदार्थसे रस, रससे रक्त, रक्तसे मांस, मांससे मेदा, मेदासे अस्थि, अस्थिसे मज्जा और मज्जासे वीर्य्य या रज * बनता है।

आहार करनेसे वीर्य्य बनने तक रसका पृथक् पृथक् छः धातुओंमें पाचन होता है। प्रत्येक पाचन और शुद्धिक्रियामें ५ दिनसे कुछ अधिक समय लगता है। इस हिसावसे आहारसे वीर्य बननेमें प्राय ३० दिन और कुछ घण्टे लगते हैं। शरीरमें वीर्य्य सबसे शुद्ध रस होता है। इसीसे मानवशरीरका पोषण होता है। इसका कोई एक स्थान नहीं है। जैसे दहीमें घी, तिलमें तेल और ईखमें रस रहता है वैसे ही वीर्य्य भी समस्त शरीरमें प्रत्येक स्थानमें रहता है। यही शरीरका राजा है। वीर्य्यहीसे बल है, वीर्य्यहीसे बुद्धि है। इसीसे उत्साह, धैर्य, लावण्य और सौन्दर्य है। शरीरकी उत्तमता इसी वीर्य्य पर निर्भर है। इसकी वृद्धिसे इन विभूतियोंमें वृद्धि होती है और इसके क्षयसे उपर्युक्त सब बातें, बल्कि जीवन तक नष्ट हो जाता है। इसी लिए सन्तानोत्पत्ति कार्य्यके अतिरिक्त और किसी इच्छाकी पूर्तिके लिए वीर्य्यपात करना अनुचित कहा गया है। जैसे दहीके मथनसे मक्खन निकलता है वैसे ही 'रति-सेवन' द्वारा समस्त शरीरका मथन होकर वीर्य्य बनता है और वीर्य तथा रजके मेलसे सन्तानोत्पत्ति होती है।

वीर्य्य सफेद, लसदार और चिकना पदार्थ है। इसमें एक खास तरहकी गन्ध होती है। पाश्चात्य विद्वानोंने सूक्ष्म-दर्शक यन्त्रोंसे वीर्य्यका निरीक्षण करके पता लगाया है कि इसमें क्या क्या पदार्थ हैं। शुद्ध वीर्य्यमें दो द्रव्य पाये जाते हैं—एक शुक्रकीट (Spermatazoa) और दूसरा वीर्यके दाने (Seminal granule)। बस, पुरुषवीर्य्यमें यही दो चीज हैं।

---

* स्त्री और पुरुष-वीर्यमें भिन्नता होती है। इससे दोनोंका एक नाम नहीं हो सकता। स्त्रीकी सातवीं धातु, जो शुद्ध होकर बनती है, रज है।

शुक्रकीट एक प्रकारके अति सूक्ष्म जन्तु हैं जो आँखसे सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र की सहायताके बिना नहीं दिखाई दे सकते। ये एक तरहके दुमदार जन्तु हैं। इनका सिर चिपटा बदु गोल और पूँछ लम्बी चूहीदार जवानकी होती है। इनके सिरकी लम्बाई $\frac{1}{[illegible]}$ इंच चौड़ाई $\frac{1}{[illegible]}$ इंच बदनकी लम्बाई $\frac{1}{[illegible]}$ इंच और दुमकी लम्बाई $\frac{1}{[illegible]}$ इंच होती है। इस कीटमें सञ्चलन शक्ति होती है। यह सञ्चलन तड़पनेकी भाँति होता है। इसी शक्तिसे ये योनिद्वारमें प्रवेश करके आगे बढ़ते हैं और स्त्रीके डिम्ब नामक कीटमें प्रवेश (Seminal granules) करनेमें समर्थ होते हैं जिससे डिम्ब गर्भरूपमें या बच्चेके बीजरूपमें परिणत हो जाता है।

वीर्यके दाने या कणें (Seminal granules) वीर्यकीटके साथ एक प्रकारके द्रव्यसे मिले रहते हैं। ये वीर्यकीटसे भी छोटे होते हैं। इनका काम भी स्त्रीके डिम्बमें प्रवेश करके उसको बीजमें परिणत करना है।

स्त्रियोंका वीर्य पुरुषोंसे भिन्न होता है। उसके योजकम पाचनक्रम तो पुरुषोंहीके समान है किन्तु स्त्रीके सातवें रसमें वे ही द्रव्य नहीं पाये जाते जो पुरुषमें होते हैं। जो द्रव्य रस गर्भोत्पत्तिमें काम आता है उसे रज कहते हैं। जिस प्रकार पुरुषवीर्यमें शुक्रकीट होते हैं वैसे ही स्त्रियोंके रजमें भी एक प्रकारके जन्तु होते हैं जिन्हें डिम्ब कहते हैं। ये अण्डेकी तरह गोल होते हैं और जिस प्रकार अण्डेके भीतर जर्दी और सफेदी दो वस्तुयें होती हैं उसी तरह डिम्बमें भी जर्दी और सफेदी होती है। जर्दीको न्यूक्लस (Nucleus) और सफेदीको प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) कहते हैं। न्यूक्लस पानीके समान पतली चीज है। इसमें अति सूक्ष्म पीले परमाणु होते हैं। यह एक बारीक झिल्लीके अंदर बंद रहता है और प्रोटोप्लाज्ममें तैरता और धीरे धीरे बढ़ता है।

प्रोटोप्लाज्म भी पानीके सदृश पतली चीज होती है। इसमें दो तरहके परमाणु होते हैं। एकको ग्लोब्युल्स (Globules) और दूसरेको ग्रेन्युल्स (G anules) कहते हैं। न्यूक्लस और प्रोटोप्लाज्म दोनों द्रव्य एक बारीक झिल्लीके भीतर ढके रहते हैं और इन सबको डिम्ब कहते हैं। यह लगभग [illegible] इंचका होता है। डिम्ब शुक्रकीटसे बहुत बड़ा होता है। शुक्रकीट डिम्बमें

प्रवेश कर जाता है । इन दोनोंके मिश्रणको बच्चेका बीज कहते हैं । इसी मसालेसे प्रयोगशालामें सतान तैयार होती है ।+

प्रयोगशालामें शरीर-रचना ।

जैसे ऋतु, भूमि, बीज और जलके संयोगसे बीजसे अंकुरोत्पत्ति होती है वैसे ही ऋतु, गर्भाशय, रज और वीर्य इन चार पदार्थोंके संयोगसे सन्तानके अंकुर उगते हैं । इसे गर्भस्थिति कहते हैं ।*

स्त्रियोंके रजस्रावके ३ दिन बचाकर † चौथे दिन रतिसेवासे डिम्ब और

+ (1) Sexual Psychology by Trail (2) Kollikar (3) Kirke

* पूर्वोक्त वस्तुओंके सयोग होने पर भी जो गर्भस्थिति नहीं होती है उसके बहुतसे कारणोंमेंसे मुख्य ये हैं —

(१) गर्भाशयमें रोग होना–(क) गर्भाशयमें मास या मज्जा बढ़ जाना । (ख) गर्भमें कीड़ा पैदा हो जाना । (ग) गर्भाशयका दग्ध हो जाना । छोटी उमरके संभोगसे यह रोग उत्पन्न हो जाता है । (घ) गर्भाशयका उलट जाना । (ङ) गर्भाशयमें वायुका बढ़ जाना । (च) गर्भाशयमें शीत पैदा हो जाना ।

(२) रजोधर्ममें गड़बड़ी रहना–(क) मासिकधर्मका न होना । (ख) ठीक समय पर जो प्रति २८ वें दिन होता है न होकर पहले या पीछे कई दिन बाद होना । (ग) कम होना । (घ) बहुत ज्यादा होना । आदि ।

(३) सयोगकी अधिकता—इससे पुरुषवीर्यके शुक्रकीटोंमें कमी आजाती है और वे इतने शक्तिहीन हो जाते हैं कि डिम्बमें प्रवेश नहीं कर सकते । आदि ।

(४) मन शक्तिकी प्रतिकूलता—कुछ दिनोंतक सन्तान न होनेसे यह मान बैठना कि अब हमें सन्तान न होगी ।

(५) प्रेमका अभाव–इस कारण स्त्री-पुरुष एक दूसरे पर अनुरक्त नहीं हो सकते और गर्भस्थिति नहीं हो सकती ।

(६) डिम्बमें पुरुषकीटका मिश्रण न हो सकना–स्त्री और पुरुषके एक दूसरेके आगे पीछे स्खलित होनेसे रज और वीर्यका मिश्रण नहीं होता, वह व्यर्थ जाता है ।

† रज स्रावके दिन न बचानेमें जैसे बहती हुई धारामें कोई चीज स्थिर नहीं रह सकती–उसी धाराके साथ बह जाती है, उसी तरह रजोदर्शनके प्रारभसे ३ या ४ दिनोंमें रतिसेवनसे गर्भस्थिति नहीं होती और इन दिनोंके सभोगसे स्त्री और पुरुष दोनोंहीको नानाप्रकारके रोग हो जाते हैं ।

मूर्खतासे या कौशलसे उस पर इमारत बना भी ली जाय तो वह अवश्यमेव गिर जायगी और किया हुआ परिश्रम वृथा जायगा। अथवा नीव अच्छी हुई और ऊपर मिट्टीकी कच्ची दीवार बना दी गई, या उसका नकशा खराब हुआ तो भी महल सन्तोषजनक न बनेगा। सुन्दर और मजबूत महलके लिए महल बनानेके नियम जानना तथा उसके अनुसार चलना, वंशपरम्परासे अच्छे बीजकी तैयारी करना, सदाचार और प्रेम आदि गुणोंसे तथा मानसिक विचारोंसे गर्भमें ही सन्तान पर प्रभाव डालना, जन्मके पश्चात् भलीभाँति देख रेख रखना, शिक्षा देना और सत्संगका संयोग जोड़ देना आवश्यक है। इससे ही इच्छानुसार उत्तम सन्तान हो सकती है।

(ख)–वंश-परम्परा

अर्थात्

वंशमें पीढ़ी दर पीढ़ी उतरनेवाले गुण या अवगुण।

'Nature is all that a man brings himself into the world, nurture is very influence from without that affects him after his birth The supremacy of nature over nurture, of inheritance over training is unquestionable The influence of environment is not quite one-tenth that of heredity '*

—Galton.

वंशपरम्परासे तात्पर्य यह है कि एक पीढ़ीसे दूसरी पीढ़ी बँधी होती है। आंगिक तथा जातीय प्रवाह द्वारा एक पीढीका सिलसिला दूसरी पीढीसे लगा रहता है। " शरीरका प्रत्येक भाग अपनेमेंसे अति सूक्ष्म भाग उत्पन्न करता है। ये अति सूक्ष्म परमाणु सारे शरीरमें सचलन करते हैं और अपने ही सदृश दूसरे परमाणुओंको उत्पन्न करते हैं। इन्हीं परमाणुओंमेंसे शरीर उत्पन्न करनेवाले कोषोंकी उत्पत्ति होती है जो पीढ़ी दर पीढ़ी

* The Ground Work of Eugenics

शुक्रकीटका 'फिलोपियन' नलीमें मिलन होता है और फिर वह मिला हुआ द्रव्य गर्भाशयमें प्रवेश करता है। *

पहला सप्ताह—$\frac{1}{125}$ इंचवाला डिम्ब जिसमें शुक्रकीट प्रवेश कर चुका है गर्भाशयमें स्थिर हो जाता है। यहाँ इस मिश्रित द्रव्यके दो भाग होते हैं फिर इन दो भागोंके चार भाग और इन चार भागोंके आठ भाग होते हैं। ये कुल भाग भीतरसे अलग होने पर भी बाहरसे उसी एक डिम्बके भीतर रहते हैं।

दूसरा सप्ताह—इन आठ भागोंके १६ भाग हो जाते हैं और दूसरे सप्ताहके अन्त तक डिम्बके भीतरके परमाणु विभक्त होकर तथा बढ़कर स्पंज (Sponge) के आकारके हो जाते हैं और डिम्बका आकार बढ़कर १ इंच और वजन प्रायः एक ग्रेन हो जाता है।

तीसरा और चौथा सप्ताह—डिम्बका आकार चींटीके बराबर हो जाता है और महीना समाप्त होते होते उसमें सिर तथा पैरोंका आकार बनने लगता है। इस समय तक इसे देखकर कोई पहचान नहीं सकता कि यह मनुष्यजातिके बच्चेका बीज है।

दूसरा मास—लगभग पैंतालीसवें दिन इस बीजका ऐसा आकार बन जाता है कि इसे देखकर यह कहा जा सकता है, कि यह मानव जातिके बच्चेका बीज है। [illegible] अपेक्षा [illegible] बड़ा होता है; पैर [illegible] होते हैं उनमें उंगलियाँ नहीं [illegible] इसी जगह सिर्फ काले काले दागसे [illegible] जाती है और इस दूसरे महीनेके [illegible] —हाथ पैर मुँह उंगलियाँ [illegible] प्रत्येक [illegible] हो जाता [illegible] रहती हैं। [illegible] भी आरम्भ हो [illegible] हैं। इस महीनेमें [illegible]

* फिलोपियन ट्यूबमें रज और [illegible] गर्भाशयमें होता है।

पाँचवाँ मास—इस समय तक शरीरकी अपेक्षा सिर बड़ा होता है और उस पर कोमल बाल निकल आते हैं। लम्बाई ७–८ इंच हो जाती है।

छठा मास—चमड़ा या ऊपरकी खाल बनकर तैयार होती है, उँगलियोंमें नख निकल आते हैं और शरीरके सब अंग बन जाते हैं। इस समय यदि बच्चा गर्भसे बाहर हो जाय तो साँस लेता है, किन्तु जी नहीं सकता।

सातवाँ मास—बच्चा गर्भाशयमें उलट जाता है और बाहर निकलनेके रास्ते पर आ जाता है।

आठवाँ मास—शरीरके सब अवयव पुष्ट होते रहते हैं और अपना अपना काम करने लगते हैं। इस समय बच्चेमें अपने जीवनके निर्वाहकी शक्ति हो जाती है। वह स्वयं जी सकता है। ×

× अपने देश (भारत) में यदि बच्चे समयके पूर्व पैदा हो जाते हैं तो वे बहुधा मर जाते हैं। उनके कलेजे तथा फॅफड़ेमें आवश्यक शक्ति न होनेके कारण वे भलीभाँति रुधिर शुद्ध नहीं कर सकते जो उनकी मृत्युका एक प्रधान कारण होता है। नव-जात बालक नीले पीले पड़ जाते हैं। अपने यहाँ यह बीमारी भूतप्रेतकी बाधा समझी जाती है। इससे माता-पिता यथेष्ट उपचार न कर मूर्खोंसे झड़ाने फुंकाने या राखी गंडा बँधानेमें लगे रहते हैं और इस तरह उन बेचारोंकी जानें ले ली जाती हैं। पर इस देश (अमेरिका) में समयसे पूर्व पैदा हुए बच्चोंके लिए खास प्रबन्ध है। ये एक यन्त्र (Infant incubator) में रक्खे जाते हैं। इस यन्त्रके द्वारा ८४ फी सैकड़ा बच्चे जीते पाये गये हैं। इस संस्थाका प्रधान स्थान न्यूयार्क है और इसकी शाखायें अन्य शहरोंमें हैं। यहाँ समयसे पहले जनमे हुए बालक जन्म लेते ही लाये जाते हैं और उनकी परीक्षा की जाती है। फिर वे साफ सुथरा करके एक प्रकारके शीशेके सन्दूकमें रक्खे जाते हैं। इसमें साफ और नर्म कपड़ा बिछा रहता है और विज्ञानकी सहायतासे सर्वदा समताप रक्खा जाता है। हर बालकके फॅफड़ेकी शक्तिके अनुसार हवामें आक्सिजन मिलाकर एक विशेष यन्त्र द्वारा इस उत्तम वायुका प्रवेश सन्दूकमें किया जाता है जिससे बालक बिना दिक्कतके साँस लिया करता है। ठीक समय और अवसर पर परीक्षा की हुई स्त्रियोंका उत्तम दूध उचित परिमाणमें उन्हें पिलाया जाता है। बस इतना करनेसे ये जीते, बढ़ते और पुष्ट होते जाते हैं।

नवाँ मास—नवें मासमें बच्चा सब प्रकार परिपूर्ण होकर साधारण तौर पर १ इंच तक लम्बा और वजनमें लगभग ६ सेरके होते हैं। बच्चे स्वस्थ तथा उचित आयुवाले माता-पिताकी सन्तान निरोग और हृष्टपुष्ट पैदा होती है।

गर्भाशयमें बच्चेका पोषण माताके रक्तसे होता है। बच्चा नाल नामक रस्सीके सदृश अवयवसे सारे आवश्यक पदार्थ माताके शरीरसे खींचता है। माताके प्रत्येक गुण या अवगुणका प्रत्येक भले या बुरे कार्यका तथा मानसिक विचारका प्रभाव बच्चे पर पड़ता है। अतः जैसा मसाला निर्माणशालामें प्रयोग किया जाता है जितनी सावधानी तथा चतुरता उस वस्तुकी तैयारीमें खर्च की जाती है उतनी ही उत्तम या निकृष्ट सन्तान प्रयोगशालासे तैयार होकर निकलती है।

समय आने पर जो योग्य मकान चाहता है वह शुरू करता है। इसके लिए बहुत पहलेसे तैयारी करनी होती है। रूपवान्, निरोगी, दीर्घायु और गुणी सन्तानकी तैयारी सन्तानके जन्मसे कई पीढ़ी पहलेसे ही आरम्भ होती है। यदि गर्भाशयरूपी भूमि अच्छी है और नींवमें बड़े बड़े मजबूत पत्थर दिये गये हैं तो उस पर सर्वांगसुन्दर सन्तानरूपी महल तैयार किया जा सकता है। महलका ऊपरी हिस्सा भी मसालेकी उत्तमता तथा शिल्पकार माता-पिताकी चतुरता पर निर्भर है। एक एक ईंट जिस ढंगसे रक्खी जाती है उसी ढंगका महल बनता है। महलके सुन्दर तथा चिरस्थायी होनेके लिए आरंभसे अंत तक किसी बातमें त्रुटि न रहनी चाहिए। यदि नींव ही कमजोर है तो उस पर आलीशान महल बन ही नहीं सकता। यदि इसमें

बालकोंके जीवनका मुख्य मन्त्र साफ हवा साफ कपड़े शुद्ध दूध और उचित मात्राका प्रयोग मात्र है। अब आप उपर्युक्त विवरणसे अपने यहाँके घर कस्बी प्रसूतिगृहोंका मिलान कीजिए जहाँ गन्दे कपड़े गन्दी हवा टूटे फूटे घरोंकी सबसे गन्दी कोठरियों और चारपरसे दुर्गन्धयुक्त मलीन वस्तुओंका प्रयोग होता है।

इस शिशुशालामें इस समय ४२ बच्चे हैं। सबसे छोटा बालक यहाँ १४ दिनोंका है। उसका वजन १५ छटांक है और देखनेमें वह एक चूहेके बराबर है।

—शिवप्रसाद गुप्त पनामा पैसिफिक प्रदर्शिनी-अमेरिका।

१४ अप्रैल १९१४।

मूर्खतासे या कौशलसे उस पर इमारत बना भी ली जाय तो वह अवश्यमेव गिर जायगी और किया हुआ परिश्रम वृथा जायगा। अथवा नीव अच्छी हुई और ऊपर मिट्टीकी कच्ची दीवार बना दी गई, या उसका नकशा खराब हुआ तो भी महल सन्तोषजनक न बनेगा। सुन्दर और मजबूत महलके लिए महल बनानेके नियम जानना तथा उसके अनुसार चलना, वंशपरम्परासे अच्छे बीजकी तैयारी करना, सदाचार और प्रेम आदि गुणोंसे तथा मानसिक विचारोंसे गर्भमें ही सन्तान पर प्रभाव डालना, जन्मके पश्चात् भलीभाँति देख-रेख रखना, शिक्षा देना और सत्संगका सयोग जोड देना आवश्यक है। इससे ही इच्छानुसार उत्तम सन्तान हो सकती है ।

(ख)-वंश-परम्परा

अर्थात्

वंशमें पीढ़ी दर पीढ़ी उतरनेवाले गुण या अवगुण ।

' Nature is all that a man brings himself into the world, nurture is very influence from without that affects him after his birth The supremacy of nature over nurture, of inheritance over training is unquestionable The influence of environment is not quite one-tenth that of heredity ' *

—Galton

वंशपरम्परासे तात्पर्य्य यह है कि एक पीढ़ीसे दूसरी पीढ़ी बँधी होती है। आंगिक तथा जातीय प्रवाह द्वारा एक पीढीका सिलसिला दूसरी पीढ़ीसे लगा रहता है। " शरीरका प्रत्येक भाग अपनेमेंसे अति सूक्ष्म भाग उत्पन्न करता है। ये अति सूक्ष्म परमाणु सारे शरीरमें संचलन करते हैं और अपने ही सदृश दूसरे परमाणुओंको उत्पन्न करते हैं । इन्हीं परमाणु ओंमेंसे शरीर उत्पन्न करनेवाले कोषोंकी उत्पत्ति होती है जो पीढी दर पीढ़ी

---

* The Ground Work of Eugenics

नवाँ मास—नवें मासमें बच्चा सब प्रकार परिपूर्ण होकर साधारण तौर पर २ इंच तक लम्बा और वजनमें लगभग ६ सेरके होता है। अच्छे स्वस्थ तथा उचित आयुवाले मातापिताकी सन्तान निरोग और हृष्टपुष्ट पैदा होती है।

गर्भाशयमें बच्चेका पोषण माताके रक्तसे होता है। बच्चा नाल नामक रस्सीके सदृश अवयवसे सारे आवश्यक पदार्थ माताके शरीरसे खींचता है। माताके प्रत्येक गुण या अवगुणका, प्रत्येक अच्छे या बुरे कार्यका तथा मानसिक विचारका प्रभाव बच्चे पर पड़ता है। *अतः जैसा मसाला विज्ञानशा*लामें प्रयोग किया जाता है जितनी सावधानी तथा चतुरता उस वस्तुकी तैयारीमें खर्च की जाती है उतनी ही उत्तम या निकृष्ट सन्तान प्रयोगशालासे तैयार होकर निकलती है।

समय आने पर जो योग्य बनना चाहता है वह मूक बनता है। इसके लिए बहुत पहलेसे तैयारी करनी होती है। स्वस्थ, निरोगी दीर्घायु और गुणी सन्तानकी तैयारी सन्तानके जन्मसे कई पीढ़ी पहलेसे ही आरम्भ होती है। *यदि गर्भाशयरूपी भूमि अच्छी है* और नींवमें बड़े बड़े मजबूत पत्थर दिये गये हैं तो उस पर सर्वांगसुन्दर सन्तानरूपी महल तैयार किया जा सकता है। महलका ऊपरी हिस्सा भी मसालेकी उत्तमता तथा शिल्पकार माता-पिताकी चतुरता पर निर्भर है। एक एक ईंट जिस ढंगसे रक्खी जाती है उसी ढंगका महल बनता है। महलके सुन्दर तथा चिरस्थायी होनेके लिए *आरम्भसे अंत तक किसी बातमें त्रुटि न रहनी चाहिए।* यदि नींव ही कमज़ोर है तो उस पर आलीशान महल बन ही नहीं सकता। यदि इससे

बालकोंके जीवनका मुख्य मन्त्र साफ हवा साफ कपड़े शुद्ध दूध और उचित मात्रामें भोजन मात्र है। अब आप उपयुक्त चित्रसे अपने बच्चोंके घर वाली प्रवृत्तियोंका मिलान कीजिए जहाँ गन्दे कपड़े गन्दी हवा टूटे फूटे बरतनों सबसे गन्दी कोठरियों और बाजारसे दुर्गन्धयुक्त मलीन वस्तुओंका पूर्ण होता है।

इस शिशुशालामें इस समय कई लड़के हैं। सबसे छोटा बालक यहाँ १४ दिनोंका है। उसका वज़न १५ छटांक है और लम्बाईमें वह एक फुटके बराबर है।

—शिवप्रसाद गुप्त पनामा पैसेफिक प्रदर्शिनी-अमेरिका।

१४ अप्रैल १९१४।

$\frac{1}{8}=\frac{1}{16}+\frac{1}{32}+\frac{1}{64}+$ . . . आदि,
फिर इसी तरह.. आदि"×

यह गाल्टन द्वारा निर्धारित व्यवस्था आनुमानिक गणना-सम्बन्धी सूत्रमात्र (Statuistical formula) है । किन्तु स्मरण रहे कि यह व्यवस्था दाय (Inheritance) में निर्णयात्मक रूपसे घटती है । इसको मिश्रित या ससृष्ट दाय (Blended inheritance) कहते हैं । इस दायके अतिरिक्त सृष्टिमें दो प्रकारके दाय और भी देखनेमें आते हैं। एकको व्यावर्तक दाय (Exclusive inheritance) और दूसरेको निर्दिष्ट या विलक्षण दाय (Particulate inheritance) कहते हैं ।

व्यावर्त्तक दायमें कभी मातृक और कभी पैतृक गुणोंका लोप सा पाया जाता है। सततिमें माताके ही गुणोंका अधिकावेश होता है। इस कारण ऐसा मालूम होता है कि केवल माताहीके गुणोंसे अपत्य अलकृत है । पर इससे यह नहीं समझना चाहिए कि पैतृक गुण उसमें आये ही नहीं, वरन् यह घटना उपस्थित होती है कि पैतृक गुणविशेषका आविर्भाव नहीं होता । ठीक इसी रीति पर किसी सतानमें पैतृक गुणोंका अधिक विकास होता है और मातृक गुण प्राय. लुप्त पाये जाते हैं ।

निर्दिष्ट या विलक्षण दायमें किसी गुण विशेषका विकास होता है, जो न तो पूर्णतया पैतृक होता है और न मातृक । जैसे घोड़े और गधेके मेलसे खच्चर पैदा होता है जिसमें न तो माताके गुण पाये जाते हैं और न पिताके । कभी कभी अपत्यमें कुछ ऐसे गुणोंका प्रादुर्भाव होता है जो उसके माता पितामें नहीं पाये जाते, किन्तु अनुसधानसे पता चलता है कि उनके किसी पूर्व वंशधरमें वे गुण विद्यमान थे । विज्ञानवेत्ताओंका विचार है कि इसका कारण कई पीढ़ियो तक गुणोंका अव्यक्त रहना मात्र है । योग्य प्रणोदनके प्राप्त न होनेसे वे विकासित नहीं होते हैं । और यह देखा गया है कि कई

one sixteenth and so on The sum of the series $\frac{1}{2}+\frac{1}{4}+\frac{1}{8}+\frac{1}{16}+$ etc being equal to 1 (one) as it should It is the property of this infinite series that each term is equal to the sum of all those that follow, thus $\frac{1}{2}=\frac{1}{4}+\frac{1}{8}+\frac{1}{16}$ etc, $\frac{1}{4}=\frac{1}{8}+\frac{1}{16}+\frac{1}{32}$ etc and so on

सिद्ध यह हुआ कि मनुष्य केवल अपने मातापितासे ही उत्पन्न नहीं हुआ करता, वरन् जिस बीजसे बच्चेकी उत्पत्ति होती है उसमें पूर्व्व वंशधरोंका भी भाग रहता है। अतएव यदि भारत-जनताका सुधार करना है, तो उसमें अभीसे चित्त लगाने तथा प्राकृतिक नियमोंके ज्ञान प्राप्त करते रहनेसे कहीं कई पीढ़ियोंमें जाकर सुधार हो सकेगा। अपने पूर्वजोंसे जो गुण प्राप्त हुए हैं उनमें वृद्धि करके अपने वंशजोंको वे ही गुण प्रदान करना और दुर्गुणोंको काट देना—जिसमें उनके प्रभावसे भावी सन्तानको कष्ट न भोगना पड़े हमारे हाथों है। हम चाहें तो राष्ट्रको पवित्र कर सकते हैं और चाहें तो सद्गुणोंके बदले दुर्गुणोंका विकास करके वंशकी उत्तरोत्तर वृद्धि न करके उसकी अधोगति कर सकते हैं। भारत जनताको पवित्र कर माताका सिर ऊँचा करना या उसे रसातलके गढ़ेमें गिराना, ये दोनों कार्य हमारे ही अधीन हैं।

(ग)—मनःशक्ति और प्रेमका प्रभाव।

'Slaves suckle slaves, pure and enthusistic women bring forth saints and heroes All history attest the fect that great man had great mothers

मनुष्य स्वभावहीसे विचारशील है। वह हर समय कुछ न कुछ विचारा ही करता है। कोई क्षण ऐसा नहीं जाता जब वह विचारसे खाली रह

---

not only the degree of relationship but also legitimacy, sex, cause of death, bad habits, diseases or defects such as alcoholism, creminality, sexual immorality, tuberculosis, syphilis, insanity etc Here the students confronted with patients and the histories of patients see with their own eyes a telling demonstration of the cost in misery and care caused by the breeding of tainted stock! And it is doubtful if any other statement could make such eloquent appeal as these simple diagrams in which the mark of deaf-mutism or feeble-mindedness or some other grave infirmity, blockens the whole page of a family history, generation after generation '

The Social Direction of Human Evolution by Profes-

एक पीढ़ियोंके पश्चात् वह परावृत्तिका प्रादुर्भाव हो जाता है। इसे रिवर्शन या एटेविज़्म (Reversion or Atavism) कहते हैं।

डाक्टर डावेन्पोर्टने वंश-परम्परासे आनेवाले गुणोंको ११ भागोंमें विभक्त करके उनपर अपना मत प्रकट किया है। आँखोंकी रंगत, बाल चमड़ा, कद, वज़न गाने बजानेमें चित्रकारीमें साहित्यमें गणितमें या स्मरणशक्तिमें विशेषतः शारीरिक बल बोलनेमें सुननेमें देखनेमें अन्तर, पैतृक मनोवस्था या दुष्कर्म करनेकी ओर झुकाव पैतृक रोग जैसे मिरगी उन्माद आदि। अर्थात् भली भाँति विचार करके सिद्धान्त करनेसे पता चलता है कि प्रत्येक गुण या अवगुण वंशपरम्परासे पीढ़ी दर पीढ़ी उतरते हैं। * प्रकृतिका यह शोकजनक नियम है कि जहाँ माता और पितामेंसे एक भी रोगग्रसित होता है वहाँ दुर्भाग्यवश प्रकृतिके नियमानुसार प्रायः दुर्बल और रोगी माता पिताका दुर्गुण सन्तानमें विशेष विकास पाता है—Even where one of the parents is unhealthy it is a sad part of the Law of heredity that the children more often follow the weaker parent than the stronger one.

प्रजनन-कार्यालय (Eugenics Record Office) अमरीकाने कई छोटी छोटी पुस्तकें निकाली हैं जिनमें अनेकानेक परिवारोंके वंशजोंका ब्योरा दिया है और उन्हींके अनुसार नकशे बने हैं जिनमें न कि केवल एक दूसरेका नाता दिखाया गया है किन्तु गुणों और अवगुणोंमें भी वंश-परम्परासे कैसा गहरा सम्बन्ध है दिखाया गया है। इनके देखनेसे साफ साफ मालूम होने लगता है कि किस प्रकार वंशपरम्परासे गुण और अवगुण सन्तानमें उतरते हैं और रोगी और अयोग्य पिता-पितामहके दोषसे उनके पुत्र और पौत्र आदि कैसी घोर विपत्तियाँ सहते हैं। अनेकानेक कुलोंमें मिरगी राजयक्ष्मा उन्माद कंठमाला पागलपन बहरापन कोढ़ आदि अनेक भयंकर रोगोंको देखकर रोमांच हो जाता है। क्या इससे अधिक हृदय-विदारक कोई दूसरी कथा हो सकती है जो इन कुलोंके वंशजोंका इतिहास कहता है? +

---

* The Science of Human improvement by better breeding, by Dr Davenport.

\+ Heredity is the fundamental cause of human wretchedness. There are thousands elaborate genealogical charts showing

" जलमें उत्पन्न हुई लहरें मिट जाती हैं और वायुमण्डलका कम्पन (Vibration) भी नाश हो जाता है, किन्तु ' ईथर ' में उत्पन्न हुआ कम्पन या आकृतियाँ अमर रहती हैं।* " अतएव प्रत्येक विचारका प्रभाव बच्चेके बीज पर पडता है। गर्भाधान-समयसे लेकर प्रसव तक माताके प्रत्येक विचारकी छाया बच्चे पर पढ़ती है और वह उसी आकृति, रग, रूप, स्वभाव और बुद्धिका बनकर तैयार होता है।

" सारे प्राणियोंका सूक्ष्मदृष्टिसे अवलोकन करनेसे ज्ञात होता है कि उनका आकार उनके स्वभाव और उनकी इच्छाके अनुसार बना हुआ होता है। उनके किसी अवयवका उत्पन्न होना या क्रमश· लोप हो जाना उनकी मन शक्ति पर अवलंबित होता है।"+

सिंह या रीछकी डरावनी सूरत उसके विकराल और उग्र स्वभावके कारण और गौकी शान्तिमूर्ति उसके शांतिपूर्वक जीवन-निर्वाहके ही कारण है। एक ही प्रकारके पालतू और जगली जानवरोंमें भिन्नता हो जाती है। पालतू जानवरोंको रक्षाकी वैसी जरूरत नहीं रहती जैसी कि जङ्गलमें रहनेवालोंको होती है। इससे पहले पालतूओंका स्वभाव शान्त और दूसरे जगलियोंका उग्र हो जाता है और उसीके अनुसार उनका शारीरिक संगठन होता है। कितने ही पेटके बल रेंगनेवाले जन्तुओंने रक्षाकी निरन्तर इच्छासे पैर पैदा कर लिये है। कितने ही तितलीकी जातिके कीडोंने पक्षियोंसे सुरक्षित रहनेकी इच्छासे अपने रग बदल लिये हैं—जिन वृक्षों पर वे निवास करते थे उन्हींके पत्तोंके जैसा रग अपने परोंका बना लिया है। कितनी ही मछलियोंने हिंसक जलचरोंसे अपने प्राण बचानेके लिए अपने शरीरमें पर पैदा कर लिये हैं। इसी प्रकार लता, वृक्ष और पुष्प भी अपनी आकृतिमें परिवर्तन करते पाये गये हैं। बहुतसे फूल मांसाहारी बन गये हैं और उनमें मक्खियो और कीट पतगोंके पकड लेनेकी शक्ति उत्पन्न हो गई है। तात्पर्य यह कि मन.शक्तिके निरंतर उद्योगसे प्राणियोंमें रक्षा आदिके लिए नये नये अवयव उत्पन्न हो जाते हैं और जब जिन अवयवोंकी आवश्यकता नहीं होती तब वे अवयव क्रमश लोप हो जाते हैं।

---

* Mrs Annie Besant

+ Darwin

सके। संसारके छोटे बड़े सभी कार्योंका मूल विचार ही है। पहले मनःशक्ति अपना काम करती है, फिर दूसरे अंग इस शक्तिकी आज्ञा पर कार्य करते हैं। बिना इस शक्तिकी सहायताके कोई भी काम नहीं किया जा सकता।

जिस प्रकार पानीमें पत्थर फेंकनेसे लहरें उत्पन्न होती हैं या जैसे बोलने या बाजे आदिके शब्दसे वायुमें कम्पन होता है वैसे ही विचारसे भी ईथर नामक द्रव्य पर प्रभाव पड़ता है। जिसप्रकार महासागरमें एक कंकड़ी फेंकनेसे उसमें लहरें उत्पन्न होती हैं और वे लहरें चाहे दिखाई न दें तो भी महासागरके अन्त तक किसी न किसी रूप या अंशमें अपना प्रभाव डालती हैं। इसी तरह प्रत्येक शब्द सारी सृष्टिके वायुमण्डलमें कम्पन उत्पन्न करता है। एक सेकण्डमें करोड़ों तथा अर्बों कम्पन उत्पन्न होते हैं; किन्तु हमारा कर्ण-यन्त्र एक निश्चित सीमा तकके ही कम्पनको ग्रहण करता है। कम्पन निरन्तर हुआ करता है और हमारे कानके परदेसे टकराया करता है। जितनेके ग्रहण करनेकी शक्ति हमारे कानोंमें होती है उतनेको हम सुनते हैं शेष सारे कम्पन हमारे कानोंके पाससे निकल जाते हैं और सुनाई नहीं देते। +

विचार-कम्पन ईथर (Ether) नामक अति सूक्ष्म वस्तु पर होता है। ईथर के परमाणु अति सूक्ष्म होते हैं। इनकी सूक्ष्मताका अनुमान यों किया जा सकता है कि सोने जैसे घन (dense) पदार्थमें भी ईथरके लाखों परमाणु समा जाते हैं। प्रत्येक विचार जो मनःशक्तिसे उत्पन्न होता है इस ईथर पर प्रभाव डालता है। हमारे विचारोंकी आकृति इस ईथर पर अङ्कित हो जाती है किन्तु सूक्ष्मताके कारण साधारण आँखसे दिखाई नहीं देती। जर्मनीके विख्यात डाक्टर बैडक विचार द्वारा जो आकृतियाँ ईथरमें उत्पन्न होती हैं उनका फोटो (चित्र) लेनेमें समर्थ हुए हैं। एक बार एक युवा पुरुष अपनी प्रेमिकाके विचारोंमें निमग्न था। डाक्टर बैडकने उसके विचारका चित्र ईथरसे उतारा और प्लेट पर उस युवककी प्रेमिकाका चित्र आगया! ऐसे ही और कई बार तसवीरें ली गईं और वे ठीक निकलीं।"

+ जब एक सेकण्डमें ४ से लेकर ४-५ हजार तक कम्पन होते हैं, तब वे साधारण मनुष्योंको सुनाई देते हैं पर जब इससे अधिक कम्पन होते हैं, तब सुनाई नहीं देते। वायुमण्डल और ईथरमें एक सेकण्डमें असंख्य कम्पन उत्पन्न होते या हो सकते हैं। इसकी जाँच अति सूक्ष्म यन्त्रोंसे होती है।

" जलमें उत्पन्न हुई लहरें मिट जाती हैं और वायुमण्डलका कम्पन (Vibration) भी नाश हो जाता है, किन्तु ' ईथर ' में उत्पन्न हुआ कम्पन या आकृतियाँ अमर रहती है।* " अतएव प्रत्येक विचारका प्रभाव बच्चेके बीज पर पडता है। गर्भाधान-समयसे लेकर प्रसव तक माताके प्रत्येक विचारकी छाया बच्चे पर पडती है और वह उसी आकृति, रंग, रूप, स्वभाव और बुद्धिका बनकर तयार होता है।

" सारे प्राणियोका सूक्ष्मदृष्टिसे अवलोकन करनेसे ज्ञात होता है कि उनका आकार उनके स्वभाव और उनकी इच्छाके अनुसार बना हुआ होता है। उनके किसी अवयवका उत्पन्न होना या क्रमश लोप हो जाना उनकी मन शक्ति पर अवलंबित होता है।"+

सिंह या रीछकी डरावनी सूरत उसके विकराल और उग्र स्वभावके कारण और गौकी शान्तिमूर्ति उसके शातिपूर्वक जीवन-निर्वाहके ही कारण है। एक ही प्रकारके पालतू और जंगली जानवरोंमें भिन्नता हो जाती है। पालतू जानवरोंको रक्षाकी वैसी जरूरत नहीं रहती जैसी कि जङ्गलमें रहनेवालोको होती है। इससे पहले पालतूओंका स्वभाव शान्त और दूसरे जगलियोंका उग्र हो जाता है और उसीके अनुसार उनका शारीरिक संगठन होता है। कितने ही पेटके बल रेंगनेवाले जन्तुओंने रक्षाकी निरन्तर इच्छासे पैर पैदा कर लिये है। कितने ही तितलीकी जातिके कीडोंने पक्षियोंसे सुरक्षित रहनेकी इच्छासे अपने रग बदल लिये हैं—जिन वृक्षो पर वे निवास करते थे उन्हींके पत्तोंके जैसा रग अपने परोंका बना लिया है। कितनी ही मछलियोंने हिंसक जलचरोंसे अपने प्राण बचानेके लिए अपने शरीरमें पर पैदा कर लिये हैं। इसी प्रकार लता, वृक्ष और पुष्प भी अपनी आकृतिमें परिवर्तन करते पाये गये हैं। बहुतसे फूल मांसाहारी बन गये है और उनमें मक्खियो और कीट पतंगोंके पकड लेनेकी शक्ति उत्पन्न हो गई है। तात्पर्य यह कि मनःशक्तिके निरतर उद्योगसे प्राणियोंमें रक्षा आदिके लिए नये नये अवयव उत्पन्न हो जाते हैं और जब जिन अवयवोकी आवश्यकता नहीं होती तब वे अवयव क्रमश लोप हो जाते हैं।

---

* Mrs Annie Besant

\+ Darwin —

वास्तवमें ऐसा जान तो मनःशक्ति ही शरीरकी रचना करती है। इसी शक्तिके प्रभावसे हम मनुष्य बने हैं। अतएव गर्भाधान अथवा गर्भावस्थाके समय मातापिताकी जैसी मनःशक्ति होती है वैसी ही मनःशक्तिके सांचेमें सन्तान ढलती है। बालकके भी माताके स्वभाव तथा आचरणकी छाया बच्चे पर पड़ती है और वह स्वभावतः उसी रंगमें रंग जाता है।

१—अर्जुन और सुभद्रासे अभिमन्युका जन्म हुआ था। अभिमन्यु जिस समय गर्भमें था और सुभद्राका चित्त कुछ उदास था, उस समय अर्जुनने उसके मनोरंजनार्थ 'चक्रव्यूह'की रचनाका और उसको भेद करनेकी रीतिका वर्णन किया। महाभारतके युद्धमें कृष्ण, अर्जुन और द्रोणाचार्यके अतिरिक्त अन्य किसीको 'चक्रव्यूह'की रचना या भेद करनेकी रीति नहीं मालूम थी। कृष्ण और अर्जुनकी अनुपस्थितिमें द्रोणने चतुराईसे चक्रव्यूहकी रचना करके युधिष्ठिरसे कहलाया कि या तो व्यूहमें प्रवेश कीजिए, या कौरव पक्षको विजयपत्र लिख दीजिए। उस संकटके समय अभिमन्यु गर्भवासके समयके संस्कारसे सचेत हो उठा और उसने अभूतपूर्व वीरताके साथ 'चक्रव्यूह'में प्रवेश किया।

२—सारे यूरोपको भर्रा देनेवाले महान् वीर नेपोलियन बोनापार्टसे शायद ही कोई शिक्षित अनभिज्ञ होगा। उसके अत्यन्त वीरत्व और आश्चर्यजनक नैतिक कार्योंका वृत्तान्त किसे न मालूम होगा। कहते हैं कि जिस समय वह गर्भमें था उस समय उसकी माता वीरपुरुषोंके लिखे हुए और पुरुषोंके जीवन-चरित्र तथा ऐतिहासिक वीररसके साहित्यका अध्ययन किया करती थी। वह बड़े तेज घोड़े पर सवारी किया करती थी और अपने पतिके अधीन सैनिकों पर रानीके समान हुकूमत किया करती थी। उस उत्तम वीररसके साहित्यके पठन-पाठनका और उससे उत्पन्न हुए उच्च मानसिक विचारोंका प्रभाव उसकी गर्भस्थ सन्तान नेपोलियन पर पड़ा जिससे कि उसमें असाधारण शक्तियोंका विकास हुआ। *

३— चार्ल्स किंग्सले जिस समय गर्भमें था उसकी माताने अपने हृदयको शान्त और धर्मवृत्तिकी ओर फेरा। वह सांसारिक वैभव और सुखका परित्याग कर साधुभावसे रहने लगी। उसने नगरका निवास छोड़कर ग्राम-वास स्वीकार किया और वह अपना अधिक समय प्राकृतिक सौन्दर्य और प्रकृतिकी सभी

हरताके देखनेमें विताने लगी। माताने जान-बूझकर अपनी गर्भस्थ सन्तान पर प्रभाव डालनेके लिए इस आचरणपर चलना आरम्भ किया था। फल यह हुआ कि किंग्सले एक महान् पुरुष हुआ, सृष्टिसौन्दर्य पर उसने बहुत ही महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा और एक प्रतिष्ठित धर्माध्यक्षके रूपमें बड़ा भारी यश प्राप्त किया।

४—मेरी विनीशिया नामक एक अमेरिकन महिला अपना वृत्तान्त लिखती है—"मेरे प्रथम पुत्रके प्रसवके एक मास पहले एक घूम घूम कर किताबें बेचनेवाला आया। उससे मैंने एक पुस्तक खरीदी जिसमें इच्छानुसार मनःशक्ति द्वारा गुणवान् सन्तान उत्पन्न करनेकी रीति लिखी थी। प्रसवका समय निकट होनेके कारण मैं अपने पहले पुत्र पर यथेष्ट प्रभाव नहीं डाल सकी, इसलिए वह साधारण बुद्धिका उत्पन्न हुआ। पर दूसरा पुत्र मेरे गर्भमें आया तो मेरी इच्छा हुई कि उसे चित्रकारीमें कुशल और प्रवीण बनाऊँ। इस उद्देश्यसे मैं अमेरिकाके प्रसिद्ध नगरोंके चित्रालयोंमें जाती, वहाँके चित्रोंको प्रेमपूर्व देखती, सच्चे हृदयसे उनकी प्रशंसा करती और उनके बनानेका स्वय अभ्यास करती। इसका फल यह हुआ कि बच्चेमें चित्र-रचना सम्बन्धी शक्तिने पूर्णतया विकास पाया। इसके बाद दूसरे पुत्रके जन्मके पीछे तीसरी और चौथी सन्तानकी गर्भावस्थामें मैंने जिस जिस विषय पर अपनी मन॰शक्तिको लगाया उस ही उस विषयमें मेरी सन्तान योग्य उत्पन्न हुई।"*

५—श्रीकृष्ण और रुक्मिणीजीके प्रेमकी कथा सभी हिन्दू जानते हैं। दम्पतिमें जो घानिष्ठ प्रेम होता है उसका परिणाम सन्तान पर अवश्य होता है। कृष्ण और प्रद्युम्न (ज्येष्ठ पुत्र) को देखकर लोगोंको भ्रम होता था। वे कृष्णसे इतने मिलते जुलते हुए थे कि स्वयं कृष्णको सदेह हो गया था कि यह उन्हींकी शकलका दूसरा पुरुष कौन है। कृष्णका केवल रूप ही नहीं, किन्तु गुण भी प्रद्युम्नमें विराजमान थे।

६—वाशिंग्टन शहरके एक तरुण दम्पतिने अपनी सतानको सुन्दर बनानेकी इच्छासे एक सुन्दर बालकका चित्र खरीदा। वे दोनों समय समय पर उसे

---

* What a young wife ought to know by Mrs P Ignorance is not purity, but is often the cause of grossest impurity.

Evil is wrought by want of thought,
As well as by want of heart

देखा करते थे। यथासमय उन्हें पुत्रकी प्राप्ति हुई। वह बच्चा सर्वथा उस चित्रसे मिलता जुलता था।+

७—एक अँगरेजका एक आस्ट्रेलियानिवासिनी काले रंगकी स्त्री पर बहुत प्रेम था। वह उससे विवाह करके कई वर्ष तक हर्षपूर्वक उसके साथ रहा। इस स्त्रीके देहान्त हो जानेके कारण उसने इंग्लैंडमें एक गोरी मेमके साथ विवाह किया। पर जो पुत्र इस दूसरी गोरी स्त्रीसे उत्पन्न हुआ वह रंग * और रूपमें उसकी पहली स्त्रीके ही जैसा हुआ। कारण बतानेकी आवश्यकता नहीं। अँगरेज अपनी पहली स्त्रीको भूल न सका था। गर्भाधानके समय उस स्त्रीकी शकल उसके मस्तिष्कमें थी इससे उसका प्रतिबिम्ब संतानमें आया। +

८—रोममें एक प्रतिष्ठित पुरुषकी धर्मपत्नीके सोनेके कमरेमें एक हबशीकी तसवीर टँगी थी। उसे वह अकसर देखा करती थी। गर्भावस्थामें भी उसकी नजर उस पर पड़ा करती थी। फल यह हुआ कि उसके उस चित्रके अनुरूप पुत्र उत्पन्न हुआ। †

९—रोमका एक न्यायाधीश बहुत बदसूरत और छोटे कदका था। इसका पहला पुत्र भी इसीके समान बदसूरत और छोटे कदका हुआ। न्यायाधीशको सुन्दर पुत्रकी आकांक्षा थी। अतः उसने उस समयके विख्यात डाक्टर गैलनकी सम्मति ली। उक्त डाक्टर महोदयने उसे सलाह दी कि वह अपनी स्त्रीके सोने तथा बैठनेके कमरोंमें एक ऐसी बालककी सुन्दर प्रतिमा बनवाकर

+D F wler

* डाक्टर ब्रिस्टरके यहां कुछ योरपीय पक्षी थे। उन्होंने उनका रंग बदलना चाहा इसलिए एक कमरेको नीला रँगवा कर अर्थात् उसका फर्श छत और दीवारें आदि भी नीली कराके उसीमें उन पक्षियोंको रख दिया। कुछ दिनोंके बाद उनके दो बच्चे नीले रंगके पैदा हुए और फिर इन नीले रंगके बच्चोंसे बच्चे भी नीले ही रंगके पैदा होते रहे। घोड़े पालनेवाले सौदागर अपने इच्छानुसार बच्चे पैदा कराते हैं। गर्भ रखाते समय जिस रंग और रूपका घोड़ा घोड़ीके सामने खड़ा किया जाता है प्रायः उसी रंगका बच्चा पैदा होता है।

+ D Love † E. J Jamport ‡ Professor Killreott.

रखवा दे कि उसका ध्यान हर समय उस प्रतिमाकी ओर आकर्षित हुआ करे। उसने ऐसा ही किया और तब उसके जो सन्तान उत्पन्न हुई वह आशातीत सुन्दर थी।

जिस प्रकार और जितने अंशमें उत्तम मन शक्ति और प्रेमके प्रभावसे अच्छी संतान उत्पन्न की जा सकती है, उसी अंशमें बुरे आचरण तथा प्रेमके अभावसे बुरी दुर्गुणी संतान उत्पन्न होती है। इस बातको भली भाँति समझ लेना चाहिए कि यदि कोई जोडा बराबर अच्छा आचरण न रखता हो और विचार भी अपवित्र किया करता हो तो यह आशा करना कि गर्भके समय अथवा गर्भावस्थामें वह अपने आचरण तथा विचारोंको शुद्ध कर लेगा, व्यर्थ है। ठीक समय पर कोई अपनी मनःशक्ति पर प्रभुता नहीं जमा सकता। जैसा सदैवका अभ्यास होगा वैसे विचार उस समय भी उसके मस्तिष्कमें आवेंगे। अत. उत्तम सन्ततिकी आशा रखनेवाले दम्पतिको सदाचार और सुविचारोंकी आदत पहलेहीसे डालनी चाहिए।

१—एक स्त्री अपने बच्चेको निद्रा लानेवाली ओषधि देकर कहीं वाल या नाचमें चली गई और ओषधिकी मात्रा अधिक होनेसे इधर उस बच्चेकी मृत्यु हो गई। इससे स्त्रीको अत्यन्त दु.ख हुआ। उसका शोक दिनोंदिन बढ़ता ही गया। इसी शोकावस्थामें वह दूसरी बार गर्भवती हुई और इस गर्भावस्थामें भी शोकमग्न बनी रही। परिणाम यह हुआ कि बच्चा रोगी उत्पन्न हुआ और दो वर्षोंके बाद सिरकी पीडासे मर गया। स्त्री और भी शोकग्रस्त हुई। तीसरी बार गर्भ रहा और समय पर और भी अधिक रोगी बच्चा पैदा हुआ। छ॰ मासके बाद यह बच्चा भी जीवित न रह सका। माताकी निराशा और शोककी सीमा न रही। वह और भी गहरे शोकसागरमें गोता खाने लगी। इसी अवस्थामें चौथे बच्चेका जन्म हुआ। पूर्ण रूपसे सावधानीके साथ सँभालने पर भी दो वर्षके भीतर ही इस बच्चेको भी कालका ग्रास बनना पड़ा और अन्तको कुछ ही दिनों बाद इस स्त्रीका भी शोक और दु खके कारण देहान्त हो गया। ×

२—"मेरे तीन बच्चे मेरी गर्भावस्थाकी तीन जुदी जुदी स्थितियोंकी याद दिलाते हैं। पहले पुत्रके गर्भके समय मेरी मानसिक दशा अच्छी थी, मैं

× Dr. Fc
पे०–१८

सदैव प्रसन्नचित्त और प्रफुल्लित रहती थी। इससे मेरा पहला लड़का विशेष सर्वांगसुन्दर और बुद्धिमान् पैदा हुआ। दूसरे बच्चेके गर्भके आनेके समय मेरा पति शराबी बन गया था। मुझे उसका यह व्यसन नापसन्द था और उसकी ओरसे मुझे कुछ घृणा सी उत्पन्न हो गई थी। इससे मैं अप्रसन्न तथा उदास रहती थी। इस अवस्थामें मेरे दूसरे बच्चेने वृद्धि पाई और जन्म लिया। उसकी दशा सर्वथा मेरी उस अवस्थाके अनुकूल है। तीसरे बच्चेकी उत्पत्तिके समय मेरे पतिका दुर्व्यसन बहुत बढ़ गया था। उसके असभ्य और कुटिल व्यवहारोंसे मुझे अत्यन्त कष्ट भोगना पड़ता था। आर्थिक दशा भी बड़ी शोचनीय हो गई थी। मेरा विनोदप्रिय और प्रसन्न स्वभाव निराशा और शोकमें बदल गया था और मैं चिन्ताकी चिता पर दिन रात जलने लगी थी। अतएव मेरा तीसरा पुत्र रोगी निर्बल निराशा तथा शोकमय अवस्थामें ही उत्पन्न हुआ।" ×

३—एक स्वभावतः सुन्दर और नीरोग स्त्री अपने १४ वर्षके दुबले, पतले क्षीण और शक्तिहीन पुत्रको लेकर मेरे पास आई। पुत्रका पिता भी साथ था। वह भी अच्छा खासा बलवान था। दोनोंकी परीक्षा किये जानेके पश्चात् डाक्टरने स्थिर किया कि दम्पतिमें प्रेमका अभाव था। इस शक्तिके विकास न पानेकी वजहसे सन्तानमें अपूर्णता रही और ऐसा निकम्मा बच्चा पैदा हुआ। †

४—एक स्त्री अपनी १६ वर्षकी पुत्री डाक्टर फाउलरके पास लाई और कहने लगी कि यह लड़की अकसर रोया करती है और धार्मिक पुस्तकोंके अतिरिक्त अन्य किसी मनोरञ्जक या हास्यमय पुस्तकको कभी नहीं पढ़ती। डाक्टरने उसकी परीक्षा की तो पता चला कि उसमें दृढ़ स्वभाव प्रेम और प्रसन्नताकी शक्तियोंने विकास नहीं पाया था। उसकी माताससे पूछने पर मालूम हुआ कि उसने एक युवकके बनावटी प्रेमके फन्देमें फँस कर उससे

× \ tell grace no seemingness, a benevolence could ad th told What she was that her hlld was. What h had mad herself h had made her child. What she had become th t her hild became also. In bei g born the hild bec m all that.

† Dr l ler

विवाह कर लिया था, किन्तु थोड़े ही दिनों बाद उसका असली स्वभाव प्रकट हो जानेसे वह पतिसे विमुख रहती, उसके नाम पर रोया करती और बाइबिल पढकर अपने मनको मारे रहा करती थी। ऐसी ही अवस्थामें उसे वह पुत्री पैदा हुई थी।

ऐसे ही अनेकानेक उदाहरण मौजूद हैं। गुण और दुर्गुण दोनों ही माता-पितासे बच्चोंमें आते हैं। अच्छे संबंधसे अच्छी सन्तान और बुरे माता-पितासे बुरी सन्तान पैदा होती है। मन शक्तिका अच्छा या बुरा प्रभाव निर्विवाद है। प्रेम और मन शक्तिके अतिरिक्त थका देनेवाले कार्यसे, अथवा एकदम बिना काम किये ही हाथ पर हाथ रक्खे बैठे रहनेसे, रोगीकी शुश्रूषा करनेसे, बन्द और बिना हवाके मकानमें रहनेसे, श्वास रोकनेवाले कामके करनेसे, अनियमित आहार-विहार तथा परिश्रमसे गर्भस्थ बच्चे पर बहुत बुरा प्रभाव पडता है।

(घ)-संतानका पालन-पोषण और शिक्षण।

"If a society expands beyond its power of organisation, it suffers (as Nepoleon said, all empires die) from indigestion"

—*G H Perris.*

इस पुस्तकके पहले ही परिच्छेदमें बतलाया जा चुका है कि प्रत्येक स्त्री-पुरुपमें शारीरिक, मानसिक और आत्मिक योग्यता होनेसे ही वह स्त्री या पुरुप कहलानेका अधिकारी हो सकता है। यदि मनुष्यमें मनुष्यके गुण न हुए तो वह फिर मनुष्य कहाँ रहा ?

जब बालक ससारमें आता है तब केवल सामाजिक और पैतृक संस्कारोंको लेकर आता है, किन्तु वह अयोग्यता और अविद्या आदिका पुज ही होता है। माता, पिता, गुरु, पुरोहित आदि शिक्षक उसे उक्त दुरवस्थासे अनेक प्रयत्नों और साधनोंसे निकालते हैं। जन्मसे अच्छे सस्कारोंके होते हुए भी–हृष्टपुष्ट, आरोग्य और उत्तम कुल तथा जातिमें उत्पन्न होते हुए भी–बिना अनेक विभूतियों और उत्तम गुणोंसे युक्त हुए, मनुष्य मनुष्यकी पंक्तिमें नहीं बैठ सकता।

शारीरिक तथा मानसिक शक्तियोंको पुष्ट करने तथा बढ़ानेके अनेक साधन हैं। इन साधनोंमें संपत्ति प्रधान है। संसारमें बिना सम्पत्तिके कोई कार्य नहीं किया जा सकता। सम्पत्तिकी ही सहायतासे बच्चोंके पालन-पोषण तथा शिक्षणका उचित प्रबन्ध किया जा सकता है।

संसारके प्रत्येक कार्यके लिए शारीरिक बलका होना आवश्यक है। इस शक्तिका बढ़ना अच्छे आहार स्वच्छ वस्त्र, पवित्र जल और वायु साफ और हवादार मकान व्यायाम कामकी आशा और स्वतन्त्रता पर निर्भर है। इसके अतिरिक्त कार्यकुशल होनेके लिए नाना प्रकारकी शिक्षायें इनके भिन्नभिन्न व्यवसायी राजनीतिज्ञ पण्डित वा वैज्ञानिक आदि सबको उनके व्यवसायों वा आवश्यकताओंके अनुसार मिलनी चाहिए। बिना शारीरिक बल और मानसिक शक्तियोंको बढ़ाये संसार-यात्रा नहीं हो सकती। जैसा कि ऊपर कहा गया है मनुष्य केवल जन्मसे ही मनुष्य नहीं हो सकता, मनुष्यमें मनुष्यके गुण होने चाहिए।

संसारका कोई शिक्षण-संस्था बिना गुरु वा पुरोहित-उचित साधनोंकी सहायताके बिना कुछ नहीं कर सकता। यदि सम्पत्तिका ही अभाव हो अथवा बच्चोंके पालन-पोषणके लिए खाद्य पदार्थोंकी कमी हो तो फिर जन्मसे उत्तम संस्कार पाये हुए बालकका जन्म भी वृथा हो जाता है। यदि बालकका पालन-पोषण और शिक्षण उचित रीतिसे न हो सका तो ऐसे बच्चोंके जन्म लेनेसे क्या काम?

यह बड़ा ही अपूर्व प्रश्न है। इसका हल करना कठिन ही नहीं असम्भवसा है। बच्चोंके भोजनके लिए खाद्य पदार्थ रहनेके लिए स्थान शिक्षाके लिए द्रव्य कृषिके लिए भूमि और व्यापारके लिए नये बाजार कैसे मिलें? इस जीवन-संग्रामको इस संघर्षको मिटानेके लिए कोई एक निश्चित रास्ता न आज तक मिला है और न मिलेगा। प्रत्येक समयमें प्रत्येक जाति वा देशके मनुष्योंको इस प्रश्नको अपनी सुविधाओं और बुद्धिके अनुसार हल करना पड़ा है।

डारविन और माल्थसका समय भी अब नहीं है। भूमण्डल मानवजातिसे भर गया है। अब अधिक वृद्धि होना असंभव हो गया है। इस पृथ्वीकी सब-से बड़ी और महान् जातियोंकी जनवृद्धि केवल कम ही नहीं हो गई है बल्कि रुक भी गई है। अर्थशास्त्रियोंका ध्यान बदनाम है कि वे कृत्रिम उपा-

योंसे जनवृद्धि रोकते है, इसीसे वहॉकी जनसख्यामें वृद्धि नहीं होती। ज्यादती सभी बातोंकी वुरी है, सो फ्रान्स-निवासी जन-निरोधमें ज्यादती करते हैं इसमें कुछ सत्यता अवश्य है, किन्तु जनसख्या तो सभी देशोंकी स्थिर सी हो गई है। लगभग सभी देशोकी जनसख्यामें बहुत कम वृद्धि हो रही है। हमें इस विपयमे केवल सुनी हुई वातो पर विश्वास न करना चाहिए। ऐसे गम्भीर प्रश्नों पर खूब जॉच कर विचार करना चाहिए.—

आगेके नकशेसे यह भ्रम दूर हो जाता है कि जर्मनीका वल उस देशकी जनवृद्धिसे वढा है और फ्रासवालोका वल जन-निरोधमे घट गया है। जनवृद्धि

जन्म-मृत्युसंख्या और वृद्धि प्रति हजार। *

	ईंग्लैण्ड		जर्मनी		फ्रास +	
	१८७६ ई०	१९०९	१८७६	१९०९	१८७६	१९०९
जन्मसख्या	३६ ३	२५ ६	४० ७	३२ ९	३४ ७	१९ ६
मृत्युसख्या	२० ९	१४ ५	२५ ४	१७ ८	१९ ३	९ २
जनवृद्धि	१५ ४	११ १	१५ ३	१५ १	१५ ४	१० ४

न तो जर्मनीमें अधिक है और न ईंग्लैण्डमें। प्रत्येक देशकी जन्मसख्या पर विचार करनेसे यह बात और साफ हो जाती है कि सभ्य जातियोंमें सन्तान-वृद्धिमें वरावर कमी होती जा रही है। जन्मसख्यामें कमी होना इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि आगे वतलाये हुए देशोंमें दूरदर्शितासे उतनी ही सन्तानोत्पत्ति की जाती है जितनोंके पालन-पोपणका उचित प्रवन्ध हो सकता है। भारतमें अवश्य ही अन्धाधुन्दी है। भारतकी जन्मसंख्या घटनेके वदले वढ़ती नजर आती है।

उत्तम सन्तान पैदा करना अति उत्तम है, किन्तु एक हद तक। हदके बाहर जानेसे लाभ छोड सदैव हानि ही होती है। सभी स्त्री-पुरुषोंके जीव-

* History of War & Peace by Perris, page 245

+ From Periodicals.

भर्में चाहे न कितनेही धनाढ्य और आरोग्य हों एक समय आता है जब उन्हें अधिक सन्तानकी आवश्यकता नहीं रहती और सन्तानका बोझ उनके स्वास्थ्यके लिए वा स्वयं सन्तानके लिए हानिकर होता है। कुछ लोग ऐसे हैं जो एक नियमित संख्याका ही पालन पोषण और शिक्षण कर सकते हैं। जिनमें दो बच्चोंके पालने तथा शिक्षित बनानेका सामर्थ्य है उन्हें यदि एक दर्जन बच्चे हो जायँ—जैसा कि बराबर होता है—तो उनकी तथा उन बच्चोंकी क्या दशा होगी यह बतानेकी आवश्यकता नहीं।

जन्मसंख्या प्रति हजार।*

सन् ई०	इंग्लैण्ड	जर्मनी	फ्रांस
१८७१—८०	३५४	४०७	२५४
१८८१—८५	३३५	३७०	२४७
१८८६—९०	३१४	३६५	२३१
१८९१—९५	३०५	३६३	२२३
१८९६—९९	२९३	३६०	२२२
१९०१—१९०५	२८१	३४३	२१२
१९०७—	२६३	३३३	१९७
१९११—	२४४	२८[illegible]	१८७

सन्	भारत ×
१८९९	४२७६
१९००	३६५६
१९०१	३७७१
१९०२	३९३६
१९०३	३८७६
१९०४	४०८५
१९०५	३७४६
१९१५	३७८२
१९१६	३७११

* History of War & Peace by G. H. Perris, page 244.

× Statistical Abstract of British India, Page 228-237

अपने बच्चोंके पालन-पोषण कर सकनेकी और उन्हें शिक्षण दे सकनेकी शक्ति तक ही सन्तान पैदा करनेसे भारतका कल्याण हो सकता है। इसके बाहर जानेसे नैपोलियनके कथनानुसार राष्ट्रोंको बदहजमीका रोग हो जाता है जिसकी यदि दवा न की गई तो मृत्यु हो जाती है।

ऐसे रोगकी महान् औषधिका नाम है जन-वृद्धि-निरोध। एक अति उत्तम रीतिका वर्णन ऊपर हो चुका, पर वह काफी नहीं है, इससे अब दूसरे उपायों पर विचार करना उचित है।
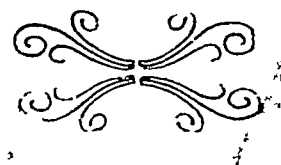
सातवाँ परिच्छेद।

ब्रह्मचर्य्य या इन्द्रिय निरोध।

Looking back over the procession of the ages, the flux and reflux of populations, the building up and collapse of States, we are driven to the conclusion that every function of society at every stage of its growth is affected by density of population, and the margins of free land. And since we are limited to this planet the whole process of expansion is necessarily modified as the filling up of the earth nears completion. —*Herbert Fisher*

समयकी धारा पर जनसंख्याके बढ़ने और घटनेके इतिहास पर, संसारमें बड़े प्रधान राज्योंके बनने और बिगड़ने पर दृष्टि डालनेसे विवश होकर मानना पड़ता है कि हम समाजके प्रत्येक कार्यमें समाजकी प्रत्येक अवस्थामें जनसंख्याकी अधिकता और भूमिकी न्यूनताका प्रश्न उपस्थित रहा है। और चूंकि हमारा निवासस्थान यही एक भूमण्डल है इसलिए ज्यों ज्यों पृथ्वी मानव-जातिसे भरनेके निकट आती जायगी त्यों त्यों जनवृद्धिकी प्रगतिके रूप या रीतिमें परिवर्तन करना होगा। —हर्बर्ट फिशर।

छोटा या बड़ा जो कुछ कार्य हम करते हैं और सोचते विचारते हैं वह हमारे हृदयके अन्तरमें गंभीरतम भावसे अंकित रहता है। उसका फल केवल हमीं तक नहीं रह जाता वरन् पत्थर फेंकनेसे उठी हुई समुद्रकी लहरकी भांति वंशानुक्रमसे क्रमशः विस्तार पाता हुआ अनन्त कालतक बना रहता है। इससे हमारी सन्तान-संततियोंमें और उनके संसर्गसे समाजमें हमारे कर्मोंके फल चिरकाल तक विद्यमान रहते हैं।

निकम्मापन या अनुचित कर्म एक संक्रामक व्याधि है जिसका विस्तार समाजमें और सब व्याधियोंसे अधिक होता है। इसका परिणाम हम लोगोंके

आवयविक गठनको भी विकृत करता है और यत्न-वर्द्धित पैतृक सम्पत्तिकी भाँति पुत्रपौत्रानुक्रमसे सन्ततियोंमें भी व्याप्त होता है। जब हमें अपने ही किये हुए कार्य्यसे अपनी क्षति नहीं सुहाती तब यह कितना अनुचित है कि हम जान-बूझ कर अपनी त्रुटिसे, अपनी असावधानीसे, अपनी स्वार्थवृत्तिसे अपनी भावी सतानको, समाजको, या सारे देशको क्षतिग्रस्त कर दें, उन्हें अवनतिके गढ़ेमें गिरा दें। यह कितनी बड़ी कृतघ्नताका कार्य्य है कि जिस मातृभूमिके अन्नसे हम पले हैं, और जिन देशबन्धुओंके यत्नसे, सौजन्यसे हम प्रतिदिन अपने शरीरको पुष्ट कर रहे हैं उनके उपकारके लिए, उनकी उन्नतिके लिए कुछ न करके हम उलटे उनके अनिष्ट और ध्वंसके लिए बीज बो देते हैं।

प्यारी मातृ-भूमि, मैं इसकी साक्षी तुझीसे दिलाता हूँ कि क्या तेरी इस अधोगतिका कारण स्वय तेरी ही सतान नहीं है? वंश-वृद्धिके पक्षपाती प्यारे देशबन्धुओंसे भी मैं सविनय पूछता हूँ कि क्या बहुसख्यक, क्षीण, हीन, निस्तेज, रुग्ण, और जीवनशक्तिविहीन सन्तान उत्पन्न करना ही प्रजावृद्धिका मूल उद्देश्य है?

जीवात्मा नित्य हो या अनित्य, इस विचारका यहाँ प्रयोजन नहीं, पर इतना तो प्रत्यक्ष है कि क्रमविकाशपथसे मनुष्य क्रमश. हीनतर अवस्थासे उन्नततर अवस्थाको प्राप्त होता है। क्रमविकाश डारविन साहबका अविष्कार नहीं है। हमारे देशमें यह पूर्वकालसे माना जाता है। आप क्रमविकाश स्वीकार करें या न करें, पर मनुष्यके वंशानुक्रमकी उन्नति तो आपको माननी ही पड़ेगी। प्रजावृद्धिके साथ साथ मनुष्यकी शारीरिक, मानसिक और नैतिक वृद्धि दिनोंदिन होती रहनी चाहिए। यदि प्रजा-वृद्धिसे हम पारिवारिक और सामाजिक अवस्थाका परिवर्तन उन्नतिकी ओर कर सकें तो प्रजावृद्धि सार्थक है, अन्यथा यह कार्य कामचिन्ताका पक्षपात है। इस बुरे दुर्व्यसनको छोड़नेका साधन है इन्द्रियदमन, इन्द्रिय-निरोध या ब्रह्मचर्य।

भारतवर्षीय या पाश्चात्य शरीर-तत्त्ववित् पण्डित एक स्वरसे स्वीकार करते हैं कि रक्तका अंतिम सारभाग शुक्रमें परिणत होता है और दूधमें मक्खनकी नाई रक्तके प्रत्येक भागमें वर्तमान रहता है। दूधको मथकर सारभूत मक्खन निकाल लेनेसे जैसे दूध निकम्मा होजाता है वैसे ही शुक्रके निकलनेसे रक्त भी निकम्मा हो जाता है। जितना ही शुक्र निकलता है उतना ही रक्तका निक-

व्यापन करता है। जो लोग रक्त अथवा शरीरके इस परमोत्कृष्ट अंशकी रक्षा करते हैं उनकी मस्तिष्क शक्ति विशेष रूपसे बढ़ती है।

सुप्रसिद्ध डाक्टर निकल्सनका मत है कि "शुक्र शरीरका राजा है। जिन स्त्रीपुरुषोंका जीवन पवित्र और संयत होता है उनके शरीरमें यह पदार्थ व्याप्त होकर उन्हें अधिकाधिक साहसी, उद्यमशील, दीर्घायु और आनन्दकी मूर्ति बनाता है और इसका व्यय उनको दुर्बल और अस्थिर-चित्त बनाता है। इससे उनकी शारीरिक और मानसिक शक्तियोंका ह्रास होता है, शरीर-यन्त्रकी क्रिया विनष्ट होती है और इसका अंतिम परिणाम है मृत्यु।"

भारतवर्षमें विद्यारम्भ-संस्कारके समय बालकोंको ब्रह्मचर्यकी महिमाका सदुपदेश दिया जाता था *। आचार्य शिष्योंको प्रतिदिन ब्रह्मचर्यव्रत पालन

---

* तू आजसे ब्रह्मचारी है। नित्य सन्ध्योपासन कर। भोजनसे पूर्व शुद्ध जलका आचमन किया कर। दुष्ट कर्मोंको छोड़ धर्म किया कर। दिनमें शयन कभी मत कर। आचार्यके अधीन रहकर नित्य सांगोपांग वेद (आजकल समयके अनुसार जो शिक्षा प्रचलित हो और जो विद्यार्थी पढ़ता हो वही शिक्षा वेदके स्थानपर जानना।—लेखक।) पढ़नेमें पुरुषार्थ किया कर। एक एक वेद सांगोपांग पढ़नेके लिए बारह बारह वर्ष इस तरह कुल ४८ वर्ष चाहिए। जब तक तू पूरे तौरसे वेदोंको पढ़ न ले अखण्ड ब्रह्मचारी रह। आचार्यके अधीन धर्माचरणमें रहा कर किन्तु यदि आचार्य अधर्म करनेका उपदेश करे तो उसे कभी न कर। क्रोध और मिथ्याभाषण मत कर। आठ प्रकारके मैथुन (जो आगे बतलाये हैं—ले०।) न करना। भूमिमें शयन करना पलंग पर न सोना (किन्तु ऐसा नहीं है कि पलंग पर सोनेवाला ब्रह्मचारी बन ही न सके। हाँ भूमि पर या शय्या पर सोनेसे कामकी ओर प्रवृत्ति कम होती है—ले०।) गाना बजाना नृत्य गन्ध और अंजन (गाना-बजाना बुरी सोहबतमें पड़ गया है वास्तवमें यह एक सुन्दर और आवश्यक विद्या है—ले०) अति स्नान अति भोजन अति निद्रा अति जागरण निन्दा लोभ मोह, भय शोक और ग्लानि मत ग्रहण कर। रात्रिके चौथे प्रहरमें जाग। नित्यक्रिया स्नानादिसे निवृत्त हो ईश्वरप्रार्थना और उपासनाका आचरण नित्य किया कर। मांस रूखा शुष्क अन्न मद्य मत खा पी। तेल मत मल। अतिकटु तीखा कसैला क्षार और रेचक द्रव्योंका सेवन मत कर। नित्य युक्तिसे आहार-विहार करके सुशील थोड़ा बोलनेवाला सभामें बैठने योग्य गुण ग्रहण कर। —दयानंद सरस्वती।

करना सिखाते थे। उनको इस पुनीत मार्गसे विचलित नहीं होने देते थे और प्रत्येक बालक अखण्ड ब्रह्मचर्य्यव्रत—जो पुरुषोंके लिए ४८ वर्ष तक और स्त्रियोंके लिए २४ वर्ष पर्यंत नियत था*—पालन करके गृहस्थाश्रममें प्रवेश करते थे। वेदोंमें, श्रुतियोंमें हम ब्रह्मचर्य्यकी महिमा नित्य ही पढते थे, पर दुर्भाग्यसे समयने ऐसा पलटा खाया कि जिस एकके साधनसे हम लोगोंका सब साधित होता था उस ब्रह्मचर्य्य-साधनका विधान ही लुप्त हो गया।

हम लोगोंको स्वास्थ्य-रक्षाके लिए कभी कभी विद्यालयमें और कभी कभी घरमें उपदेश मिलता है, उत्तम पुष्टिकर खाद्यनिर्वाचनकी वैज्ञानिक प्रणाली बताई जाती है, अज्ञान दूर करने तथा मानसिक शक्तियोंके विकासके लिए अनेकानेक विद्याओंका अभ्यास कराया जाता है, पर हाय! ब्रह्मचर्य अथवा शुक्रधारण करना किस पक्षीका नाम है यह हमें कभी नहीं बताया जाता। माताजी स्त्री ठहरीं, भला वे इस लज्जास्पद विषयका भाषण कैसे करें! पिताजी भी बालकके सम्मुख ऐसी बातें करते लज्जित होते हैं। वे समझते हैं कि ऐसी बातोंसे बालक निर्लज्ज हो जायगा, और कदाचित् इस अश्लीलताके ज्ञानसे यह बुराई सीख जायगा, अत इस विषयमें उसे अन्धकारहीमें रखना ठीक है। अँगरेजी विद्यालयोंने इस विषयको सभ्य न समझकर पाठ्य पुस्तकोंसे निर्वासित कर दिया है, अब रहे बडे भाई, बहिन और मास्टरसाहब, सो उन पर भी माता और पिताजीका ही रग चढा है। वे ऐसे शब्द उच्चारण करना अनुचित समझते हैं,—चलिए किस्सा खतम! अब इस विषयकी झाँकी हमें किसी मूर्ख, अनुभवहीन और कदाचित् दुष्ट सहपाठीसे मिलेगी। आजकल स्कूल और कालेजोंकी जो व्यवस्था है उसे न तो कलम लिख सकती है और न कोई प्रेस छापनेका साहस ही कर सकता है। रोमके साक्षात् राक्षस 'निरो' × का भी चरित्र आजकलके कतिपय उच्च-शिक्षा-लाभ करने-

* सस्कारविधि, पृष्ठ ९९।

× "निरोका जन्म बहुत ही दुर्गुणी माता-पितासे हुआ था। दुर्गुण उसे जन्मसे ही विरासतमें प्राप्त हुए थे। ससारमें इससे अधिक अधम विषयी नर नहीं पाये गये। माता और भगिनी तकसे अपनी वासना तृप्त करनेमें इसने सकोच नहीं किया था। हत्या आदि करके अपनी वासना पूरी करना तो इसके लिए बायें हाथका खेल था।"—*History of Rome by H Austin*

वाले विद्यार्थियोंके मौकाविमोच कुम्भोंके सम्मुख रख जायगा। जो स्कूलों और कालेजोंमें पढ़े हैं और प्रेम और हमसवी हवा मित्रमण्डलीमें जा चुके हैं वे ही आजकलकी इस गिरी हुई अवस्थाका अनुभव कर सकते हैं।

इसमें हमारे युवकोंका अधिक दोष नहीं। उनके क्षीण शरीर दुर्बल भेम शिथिल मुखमण्डल कान्तिहीन दृष्टि कम्पित वाणी उदास मन और उत्साह-हीन हृदयके उत्तरदाता उनके माता पिता और शिक्षक ही हैं। यह इस विषयकी भयानकताका प्रमाण बस है कि जो इस अभागे भारतमें १५ वर्षकी बूढ़ा स्त्रियोंकी और १६ वर्षके शिथिल अशक्त और पौरुषहीन युव-कोंकी कमी नहीं है।

जमीन पर चलते हुए कुत्तोंसे गिरते हुए, पानीसे बहते हुए, और गिरते हुए मकानोंके नीचे दबते हुए स्त्री-पुरुषोंको बचानेके लिए लोग अपनी जानको भी जोखिममें डाल कर उनकी सहायतामें तत्पर हो जाते हैं। आप अपने बालकोंको कुत्ता सर्प व्याघ्र आदि हिंसक जानवरोंसे बचानेकी बहुत ही चिन्ता करते हैं। तरह तरहकी भयानक व्याधियों चोरों और डाकुओंसे बचानेके लिए भी आप कोई यत्न उठा नहीं रखते; किन्तु बड़े ही दुर्भाग्यकी बात है कि इस सबसे अत्यन्त भयंकर व्याधि पर—जो घुन ही सा कर देती है—उस हत्यारे डाकू पर—जो आपके युवक और युवतियोंका जीवन-सर्वस्व लूटे जा रहा है—आप नजर भी नहीं डालते—उसके दमनका कोई भी यत्न नहीं करते। आपकी सन्तान और उसके संसर्गसे सारा समाज इस दुर्व्यसनके विनाशक प्रबल स्रोतमें बहा जा रहा है—अधःपतनके गहरे गढ़ेमें गिरता जा रहा है किन्तु आप इसके लिए कोई उद्योग नहीं करते। खास कर आपके दुष्कार्यों और असावधानियोंसे आपकी सन्तान और भी अधिक दुर्दशापन्न हो रही है। यदि आप उनके उद्धारके लिए भी जानसे कोशिश न करेंगे तो इसका प्रायश्चित्त आपहीके देशको भोगना होगा।

इस समय अखण्ड ब्रह्मचारी भीष्म पितामहकी सन्तानको ब्रह्मचर्य पालन करनेमें ही हानि सूझने लगी है। कितने ही पढ़े-लिखे कहलानेवाले लोगोंको मैंने यह कहते सुना है कि शुक्र रोकनेसे फायदा नहीं। शुक्रको शरीरसे न निकलने देनेसे वह स्वप्नदोषादिकके द्वारा निर्गत होजाता है और जैसे शुक्रके अधिक अपव्यय करनेसे प्रमेह आदि रोग उत्पन्न होते हैं वैसे ही उसको एकदम रोकनेसे भी बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं।

ऐसा कहनेवालोंकी यह धारणा होती है कि शुक्र शरीरके किसी निर्दिष्ट स्थानमें सञ्चित रहता है और क्रमशः अधिक सञ्चय हो जानेसे वर्षाकालमें पूर्णोदर सरोवरके समान तट भेदकर उसके प्रवाहित होजानेकी सम्भावना रहती है। पर हम पहले देख आये हैं कि शुक्र तिलमें तेलकी भांति रक्तके प्रत्येक कणमें वर्त्तमान रहता है। दूधको मथनेसे जैसे नवनीतकी उत्पत्ति होती है वैसे ही काम-चिन्ताके द्वारा रक्तका किसी विशेष रूपसे आलोडन होनेसे वीर्य्य अण्डकोषमें सञ्चित होता है और रतिक्रियादिके द्वारा हमारी जीवनी शक्तिके साथ निर्गत होता है।

स्वप्नकी प्रवृत्ति दैवात् नहीं होती। अर्ध निद्रा या तन्द्रावस्थामें हम लोगोंकी चिन्ता स्वप्नमें परिणत होती है। स्वप्न स्वाधीन नहीं है। यह चिन्ताके और किसी कारणसे निद्रा ठीक तरह पर न आनेके अधीन है। भोजनके न पचनेसे, कब्ज रहनेसे और चिन्तामें निमग्न रहनेसे ही स्वप्न आते हैं। स्वस्थ मनुष्योंको स्वप्न नहीं आते *। स्वप्न रोगका लक्षण है। चिन्ता भी स्वाधीन नहीं कही जा सकती। जिसका जीवन जिस प्रणालीसे प्रचलित होता है उसकी चिन्ता भी उसीके अनुकूल होती है। जो सतर्क भावसे कभी कुपथकी सेवा नहीं करता, स्वप्नमें भी उसकी चिन्ता कुपथ-परिचालित नहीं होती। जिसने अपने मनको अपवित्र विचारोंसे दूषित नहीं किया है और जिसका शरीर रोगग्रस्त नहीं है उसको स्वप्नदोषकी आशंका नहीं।

परमहंस रामकृष्णने सकाम भावसे धन और स्त्रीका कभी स्पर्श नहीं किया था। आपको कभी स्वप्नमें भी कुचिन्ता उत्पन्न हो यह तो हो ही नहीं सकता था, पर कहते हैं कि यदि गाढ निद्रावस्थामें भी कोई उनके शरीरसे रुपया या स्त्रीका स्पर्श कराने जाता था तो उनका शरीर उस पदार्थसे संकुचित होकर धनुषाकार हो जाता था।

शुक्र जब प्रत्येक अवयवमें रक्तके साथ वर्त्तमान है और बिना काम-चिन्ताके उससे पृथक नहीं हो सकता, तब उसका आपसे आप निकल जाना असम्भव

---

* अमेरिकाके ग्रामोफोन आदि यन्त्रोंके सुप्रसिद्ध आविष्कारक टामस एडिसन नियमपूर्वक जीवन व्यतीत करने और अपनी शारीरिक दशा अच्छी रखनेके कारण कभी स्वप्न नहीं देखते। उनकी आयु ७० वर्षकी हो चुकी है।

है। यह मान लेना चाहिए कि शारीरिक बलसे शुक्र-रोध करनेकी चेष्टाको ब्रह्मचर्य्य नहीं कहते। ब्रह्मचर्य्य मानसिक व्यापार है जिसके बिना शारीरिक कार्य्य हो ही नहीं सकता। कदाचित् वह मनुष्य ब्रह्मचारी कहा भी जा सकता है जो अपनेको वशीभूत और अनासक्त रखकर शरीरके द्वारा कभी सांसारिक कर्म्म कर लेता हो; किन्तु जिसका मन वशमें नहीं वह शरीरसे इन्द्रिय-निरोध करते हुए भी व्यभिचारी है। अपवित्र चिन्तामें निमग्न रहनेवाले ऐसे ही ब्रह्मचारियोंको स्वप्न-दोष अथवा प्रमेहादि रोग हो जाते हैं।

गीतामें लिखा है कि जो लोग व्रतनियमके द्वारा इन्द्रियोंकी शक्तिका ह्रास करके उनको बलपूर्वक अपने विषयोंसे प्रतिनिवृत्त करनेकी चेष्टा करते हैं वे किसी प्रकार इसमें समर्थ तो हो जाते हैं किन्तु उनकी मानसिक विषयासक्ति नहीं जाती। इस प्रकार यदि कोई बाह्यदृष्टिसे विषयसे पृथक् रहकर मन-ही-मन उसमें लगा रहे तो वह मिथ्याचारी कहलाता है। इन्द्रिय-निरोध चित्तवृत्ति-निरोधसे ही हो सकता है। अन्यथा मानसिक विकारसे विकृत हुआ वीर्य्य रक्तसे पृथक् होकर कोषमें एकत्रित होता है और शारीरिक चेष्टासे बाहर न किये जानेके कारण स्वयं बाहर निकलनेकी चेष्टा करता है और स्वप्नदोष शुक्रमेहादि रोगोंके द्वारा बाहर निकलने लगता है। रक्तसे पृथक् होकर अण्डकोषमें आजानेके पश्चात् वीर्य्य पुनः रक्तमें नहीं लौटाया जा सकता।

ब्रह्मचर्य्य केवल शारीरिक अथवा मानसिक अध्यवसाय मैथुन त्याग परता पर प्रतिष्ठित नहीं है; वह तीनोंके समवायसे सिद्ध होता है। हमारे शास्त्रकारोंने बहुत ही उत्तम रीतिसे इसका स्वरूप बतलाया है—

स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्।
सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृत्तिरेव च॥
एतन्मैथुनमष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः।
विपरीतं ब्रह्मचर्यमेतदेवाष्टलक्षणम्॥

स्मरण कीर्तन केलि प्रेक्षण गुह्यभाषण संकल्प अध्यवसाय और क्रिया-निवृत्ति ये आठ प्रकारके मैथुन हैं। इन सबोंसे निवृत्त होना ब्रह्मचर्य है।

१ स्मरण। विषयकी पुनःपुनः चिन्ता करना पूर्वकृत दुष्कर्म्मोंको फिर फिर याद करना प्रेमपात्र पर आसक्त हो उसके दर्शन चुम्बन आलिङ्गन या समागमके लिए व्यग्र रहना या इसी प्रकारकी विषय-चिन्तामें निमग्न रहना

एक प्रकारका मैथुन है। इससे रक्तसे वीर्य्य पृथक् होनेमें सहायता मिलती है और ऐसी चिन्ता करते करते स्त्री पुरुष अन्तको विषयवासनामें फँस जाते हैं।

पुन पुनः काम-विषयिणी चिन्ता या पूर्वानुष्ठित दुष्कार्यों का स्मरण अधःपतनका प्रथम सोपान है, और ऐसी कठोर शृखला है कि इसमें एकबार बँध जानेसे फिर छूटना अत्यन्त कठिन हो जाता है। हम प्रतिदिन ऐसे कितने ही मनुष्योंको देखते हैं जो मनुष्य नामसे परिचित होने योग्य नहीं हैं। नीति, रीति, शिष्टाचार, सद्व्यवहार, लज्जा, समाजका भय आदि सभी उत्तम कार्योंका करना उनके लिए असम्भव व्यापार है। वे जानते हैं कि उनका व्यवहार उनका आचरण, उनका काम सज्जनतासे परे है, पर मनकी गति ऐसी कठिन है कि एक बार किसी बुरे विषयमें आसक्त होजानेसे उसकी निवृत्ति दुर्लभ हो जाती है। इससे ये मनुष्य छुटकारा न पाकर दिनोंदिन और भी गिरते जाते हैं।

कुचिन्ता उत्पन्न होते ही उसको रोकनेका प्रयत्न करना चाहिए। यदि यह कुछ कालके लिए मनमें रह जायगी, यदि दश पाँच वार ऐसी चिन्ताको उपस्थित होनेका अवसर दिया जायगा, तो यह पत्थरकी लकीरकी तरह मस्तिष्कमें अपना स्थान बना लेगी और स्थायी रूपसे वास करने लगेगी। किन्तु यदि प्रथम ही आक्रमणमें यह रोक कर कुचल दी जायगी तो इसका वेग जहाँका तहाँ रह जायगा। आरम्भमें कुचिन्तारूपी शत्रु पर विजय पाना उतना ही सहज है जितना उसके अभ्यास हो जाने पर उसे दूर करना कठिन होता है।

प्रकृतिका यह एक नियम है कि संसारका कोई स्थान किसी समय खाली नहीं रहता। एक वस्तु हटानेसे दूसरी वस्तु वहाँ तुरन्त ही आ उपस्थित होती है। किसी कुचिन्ताको हटानेके लिए यह परमावश्यक है कि कोई दूसरी सच्चिन्ता उसका स्थान रोक ले। अन्यथा मस्तिष्क विचारोंसे खाली न रहेगा, लाख उद्योग करनेपर भी, यदि सद्विचार कुविचारके स्थानपर आरूढ़ न किया जायगा तो कुविचार कदापि न हटाया जा सकेगा। वह वारंवार आक्रमण करेगा और किले पर दखल जमा लेगा।

अँगरेजीमें एक प्रवाद है कि "शून्य मन भूतोंकी क्रीड़ा भूमि है।" अतः मनको सर्वदा सच्चिन्तामें निमग्न नहीं रखनेसे उसमें आप-ही-आप किसी कुचिन्ताका आविर्भाव हो जाता है। यदि बैठे बैठे एकाएक किसी कुचिन्ताका आवि-

भाव हो और यदि उसका प्रथम वेग सँभालना कठिन जान पड़े तो तत्काल ही अपने आसनसे उठ पड़ना चाहिए और क्षणभरके लिए दौड़ जाना चाहिए। मन जब तक स्थिर न हो तब तक निर्जनवास करना उचित नहीं। उस समयके निर्जनवाससे तरह तरहकी कुचिन्ताओंके आनेकी संभावना है। अतएव ऐसी अवस्थामें बहुतसे लोगोंसे घिरे हुए रहना चाहिए। सत्संग इस समय बहुत ही फलप्रद होगा।

ईश्वरका श्रद्धा और भक्तिपूर्वक स्मरण करनेसे सच्चे हृदयसे पश्चात्ताप करनेसे जिससे प्रीति भक्ति या प्रीति हो उसके स्मरण या सामीप्यसे कुचिन्ताएँ दूर हो जाती हैं। यदि कभी कोई ऐसी दुर्घटना हुई हो जिससे कुचिन्ताके द्वारा कुछ विशेष अनिष्ट या अप्रिय संघटित हुआ हो या भविष्यमें होनेका डर हो तो स्मरणार्थ उसका संकेत एक कागज पर लिखकर ऐसे स्थान पर रख देना चाहिए जहाँसे वह सर्वदा दृष्टिगोचर होता रहे।

श्रुति कहती है— 'मन अन्नमय है।" उपनिषद्‌में एक सुन्दर आख्यायिका है जिसका सार भाग यह है कि महर्षि उद्दालकने अपने पुत्र श्वेतकेतुको उपदेश किया कि मन अन्नमय है। श्वेतकेतुको अन्न और मनसे कोई लगाव नहीं जान पड़ा। इससे उन्होंने इस पर शंका की। तब महर्षिने उनको १५ दिन आहार नहीं करनेको कहा। श्वेतकेतु उनकी आज्ञा पालन करके १६ वें दिन पिताके पास उपस्थित हुए। पिताने आदेश किया कि तुमसे ऋक्, यजु और साम कंठस्थ हैं। इस समय उनका पाठ तो कर जाओ। श्वेतकेतुने कहा— इस समय तो मुझे यह कुछ भी स्मरण नहीं है। फिर पिताकी आज्ञानुसार भोजन करनेसे उनकी स्मृति पूर्ववत् जाग उठी।

एक ऐसी कहावत है कि "जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन।" इसी प्रकार एक पश्चिमीय विद्वान्‌का कथन है कि "A man is what he eats." अर्थात् मनुष्य जो पदार्थ खाता है उसी पदार्थके गुणसे उसका शरीर बनता है। शरीर खाद्य वस्तुका परिणाम मात्र है और शरीरसे मनका विशेष सम्बन्ध है। आहारके दूषित होनेसे मनकी वृत्ति भी बिगड़ने लगती है। मादक वस्तुओंके खाने पीनेसे बुद्धि भ्रष्ट होती है जिससे कुचिन्ता उत्पन्न होनेका भय रहता है। इसलिए सदा अपने शरीरकी आवश्यकतानुसार गुणकारी * पदार्थ खाने चाहिए।

* हिन्दू शास्त्रकारोंने आहारको उसके गुणोंके अनुसार तीन हिस्सोंमें बाँट दिया है—सात्त्विक राजसिक और तामसिक। सात्त्विक आहारमें [illegible] अधिक

साराश यह कि पूर्ण रूपसे पवित्र रहना चाहिए। कहते हैं कि "Cleanliness is next to godliness"—पवित्रता देवताका गुण है। पवित्र आहार, पवित्र विहार, पवित्र आचरण रखनेसे, और सर्वदा पवित्र भावोंकी आलोचना करते रहनेसे मनका सस्कार ऐसा दृढ हो जाता है कि कुचिन्ता पास भी नहीं फटकने पाती।

२ कीर्तन। मनके भीतर कुचिन्ताका पूर्ण रूपसे अधिकार होने पर वाक्यके द्वारा उसका प्रकाश होता है। कुवाक्य कुचिन्ताकी और कुचिन्ता कुवाक्यकी सहायता करती है। अन्तमें ये दोनों बातें एक दूसरेकी सहायतासे वर्द्धित होकर कार्य्यके द्वारा प्रकाशित होने लगती हैं। यह भी रक्तसे वीर्य्यके पृथक् होनेमें एक कारण है, इससे यह भी एक प्रकारका मैथुन या मैथुनका अग माना जाता है।

जब किसीका मन या हृदय कुभावसे पूर्ण हो जाता है तब वह पहले तो बहुत सावधानीसे अपने चुने हुए मित्रनामधारी शत्रुओंके निकट उसका कीर्तन करता है, उसके बाद स्वभाव बँध जानेसे और क्रमश अधिकतर साहस प्राप्त होनेसे जहाँ तहाँ केवल कुकार्य्यहीकी आलोचना करने लगता है। औरोसे भी इसी प्रकारके प्रसङ्ग सुननेकी प्रबल इच्छा रखता है और विना बुलाये भी जहाँ ऐसा प्रसग होता है वहाँ प्रतिदिन उपस्थित होने लगता है। क्रमश· अश्लील वाक्योंका प्रयोग करने लगता है और फिर पराई स्त्रियोंको देख कर उनके प्रति अवाच्य शब्दोंका प्रयोग करने लगता है। कितने ही लोगोंकी

घटती है और राजसिक और तामसिक आहारोंसे सासारिक कार्योंकी ओर प्रवृत्ति होती है। किन्तु ऐसा नहीं है कि एक मात्र सात्त्विक आहारवाला ही ब्रह्मचारी वन सके। राजसिक और तामसिक आहार करनेवाले भी ब्रह्मचारी अवश्य बन सकते है। मासखानेवालेका शुक्र फलाहार करनेवालेसे अधिक उत्तेजित होगा, उसका मन भी अधिक चचल होनेकी सम्भावना है, किन्तु यह बात नहीं है कि मास खानेसे शुक्र धारण न किया जा सके। अडा, कछुआ, मछली, मास, सरसो, पियाज, लहसुन, मिर्च, अति लवण, अति मिष्ट, अधिक ममाला उड्द, मसूर आदि रजोगुणवर्धक पदार्थ है। सेंधा नमक, थोड़ा मीठा, ताजा फल, गोदुग्ध, घृत, चावल, जौ, गेहूँ, मूँग, चना आदि सतोगुणवर्धक पदार्थ हैं। मास, मदिरा, पियाज आदि तमोगुणवर्धक पदार्थ हैं।

अवस्था तो यहाँ तक गिर जाती है कि वे मेले-तमाशोंमें तीर्थ-यात्राओंमें, देवस्थानोंमें केवल राह चलती सुन्दरियोंको बुरी नजरसे देखने और उनके आगे अश्लील शब्दोंका उच्चारण करनेके लिए ही भ्रमण किया करते हैं और फिर आपसमें बैठकर उसी विषय पर अपनी अपनी कर्मकुशलता तथा सफलताकी आलोचना प्रत्यालोचना किया करते हैं। यह मानसिक रोग (mental leprosy) भी पुरुषोंके हृदयोंमें बहुतकाल तक छिपा नहीं रह सकता, कुछ दिनोंके बाद यह अवश्य ही प्रकट हो जाता है। पहले तो यह गलित कुष्ठरोगकी तरह मन तथा वाणीको भ्रष्ट करता है और फिर कार्यरूपमें परिणत होकर शरीरमें भी किसी न किसी प्रकारका कोढ़ पैदा कर देता है जो किसी तरह छिपाया नहीं जा सकता। ऐसोंकी दशा दिनोंदिन बिगड़ती ही जाती है—

यथा हि मलिनैर्वस्त्रैर्यत्र तत्रोपविश्यते ।
एवं चलितवृत्तस्तु वृत्तशेषं न रक्षति ॥*

मुझसे एकाएक कुवाक्य नहीं निकलता एक कुवाक्य ही क्या छोटेसे छोटा या बड़ा कोई भी कर्म हठात् नहीं होता। आपसे आपका होना प्रकृतिके नियममें नहीं है। जो कुछ भी हम करते हैं जो एकाएक बिना पूर्वविचारके भी हमसे हो जाता है उसकी तैयारी भी किसी न किसी अंशमें किसी न किसी रूपमें पहलेसे की हुई रहती है। इत्तफाक (Chance) हठात्, आपसे आप आदि शब्द भ्रमजनक हैं। यदि हम पक्षपातरहित होकर अपने कर्मोंको खूब ध्यान कर देखें तो पता चलेगा कि प्रत्येक कार्यका कारण हमारे मस्तिष्कमें व्याप्यमान है। वह किसी न किसी रूप या अंशमें हमारे विचारमें अवश्य आचुका है। इस दुर्व्यसनसे निवृत्ति पानेका सबसे पहला साधन तो यह है कि मनके विचारको चिन्ताको दूर करके पवित्र रखना, और दूसरे साधन मामूली हैं। जहाँ कुवाक्य कहे जानेकी सम्भावना हो वहाँ न जाना कुवाक्य या कुप्रसंगके उठते ही उसे रोक देना उस स्थानसे भाग जाना उन मित्र-बन्धुओंको त्याग देना पवित्र शास्त्रोंका अवलोकन करना जितेन्द्रिय पुरुषोंका सहवास करना सर्वदा और सबके निकट सत्य भाषणका अभ्यास करना

---

* अर्थात्—जैसे मैले कपड़ोंवाला मनुष्य बिना विचारके गन्दी जगहोंमें जहाँ तहाँ बैठ जाया करता है वैसे ही सदाचारसे भी गिरा हुआ मनुष्य अपने बचे हुए सदाचारकी रक्षा नहीं कर सकता।

अपनी दिनचर्य्या लिखना, रात्रिमें सोते समय उस पर विचार करके पश्चात्ताप करना और जिन जिन कारणोंसे दुष्कार्य हुआ है उनको न करनेकी दृढ प्रतिज्ञा करना और दुष्कार्यकी निवृत्तिकी इच्छासे ईशविनय करना। जितेंद्रिय पुरुषोंमें अग्रगण्य भगवान् बुद्धदेव कहते हैं कि सत्यका प्रचार करना शांतिका उत्कृष्ट उपाय है। अपनेमें थोडी बुद्धिवालोंको उपदेश करनेसे और बडोंके समक्ष अपने दोषोंको अलोचना करनेसे सारी पाप-प्रवृत्तियाँ निवृत्त होती हैं। एक पापका छिपाना मानों दूसरे पापका अनुष्ठान करना है।

३ केलि। अर्थात् स्त्रियोंके साथ कामभावसे खेल खेलना। शरीरकी सब इन्द्रियोंमें परस्पर एक ऐसा सम्बन्ध है कि एककी उत्तेजनासे सबकी सब उत्तेजित हो उठती हैं। स्त्रियोंके साथ इन्द्रिय-रोचक क्रीडा करनेसे इन्द्रिय-वृत्ति प्रबल होती है और कामवासना बढ़ती है, जिससे शुक्रनाश होता है। अत यह भी एक प्रकारका मैथुनका सहायक अंग है। हम पहले देख आये हैं कि मानसिक कुचिन्ता और कुप्रसंग शारीरिक चेष्टाके द्वारा प्रकट होते हैं। कुचिन्ताके द्वारा नीति बिगड़ जानेसे पुरुष सर्वदा स्त्रियोंके साथ कामोत्तेजक खेल खेलना प्रिय समझते हैं। इस प्रकार खेलते खेलते उनके हृदयका भाव अधिक मन्द पड जाता है। स्त्रियोंके निकट कामभावसे बैठना, उनका संतोष साधन करना और उनके उचित अनुचित आदेश पालन करना, उनका प्रधान कार्य हो जाता है।

ऐसी अवस्थामें सबसे अच्छा उपाय यह है कि कुछ दिनोंके लिए उस स्थानको एकदम छोड दे, जहाँतक दूर जाते बन पडे निकल जाय और अपनी सारी शक्तिको उस तरफसे मन फेरनेमें लगाकर इस प्रसंगको त्याग दे। मनके समान शरीरको भी सर्वदा सत्कार्य अथवा आवश्यक कार्योंमें नियुक्त नहीं रखनेसे वह निष्फल या अनिष्टकर खेल आदिमें नियुक्त होता है। इसीको व्यसन कहते हैं। संयमी मनुष्य व्यसनका सर्वथा परित्याग करते हैं। नित्य नियमित रूपसे व्यायाम करके शरीरसे पसीना निकालना, सुबह शाम मैदानकी ओर कई मीलतक हवा खाने निकल जाना, स्त्रियोंका साथ न करना आदि इस व्यसनसे बचनेके उपाय हैं।

४ प्रेक्षण। इसका अर्थ है कामभावसे स्त्री-दर्शन करना। वृक्षोंके नवीन नवीन पत्तोंमें, सुगन्धमय फूलोंमें, स्वादिष्ट फलोंमें, ग्रह-नक्षत्रोंमें, पशु, पक्षी

और कीट पतंगोंमें सभीमें सुन्दरता है। प्रकृतिकी सभी सुन्दर वस्तुओंमें आकर्षण शक्ति है। उनकी सुन्दरता उनकी मधुरतासे ही उनकी ओर चित्त आकर्षित होता है। उन्हें देखकर हर्ष और प्रसन्नता होती है। इसी तरह माताओंमें पिताओंमें भ्राताओंमें भगिनीमें पुत्र और पुत्रीमें भी सुन्दरता है; उन्हें भी हम स्नेहपूर्वक देखकर प्रसन्न होते हैं। हम अपने परिवारके स्त्री-पुरुषोंके शृंगारका भी प्रबन्ध करते हैं। अच्छे वस्त्र और आभूषण बनवाते हैं और उन्हें पहिने देखकर प्रफुल्लित होते हैं। किन्तु, पवित्र स्नेह और अपवित्र काम प्रीतिमें बड़ा अंतर है। एकसे प्रेम और भक्ति उत्पन्न होती है और दूसरीसे विषय वासना। पापके विष्टस्वरूप कामुक पुरुषलोग सती स्त्रियोंके पवित्र अङ्गमें अपनी अपवित्रताका चिह्न छिपाने लगते हैं। वे कामान्ध-राक्षस उनकी पवित्र मूर्तिमें स्वभावकी विरूपता प्रतिपादन करते हुए लोगोंको वासनाके अपवित्र कुण्डमें विक्षेप करते हैं। इस एक पापके द्वारा कितने घर बिगड़ने हैं इसका निर्णय करना कठिन है। इसके प्रभावसे बुद्धि जाती रहती है हिताहितज्ञान शून्य हो जाता है अपने पराये सम्बन्धका विवेक नहीं हो सकता न्यायपरता जाती रहती है मनुष्य मनुष्यत्वसे च्युत होकर पशुके समान पापाचारके ज्ञानसे शून्य हो जाता है और समस्त संसारकी स्त्रियोंको अपने उपभोगकी वस्तु समझने लग जाता है। भैंसकी तरह गर्दन उठाकर इधर उधर देखा करता है और मानसिक व्यभिचार द्वारा अपनी चित्तवृत्तिको दूषित और अपवित्र किया करता है।

इससे बचनेका उपाय विलास-सामग्रीका त्याग, और अंतःकरणकी शुद्धि और प्राकृतिक सौन्दर्यकी ओर अपनी रुचि बढ़ाना है। विलास और आराममें बड़ा अन्तर है। स्नान करना और स्वच्छ वस्त्र तथा आभूषण पहिनना बुरा नहीं है बल्कि जरूरी है किन्तु विलासताके भावसे नहीं। आवश्यकता और आरामके भावमें प्रत्येक परिवारके आरामका भिन्न भिन्न दरजा होता है। जो चीज हमारे आराम और आवश्यकताके दरजेमें विलासिता है वही एक हमसे अधिक आरामसे रहनेवाले स्त्री वा पुरुषके लिए आवश्यकता है। जिस परिवारके स्त्री और पुरुष साधारण सूती वस्त्र पहनते हैं उनके ऊँचे रेशमी वस्त्र पहनना विलास भोगना है किन्तु जिस परिवारमें रेशमकी बारीक साड़ियोंके पहनने ही का आम रिवाज है वहाँ वह एक मात्र आवश्यकताकी पूर्ति समझी जाती है। इस ढंगके वस्त्र उस परिवारके लोगोंमें कोई विशेषता

उत्पन्न नहीं करते, वह एक नित्यकी मामूली वात समझी जाती है। यही वात आभूषण, सुगधमय तैल आदि सभी वस्तुओंके प्रयोगमें है। आरामके लिए श्रृगार ठीक है, किन्तु किसी भी वस्तुका विलासिताके भावसे प्रयोग करना अनुचित है। श्रृगारका दुरुपयोग नहीं करना चाहिए।

५ गुह्य भाषण। इसके दो अर्थ हैं—एक तो एकान्तमें या अकेलेमें वैठकर स्त्रियोंसे वात करना और दूसरे अपनी कामाभिसन्धिको अपने मित्र नामधारियोंके निकट प्रकाश करना। दोनों ही वातें अनिष्टकारक और निन्दनीय हैं, अत स्याज्य हैं। लोकनिन्दाका भय इस दूषित वृत्तिको रोकनेके लिए अति उत्तम है। ऐसे कार्योंसे घृणा प्रकाश करना और वे जड़ न पकड़ने पावें, इस लिए आरम्भमें ही उनकी जड़में कुठाराघात करना उपकारी होता है।

५ संकल्प। किसी वर्तनमें यदि धीरे धीरे भाप एकट्ठी होती हो और उसका मुँह वन्द है, तो कुछ समयमें भापकी अधिकता होनेसे वह वर्तन फट जायगा। इसी तरह जब पूर्वोक्त पाँचों वृत्तियोका अधिक संचय हो जाता है, तब वह सकल्प, अध्यवसाय और क्रियानिवृत्तिके आकारमें प्रगट होता है। किसी भी दुष्कार्यके लिए मनमें सकल्प दृढ होजानेसे फिर उससे बचना बहुत ही कठिन है।

सकल्प पूर्ण होना या निष्फल होना ये दोनों ही सर्वनाशके कारण हैं। यदि दुष्प्रवृत्तिका सकल्प पूरा हो, तो यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं है कि मनुष्य शीघ्र ही सर्वनाशके पथ पर अग्रसर होता है और यदि संकल्प निष्फल हो तो उससे क्रोध उत्पन्न होता है जिससे बुद्धि भ्रष्ट होती है और बुद्धि भ्रष्ट होनेसे जो अन्याय अत्याचार या पाप न हो जाय वही थोडा है। अतएव, पूर्ण प्रयत्नसे इसको पूर्वहीसे रोकने और परित्याग करनेकी चेष्टा करना उचित है।

कहा जाता है कि कामसे कामका, तापसे तापका, और शीतसे शीतका दमन होता है—Like kills like अत सकल्पसे ही संकल्प-रोधकी नीति अति प्रशसनीय है। पहलेहीसे यह सकल्प कर लेना चाहिए कि हम अपनेको दुष्प्रवृत्तिके वशीभूत कदापि नहीं होने देंगे, अथवा नीच सकल्प हो जाने पर भी यह सकल्प कर लेना चाहिए कि हम अपने तन और मनको हर समय किसी हितकर कार्यमें लगाये रहेंगे। ऐसा करनेसे फिर उस नीच

उद्देश्यको प्राप्त होनेका अवसर ही नहीं मिलता और वह अकेला पड़ रह जाता है। भीष्मपितामह जैसे महान् पुरुषोंकी प्रतिज्ञाको सुदर्शनकारोंसे मिलकर उसको ऐसे स्थान पर रखना जहाँ उस पर सर्वदा दृष्टि पड़ा करे विशेष कल्याणप्रद है।

७ अध्यवसाय। मन और शरीर दोनों हाथ मिलाकर चलते हैं। मनमें काम-संकल्प दृढ़ होनेसे मनुष्य अध्यवसाय अर्थात् चेष्टाके द्वारा उसको पूर्ण करनेमें तत्पर होते हैं। इस अवस्थामें लोग कामान्ध हो जाते हैं। उनके ज्ञान शील लज्जा आदि सभी गुण लोप हो जाते हैं। केवल अपनी दुष्प्रवृत्तिके लक्ष्यको चमकते हुए प्रदीपके समान मनोहर समझकर वे उस पर पतंगकी भाँति जा गिरते हैं और प्राण विनष्ट करनेके लिए तत्पर हो जाते हैं।

अध्यवसाय अध्यवसायसे ही नष्ट हो सकता है। यदि मनुष्यका हृदय या मन सर्वदा सत्कार्योंके लिए अध्यवसाय करता रहेगा तो उसे दुष्कर्मोंके लिए समय नहीं मिलेगा। अपनेको समझाना चाहिए और उस कुचेष्टाके स्थान पर देशकी भलाईकी चेष्टा किसी उत्तम कार्यकी चेष्टा अथवा अपनी ही किसी उत्तम स्वार्थसिद्धिकी (यथा द्रव्योपार्जन आदिकी) चेष्टा करनी चाहिए।

८ क्रियानिवृत्ति। पूर्वोक्त सातों अंगोंसे या किसी एक अंगसे उत्तेजित होकर प्राकृतिक या अप्राकृतिक किसी रीतिसे शुक्रपात करनेको क्रियानिवृत्ति कहते हैं। चाहे जिस रीतिसे और चाहे जिस समयमें शरीरसे शुक्र निकाला जाय उससे हानि अवश्य होती है। कुसमयमें अप्राकृतिक रीतिसे अथवा अधिक अंशमें शुक्र बाहर जानेसे अधिक हानि होती है और वीर्यके पक जानेके पश्चात् पूर्ण युवावस्थामें सन्तानोत्पत्ति क्रियामें वीर्य निकलनेसे कम हानि (जो नहींके बराबर है) होती है। * जो लोग जितने ही परिश्रमा

---

* डाक्टर कपेलमन (C pllm nn) का मत है कि स्त्रियोंके रजोदर्शनके प्रारम्भके ३ दिन और रजस्राव बन्द होनेके पीछेके १४ दिन छोड़कर बाकी दिनोंमें स्त्रीसंगमसे गर्भाधान नहीं होता अतः वह भी सन्तानवृद्धि निरोध है। डाक्टर बरामोस और विक्टर हेन्सेन (Baranos & Victor Hensen) ने एक नकशा तैयार किया है जिसमें उन्होंने दिखलाया है कि रजस्राव बन्द होनेके

वसे ब्रह्मचर्य्यका पालन करते हैं उनका हृदय उतना ही प्रफुल्लित और मस्तिष्क उतना ही सबल और स्मृति, मेधा, धृति, क्षमा आदि गुणोंसे युक्त होता है। अखण्ड ब्रह्मचर्य्यव्रत पालन करनेवाले महापुरुषोंका मुकाबला कोई नहीं कर सकता। जिसने जीवनमें केवल एक बार भी शुक्रक्षय किया हो उसका और अखण्ड ब्रह्मचारीका मुकाबला होने पर दोनोंमें आकाश-पाताल का अन्तर पाया जायगा।

साथ ही यह भी बता देना आवश्यक है कि ब्रह्मचर्यव्रत किसी भी आयु या अवस्थासे पालन किया जा सकता है। यह बात नहीं है कि जो बाल्यावस्थासे ब्रह्मचर्य्य पालन करता चला आया हो, वही ब्रह्मचारी बन सकता है और शुक्र धारण कर सकता है। ऐसा भ्रमजनक विचार फैला है कि जिसने कभी एक बार भी शुक्रक्षय किया है वह ब्रह्मचर्य्य पालन नहीं कर सकता—वह शुक्र धारण कर ही सकता, क्यों कि यदि एकबार शरीरसे शुक्र निकल जाता है तो उसके निकालनेका मार्ग खुल जाता है और वह फिर बन्द नहीं किया जा सकता। परन्तु यह बात बिलकुल गलत है।

शुक्रका शरीरमें रहना प्राकृतिक है, उसका बाहर निकलना ही अप्राकृतिक है। पूर्वोक्त प्रकारके मैथुनोंमेंसे सबकी या किसी एककी सहायताके बिना शुक्र बाहर नहीं निकल सकता। शरीरमें रोग उत्पन्न हो जानेसे शुक्रक्षय होना सम्भव है। सो चाहे जितना भी शुक्र शरीरसे निकल चुका हो, पूर्वोक्त ८ प्रकारके मैथुनोंसे बचनेका अभ्यास करनेसे बाल, युवा, वृद्ध, विवाहित, अविवाहित, व्यभिचारी, अप्राकृतिक मैथुन करनेवाले और बाल्यावस्थासे कुसंगमें पड़कर वीर्य्य क्षीण करनेवाले सभी स्त्री पुरुष पुन शुक्र धारण करके अपनेको सुधार सकते हैं। सुधारके लिए यह कहना कभी ठीक नहीं हो सकता कि अब समय नहीं रहा—It is never too late to mend हाँ,

---

पश्चात् पहलेसे नवें दिन तक, नवेंसे ग्यारहवें दिन तक, ग्यारहवें दिनसे तेईसवें दिन तक और तेईसवें दिनसे रजोदर्शनके एकाद दिन पूर्वतक रतिसेवनसे सैकड़ा पीछे ४८, ६२, १३, ९, १, और ६२ अशोंमें गर्भस्थिति हुआ करती है। रजोदर्शनके तीन चार दिन बाद गर्भस्थितिकी अधिक सम्भावना होती है और १६ दिन बाद कम, किन्तु गर्भका रह जाना हर समय सम्भव है। Facultive Sterility by Capillmann.

यह भले ही न हो कि कोई व्यभिचारी पुरुष ब्रह्मचर्य पालन करके सीधे ब्रह्मचारीके बराबर हो जाय, किन्तु यम और नियमसे * रहनेसे उसकी अवस्था पहलेसे अच्छी अवश्य हो जायगी। शुक्रधारण जीवन और शुक्रपात मृत्यु है।

सारांश यह कि ब्रह्मचर्य द्वारा सन्तानवृद्धिका निरोध बड़े आरामके साथ किया जा सकता है। विवाहित पुरुष जितनी चाहिए उतनी सन्तान उत्पन्न करनेके पश्चात् किसी भी समयसे किसी भी समय तक ब्रह्मचर्य पालन कर सकते हैं। ब्रह्मचर्य तोड़ा जा सकता है और पुनः पालन किया जा सकता है। ×

ब्रह्मचर्य्यकी महिमा अपार है। आज तक संसारमें जितने महान् कार्य हुए हैं या जितने महापुरुष कहलाये हैं वे सब ब्रह्मचर्यव्रतके साधनसे।

ब्रह्मचर्य्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत।

---

* निर्वैरता सत्य बोलना चोरीत्याग ब्रह्मचर्य और विषयभोगत्याग, ये पाँच नियम हैं और शौच सन्तोष तप स्वाध्याय (वेदका पढ़ना) और सबका ईश्वरार्पण ये पाँच नियम हैं।

× महाप्रतापी अर्जुन जितेन्द्रिय भीष्म और योगीश्वर जनक आदि इसके परमोत्तम उदाहरण हैं।

आठवाँ परिच्छेद।

कृत्रिम निरोध।

अर्थात्

औषध या यन्त्रोंके प्रयोगसे संतानवृद्धिमें कमी करना।

'After the desire of food, the most powerful and general of our desire is the passion between the sexes And taken in an enlarged sense, it is almost impossible to suppress it for the whole life'

—*G Wallace*

जठराग्निकी धधकती हुई ज्वाला या क्षुधाके बाद प्रज्वलित भीषण कामाग्नि नजर आता है। गहरा विचार करने पर प्रकट होता है कि साधारणतः कामकी प्रबल लहरको जीवनपर्यन्त के लिए दबाना असम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन और दुष्कर अवश्य है।—जी वालेस।

यूरोपके आजन्म अविवाहित मोंक और नन (monk and nun) भारतके युवा संन्यासी, प्रत्येक देशके अधिक (majority) अविवाहित स्त्री-पुरुष और बारकोंमें रहनेवाले पल्टनके सिपाही इस बातके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि जनसाधारणके लिए अविवाहित अवस्था अच्छी नहीं। कुमार या कुमारीपनके ऊपरी आडम्बरके भीतर पाप और दुश्चिन्तायें छिपी हुई मिलती हैं। Celibacy in general is an apt means of irrepairable debasement of the pure and chaste, and it does always give way to illegitimacy

" बारकोंका जीवन बुरा है, बारकोंका जीवन सदा बुरा रहेगा। बहुतसे पुरुषोंका अपने घर और स्त्रियोंके प्रभावसे दूर रहना अच्छा नहीं। स्त्रियोंके

लिए भी यह अच्छा नहीं है कि वे स्त्रियोंमें ही रहें और काम करें। पुरुषों और स्त्रियोंका परस्पर प्रभाव पड़ता है। एकके कारण दूसरेको स्वाभाविक स्वास्थ्य रखनी पड़ती है और दोनोंमें स्वास्थ्यकर उत्तेजना रहती है। वास्तवमें ऐसा ही कोई उत्तम संस्कार और दृढ़ संकल्पवाला मनुष्य होगा जो दुर्गुणोंसे बच सकेगा। मेरे सामने अनेक शुद्ध, स्वच्छ और उत्तम युवक सेनामें आने पर सालभर भी न बीतने पाया कि वे कुकर्मी हो गये। मैं साधारण व्यक्ति हूँ। लेकिन कोई भी समझदार भला आदमी जो सेनामें रह चुका है तुरंत मान लेगा कि मेरा कथन सत्य है और यह बात बहुत दबाकर, बहुत रोककर कही गई है।" + सर्वसाधारण अविवाहित स्त्री-पुरुषोंके लिए भी उपरोक्त आलोचना अक्षरशः सत्य और सची है। मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि कोई पवित्र भावसे अविवाहित रह ही नहीं सकता, और खासकर भारतवर्षमें जहाँ ब्रह्मचर्यके लिए अनन्त कालसे उपदेश और आदेश मिलता चला आ रहा है और जहाँ अखण्ड ब्रह्मचारियोंकी आदर्श जीवनियोंकी नित्य चर्चा हुआ करती है। मेरा अभिप्राय यह है कि आजन्म ब्रह्मचर्यव्रतपालन करना सर्वथा सम्भव और सराहनीय है किन्तु सबके लिए नहीं। सर्वसाधारण आजन्म ब्रह्मचारी कदापि नहीं रह सकते।

और न यही युक्तिसंगत जान पड़ता है कि विवाह करके जीवनक्रममें यदि एक संतान उत्पन्न करना है तो बस एक ही बार वीर्यसेचन करके सदाके लिए ब्रह्मचारी बन जाय। असम्भव यह भी नहीं है किन्तु साथ ही सर्वसाधारणके लिए संभव भी नहीं है। प्रैक्टिकल और थियोरेटिकल अर्थात् व्यावहारिक और सैद्धान्तिक कथनमें आकाश और पातालका अंतर हुआ करता है। भारतकी विधवायें इस बातकी प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इनमेंसे कुछ देवियाँ ऐसी अवश्य हैं जो पवित्र भावसे अपना वैधव्य बिता ले जाती हैं, किन्तु बहुतेरी ऐसा नहीं कर सकतीं और प्रच्छन्न या अप्रत्यक्ष पापकी भागिनी बन जाती हैं। इसमें इन अभागिनोंका अधिक दोष नहीं। इन पर दोषारोपण करनेवालोंको उन पुरुषोंकी दशाका स्मरण करना चाहिए, जो स्त्रीकी मृत्युके एक ही महीने बाद विवाहमण्डपमें पुनः उपस्थित हो जाते हैं। जो हो। इससे कुछ प्रयोजन नहीं। मेरी धारणा यह है कि समाजमें कुछ स्त्री-पुरुष ऐसे हैं जो जीवन-निवा-

---

+ भारी भ्रम—Great Illusion by Norman Angell का अनुवाद।

महकी नाई अखण्ड ब्रह्मचर्य्यव्रत नहीं पाल सकते और साथ ही एक नियमित संख्यामें संतानका पालन और पोषण कर सकते हैं। अधिक संतानोत्पत्ति उनको, तथा उनकी सन्तानको, इस तरह तीनोंको घोर आपत्तिमें डालकर उनके विनाशका कारण होती है।

ऐसा नहीं है कि वे अपनी अवस्था या भविष्यका ज्ञान न रखते हों। वे जानते हैं कि जितनी सन्तान उन्हें है उससे एक भी अधिक होनेसे वे भारी बखेडेमें पड जायँगे। पालन-पोषण आदिका उचित प्रबन्ध न कर सकनेसे सन्तान अस्वस्थ हो जायगी। अधिक परिश्रम, चिन्ता, और आराम आदि न मिलनेके कारण स्वयं उनका भी स्वास्थ्य नष्ट हो जायगा और गरीब माताकी जो चौथ होगी उसका तो कुछ पूछना ही नहीं। वे इन सब बातोंको जानते हैं, तो भी कुछ कर नहीं सकते। उन्हें संतान होती ही जाती है और घोर विपत्तिका कारण बनती जाती है। बेचारी स्त्रियाँ तो मर मिटती हैं। एक निरन्तर चलनेवाली मशीनकी तरह, चाहे जो आपत्ति या विपत्ति उन पर आवे, उनके बच्चे पैदा होते जायँगे। वे जानती हैं कि उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया है, उनका शरीर संतानोत्पत्तिका भार सहने योग्य नहीं है, किसी किसीके लिए तो मृत्युतकका भय है, तो भी वे इसे रोकनेमें असमर्थ रहती हैं और जानती समझती हुई, दोनों आँखे खोले, असहाय होकर अकाल कालकी ग्रास बन जाती हैं। उन्हें जान-बूझकर बरबस मरना पडता है। कुछ परिचित लोगोंके वृत्तांतसे यह बात और साफ हो जायगी।

१—'क' एक उच्च शिक्षित धनाढ्य सज्जन हैं। उनकी युवती धर्म्मपत्नीके पेटमें भीतरकी ओर फोडा हो गया। कलकत्तेके एक प्रसिद्ध डाक्टरने उसका चीड फाड किया। जब फोड़ा अच्छा हो गया तब डाक्टरने स्त्री-पुरुष दोनोंको सचेत कर दिया कि गर्भधारण होनेसे पेटके अन्दरके टाँके टूट जायँगे और तब स्त्रीका प्राण न बच सकेगा। पति-पत्नीमें गाढा प्रेम था। कई वर्षों-तक वे एक दूसरेसे अलग रहे, किन्तु किसी अवसरपर कामदेवके बाणोंसे वेधित हो भूत और भविष्यको भूल सा गये। स्त्री गर्भवती हुई और कुछ कालके अनन्तर उसी पेटकी व्याधिसे मृत्युको ग्रास हो गई।

२—'ख' एक शिक्षित जमींदार हैं। आपकी स्त्रीके हर बार मरा हुआ बच्चा पैदा होता था और डाक्टरोंकी सहायतासे किसी तरह चीड-फाड़ कर निकाला जाता था। प्रत्येक प्रसवके समय वे प्रतिज्ञा करते थे कि स्त्रीसे अलग

रहेंगे किन्तु आयुपर्यन्त अच्छा रहना भी असम्भव निकला। तीसरे प्रसवमें उसकी स्त्रीको इतना कष्ट हुआ कि उसके प्राण पखेरू उड़ गये।

३— ग　एक धनाढ्य साहूकार हैं। उनका बचपनमें ही विवाह हो गया था। उसके बाद उन्हें गर्मित पुत्र हो गया। ९ लड़की-लड़के आपसे हुए। ५ मर गये और ४ जीये। जो जीये उन सबोंको छोड़ विरासतमें मिला। सबसे बड़ा लड़का कुछ पढ़ा लिखा और समझदार है। वह जानता है कि उसकी यह दुर्दशा उसके पिताके कारण हुई है। यह जानते हुए और स्वयं सन्तान उत्पन्न करनेकी इच्छा न रखते हुए भी वह इसमें असमर्थ है। उसके भी तीन बच्चे हो चुके और पहले बालकको छोड़ भी शुरू हो गया।

४— घ　एक तरुणके प्राण हैं। उमर २१ वर्षकी है। स्त्री इनसे एक वर्ष छोटी है। तीन बच्चे हो चुके और चौथेकी तैयारी है। घरमें कोई दूसरी स्त्री नहीं है। जो दुर्दशा इनकी तथा इनकी स्त्रीकी होती है उसे ये ही जानते हैं। प्रति १८ वें महीनेमें एक सन्तानरूपी विपत्ति इनके सामने आकर उपस्थित हो जाती है। इनको बड़ा भय इस बातका है कि यदि इसी हिसाबसे सन्तानवृद्धि हुई तो रहनेको स्थान नहीं मिलेगा। भोजन वस्त्र और विवाहादिका प्रश्न तो दूर रहा बेचारी अकेली बालिका माताकी जो दुर्दशा हो रही है उसे वही जानती है।

ऐसे लोगोंके लिए ब्रह्मचर्यव्रतका उपदेश या इन्द्रिय निरोधकी सलाह बिल्कुल प्रमाणित हुई है। वे अपने मन पर अधिकार नहीं जमा पाते। अतः ऐसे कमजोर तबीयतवालोंके लिए किसी दूसरे उपायका होना आवश्यक है। ऐसाको मरनेके लिए छोड़ देना उचित नहीं जान पड़ता।

यूरोप और अमेरिका आदि देशोंमें कृत्रिम निरोधकी चाल है। जो लोग पवित्र भावसे अविवाहित नहीं रह सकते और साथ ही बहुसंख्यक सन्तानका लालन-पोषण भी नहीं कर सकते वे सभी लोग कृत्रिम निरोधका व्यवहार करते हैं और ओषधि या अन्यकी सहायतासे सन्तानकी निःसीम वृद्धि रोकते हैं। अमेरिकाकी कितनी ही रियासतोंमें राज-नियम बन गया है जिससे स्वाभाविक पापी (Hab tual Crim als) और सर्वथा अयोग्य स्त्री पुरुष न विवाह कर सकते हैं और न सन्तानोत्पत्ति। यह सुनकर आश्चर्य होगा कि इस नियम पर चलनेके लिए-बाध्य किये जानेकी अपेक्षा कितने ही सार्वजनिक अयोग्य स्त्री पुरुषोंके स्वयं जाते हैं कि वे कृत्रिम उपायद्वारा सन्तानोत्पत्तिसे रहित कर

दिये जायँ। इस पर कुछ ऐसे कृत्रिम उपाय कर दिये जाते हैं कि वे भोग-विलास कर सकते हैं, किन्तु सन्तानोत्पत्ति नहीं कर सकते। *

हम यूरोपवालोंको आदर्श नहीं बनाना चाहते। उनकी नकल नहीं किया चाहते। हमारे और उनके समाज-संगठनमें बड़ा अंतर है। हमारे और उनके आदर्शमें भिन्नता भी है। उनकी अन्धाधुन्ध नकल करना हमारे लिए अत्यन्त बुरा है। मैं यह भी मानता हूं कि कृत्रिम निरोध बुरा काम है। इससे समाजमें बुराइयाँ फैल सकती हैं। कृत्रिम निरोध प्रकृतिके विरुद्ध भी है। इससे हानि होती है। ये सभी बातें सत्य हैं, किन्तु बहुसंख्यक क्षीण और रुग्ण सन्तानोत्पत्ति भी तो बहुत बुरी बात है। जिससे समाज दूषित हो, देश रसातलको चला जाय, दाम्पत्यसुखमें कुठाराघात हो, वह किससे कम बुराई है?

प्रकृति-विरुद्ध कार्यका प्रकृति आपसे आप दण्ड देती है। प्रकृतिको कोई धोखा नहीं दे सकता। जानमें या अनजानमें किसी तरह प्रकृति-नियमके विरुद्ध चलनेसे प्रकृति सजा देती है। अकाल, हैजा, प्लेग आदि प्रकृतिके नियमोंको उल्लंघन करनेके ही दण्ड हैं। यदि हम अधिक संख्यामें उत्पन्न हुई सन्तानके जीवन-निर्वाहका उचित प्रबन्ध नहीं कर सकते और उन्हें अकाल और प्लेगका ग्रास बनाते हैं तो यह क्या प्रकृतिनियमके अनुकूल है?

जहाँ दो बुराइयाँ हैं, जहाँ दो अधर्म हैं, जहां दो प्रकृति नियमके विरुद्ध कार्य्य हैं और उनमेंसे एक करना ही पड़ता है वहाँ उन दोनोंमेंसे जो कम बुरा हो, जिससे कम हानि होती हो, जो प्रकृति-नियमके विरुद्ध हो किन्तु कम हो, उसीको चुन लेना चाहिए और उसी कम बुराईको बरतना चाहिए।

मानव जातिका प्राकृतिक आहार केवल अन्न और फल है और निवासस्थान वृक्षकी छाया है। बाल और नख कटाना अप्राकृतिक है। रात्रि विश्रामके लिए है न कि कृत्रिम रोशनी पैदा करके काम करनेके लिए। किन्तु, इन नियमोंको अब कौन मानता है? मांस खाना, पक्के महलोंमें रहना, बाल कटाना, रात्रिमें रोशनीमें काम करना आदि सभी अप्राकृतिक कार्य प्राकृतिक हो रहे हैं। इनकी चाल ऐसी चल पड़ी है कि इनकी अप्राकृतिकता ही लोप हो गई है।

तब अखण्ड ब्रह्मचर्य्यव्रतसे उत्तम कौन बात हो सकती है? अपने प्राचीन पुरुषोंके आदेश पर आरूढ रहनेसे अच्छी बात तो दूसरी हो ही नहीं सकती,

---

* Extract Govt Report in 'The Ohio World Recorder" for 1613

किन्तु जो लोग ब्रह्मचारी नहीं रह सकते उनके लिए तो सन्तानवृद्धिसे देशको धक्का पहुँचानेसे अच्छा यूरोपवालोंकी नकल करना है। यदि बहुसंख्यक सन्तानोत्पत्ति अधिक और कृत्रिम विरोधसे कम हानि होना सम्भव हो तो ऐसी दशामें कम बुराईवाली वस्तुका ग्रहण करना ही उचित है।

संखिया विष है। इसका साधारण गुण शरीरको नष्ट करना है। इसके खानेसे मृत्यु हो जाती है। पर संखिया और ऐसे ही अनेक विष बहुतसे रोगोंके रामबाण उपाय हैं। रोग उपस्थित होने पर इसका उचित और नियमित मात्रामें उपयोग अमृतका सा गुण करता है। क्या आप बता सकते हैं कि इन अप्राकृतिक वस्तुओंका संसारमें कितना उपयोग होता है और इनसे कितना काम होता है ?

सन्तान-वृद्धिको रोकनेवाली ओषधियाँ और यन्त्र भी विष हैं। इनका स्वाभाविक गुण हानि पहुँचाना है। किन्तु उचित समय और सीमामें इनके प्रयोगसे प्रशंसनीय काम होता है। राष्ट्रका सन्तानवृद्धिरोग इससे दूर होकर वह आरोग्य हो सकता है। किन्तु इन दो शब्दों पर सदा ध्यान रखना चाहिए,— उचित और अनुचित मात्रा। एकका परिणाम जीवन और दूसरेका मृत्यु है।

यूरोप आदि देशोंमें दो प्रकारके कृत्रिम निरोध काममें लाये जाते हैं—१ रासायनिक ओषधियाँ जिनके उपयोगसे गर्भस्थिति नहीं होती और दूसरे ऐसे यन्त्र जिनके प्रयोगसे स्त्रियाँ गर्भ नहीं धारण कर सकतीं। ओषधियाँ केवल स्त्रियोंके लिए हैं और यन्त्र स्त्री और पुरुष दोनोंके लिए। इनके अतिरिक्त भारतके प्राचीन चिकित्सक भावमिश्र आदिने तथा यूनानी हकीमोंने भी इस विषय पर अपना मत प्रकाश करके कुछ ओषधियाँ लिखी हैं।

कृत्रिम निरोधके यन्त्रों या ओषधियोंका नाम इस पुस्तकमें लिखना उचित नहीं समझा गया। जिन लोगोंको इसकी आवश्यकता हो वे मेरी लिखी हुई दम्पति मित्र नामक छोटीसी पुस्तक मेरे पाससे * मँगाकर पढ़ें। जनसंख्याकी निस्सीम वृद्धिसे जो हानियाँ होती हैं उनका सविस्तर वर्णन किया जा चुका। देशबन्धुओं और भगिनियोंको उनके देशकी सच्ची स्थितिका दर्शन करा दिया गया। वृद्धि-निरोधके कुछ उपाय भी बता दिये गये। अब अपनी सुभीते आवश्यकता विचार और योग्यतानुसार मार्ग

शान्तिभवन बेनियाबाग काशीसे।

चुनकर उस पर चलना प्रत्येक विचारशील, देशभक्त सज्जनके अधीन है । व्याख्यानदाताका काम श्रोताओंके हृदयमें कथित विषयकी ओर चाव उत्पन्न कर देना है जिसमें उस विषयका वे अध्ययन करें न कि उनको सलाह देना। मैंने सड़कके चौरस्ते पर लगे हुए सड़कोंके नामोंके साइन-बोर्डोंका काम किया है । पथ-प्रदर्शककी तरह रास्तोंका इशारा भर कर दिया है, उन पर चलना या न चलना आपके मन और पैरोंके अधीन है—

—The lecturer's work is to win the hearers to study rather than to give out cut and dried up opinions I am acting as a sign post to show you the road along which your own feet must carry you

तीसरे खण्डका सारांश।

वृक्ष और पशुजगतमें सन्तानोत्पत्ति सन्तानवृद्धि और सन्तानरक्षाके लिए वे ही गुण विद्यमान हैं जो मनुष्य-जगतमें हैं। प्रकृति स्वाद या सुगन्धका लालच दिखाकर वृक्षोंके बीज सारे संसारमें फैलानेका प्रयत्न करती है। पशु और पक्षी अपनी जाति बढ़ानेका पूर्ण यत्न करते हैं किन्तु वे विवेक-शक्तिसे काम लेकर अपनी जाति बढ़ानेमें कमी या बेशी नहीं कर सकते। ऐसी कारणसे ही इनकी असीम वृद्धि रुकती है। उत्तम रीतिसे अपनी संख्या एक नियमित सीमामें रखनेकी शक्ति वृक्ष और पशु-जगतमें नहीं है। इसलिये मनुष्य ही काम उठा सकता है।

मनुष्य ज्ञानशक्तिके सीमितकी ओर ध्यान दे सकता है और अपना शुभाशुभ विचार कर विवाह या सन्तानोत्पत्ति कर सकता है। सभ्य जातियोंके इतिहाससे मालूम होता है कि प्राचीन कालमें भी इस जनसंख्याके विषय पर ध्यान दिया जाता था। ग्रीक देशके सुप्रसिद्ध प्लेटो और अरस्तू आदि विद्वानोंने ऐसे नियम बना रक्खे थे कि जिससे आबादी बेहिसाब नहीं बढ़ने पाती थी। उस समय राज्याज्ञासे ही विवाह तथा सन्तानोत्पत्तिकी संख्या निर्णय की जाती थी। आज्ञाके विरुद्ध चलनेवालोंको दण्ड मिलता था और अयोग्य सन्तानको जंगलमें गड़वा देनेका नियम था। अर्वाचीन कालके इतिहाससे भी यह बात जाहिर होती है कि आवश्यकतानुसार समय समय पर जनसंख्या बढ़ाने या घटानेका प्रयत्न हुआ है। इंग्लैण्ड और फ्रांसके राजाओंकी ओरसे ऐसे नियम बनाये गये मिलते हैं कि जिनके कारण जनसंख्यामें कमी या बेशी हो। अमेरिका और जर्मनीमें भी एक नियमित सामाजिक नीतिसे सन्तानोत्पत्ति करनेकी चाल पाई जाती है।

भारतवर्षमें किसी समय अधिक सन्तानकी आवश्यकता थी। उस समय बड़ा बल दे कर [illegible] करना धर्म ठहरा दिया गया था और उत्तम सन्तानोत्पत्ति [illegible] एक कर्तव्य कर्म बना दिया गया था। इस विषयमें यहाँतक जोर दिया गया कि जिसे सन्तान न हो उसकी मुक्ति नहीं हो सकती। इसका

फल यह हुआ कि यहाँके लोग विना विचारे सन्तानोत्पत्ति करने लग गये और ऋषियोंके बनाये हुए सन्तान-सम्बन्धी नियमोंको भूल गये। प्राचीन पुरुषोंने ऐसे उत्तम नियम बना रक्खे हैं कि उनकी पालना करनेसे बुरी सन्तान नहीं हो सकती।

जन-वृद्धि-निरोधका सबसे उत्तम उपाय यह है कि एकमात्र उत्तम सन्तान उत्पन्न की जाय। इसके लिए वंश-परम्परासे आनेवाले दोषों और गुणोंके नियमों पर विचार करना चाहिए। कई पीढी आगेके—पितामह पितामही, मातामह, मातामही आदिके—गुण और दुर्गुण दोनों ही, सन्तानमें उतरते हैं।

प्रेम और मन शक्तिका भी सन्तान पर बडा प्रभाव पडता है। ऐसे अनेकानेक उदाहरण पाये जाते हैं जिनमें मातापिताने मन.शक्ति द्वारा इच्छानुसार सन्तान उत्पन्न की है। गर्भाधानके पश्चात माताके प्रत्येक विचारका अच्छा या बुरा प्रभाव सन्तान पर पडता है। प्रेम और मन शक्तिके अतिरिक्त अधिक थका देनेवाले कामका, एकदम कोई काम न करनेका, विना हवाके मकानमें रहनेका, और अनियमित आहार-विहारका भी गर्भस्थ बच्चे पर असर पडता है।

उत्तम सन्तान उत्पन्न करना उत्तम है, किन्तु वह उतनी ही होनी चाहिए जितनेके पालन पोषण और शिक्षणका हम उचित प्रबन्ध कर सकें। केवल उत्तम उत्पत्तिसे ही काम नहीं चल सकता। सन्तानको नाना प्रकारकी आवश्यक शिक्षायें दिये बिना वह जीवन-संग्राममें विजय प्राप्त नहीं कर सकती। इंग्लेण्ड, फ्रांस, जर्मन आदि देशोंमें उतनी ही सन्तान उत्पन्न करनेकी चाल है, जितनीको योग्य बनानेके उचित प्रबन्ध और साधन वहाँ प्राप्त हैं।

जन-वृद्धि निरोधका दूसरा उपाय है इन्द्रिय-दमन या ब्रह्मचर्य। इस व्रतको विवाहित, अविवाहित, बाल, वृद्ध सभी पालन कर सकते हैं। आठ प्रकारके मैथुन—स्मरण, कीर्तन, केलि आदि—से बचना ब्रह्मचर्य्य है। ब्रह्मचर्य-पालनके लिए सबसे पहले मन पर अधिकार जमाना चाहिए। आहारका प्रभाव मन पर पडता है, इससे आहार पर भी ध्यान रखना उचित है। पवित्र आहार करने, पवित्र आचरण रखने, सत्संगमें रहने और पवित्र भावोंकी आलोचना करनेसे कुचिन्तायें नहीं होतीं और ब्रह्मचर्य्य-व्रतपालन करनेमें सुगमता होती है।

मूलके बाद विषय-वासनाका नम्बर आता है। सर्वसाधारणके लिए जन्मसे आयुपर्यन्त दबाना असम्भव है। अविवाहित अवस्था भी सर्वसाधारणके लिए अच्छी नहीं। कुमार या कुमारीपनके आडम्बरके भीतर पाप और दुश्चिन्ताएँ छिपी रहती हैं। और न यही युक्तिसंगत जान पड़ता है कि विवाह करके यदि एक सन्तान उत्पन्न करता है तो बस एक बार स्त्री-प्रसंग करके जीवनभरके लिए विषय-सेवन त्याग दे। ऐसे कई उदाहरण मिले हैं जिनमें यौवन और सामान्य प्रश्न उपस्थित होने पर भी लोग इससे नहीं बच सके और परिणाम बहुत ही बुरा हुआ। ऐसी अवस्थामें जो लोग किसी अन्य उपायसे सन्तानोत्पत्ति नहीं रोक सकते, उन्हें ऐसी ओषधियों या यंत्रोंसे काम लेना चाहिए जिनके प्रयोगसे गर्भस्थिति न हो। ऐसी अनेक ओषधियों तथा यन्त्रोंका परिचय 'दम्पति-मित्र' नामक छोटीसी पुस्तकमें है जो लेखकसे * प्राप्त हो सकती है।

* मेरा पता—शान्तिभवन [illegible] काशी।

परिशिष्ट ।
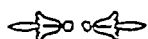
प्राणि शास्त्रके अध्ययनसे, जीवों और जातियोंके इतिहासका अवलोकन करनेसे, और संसार पर विचारपूर्ण दृष्टि डालनेसे यह पूर्णत सिद्ध होता है कि प्रकृति, जडको चैतन्य और चैतन्यको अधिकतर चैतन्य बनाना चाहती है। पहले इस पृथिवीतल पर किसी प्रकारका जीवन नहीं था। तत्पश्चात् बहुत साधारण प्रकारका जीवन उत्पन्न हुआ। इसके अनन्तर धीरे धीरे जीवन बढता गया और अधिक विकसित होता गया। समस्त प्राणियोंके देखने पर यदि कोई बात स्पष्ट जान पड़ती है तो यह कि जीवन बढ़ना, फैलना, अधिक उन्नत और पेचीदा होना चाहता है।

इसी निरन्तर उन्नतिके सिद्धान्तके मार्ग पर मानव-जातिका चलना भी माना जाता है। विकास-वादियोंका मन्तव्य है कि मनुष्य-जातिने बराबर उन्नति की है। इस समय मनुष्य-जगत्के सभ्य भागकी जो दशा है वह इतिहासकी अन्य दशाओंसे बहुत श्रेष्ठ है। नये जगतका आचार विचार, आहार-विहार, शिक्षा-संस्कार सभी कुछ अबसे पूर्वकी सब अवस्थाओंसे श्रेष्ठ तथा उत्तम माना जाता है। आज तक मनुष्य-जातिकी जो गति रही है विकासवादी, उसकी तहमें उन्नतिके सिद्धान्तको काम करते हुए देखते हैं। उनका मत है कि भौतिक और प्राणि-जगत्, अवस्थाओंकी अनुकूलता और निर्बलोंके नाश द्वारा निरन्तर उन्नति करता जा रहा है।

आप ग्रीन आदि आदर्शवादियोंको लीजिए, हर्बर्ट स्पेन्सर आदि विकास-वादियोंका संयोगात्मक दर्शन (Synthetic Philosophy) पढिए, कास्टे-के प्रत्यक्षात्मक दर्शन (Positive Philosophy) का अनुशीलन कीजिए, सब जगह समाजशास्त्रके सिद्धान्तोंकी खोजमें आप यह पावेंगे कि जिन पड़ावोंसे मनुष्य-जाति गुजरी है, उनमेंसे कोई भी इतना सुन्दर न था जितना सुन्दर वर्त्तमान पड़ाव है। मनुष्य-समाज आदर्शवाद (Theological) युगसे, प्रत्यक्षवाद (Positive) युगमें प्रवेश कर रहा है। इस समयकी अवस्था, अन्य अवस्थाओंकी अपेक्षा आदर्शके अधिक समीप है। और जिस मार्ग पर अब

यह केवल हताहतोंकी संख्याका खुला हुआ व्योरा है। अन्य रूपसे विचार करने पर यह सख्या चौगुनी प्रकट होती है। कोपेन हेगेनकी एक विश्वस-नीय सस्थाने युद्धके वादकी अवस्थाका अध्ययन करके रिपोर्ट तैयार की है जिसमें दिखाया है कि यूरोपमें पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंकी सख्या जितनी अधिक हो गई है उससे ज्ञात होता है कि इस महायुद्धमें कमसे कम चार करोड मनुष्योंकी मृत्यु हुई है। यहीं तक वस नहीं। 'दि नेक्स्ट वार' नामक पुस्तकमें विल इर्विन साहवने लिखा है कि विगत महायुद्धमें केवल एक करोड सैनिक और तीन करोड नागरिकोंकी मृत्यु मानना भ्रमजनक है। य

शत्रु राष्ट्र।

जर्मनी	१६११९०४	१६००००००	२१८३१४३	७७२५२२	६१६६७६९
आस्ट्रिया हगरी	९११०००	८५००००	२१५००००	४४३०००	८३५४०००
टर्की	४३६९२४	१०७७१२	३०००००	१०३७६१	९४८३९५
वलगेरिया	१०१२२४	३०००००	८४२३९९	१०८२५	१२५४४४८
	३०६०२५२	२८५७७७२	५४८५५८२	१३३००७८	१२७२३६३२
पूर्ण योग	९९९८७८१	६२९५५१२	१४००२०३९	५९८३६००	३६२२७६७०

* ग्रेट ब्रिटेनकी सहायता सरकारी रिपोर्टके मुताविक, उसके अधीन देशोंने इस प्रकार की,—

नाम देश	विविध रणक्षेत्रोंमें आदमी भेजे	मृतोंकी सख्या
न्यूजीलैण्ड	२२७२२५	१६१३६
आस्ट्रेलिया	४१३४५३	५९३३०
कैनेडा	६८३१७०	५६६२६
जोड़	१२२३८४८	१३२०९२
अकेले भारतने	१७०१३०५	१०००००

भारतीय जनता, तथा कतिपय विद्वानोंका, जिन्होंने इस विपयपर मनन किया है मरकारकी इस रिपोर्टपर विश्वास नहीं है। वहुतोंका खयाल है कि महा-युद्धमें भारतके ८ से १० लाख तक सैनिक मरे हैं। लेजिस्लेटिव काउन्सि-लमें लार्ड हार्डिंगने यह भी नहीं वताया कि इस देशसे कितने सैनिक विविध रणक्षेत्रोंमें भेजे गये। यह कहकर टाल दिया कि सख्या वता देनेसे सर्व साधा-रणके हितमें वाधा पढेगी। अव जो सरकार ठीक ठीक मृतोंकी सख्या प्रकाशित कर दे तो साम्राज्य-सगठनके-

पुरुषोंका कथन है कि शीघ्र ही एक विश्वव्यापी युद्ध होगा। अपनी घातकता और व्यापकतामें यह युद्ध, विगत महायुद्धसे भी बाजी मार ले जायगा! इस संग्राममें एशिया श्वेताङ्गोंके विरुद्ध एक अरब योद्धा रणक्षेत्रमें लावेगा! इस संघर्षके लिए श्वेताङ्ग लोग लाग डाँटके साथ तैयारी कर रहे हैं।

भारतवर्षमें दुर्भिक्ष, प्लेग और हैजेसे जो करोड़ोंकी मृत्यु हुई है वह तो पुरानी कथा है। (इसका ब्योरा इस पुस्तकके दुर्भिक्ष रोग और मृत्युके प्रकरणमें मिलेगा।) उसके सिवाय अब और नये नये रोग उत्पन्न हो रहे हैं और भारतको समूल नष्ट कर रहे हैं। भूमण्डलके प्राय सभी प्रधान राष्ट्रोंके भिड़ जानेसे जितने सैनिक पाँच वर्षोंमें मारे गये, अकेले भारतमें उतने ही जनोंकी मृत्यु कुल पाँच महीनोंमें केवल इन्फ्लुएन्जा ज्वरसे हो गई! ब्रिटेनने समराग्निमें कूद कर अपने साम्राज्यमें २२ लाख वर्गमीलसे ऊपरके क्षेत्रफलको जोड दिया और पौने चार करोड जनों पर प्रभुत्व स्थापित किया।* भारतने उन्हीं रणक्षेत्रोंमें लगभग १७ लाख योद्धा भेजकर अपने पडोसी भाइयोंको परतन्त्र बनाया और 'रौलेट एक्ट' इनाम पाया! और साथ ही अपनी गुलामीकी जजीरको अपने ही हाथों इतना मजबूत बना दिया कि उससे छुटकारा पाना अब और कठिन हो गया। अपने जिन सधर्मी पडोसियोंको प्राय हिन्दुस्तानी मुसलमानोंने विजय प्राप्त करके गुलाम बनाया है, थोडे ही दिनोंमें वे ही पडोसी ब्रिटेनके लिए हिन्दुस्तानियोंको परतन्त्र बनाये रखनेमें पूरी सहायता देंगे। थोडा

---

* बृटिश साम्राज्यका क्षेत्रफल युद्धसे पहले सब मिलाकर १,३१,५३,७१२ वर्गमील था। विजयी होने पर जो नये प्रदेश मिले हैं उनका ब्योरा इस प्रकार है—

प्रदेश	क्षेत्रफल, वर्गमील	जनसंख्या
मेसोपोटामिया	१,४३,२५०	२०,००,०००
पैलेस्टाइन	७,७९०	५,४१,६००
अरब	१,०७,३८०	१०,६०,०००
फारिस	६,२८,०००	९५,००,०००
मिश्र	२,५०,०००	१,२५,६९,०००
जर्मनीके उपनिवेश	१०,२७,६२०	१,१८,९७,०९२
	२२ ६४ ०४०	३,७५,६७,६९२

देश मेल बढ़ जाने पर अरब और मेसोपोटामिया, फारिस और मिस्रके सिपाही विदेशकी तरफसे हिन्दुस्तानमें युद्ध करने जावेंगे और अवश्य जावेंगे।

सारांश यह कि इस भयंकर जन-जन-ध्वंससे हम भारतवासियोंको जो शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए वह हम नहीं करते। प्रकृति जीवोंकी संख्या अधिक अवश्य किया चाहती है। एक प्राणीके स्थान पर वह अनेक प्राणियोंको उत्पन्न करती है। किन्तु एक मात्र गिनती बढ़ाकर वह सन्तुष्ट नहीं होती। वह नीचश्रेणीके जीवोंके स्थान पर उच्च श्रेणीके जीवोंको स्थापित करना निर्बल और निकम्मे व्यक्तियोंको निर्मूल करके उनकी जगह बलवान् और उपयोगी वर्गोंको देना और सदाचारविहीन जातियोंको नष्ट भ्रष्ट करके उनके देशमें सदाचारयुक्त जातियोंको फूलते फलते देखना ज्यादा पसन्द करती है।

प्रत्येक जीवके शरीरमें प्रकृतिने असंख्य जीवनके बीज संचय कर रक्खे हैं। किस प्रति वह असंख्य जीवोंका विनाश किया करती है। प्रकृतिको निरी निष्ठुर तथा निर्दय मान बैठना अनुचित है। भावी जीवनकी तैयारीके लिए, जातियोंकी उत्तमतामें वृद्धि करनेके लिए, संख्याकी अपेक्षा श्रेष्ठताको स्थिर करनेके अभिप्रायसे करुणामयी आनन्दमयी प्रकृतिन प्रकृति स्वभावके साथ इस निर्दयताका विनाशकारी अभिनय खेला करती है।

बच्चा पैदा करना भी सदाचार (morality) का लक्षण है। इस क्रियामें माता पिताको कष्ट उठाना पड़ता है। स्वार्थत्याग करना पड़ता है। किन्तु साथ ही जीवोंकी श्रेष्ठता बच्चा पैदा करके मर जानेमें नहीं है। इतना स्वार्थ-त्याग तो प्रकृति नीचश्रेणीके जीवोंसे भी करा लेती है। बाज हालतोंमें (जैसे सांप) समागमके पश्चात् माताके अलग होते ही नर अपनी जान खो देता है। कोचीनिलन्सी माता अपनेको इतने अण्डोंसे भर लेती है कि उसे जीवनसे हाथ धोना पड़ता है। अण्डोंकी रक्षाके लिए उसका मृतक शरीर धर्मशाला काम देता है। बहुतसे जानवर इस क्रियाके लिए सालमें एक बार उन्मत्त हो जाते हैं। इस कालमें केवल-वृत्त कामनाको छोड़कर उनके [illegible] शायद दूसरी कामना नहीं रहती। इस समय नर-मादाका लड़ना [illegible] होना असम्भव हो जाता है। बहुत ही दुर्बल और भीरु जातिके जानवर नर भी इस समय मादाओंके लिए लड़ने और प्राणतक त्याग देते हैं।

वैज्ञानिकोंके अनुसार अन्य सब जीवोंकी मादाओंका इस क्रियाके लिए उन्मत्त होना, और मनुष्य जातिकी स्त्रियोंका रजस्वला होना, दोनों अवस्थायें एकसी हैं, दोनों घटनायें एक ही बातकी द्योतक हैं। वास्तवमें यह जनन-क्रिया, या वंशके कायम रखनेकी प्रवृत्ति, मृत्युसे भी बलवती है। यह प्रवृत्ति, किसी भी जीव पर जब पूर्ण अधिकार जमा लेती है तब वह मृत्युका भी भय नहीं करता। स्वयम् अपनी इच्छासे वह मृत्युके कराल गालमें प्रसन्नतासे चला जाता है। ऐसा करा लेना तो प्रकृतिकी साधारण लीला है—एक मामूली खेल है। जीवोंकी उत्तमता केवल इस बात पर निर्धारित है कि इस वंशवृद्धि तथा वंशको कायम रखनेवाली क्रियामें कौन जीव कितना विवेक खर्च करता है। इस परम आवश्यकीय जननक्रियामें प्रवृत्त होनेके पूर्व तथा सन्तान उत्पन्न होनेके पश्चात् जितना ही स्वार्थत्याग, सहृदयता, सदाचार और साव-धानीसे काम लिया जाता है उतने ही उच्च श्रेणीके जीवमें उसकी गणना होती है, और जितनी ही उन्मत्तता, अविवेक, अनुत्तरदायित्वसे काम लिया जाता है उतनी ही नीच श्रेणीमें वह उतरता जाता है। सद्गुणोंके व्यवहारसे जीवोंका विकास होता है, वे क्रमश उन्नति करते जाते हैं, और इसके विप-रीत आचरणसे उनका ह्रास, अवनति और अध.पतन भी होता है।

विकास-शास्त्रने जीवोंको कई श्रेणियोंमें विभक्त किया है। बहुतसे जीव ऐसे हैं कि जिनमें लैङ्गिक भेद (Difference of sex) अभी तक पैदा ही नही हुआ है। उनमें नर और मादी दो न होकर, एक ही किसिम होती है। इस प्रका-रका बैक्टिरिया नामक एक अतिसूक्ष्म कीट कुछ मिनटोंमें ही लाखोंकी संख्यामें पैदा हो जाता है। एक बैक्टिरियाका शरीर आपसे आप सैकड़ों टुकडोंमें फट जाता है और प्रत्येक टुकडेसे उसकी सन्तति उत्पन्न होती है, जो फिर फटती और अपना जीवन खोकर अपनी किस्मि बढ़ाती है। कुछ ऐसे जीव हैं जिनके शरीरमें नर और मादा दोनोंके अवयव विद्यमान हैं। ये लैङ्गिक भेद न रखने-वाले जीवोंसे उच्च हैं, किन्तु हैं ये भी बहुत ही नीचे दर्जेके जीव।

कुछ जल और स्थल पर समान रूपसे रहनेवाले जीव हैं, जैसे घड़ियाल आदि (Amphibia), या जो पेटके बल चलते हैं जैसे गिरगिट आदि (Reptiles)। इन्हें अपने अण्डोंके सेनेकी जरूरत नहीं होती, सूर्यकी गरमी-से आपसे आप इनके अण्डोंमेंसे बच्चे निकल आते हैं। कुछ ऐसे जीव हैं जिन्हें रात दिन बड़ी सावधानीसे अपने अण्डे सेना पड़ते हैं। जरा भी सुस्ती करनेसे अण्डे गन्दे हो जाते हैं। बाज़ोंको महीने महीने भरतक इस प्रकार अण्डोंको

प्राणियोंकी उत्पत्ति और विकासकी इस संक्षिप्त कथाका अर्थ यह है कि जीवोंका इतिहास जातियोंके इतिहाससे बिल्कुल लाग् और मिलता जुलता है। जीव, जिन जिन अवस्थाओंसे पार होकर श्रेष्ठता तथा उज्ज्वलताको प्राप्त करते हैं, जातियोंको भी ठीक वैसे ही उन्नति अवनतिके मार्गोंकी यात्रा करनी पडती है, उनके जीवनमें भी वे अवस्थायें व्याप्त होती हैं। व्यक्तियोंसे ही जाति बनती है। जिस देश, जाति या राष्ट्रके व्यक्तियोंकी शिक्षा और दीक्षामें, लालन और पालनमें, सदाचार और संस्कारमें जितना ही अधिक कष्ट उठाया जायगा, जितना धन, श्रम और बुद्धि उनपर खर्च की जायगी उतनी ही उनकी श्रेष्ठता भी उत्तरोत्तर बढती जायगी, और घडियाल या गिरगिटके समान बच्चे पैदा करके उनके लालन-पालनका उचित प्रबन्ध न करनेवाली जाति पर प्रभुत्व स्थापित करेगी, हुकूमत करेगी, और पशुओंके समान, अपने आराम, अपने गौरव, अपने ऐश्वर्यकी वृद्धिमें उनसे काम लेगी, कठपुतलीकी तरह अँगुलियोंके इशारे पर उन्हें नचाया करेगी और वे नाचेंगे।

लण्डनकी एग्लो ईस्टर्न पब्लिशिङ्ग कम्पनीने 'दि न्यू रेस ऑफ डेविल्स' (The New Race of Devils) अर्थात् 'शैतानोंकी नवीन जाति' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की है। इसके लेखक जान बर्डनार्ड हैं। इस पुस्तकमें बतलाया गया है कि विशेष कृत्रिम उपायों द्वारा एक नवीन जातिके दैत्य, दूसरे शब्दोंमें मनुष्यके रूपमें शैतान, किस तरह उत्पन्न किये जा सकते हैं। इन मनुष्यतनधारी दैत्य या शैतानोंमें मानवोचित गुणोंका सर्वथा अभाव रहेगा, परन्तु इनकी शक्ति जड मशीनोंकी भाँति भयकर, विनाशकारी और घातक होगी। ग्रन्थकार महाशय लिखते हैं कि इस जाति-का उत्पन्न करना केवल सम्भव ही नहीं है बल्कि जर्मनीने आजकल इस-नवीन भयंकर जातिको उत्पन्न करना भी आरम्भ कर दिया है!

हमारे देशमें देव और दानव, सुर और असुर, मानव और राक्षसोंके-संग्रामकी कितनी ही कथायें अब तक विद्यमान हैं। ये दानव, दैत्य और राक्षस सींग, पूँछ और अनेक सिर या हाथवाले जानवर नहीं थे। सहस्र-बाहु और दश-कन्धरका यह अर्थ लगाना कि किसी व्यक्तिकी भुजाओंसे एक हजार हाथ वृक्षकी शाखाओंके समान निकले थे अथवा यह कि रावणकी गर्दनपर दस सिर थे वैसा ही भ्रमजनक है जैसे यह मान लेना कि दस घोडेकी ताकतसे चलनेवाली मोटर गाडीके पेटमें दस घोडे बैठे उसे चलाया करते हैं! सहस्र-

शत्रुकी भुजाओंमें एक हजार आदमियोंकी भुजाओंके बराबर बल था। एक कम्परके मस्तिष्कमें दस आदमियोंके बराबर सोचने विचारने तथा काम करनेकी शक्ति थी। देवासुर-संग्रामका ठीक यही रूप है जो आजकल भारत और ब्रिटेनके साथ चल रहा है। वैज्ञानिक आविष्कारों तथा विनाशकारी मशीनोंसे परिपूर्ण वृटिश-जाति विद्याविहीन और निरस्त्र भारतके लिए साक्षात् दशकन्धर और सहस्रबाहु बन रही है। अतः सुर और असुर देव और दानव ऋषि और राक्षस दोनों ही साधारण मनुष्य हैं। स्वभाव सदा-चार तथा आचरणके भेदभावसे एक मनुष्य देव प्रकृतिका और दूसरा दैत्य कहलाता है।

कहा जाता है कि भारतवर्षमें तेतीस कोटि देवता वास करते हैं। यह बात बड़े महत्त्वकी है। इसपर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए। तेतीस कोटि देवता वास करने'का यह अर्थ नहीं हो सकता कि यहाँ इतनी पत्थरकी मूर्तियाँ विद्यमान हैं। न इतनी बड़ी संख्यामें देवताओंकी नामावली ही किसी धर्मग्रन्थमें मिलती है और न सारे मठमतान्तरोंके पोथी-पत्रोंमें दर्शाये हुए देवताओंको एकत्र जोड़नेसे यह मीजान मिलता है। इस प्रचलित मसूक्त वाक्यके सीधे सादे दो अर्थ हैं—एक तो यह कि इस पुनीत भारत भूमिमें तेतीस करोड़ देव-प्रकृतिके मनुष्य वास करते थे और दूसरा यह कि इस विस्तृत देशमें केवल तेतीस कोटि जनताके वास करनेका स्थान है। इस देशकी जनसंख्या तेतीस करोड़से अधिक नहीं बढ़ सकती।

पहले अर्थके सिद्ध करनेके लिए बहुत प्रमाणोंकी आवश्यकता नहीं है। हमारे वेदशास्त्र ऊँचे दर्जेकी विलासहीनताके ग्रन्थ फाहियान और हुएनसांग आदि यात्रियोंके विवरण इसके प्रमाण हैं। इसके अलावा प्रत्येक भारतवासी अप-नेको ऋषि-सन्तान कहता है। इसकी सत्यता और प्रामाणिकतामें तनिक भी सन्देह नहीं है। किन्तु साथ ही इस जगद्विख्यात आर्यजातिका घोर अधः-पतन भी स्वीकार करना पड़ता है। जैसे कर्महीनताके मनुष्योंसे ही एक सेनाकी शक्ति उत्पन्न करा रहे हैं वैसे ही कुशासन तथा सामाजिक कुप्रथाओंके कारण इस ऋषि सन्तानका बहुत बड़ा भाग दैत्योंमें परिवर्तित हो गया है और होता जा रहा है। पड़ोसी एशियाई स्वतन्त्र जातियोंका भारतीय सेना द्वारा परतन्त्र किया जाना जलियाँवाला बागके सदृश अन्य कितने ही हत्या-काण्डोंका होना पुलिस और सरकारी कर्मचारियोंके सम्मुख स्त्रियोंके बल पर उनकी

स्त्री, माता और वहिनोंकी लाजका परदा उठाया जाना आदि अनेक नारकीय पैशाचिक कृत्य इस शोचनीय परिवर्त्तनके ही प्रमाण हैं। यह केवल कार्य और कारण है। इस अभागे देशमें कारण ही ऐसे उपस्थित हो गये हैं जिससे पुनीत ऋपि-सन्तानका वडा अश मनुष्यके रूपमें शैतान वन रहा है।

जिस देशकी आधी जनसख्या पेटभर अन्न न पाती हो, जहाँ अकालोंसे तीन करोड़ मनुष्योंकी मृत्यु हुई हो, जहाँ इन्फ्लुएन्ज़ा ज्वरसे कुछ महीनोंमें ही एक करोड जन मर जायँ, जहाँ ३० करोड़ जन निरक्षर भट्ट हो, जहाँकी सरकार रक्षाके नाम पर उस देशको दवाये रखनेके लिए ६ करोड़ रुपया प्रतिवर्ष सेना पर खर्च करे, उस देशका विकास होगा कि अधःपतन? मानव-सन्तति देव प्रकृतिकी भी वनाई जा सकती है और असुर प्रकृतिकी भी। मनुष्यको मनुष्य वनानेके लिए वैसे साधन भी होने चाहिए।

दूसरे अर्थकी पुष्टि, यानी इस देशमें ३३ कोटिसे अधिक जनताकी गुजाइश नहीं है, आखिरी मरदुमशुमारीसे हो जाती है। गत दस वर्षोंमें आवादी नहीं वढी। साधारणत १० से २० वर्षोंमें आवादी दूनी वढ सकती है। खानेपीनेका सुभीता होनेसे किसी भी देशकी जनसख्या २० वर्षोंके भीतर ही दूनी हो जानी चाहिए। इस तरह भारतमें इस वार ६३ करोडकी आवादी होनी थी। किन्तु साढे इकतीस करोडसे पूरी वत्तीस करोड़ भी न हो पाई। १९११ की मरदुमशुमारीमें २ करोड़से अधिक या ७ १ फी सैकड़ा मनुष्य वढ़े थे। १९२१ में कुल ३८ लाख या १ २ फी सैकडा वढे हैं। * हालाँकि यहाँकी जन्मसंख्या सारे ससारसे अधिक है।

यह वात वार वार वतानेकी आवश्यकता नहीं है कि जन्मसख्याकी अधिकता प्राणियो और जातियोंकी उच्चताका चिह्न नहीं, वल्कि नीचताका लक्षण है। नित्य अण्डे देनेवाली मुर्गी या लाखों अण्डे देनेवाली मछलीकी सन्तति वढ़ भी नहीं सकती। वह कम वच्चा पैदा करनेवाले सुयोग्य मनुष्यकी खोराक वना करेगी। ठीक इसी तरह वहुत जन्मसंख्यावाली भारत-सन्तान कम जन्मसंख्यावाले राष्ट्रोंके काम आया करेगी। वह अपने १७ लाख योद्धा

*सन्	आवादी	स्त्रियाँ	पुरुष	जनवृद्धि,	सैकडा वृद्धि
१९२१	३१९०७५१३२	१५५०१८९४१	१६४०५६१९१	३९१८७३६	१ २
१९११	३१५१५६३९६	१५३८१७४६१	१६१३३८९३५	२०७९५३४०	७ १-

बाहुकी भुजाओंमें एक हजार आदमियोंकी भुजाओंके बराबर बल था। एक-कन्धरके मस्तिष्कमें दस आदमियोंके बराबर सोचने विचारने तथा काम करनेकी शक्ति थी। देवासुर संग्राम ठीक वही खत्म है जो आजकल भारत और ब्रिटेनके साथ चल रहा है। वैज्ञानिक आविष्कारों तथा विकराली मशीनोंसे परिपूर्ण वृटिश-जाति विद्याविहीन और निःशस्त्र भारतके लिए साक्षात् दशकन्धर और सहस्रबाहु बन रही है। अतः सुर और असुर, देव और दानव ऋषि और राक्षस दोनों ही साधारण मनुष्य हैं। स्वभाव सदाचार तथा आचरणके भेदभावसे एक मनुष्य देव महर्षिका और दूसरा दैत्य कहलाता है।

कहा जाता है कि भारतवर्षमें तेंतीस कोटि देवता वास करते हैं। यह बात बड़े महत्वकी है। इसपर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए। तेंतीस कोटि देवता वास करने का यह अर्थ नहीं हो सकता कि यहाँ इतनी पत्थरकी मूर्तियाँ विद्यमान हैं। न इतनी बड़ी संख्यामें देवताओंकी नामावली ही किसी धर्मग्रन्थमें मिलती है और न सारे मतमतान्तरोंके पोथी-पत्रोंमें बतलाये हुए देवताओंको एकत्र जोड़नेसे यह मीजान मिलता है। इस प्रचलित अमूल्य वाक्यके सीधे सादे दो अर्थ हैं—एक तो यह कि इस पुनीत भारत भूमिमें तेंतीस करोड़ देव प्रकृतिके मनुष्य वास करते थे और दूसरा यह कि इस विस्तृत देशमें केवल तेंतीस कोटि जनताके वास करनेका स्थान है। इस देशकी जनसंख्या तेंतीस करोड़से अधिक नहीं बढ़ सकती।

पहले अर्थके सिद्ध करनेके लिए बहुत प्रमाणोंकी आवश्यकता नहीं है। हमारे वेदशास्त्र ऊँचे दर्जेकी विज्ञानशक्तिके ग्रन्थ इतिहास और पुराणभाग आदि जातियोंके विवरण इसके प्रमाण हैं। इसके अलावा प्रत्येक भारतवासी अपनेको ऋषि-सन्तान कहता है। इसकी सत्यता और प्रामाणिकतामें तनिक भी सन्देह नहीं है। किन्तु साथ ही इस जगद्विख्यात आर्यजातिका घोर अधः-पतन भी स्वीकार करना पड़ता है। जैसे धर्मभीरुताके मनुष्योंसे ही एक शैतानकी जाति उत्पन्न करा रहे हैं वैसे ही कुशासन तथा सामाजिक कुप्रथाओंके कारण इस ऋषि सन्तानका बहुत बड़ा अंश दैत्योंमें परिवर्तित हो गया है और होता आ रहा है। पड़ोसी एशियाई स्वतन्त्र जातियोंका भारतीय सेना द्वारा परतन्त्र किया जाना जलियांवाला बागके सदृश अन्य कितने ही हत्या-काण्डोंका होना पुलीस और पलटनके जवानोंके सम्मुख बन्दूकें तान कर उनकी

इस पुस्तकके अङ्क और आँकड़े कुछ पुराने जरूर जान पड़ेंगे। जनसंख्या-सम्बन्धी नई रिपोर्ट निकलने पर उन्हें दुरुस्त करनेका भी यत्न किया जायगा। परन्तु पाठक इससे असन्तुष्ट न हों। गम्भीर विषयकी पुस्तककी उपयोगिता पुरानी हो जानेसे कम नहीं होती। नाना प्रकारके अंक पुस्तकके सिद्धान्तोंकी पुष्टिके लिए दिये जाते हैं। दैनिक पत्रोंके समान नित्य नये अंक और नई बातें किसी पुस्तकमें नहीं दी जा सकतीं। यदि समय किसी भी पुरानीसे पुरानी पुस्तकमें वर्णन किये हुए सिद्धान्तोंको सत्य और अकाट्य प्रमाणित करता रहे तो उसके आँकडे चाहे पुराने ही हों उनसे कुछ विशेष हानि नहीं होती। सच तो यह है कि पुस्तकोंकी प्रामाणिकता उनके प्राचीन हो जाने पर ही होती है। जबतक भारतकी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक दुर्दशा होती रहेगी, जब तक भारतमें एक भी अशिक्षित व्यक्ति रेहगा, जबतक यहाँ शूद्र और स्त्रियोंकी दशा शोचनीय बनी रहेगी, तबतक यह तुच्छ और हीन पुस्तक पुरानी न होगी। जब हमें, एक आदमी और एक हिन्दुस्तानी होनेकी हैसियतसे मनुष्यत्वका पूरा अधिकार मिल जायगा, तभी यह पुरानी होगी।

इस पुस्तकके अङ्क और आँकडे कुछ पुराने जरूर जान पड़ेंगे। जनसंख्या-सम्बन्धी नई रिपोर्ट निकलने पर उन्हें दुरुस्त करनेका भी यत्न किया जायगा। परन्तु पाठक इससे असन्तुष्ट न हों। गम्भीर विषयकी पुस्तककी उपयोगिता पुरानी हो जानेसे कम नहीं होती। नाना प्रकारके अंक पुस्तकके सिद्धान्तोंकी पुष्टिके लिए दिये जाते हैं। दैनिक पत्रोंके समान नित्य नये अंक और नई बातें किसी पुस्तकमें नहीं दी जा सकतीं। यदि समय किसी भी पुरानीसे पुरानी पुस्तकमें वर्णन किये हुए सिद्धान्तोंको सत्य और अकाट्य प्रमाणित करता रहे तो उसके आँकड़े चाहे पुराने ही हों उनसे कुछ विशेष हानि नहीं होती। सच तो यह है कि पुस्तकोंकी प्रामाणिकता उनके प्राचीन हो जाने पर ही होती है। जबतक भारतकी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक दुर्दशा होती रहेगी, जब तक भारतमें एक भी अशिक्षित व्यक्ति रहेगा, जबतक यहाँ शूद्र और स्त्रियोंकी दशा शोचनीय बनी रहेगी, तबतक यह तुच्छ और हीन पुस्तक पुरानी न होगी। जब हमें, एक आदमी और एक हिन्दुस्तानी होनेकी हैसियतसे मनुष्यत्वका पूरा अधिकार मिल जायगा, तभी यह पुरानी होगी।

7. The Health of the State, by Sir George Newman Headley 1s

8. The methods and scope of Genetics, by William Bate Son

9. The Dependent, Defective and Delinquent classes, by C. R Henderson—Harrap 7s 6d

10 Woman and Womanhood A search for Principles, by C W. Saleeby—Heinemann 10s

11. Report of the Inter-Departmental committee on Physical Deterioration, by—Government Publication 1s 3d

12 Disease of Occupation, by Sir Thomas Oliver—Methuen 10s 6d

13 The Bitter Cry of the Children, by John Spargo-Macmillan 6s 6d

14 The Clements of Child-Protection, by Sigmund, Engel —Allen & Unwin 15s

15 Studies of Child, by James Sully—Longmans 12s. 6d.

16 The Physiology of childhood, by Fredrick Tracy —Harrap

17 The Children of the Nation, by Sir John E Garst —Methuen 7s 6d.

18 Wastage of Child life, by J Johnston—A C Fifield 6d

19 Child-Life & Labour, by Margarrt Alden—Headley Bros 1s

20 Problems of Boy Life, Edited by J H Whitehouse —P S King, 10s 6d

21 Infant Mortality, by Sir George Newman—Methuen 7s 6d

22 The Town Child by Reginald A Bray—Fisher Unwin 3s 6d

23 Infant Mortality, by H T Ashley—Cambridge Unv. Press 10s 6d

24. The Right of the Child to be Well-Born, by George E. Dawson—Funk & Wagnals. 3s.

25. The Task of Social Hygiene by Havelock Ellis—Constable—8s. 9d.

ब्रह्मचर्य ।

हिन्दी, उर्दू ।

१-ब्रह्मचर्य साधन (उर्दू) । भारत स्टिरेयर कम्पनी लाहौर।
२-ब्रह्मचर्यसेवा, बालकोंके लिए । " " "
३-नव-जीवन-विद्या । पुस्तकभण्डार, लाहौर ।
४-सत्यार्थप्रकाश सुश्रुत, चरक और मनुस्मृति आदि ग्रन्थोंमें भी इस विषय पर बहुत कुछ लिखा है ।

अंगरेजी ।

1 What a young boy ought to know
2. What a young girl ought to know
3. Science of New Life by Cowen.
4. Th Sexual Q estion by Torell.
5. Lectures to young men by Graham.
6. Sexual Physiology by Dr. Trall.
7 Dr Stall s books—Sex series.
8. The Sexual Life in our modern condition.

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर ।

हमारे यहाँसे इस नामकी एक ग्रन्थमाला (सीरीज) बहुत समयसे निकल रही है । हिन्दी ससारमें यह सबसे पहली ग्रन्थमाला है और सबसे अधिक प्रसिद्ध तथा प्रतिष्ठित है । भाव, भाषा, छपाई, सौन्दर्य आदि सभी बातोंमें इसकी ख्याति हो चुकी है । इसमें अब तक ५० से ऊपर ग्रन्थ निकल चुके हैं और उनका खूब ही प्रचार हुआ है । इसके स्थायी ग्राहकोंको सब ग्रन्थ पौनी कीमतमें दिये जाते हैं । 'स्थायी ग्राहक' बननेके लिए 'प्रवेश फी' आठ आने देनी पड़ती है ।

आगे सब ग्रन्थोंका सक्षिप्त परिचय दिया जाता है —

१ स्वाधीनता । जॉन स्टुअर्ट मिलके 'लिबर्टी' नामक ग्रन्थका सुबोध और सरल अनुवाद । स्वाधीनताका इतना सुन्दर, प्रामाणिक और युक्तियुक्त विचार शायद ही किसी ग्रन्थमें किया गया हो । द्वितीय सस्करण । मू० २)

२ जान स्टुअर्ट मिल । स्वाधीनताके मूल लेखकका शिक्षाप्रद और आलोचनात्मक जीवनचरित । विद्यार्थियों और लेखकोंके लिए अतिशय उपयोगी । द्वितीयावृत्ति । मूल्य ॥≈)

३ प्रतिभा । अतिशय सुरुचिसम्पन्न, भावपूर्ण, मनोरंजक और शिक्षाप्रद उपन्यास । बालक, युवा स्त्री और पुरुष सबके हाथमें देने योग्य । भाषा इसकी बहुत शुद्ध और परिमार्जित है । चतुर्थ सस्करण । मू० १।)

४ फूलोंका गुच्छा । अनेक भाषाओंसे अनुवादित बहुत ही उत्कृष्ट गल्पोंका सग्रह । सब मिलाकर ११ गल्पें हैं और वे प्राय सभी ऐतिहासिक हैं । भाषा बड़ी ही शुद्ध और सुन्दर है । पढ़ते समय गद्यकाव्यका आनन्द आता है । तीसरा सस्करण । मूल्य ॥-)

५ ऑखकी किरकिरी । महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरके सुप्रसिद्ध उपन्यासका अनुवाद । इसकी जोड़के उपन्यास ससारमें अभीतक बहुत ही कम प्रकाशित हुए हैं । मनुष्यके आन्तरिक भावचित्रोंका, उनके उत्थान पतन और घातप्रतिघातोंका

इसमें बड़ा ही सुन्दर चित्रण है। रसिकतासे भी लबालब भरा हुआ है। तीसरी आवृत्ति। मूल्य ।।=)

६ चौबेका चिट्ठा। स्वर्गीय बाबू बंकिमचन्द्रके सुप्रसिद्ध ग्रन्थका अनुवाद। इसमें हँसी मजाक चुटीली बातें इतिहास राजनीति समाजनीति देशप्रेम आदि सभी कुछ है। पढ़ते पढ़ते जी नहीं भरता। तीसरी आवृत्ति। मूल्य ।।≤)

७ मितव्ययता। डेमुएल स्माइल्सके थिफ्टका छायानुवाद। मितव्ययी और सदाचार सिखानेवाली सुन्दर पुस्तक। तीसरी आवृत्ति। मू ।।≤)

८ स्वदेश। रवीन्द्रबाबूके स्वदेशसम्बन्धी आठ निबन्धोंका अनुवाद। एकसे एक बढ़कर अपूर्व और अश्रुतपूर्व विचारोंका समावेश। चौथी आवृत्ति। मू ।।=)

९ चरित्रगठन और मनोबल। आध्यात्मिक [illegible] राल्फ वाल्डोट्राइन की पुस्तकका अनुवाद। चरित्रसंगठनमें सहायता करनेवाली अपूर्व पुस्तक। मू ।)

१० आत्मोद्धार। अमेरिकाके गुलाम—नीग्रो या हबशियोंको मनुष्य बनानेवाले सुप्रसिद्ध नेता डा॰ बुकर टी॰ वाशिंगटनका आत्मचरित। पराधीन जातियोंके लिए अतीव शिक्षाप्रद। अवनत लोगोंमें किस तरह प्रचार किस तरह किया जाता है यह सीखनेके लिए ऐसी आदर्श पुस्तक दूसरी नहीं मिल सकती। द्वितीयावृत्ति। मू 1)

११ शान्तिकुटीर। पवित्र सात्त्विक और शिक्षाप्रद सच्चरित्र। स्त्री और पुरुष दोनोंके लिए परमोपकारी। बालकोंको भी यह निःशंक होकर पढ़नेके लिए दिया जा सकता है। इसका प्रकृतिका वर्णन बड़ा ही मनोमुग्धकारी है। दूसरी आवृत्ति मू ।।=)

१२ सफलता और उसकी साधनाके उपाय। इसमें सफलता और उसके सिद्धान्तोंका सरल और सजीव भाषामें विचार किया गया है। अनेकानेक ग्रन्थोंके आधारसे इसकी रचना हुई है। इसका एक एक वाक्य बहुमूल्य है। दूसरी आवृत्ति मू ।।)

१३ अन्नपूर्णाका मन्दिर। बहुत ही पवित्र पुण्यमय और करुणरसपूर्ण उप[illegible] [illegible] सभी [illegible] पारिवारिक चरित्रमें भी इसकी नायिकाका चरित्र कैसा [illegible] [illegible] गया है [illegible] आत्मत्याग मातृपितृभक्ति स्वार्थत्याग और नि[illegible] [illegible] इसमें एक एक बढ़कर सजीव चित्र है। स्त्री और पुरुष दोनोंके ही [illegible] [illegible]सरी आवृत्ति। मूल्य 1)

१४ स्वावलम्बन । डा० सेमुएल स्माइल्सके सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'सेल्फ हेल्प' का छायानुवाद । विदेशी उदाहरणोंके साथ सैकड़ों देशी महापुरुषोंके उदाहरण भी इसमें शामिल कर दिये हैं । अपने पैरों खड़े होनेकी शिक्षादेनेवाला अपूर्व ग्रन्थ । द्वितीय संशोधित और परिवर्धित संस्करण । मू० १॥)

१५ उपवास-चिकित्सा । उपवास या लंघन नीरोग होनेके लिए सबसे अच्छी दवा है । भयंकरसे भयंकर और दु साध्यसे दु साध्य बीमारियाँ उपवास-चिकित्सासे आराम हो सकती हैं। इसी बातको इसमें विस्तारके साथ समझाया है। हजारों आदमी इससे लाभ उठा चुके हैं । तीसरी आवृत्ति । मू० ।॥)

१६ सूमके घर धूम । सुप्रसिद्ध नाटककार द्विजेन्द्र बाबूके एक प्रहसनका अनुवाद । थके हुए मस्तकको घड़ी भर आराम पहुँचानेकी मनोरंजक ओषधि । चौथी आवृत्ति । मू० ।)

१७ दुर्गादास । बंगालमें स्वर्गीय बाबू द्विजेन्द्रलाल राय बहुत बड़े नाटक-लेखक हो गये हैं । उनकी जोड़का नाटक-लेखक शायद ही कोई दूसरा हो । उनके नाटकोंके अनुवाद मराठी, गुजराती, उर्दू, तामिल आदि अनेक भाषाओंमें हो चुके हैं। देशभक्ति और विश्वप्रेमके भावोंसे उनके नाटक लबालब भरे हुए हैं। उनके नाटकोंके देखनेमें जैसा आनन्द आता है वैसा ही पढनेमें भी आता है। उनके पात्रोंका एक एक वाक्य कण्ठ करने योग्य होता है । हमारे यहाँसे उनके १४ नाटक प्रकाशित हो चुके हैं और उनकी हिन्दी-संसारमें धूम है । पाठकोंने उन्हें बहुत ही पसन्द किया है । यह दुर्गादास भी उन्हींके एक नाटकका अनुवाद है । इसमें जोधपुरनरेश जसवन्तसिंहके सुप्रसिद्ध सेनापति राठोर दुर्गादासका चरित्र अंकित किया गया है। बहुत ही महान् चरित्र है । गुजरातकी अनेक राष्ट्रीय पाठशालाओंमें यह पढ़ाया जाता है। तीसरी आवृत्ति । मू० १=)

१८ बंकिम-निबन्धावली । स्वर्गीय बाबू बंकिमचन्द्रके चुने हुए राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और साहित्यिक निबन्धोंका अनुवाद । इसकी एक एक पंक्ति बहुमूल्य है । प्रत्येक विचारशील पाठकको इसे पढना चाहिए। दूसरी आवृत्ति । मू० ॥=)

१९ छत्रसाल । बुन्देलखण्डको स्वतन्त्रताका मंत्र सिखलानेवाले महाराजा चम्पतराय और उनके बेटे वीरकेसरी छत्रसालकी कुछ ऐतिहासिक घटनाओंको लेकर इस अत्यन्त रोचक, उत्कण्ठावर्धक और घटनाबहुल उपन्यासकी रचना की

है। देशभक्ति आत्माभिमान और वीरताके भावोंसे यह भरा हुआ है। दूसरी आवृत्ति। मू ॥)

२० प्रायश्चित्त। बैल्जियमके नोबल प्राइज पानेवाले सुप्रसिद्ध कैवक मेट रलिंकका एक भावपूर्ण और हृदयग्राहक नाटिकाका सुन्दर अनुवाद। पश्चात्तापकी अग्निमें पापोंके जलजानेकी सुन्दर कल्पना। द्वितीयावृत्ति। मू ।)

२१ अब्राहम लिंकन। संयुक्त राज्य अमेरिकाके सुप्रसिद्ध प्रेसीडेंट-जिन्होंने वहाँके हब्शी गुलामोंको आजाद किया था और एक झोपड़ेमें जन्म लेकर इतना ऊँचा पद प्राप्त किया था—शिक्षाप्रद और उत्साहवर्धक जीवन-चरित। मू ॥=)

२२ मेवाड़-पतन। स्वर्गीय द्विजेन्द्रबाबूके नाटकका अनुवाद। मेवाड़के राणा अमरसिंह और बादशाह जहाँगीरके इतिहासके आधारपर इसकी रचना हुई है। इसके पात्र दाम्पत्य प्रेम जातीय प्रेम और विश्वप्रेमके सजीव चित्र हैं। देशका अब पतन क्यों हुआ इसकी भी इसमें बड़ी मार्मिक आलोचना की गई है। चार सुन्दर चित्रोंसे सुशोभित। दूसरी आवृत्ति। मू ॥ाॅ)

२३ शाहजहाँ। यह भी द्विजेन्द्रबाबूका प्रसिद्ध नाटक है। मुगल बादशाह शाहजहाँ इसके प्रधान नायक हैं। बंगालके प्रसिद्ध प्रसिद्ध समालोचकोंकी रायमें यह बंगभाषाका सबसे श्रेष्ठ नाटक है। दूसरी आवृत्ति। मू ॥ाॅ)

२४ मानव-जीवन। नीति चरित्र और सदाचारसम्बन्धी अनेक ग्रन्थोंके आधारसे लिखित। दूसरी बार छपनेपर मिल सकेगा।

२५ उस पार। द्विजेन्द्र बाबूके सामाजिक नाटकका अनुवाद। इसमें एक ओर स्नेह दयालुता भक्ति, क्षमा और त्याग और दूसरी ओर कृतघ्नता अत्याचार कपटता निष्ठुरता और हत्याके भाव दिखाये गये हैं। स्वर्गके साथ नर्कका ऐसा सुन्दर संगम शायद ही किसी नाटकमें दिखलाया गया हो। बहुत ही शिक्षाप्रद है। दूसरी आवृत्ति। मू १ाॅ)

२६ ताराबाई। यह भी द्विजेन्द्र बाबूका एक नाटक है। पद्यमें है। दूसरी बार छपने पर मिल सकेगा।

२७ दुर्गा-दुर्गेश। तीसरी आवृत्ति। मू १)

२८ हृदयकी परख। दूसरी बार छपनेपर मिल सकेगी।

२९ नवनिधि। सुप्रसिद्ध उपन्यासलेखक प्रेमचन्दजीकी चुनी हुई नौ गल्पोंका संग्रह। अपने ढंगका यह संग्रह सबसे अच्छा है। इसे आनन्द

स्त्री, पुरुष सब ही पढ़ सकते हैं और मनोरंजनके साथ साथ शिक्षा भी ग्रहण कर सकते हैं। दूसरी आवृत्ति। मू० ।।।)

३० नूरजहाँ। द्विजेन्द्रबाबूका ऐतिहासिक नाटक। सुप्रसिद्ध मुगल बादशाह जहाँगीर और उनकी बेगम नूरजहाँके चरित्रोंके आधारसे यह लिखा गया है। हिन्दीके एक सुप्रसिद्ध लेखक लिखते हैं—“नूरजहाँ अद्भुत वस्तु है। पंक्तिपंक्तिमें सुन्दरता तथा जोरकी नदियाँ बह रही हैं। निस्सन्देह द्विजेन्द्रबाबू भारतके अद्वितीय नाटककार हैं। पढ़ते पढ़ते दिल नाच उठता है। जहाँ कहीं समुचित स्थान आता है कि द्विजेन्द्रबाबू रंग बाँध देते हैं।” भावोंका उठना और बैठना इसमें बारीकीसे दिखलाया गया है। दूसरी आवृत्ति। मू० १=)

३१ आयर्लैण्डका इतिहास। यों तो आयर्लैण्डका इतिहास सभी पराधीन जातियोंके लिए शिक्षाप्रद है, परन्तु भारतवासियोंके लिए तो यह बहुत ही उपकारक और सच्चा मार्गदर्शक है। प्रत्येक स्वराज्यवादी देशभक्तको इसका स्वाध्याय करना चाहिए। मू० १।।।=)

३२ शिक्षा। साहित्यसम्राट् रवीन्द्रबाबूके शिक्षासम्बन्धी पाँच निबन्धोंका अनुवाद। सभी निबन्ध बड़े ही महत्त्वके हैं और शिक्षाविज्ञानकी गहरीसे गहरी आलोचनाओंसे युक्त हैं। दूसरी आवृत्ति। मू० ।।)

३३ भीष्म। द्विजेन्द्रबाबूका पौराणिक नाटक। महाभारतके परमपूज्य वीर भीष्मपितामह इसके प्रधान पात्र हैं। ब्रह्मचर्य, पितृभक्ति और स्वार्थत्यागका जीता जागता चित्र। बहुत ही शिक्षाप्रद। मू० १।)

३४ कावूर। इटलीके महान् देशभक्त और राजनीतिज्ञका जीवनचरित। इटलीको आस्ट्रियाके चुगलसे मुक्त करनेमें इस महावीरका सबसे प्रधान हाथ था। कहते हैं कि यदि यह न होता तो मेजिनी और गेरीबाल्डीके होते हुए भी इटली स्वाधीन न हो सकता। मू० १)

३५ चन्द्रगुप्त। मू० १)
३६ सीता। मू० ।।-)
} ये दोनों नाटक भी द्विजेन्द्रबाबूके नाटकोंके अनुवाद हैं। पहला हिन्दु-राज्य-कालका ऐतिहासिक नाटक है और उसमें मौर्यवंशी सम्राट् चन्द्रगुप्तके चरित्रकी प्रधानता है और दूसरा पौराणिक नाटक है जिसमें महासती सीतादेवीका पवित्र चरित्र चित्रित किया गया है। दूसरी आवृत्ति।

३७ छाया-दर्शन। मरनेके बाद जीव कहाँ जाता है, उसकी क्या अवस्था होती है, वह लोगोंको किस प्रकार छायारूप धारण करके दर्शन देता है, बात-

शोषण करता है, दुःख पहुँचाता है, आदि अनेक कुप्रबन्धजन्य बातोंका इसमें विस्तारके साथ वर्णन किया है और उसके बड़े बड़े विदेशी विद्वानोंकी सम्मति-पूर्वक प्रामाणिक उदाहरण दिये हैं। मू. ॥)

३८ राजा और प्रजा। जगत्प्रसिद्ध विद्वान् रवीन्द्रनाथके राजनीतिसम्बन्धी ११ निबन्धोंका अनुवाद। अध्ययन और मनन करने योग्य गंभीर विचारोंका अपूर्व संग्रह। दूसरी आवृत्ति। मू. १)

३९ गोबर-गणेश-संहिता। व्यंग और मनोविनोदोंसे भरी हुई अद्भुत ही दिलचस्प चीज। इसके लेखक गोबर गणेशजीने—जिन्हें विद्यानन्द चौबेका भाई ही समझना चाहिए—इसमें बड़ी ही मार्मिक और गुदगुदानेवाली बातें कही हैं। धर्म समाज राजनीति आदि सभी क्षेत्रोंमें इनकी कलम दौड़ी है। दूसरी आवृत्ति। मू. ॥)

४० साम्यवाद। हिन्दीमें इस विषयका सबसे पहला और उत्कृष्ट ग्रन्थ। इसमें भगवान् बुद्धदेवके समयसे लेकर अबतकके तमाम साम्यवादों—[illegible] व्यापारसंघवाद, अराजकतावाद, बोल्शेविज्म आदि—का सरल उनके सिद्धान्त इतिहास और प्रचार आदि सभी बातोंका खूब विस्तारके साथ वर्णन किया है। साथ ही रूस जर्मनी इटली आदि देशोंकी राज्यक्रान्तियोंका इतिहास भी दिया गया है। संसारका चक्र किस ओरको घूम रहा है यह जाननेके लिए इस अपूर्व ग्रन्थको अवश्य पढ़ना चाहिए। मू. २)

४१ पुष्पलता। अतिशय मनोहर, हृदयग्राहक और [illegible] गल्पोंका संग्रह। सभी गल्पें मौलिक हैं। इसके लेखक श्रीयुत सुदर्शन जी हिन्दीमें प्रेमचन्द जीके ही समान ख्याति प्राप्त करेंगे। पुस्तक अनेक चित्रोंसे शोभित है। मू. १)

४२ महादजी सिंधिया। अँगरेजोंके प्रबल प्रतिद्वन्दी असमसाहसी वीरकेसरी महादजी सिंधियाका बड़ी खोजके साथ लिखा हुआ जीवनचरित। महादजी बड़े भारी राजनीतिज्ञ थे। मुगल बादशाहत उनकी मुट्ठीमें थी। यदि उनके बाद उन ही जैसा कोई योग्य पुरुष पैदा हो जाता तो आज इस देशके बादशाह मराठे होते अँगरेज नहीं। मू. ॥=)

४३ आनन्दकी पगडंडियाँ। अमेरिकाके ज्ञाता और [illegible] लेखक जेम्स एलेनके बायवेज आफ ब्लेसेडनेस नामक ग्रन्थका अनुवाद। इसके

अध्ययन और मननसे वड़ी शान्ति मिलती है और मनुष्यके चरित्रपर गहरा प्रभाव पड़ता है। पढ़ते समय ऋषि महर्षियोंके उपदेश याद आजाते हैं। मू० १)

४४ **ज्ञान और कर्म**। वगालके सुप्रसिद्ध विद्वान्, स्व० गुरुदास वनर्जी एम० ए०, पी० एच० डी०, डी० एल० के अमूल्य ग्रन्थका अनुवाद। इसमें लेखकके जीवन भरके अध्ययन और मननका सार भरा हुआ है। मनुष्यके अन्तर्जगत् और वहिर्जगत्से सम्बन्ध रखनेवाली जितनी भी वातें हैं, उसके आत्मिक, मानसिक और शारीरिक सुखोंको वढ़ानेवाले जितने भी साधन हैं और सन्तान, परिवार, जाति, सम्प्रदाय, देश, राज्य आदिके प्रति उसके जितने भी कर्तव्य हैं, इस ग्रन्थमें उन सभी पर प्रकाश डाला गया है। सच तो यह है कि ऐसा कोई भी विषय नहीं है जिस पर इसमें कहीं न कहीं, मुख्य या गौणरूपसे, विचार न किया हो। यह धर्म ग्रथके समान पढने लायक ग्रन्थ है। मू० ३)

४५ **सरल मनोविज्ञान**। इसमें मनोविज्ञान जैसे कठिन विपयको वहुत ही सरलतासे सुगम भापामें अच्छी तरह उदाहरण आदि देकर समझाया है और प्रत्येक अध्यायके अन्तमें एक रोचक प्रश्नावली दी है जो इस विपयके विद्यार्थियोंके लिए वड़े कामकी है। मू० १॥)

४६ **कालिदास और भवभूति**। सस्कृतके दो सुप्रसिद्ध कवियोंके अभिज्ञान शाकुन्तल और उत्तररामचरित इन दो नाटकोंकी गुणदोपविवेचिनी, मर्मस्पर्शिनी और तुलनात्मक समालोचना। यह समालोचना कितनी वढ़िया होगी, यह वतलानेके लिए इतना ही वतला देना काफी होगा कि इसके लेखक सुप्रसिद्ध नाटककार स्व० द्विजेन्द्रलाल राय हैं। हिंदीमें इस विपयका यह सवसे पहला और उत्कृष्ट ग्रन्थ है। जो पढेगा वही मुग्ध हो जायगा। मू० १॥)

४७ **साहित्य-मीमांसा**। यह भी एक समालोचना-ग्रन्थ है। इसमें पूर्वके और पश्चिमके साहित्यकी—यूरोपियन और आर्यसाहित्यकी—तुलनात्मक समालोचना की गई है और इस देशके साहित्यको सव तरहसे आदरणीय, उत्कृष्ट और महान् सिद्ध किया है। मू० १।=)

४८ **राणा प्रतापसिंह**। स्वर्गीय द्विजेन्द्रवावूके दुर्लभ नाटकका अनुवाद। इसमें महाराणा प्रताप, उनके भाई शक्तसिंह, राजकवि पृथ्वीराज, उनकी स्त्री जोशीवाई, अकवरकी कन्या मेहरुन्निसा और भानजी दौलतुन्निसा आदि पात्रोंके चरित्र एक अपूर्व और अकल्पनीय ढगसे चित्रित किये गये हैं। पढकर तवीयत नाच उठती है। मू० १॥)

प्रकीर्णक पुस्तकमाला।

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर (सीरीज) के सिवाय हमारे यहाँसे और भी वहुत सी उत्तमोत्तम पुस्तकें प्रकाशित हुआ करती हैं जिनकी सूची आगे दी जाती है —

१ **अस्तोदय और स्वावलम्बन**। सेमुएल स्माइल्सके 'सेल्फ हेल्प'के ढंगका परन्तु उससे विल्कुल स्वतंत्र और अतिशय शिक्षाप्रद ग्रन्थ। विद्यार्थियोंके लिए बहुत ही उपयोगी। पाठ्य पुस्तकोंमें भरती करनेके योग्य। मू० १=)

२ **कनक-रेखा**। बंगालके नामी गल्पलेखक बाबू केशवचन्द्र गुप्तकी गल्पोंका सुन्दर अनुवाद। सभी गल्पें एकसे एक बढकर सुन्दर हैं और बड़ी ही मनोरंजक हैं। मू० ।।।)

३ **युवाओंको उपदेश**। विलियम कावेटके 'एडवाईस टू यंगमेन'के आधारसे लिखित। इसका प्रत्येक अध्याय जीवनको सुखपूर्ण वनानेवाली शिक्षाओंसे भरा हुआ है। युवाओंके लिए अतिशय उपयोगी। दूसरी आवृत्ति। मू० ।।-)

४ **भारत-रमणी**। द्विजेन्द्रबाबूका उत्कृष्ट सामाजिक नाटक। इसमें बाल्य-विवाह, प्रौढविवाह, मनमाना दहेज लेनेकी प्रथा, स्त्रीशिक्षा, विदेशयात्रा आदि सामाजिक प्रश्नोंपर अपूर्व प्रकाश डाला गया है। रचना-कौशल भी अपूर्व है। मू०।।।=)

५ **बच्चोंके सुधारनेके उपाय**। इसमें बच्चोंकी आदतें सुधारने, उन्हें सदाचारी और विनयशील बनाने, बुरेसे बुरे स्वभाववालोंको अच्छे बनाने तथा उपद्रवियों और चिढचिढ़ोंको शान्त शिष्ट बनानेके बढ़िया उपाय बताये गये हैं। सभी माता पिता इसे पढ़कर अपने बच्चोंको अच्छा बना सकते हैं। मू० ।।)

६ **कोलम्बस**। अमेरिका महाद्वीपका पता लगानेवाले एक असमसाहसी नाविकका जीवनचरित्र। इस जीवनचरित्रसे उस समयके यूरोपवासियोंकी धन-लुब्धता, दुश्चरित्रता, बन्धुद्रोह और नृशंसता आदिका भी खासा पता चलता है। मू० ।।।)

१६ दुग्ध-चिकित्सा। केवल दूधके सेवनसे सब प्रकारके रोग दूर करनेके उपाय बतलानेवाली पुस्तक। मू० ≠)

१७ देवदूत। सुकवि प०रामचरित उपाध्याय कृत खण्ड-काव्य। भारतकी हत्ता, पूज्यता और श्रेष्ठता प्रकट करनेवाली नये ढगकी सुन्दर रचना। मू० ।≠)

१८ श्रमण नारद। बौद्ध युगकी बहुत ही मनोरंजक और परोपकारका ाठ सिखानेवाली कहानी। बालक और युवाओंके लिए विशेष उपयोगी। दूसरी आवृत्ति। मू०≠)

१९ भाग्यचक्र। स्वर्गीय बकिमबाबूके भाई सजीव बाबूकी एक शिक्षाप्रद और करुणकहानीका अनुवाद। दूसरी आवृत्ति मू० ~)॥

२० विद्यार्थीके जीवनका उद्देश्य। तीसरी आवृत्ति। मू० ~)॥

२१ पिताके उपदेश। एक आदर्श पिताने अपने पुत्रको जो शिक्षाप्रद चिट्ठियाँ लिखी थीं उनका सग्रह। चौथी आवृत्ति। मू० ≠)

२२ अच्छी आदतें डालनेकी शिक्षा। चौथी आवृत्ति। मू०≠)॥

२३ सदाचारी बालक। छोटीसी शिक्षाप्रद कहानी। मू०≡)॥

२४ बूढ़ेका व्याह। खड़ी बोलीका सुन्दर काव्य। सचित्र। सुकवि श्रीयुत सय्यद अमीरअली (मीर)। वृद्धविवाहके दुष्परिणामोंका खाका। तीसरी आवृत्ति। मू० ।=)

२५ सुगम चिकित्सा। खानेपीनेके नियमों और दिनचर्यामें सावधानी तथा सयम रखने द्वारा बड़े बड़े रोगोंको आराम करनेके उपाय। मू० ≠)

२६ भारतके प्राचीन राजवंश। प्रथम भाग। इसमें क्षत्रप, हैहय, परमार, पाल, चौहान और सेनवशके राजाओंका इतिहास बड़ी खोजके साथ लिखा गया है। हिन्दीमें इस विषयका अपूर्व ग्रन्थ है। मूल्य ३)

२७ भारतके प्राचीन राजवंश। द्वितीय भाग। इसमे शिशुनाग, नन्द, मौर्य, शुङ्ग, कण्व, पल्लव, शक, कुशान, हूण, गुप्त, वैस, आन्ध्र, मौखरी, लिच्छवि, ठाकुरी आदि प्राचीन राजवशोंका इतिहास जो अब तककी खोजोंसे मालूम हो सका है बड़े परिश्रमके साथ लिखा गया है। मू० ३)

२८ जीवन-निर्वाह। असली धर्मका, सच्चे सदाचारका, और सची देशोन्नतिका स्वरूप समझानेवाला अतिशय शिक्षाप्रद ग्रन्थ। अन्धश्रद्धा, गतानुगतिकता और जड़ताको दूर करनेवाला सच्चा उपदेशक। मू० १)

२९ सुखदास । जार्ज इलियटके साइलस मारनर नामक मशहूर उपन्यासका छायानुवाद । लेखक श्रीयुत प्रेमचन्द । मू ।=)

३० अरबी काव्यदर्शन । अरबी कविताका इतिहास उसकी मनोवृत्ति और उसके प्रसिद्ध प्रसिद्ध कवियोंकी विविधप्रकारकी रचनाके चुने हुए पद्योंका संग्रह । हिन्दीमें इस विषयकी सबसे पहली पुस्तक । मू १।)

३१ देश-दशा । सुकवि प० रामचरित उपाध्यायका नवीन काव्यग्रन्थ । देशभक्ति और स्वाधीनताकी भावसे भरी हुई बिल्कुल नई चीज । मू ।~)

नोट—ऊपर लिखे हुए ग्रन्थोंमेंसे जो ग्रन्थोंकी जिल्दसहित तैयार कराने हों उनका मूल्य ऊपर छपे हुए मूल्यसे ।~) या ।) अधिक पड़ेगा । पुस्तक मँगाते समय यह अवश्य लिखना चाहिए कि कैसी पुस्तक चाहिए है—जिल्दवार या सादी ।

सब प्रकारका पत्रव्यवहार करनेका पता—

मैनेजर,—हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय

हीराबाग पो० गिरगाँव बम्बई

स्वदेशभक्ति, आत्माभिमान और राजपूत—

वीरताका सजीव चित्र

राणा प्रतापसिंह ।

स्वर्गीय द्विजेन्द्रलालरायका

अद्भुत और अपूर्व नाटक ।

राणा प्रतापके सम्बन्धमें आपने अनेक नाटक उपन्यास और इतिहास पढ़े होंगे, परन्तु फिर भी हमारा आग्रह है कि आप इस नाटकको एक बार अवश्य पढ़ें । आपकी तबियत फड़क उठेगी । आपके मुँहसे निकल पड़ेगा कि यदि नाटक हो तो ऐसा हो । वीरता हो तो ऐसी हो । और देशके लिए मरना हो तो इस तरह मरें ।

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकरके स्थायी ग्राहकोंकी

नियमावली।

१ आठ आने 'प्रवेश फीस' देनेसे प्रत्येक सज्जन इस सीरीजके स्थायी ग्राहक बन सकते हैं। यह 'प्रवेश फीस' लौटाई नहीं जाती। 'प्रवेश फीस' का आठ आना पेशगी म आ से भेजना चाहिए।

२ स्थायी ग्राहकोंको सीरीजके तमाम ग्रन्थ—पूर्वप्रकाशित और आगे प्रकाशित होनेवाले—पौनी कीमतमें दिये जाते हैं।

३ ग्राहक बननेके समयसे पहले प्रकाशित हुए ग्रन्थोंको लेना न लेना ग्राहकोंकी इच्छा पर है, परंतु आगे निकलनेवाले ग्रन्थ उन्हें अवश्य लेने पड़ते हैं।

४ किसी उचित कारणके बिना यदि किसी ग्रन्थका वी पी वापस आता है तो उसका पोस्टखर्च आदि ग्राहकसे लेना होता है। वापस किये हुए वी पी का पोस्ट खर्च जब तक ग्राहक नहीं भेज देते तब तक उनको दूसरा वी पी नहीं भेजा जाता। अधिकसे अधिक दो वी पी वापस कर देनेवालोंका नाम ग्राहकश्रेणीमेंसे अलग कर दिया जाता है।

५ स्थायी ग्राहक बनकर दस रुपयेसे अधिक मूल्यके ग्रन्थ मँगानेवालोंको कुछ रुपये (प्रत्येक दस रुपये पर एक रुपयाके लगभग) पेशगी भेजना होते हैं जो वी पी में मुजरा कर दिये जाते हैं।

६ स्थायी ग्राहक सीरीजके ग्रन्थोंकी चाहे जितनी प्रतियाँ चाहे जितनी बार पौनी कीमतमें ही मँगा सकते हैं।

मैनेजर, हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-कार्यालय
हीराबाग पो गिरगांव बम्बई।